"मीणा जनजाति के नारी विषयक लोकगीतों में सामाजिक चेतना"

"MEENA JANJATI KE NARI VISHYAK LOKGEETO MAIN SAMAJIK CHETNA"

शोध प्रबंध

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा
की पीएच.डी.

उपाधि हेतु प्रस्तुत

हिन्दी

(कला संकाय)

राकेश कुमार मीना

शोध पर्यवेक्षक

डॉ. लीला मोदी

विभागाध्यक्ष (हिन्दी विभाग) राजकीय वाणिज्य कन्या महाविद्यालय, कोटा (राज.)

हिन्दी विभाग

जा.दे.ब. राजकीय कन्या महाविद्यालय

कोटा (राज.)

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

कोटा (राज.)

2017

(Certificate to be given by the supervisor)

CERTIFICATE

I feel great pleasure in certifying that the thesis entitled ''मीणा जनजाति के नारी विषयक लोकगीतों में सामाजिक चेतना'' (Meena Janjati Ke Nari Vishyak Lokgeeto Main Samajik Chetna) by Rakesh Kumar Meena under my guidance.

He has completed the following requirements as per Ph.D. regulations of the university.

(A) Course Work as per the university rules.

(B) Residential requirements of the university (200 days)

(C) Regularly submitted annual progress report.

(D) Presented his work in the department committee.

(E) Published/Accepted minimum of one research paper in a referred research journal,

I recommend the submission of thesis.

Date:

Dr. Leela Modi
H.O.D. (HINDI Department)
Govt. Commerce Girls College,
Kota (Raj)
(Name and Designation of supervisor)

Specimen 'C' : Declaration

Candidate's Declaration

I, hereby, certify that the work, which is being presented in the thesis, entitled ''मीणा जनजाति के नारी विषयक लोकगीतों में सामाजिक चेतना'' (Meena Janjati Ke Nari Vishyak Lokgeeto Main Samajik Chetna) in fulfillment of the requirement for the award of the degree of Doctor of Philosophy, carried under the supervision of Professor/ Dr. Leela Modi and submitted to the (Department of HINDI J.D.B. Govt. P.G. Girls College, Kota) University of Kota, Kota represents my ideas in my own words and where others ideas of words have been included. I have adequately cited and referenced the original sources. The work presented in this thesis has not been submitted elsewhere for the award of any other degree or diploma from any Institutions. I also declare that I have adhered to all principles of academic honesty and integrity and have not misrepresented or fabricated or falsified any idea/data/fact/source in my submission. I understand that any violation of the above will cause for disciplinary action by the university and can also evoke penal action from the sources which have thus not been properly cited or from whom proper permission has not been taken when needed.

Rakesh Kumar Meena

Date: (Name of the Student)

This is to certify that the above statement made by Rakesh Kumar Meena Enrolment No. RS/1048/10 is correct to the best of my knowledge.

Date:

Dr. Leela Modi
H.O.D. (HINDI Department)
Govt. Commerce Girls College,
Kota (Raj)
(Name and Designation of supervisor)

Specimen 'B': Approval Sheet

Thesis Approval for Doctor of Philosophy

This thesis entitled ''मीणा जनजाति के नारी विषयक लोकगीतों में सामाजिक चेतना'' (Meena Janjati Ke Nari Vishyak Lokgeeto Main Samajik Chetna) by Rakesh Kumar Meena submitted to the (Department of HINDI J.D.B. Govt. P.G. Girls College, Kota) University of Kota is approved for the award of Degree of Doctor of Philosophy.

Examiners

Supervisor

Date:

Place:

"श्री गणेशाय नमः"
गणपति परिवारं चारुकेयरहारं।
गिरिधरवरसारं योगिनी चक्रचारभ।।
भव-भय-परिहारं दुःख दारिद्रय-दुरं।
गणपतिमभिवन्दे वक्रतण्डावतारम्।।

(जो अपने समस्त परिवार के साथ सुशोभित हैं, जिन्होंने केयर (बाँहों के आभूषण) और मोती की माला धारण कर रखी है, जो कृष्ण के समान श्रेष्ठ बल से युक्त, एवं साक्षात् वक्रतुण्ड के अवतार माने जाते हैं, जो सांसारिक भय, दुःख दरिद्रता को हरने वाले भगवान् गणपति की मैं, वन्दना करता हूँ।

प्राक्कथन

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध मीणा जनजाति की नारी के लोकगीतों में सामाजिक चेतना पर अध्ययन करने का प्रयास है। यह शोध प्रबन्ध मीणा समाज के विद्यमान जीवन मूल्यों का प्रमााणित तथ्य है।

आज जीवन मूल्यों का जितना ह्रास हुआ है, उतना संभवतः कभी नहीं हुआ। संयम, अपरिग्रह तथा त्याग को तिलांजलि देकर मानव भौतिकता के चक्कर में परेशान है। सुख–शांति एवं आत्मोन्नति के लिए आज जीवन–मूल्यों की महत्ती आवश्यकता है।

आधुनिक नारी के जीवन में आदिकाल से लेकर आज तक अनेक परिवर्तन आये हैं। परम्परागत मूल्य अस्तित्त्वहीन हो गए हैं, उनका रूप बदल गया है। यह हिन्दी साहित्य में नारी के सामाजिक जीवन में परिलाक्षित हुए हैं। वस्तुतः सामाजिक चेतना नारी के लोकगीतों की अन्य विधाओं में आम आदमी के अधिक करीब हैं अतः उसमें यह बदलाब अधिक सहज बनकर आया है।

हिन्दी साहित्य का प्रादुर्भाव ही उपदेश और आदर्श की प्रतिष्ठा को लेकर हुआ है। मीणा समाज की नारी के लोकगीत भी किसी–न–किसी सामाजिक उद्‌देश्य को लेकर ही मुखरित हुए हैं। प्रत्यक्ष रूप से आदर्श लोककथाएँ एवं लोकगीत हैं जो ज्ञानात्मक दृष्टि से भी ओत–प्रोत हैं।

आज बड़ी द्रुतगति से जीवन मूल्यों का ह्रास हो रहा है। मनुष्य के जो गुण उसे देवत्व की कोटि तक पहुँचाते हैं, वे दुर्लभ हो गये हैं। यहाँ तक कि देश और समाज के लिए प्राणों की आहूति देने वाला यह समाज आज दूसरों के प्राण लेने में जीवन की सफलता मानता है पारिवारिक, सामाजिक, नैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राष्ट्रीय स्तर पर त्याग, ममता, परोपकार, करूणा मानवतावादी पृष्टभूमि के महत मूल्य केवल नाम के ही शेष रह गये हैं।

यहाँ मूल्य संक्रमण ही पारिवारिक विघटन का मूल कारण बना है। माता पिता, भाई–बहन किसी के प्रति व्यक्ति का भावात्मक लगाव नहीं रहा, यहाँ तक

कि दाम्पत्य संबंधों में भी अदृश्य व्यावहारिकता आ गयी है और यथार्थ रूप से अर्थ ही जीवन का चरम लक्ष्य बन गया है।

आज परम्परागत रीति/मूल्य निरर्थक हो गए हैं। इस प्रक्रिया में अच्छे के साथ–साथ बुरा भी नष्ट हुआ है, जो परम्परागत रूढ़ियाँ युगों से समाज को दीमक की तरह खा रही थी, वे आज स्वयं ही खण्ड–खण्ड होकर बिखर गयी है। अंतरराष्ट्रीय सम्पर्क, और शिक्षा के प्रचार–प्रसार के कारण बाल–विवाह, विधवा विवाह, नारी चेतना, अस्पृश्यता आदि बुराईयाँ स्वयं समाप्त हो चली हैं, परन्तु इनका स्थान सामाजिक विषमता, सामाजिक–शोषण, शारीरिक–शोषण, भ्रष्टाचार, लिंग–भेद, आतंक, भाषावाद, जातिवाद, नशा–पान, दहेज–प्रथा, सती– प्रथा, बेईमानी, प्रांतीयता, क्षेत्रीयता, सम्प्रदायिकता ने ले लिया है। जीवन–मूल्य मानव के सह–अस्तित्व के लिए बहुत जरूरी है, लेकिन जब कोई समाज जीवन–मूल्यों की सत्ता को खो देता है तो वह भौतिक प्रगति के शिखर पर पहुँचकर भी तुच्छ और दयनीय हो जाता है। भारतीय समाज में विगत पचास वर्षों में जिस प्रकार चरित्र का अवमूल्यन हुआ है, वह वस्तुतः मीणा समाज की नारी के लोकगीतों में एक झलक में प्रस्फुटित हुआ हैं।

मैं मध्यम परिवार में जन्मा हूँ मैंने अपनी विद्यालय, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय की शिक्षा पूरी की और बचपन से ही मेरी रूचि लोकगीत सुनने में थी। मेरी माँ प्रभाती से संध्या तक लोकगीत गुनगुनाती रहती थी। उनमें मुझे जीवन की दार्शनिकता और समाज के जीवन्त और यथार्थ चित्रण ने प्रभावित किया और मेरा मन उस ओर आकृष्ट हुआ कि मैं इस विषय में शोध कार्य करूँ। लोकगीतों की इस अनुपम धरोहर का सांस्कृतिक हस्तांतरण आगे की पीढ़ी को सौपूं। इस विषय को चुनने का कारण यह रहा कि इससे पूर्व इस विषय पर शोध कार्य नहीं हुआ। अतः विषय पर शोध करने की मेरी इच्छा बलवती हो गई। आदरणीया डॉ. लीला मोदी के निर्देशन में यह शोध कार्य करने का निश्चय किया। शोध का विषय जीवन–मूल्य से संबंधित है। अतः

विषय का लोक मुँख की सांस्कृतिक धरोहर को सहेजने का औचित्य सिद्ध हो जाता है।

अध्याय प्रथम में ''मीणा जनजाति की नारी विषयक लोकगीतों में सामाजिक चेतना के जीवन मूल्यों, महत्त्व और उपयोगिता का अध्ययन किया गया है। लोक व लोकगीतों का विवेचन, करौली क्षेत्र का इतिहास व उनकी भौगोलिक सीमाएँ एवं मीणा समाज का इतिहास व उसकी संस्कृति का दार्शनिक चित्रण किया गया हैं। जिसमें की समाज व क्षेत्र के वृद्ध जनों का ज्ञान सजीव रूप से उल्लेखित है। आज संस्कृति और सभ्यता जिस रूप से बढ़ रही है उनमें नैतिकता व राष्ट्रीय मूल्यों का अभाव है। यह सब आधुनिकीकरण को अपनाने के हेर–फेर में भारतीय समाज आज परंपरागत रीतियों को भूलता नजर आ रहा है।

अध्याय द्वितीय ''जीवन में नारी की भूमिका'' पर आधारित है। नारी का सामाजिक जीवन व समाज में नारी का स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही परिवार व राष्ट्रीय स्तर पर किस तरह से नारी का उत्थान हो इस पर प्रकाश डाला गया है, साथ ही शिक्षा से किस तरह समाज में नारियों की स्थिति में बदलाव लाया जा सकता है। इस पर भी गहरी दृष्टि डाली गयी है। आज शिक्षा जितनी अनिवार्य है हर एक वर्ग के लिए चाहे वह स्त्री हो या पुरुष इस दृष्टि से शैक्षणिक सजगता, जागरूकता को भी उजागर किया गया है। मूल्य निर्माण में सहायक नयी दिशाएँ। साहित्य मूल्यों में साहित्य सृजन, अभिव्यक्ति की यथार्थपरकता तथा मूल्य विघटन पर भी प्रकाश डाला गया है।

शोध विषय सामाजिक है जिसमें की नारी मुख्य केन्द्र बिन्दु रही है। इस दृष्टि से नारी के हर रूप का चित्रण किया है। भारत में आज भी नारी को चाहे वह शिक्षित हो या अनपढ़, पुरुषों की भाँति उसे न तो विचाराभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है और न ही राय देने वाला आत्म निर्णय का अधिकार प्राप्त है, जबकि हमारी भारतीय संस्कृति में नारी की कभी पूजा होती थी। इन्हीं गिरते नारी के जीवन मूल्यों पर गहरी दृष्टि डाली गई है।

अध्याय तृतीय में मीणा जन्म जाति कबीले में नारी के जन्म के पूर्व की सामाजिक चेतना में दर्शाया है मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज की जरूरत व ईश्वर की कृपा अति आवश्यक है। मीणा जनजाति के कबीले में पितृ सत्तात्मक संस्कृति व नारी की स्थिति तथा मादाभ्रूर्ण हत्या एवं अनचाहे माता गर्भ पर प्रकाश डाला गया जो कि सिर्फ और सिर्फ शिक्षा की जागृति व अधिक से आधिक नैतिक मूल्यों में बदलाव होने पर ही इस भयावय स्थिति से उभरने की ताकत समाज को मिल पाएगी।

अध्याय चर्तुथ में मीणा जन्म जाति कबीले में नारी के जन्म के बाद सामाजिक चेतना में दर्शाया है कि नारी का सबसे बड़ा सुख माँ बनना होता है। उसी सुख की आनंद रत्न पुत्र व पुत्री के जन्म के पश्चात् समाज में होने वाली प्रथाएँ, परम्पराओं, कुप्रथाएँ, अंधविश्वास, समाज का बदलता स्वरूप, लड़की के जन्म पर कोख को दुस्कारना, मादा नवजात की हत्या, पुत्री के जन्म दाई व माँ, व्यवहार आदि जीवन मूल्यों पर लोकगीतों के माध्यम से प्रकाश डाला गया है। जिन्होंने आध्यात्मिकता को ही नहीं वरन् समाज व परिवार को भी क्षत–विक्षत कर दिया है।

अध्याय पंचम में आज की स्थिति में जो सबसे ज्यादा नारी को कमजोर बना देना वाला पहलू'' विवाहेतर सामाजिक चेतना'' आज देश की स्थिति पर प्रकाश डालें तो नारियों को रूणी की तरह चाटकर खाने वाला कीड़ा ''दहेज'' है जो आज भौतिकता की चकाचौंध में लिप्त कुछ वर्ग व समाज अपनी नैतिकता को भूलकर जो जुल्म नारियों पर ढ़ा रहा है। जिससे देश की संस्कृति व नारी के सम्मान को घातक चोट पहुँची है। जिसकी वजह नारी का ''कम शिक्षित'' होना है। जिस नारी की पूजा होती थी। उस नारी से इस तरह की बरबरता मनुष्य को ज्ञान विहिन और विवेक शून्य बना देती है। शोध में नारी से परिवार, समाज, देश की अपेक्षाएँ पर गहरी दृष्टि का आकलन किया गया है।

अध्याय छठे में मीणा जनजाति में जन्म व मृत्यु के बाद सामाजिक चेतना में समाज में फैले धार्मिक कर्मकाण्ड, धर्म, का बदलता स्वरूप अंधविश्वास तथा नैतिक मूल्यों के अंतर्गत नैतिकता और सामाजिक मान्यताओं का बोझ झेल रही नारी से जन्म व मृत्यु के बाद जो भेदभाव किया गया, उसका चित्रण किया गया है। मरने के बाद भेदभाव, अस्थि विसर्जन में भेदभाव व समाज के उन लोगों पर प्रहार किया गया है। नारी तो यह मानकर ही जीवित है की समाज सिर्फ पुरुष प्रधान है। इसके बिना कोई कार्य संभव नहीं हो सकता है, जो कार्य सिर्फ और सिर्फ पुरुष कर सकते हैं, वो महिलाएँ नहीं चाहे कोई वर्ग धर्म ही क्यों न हो। उनकी इस धारणा से समाज में अंधविश्वास और कुरीतियों के अलावा और कुछ हासिल नहीं होगा। अंत में शरीर की नश्वरता, पालकी, कृष्णावतार से उद्धार की याचना, एकादशी व्रत का महत्त्व, कर्मफल का महत्त्व, आत्मा का संवाद, निर्वेद से विश्वमंगल मनोकामना, गंगा घाट का वर्णन, पिंड दान आदि का वर्णन है।

अध्याय सातवें में वर्तमाान राजस्थानी मीणा जनजाति में नारी की दशा व दिशाओं में सबसे महत्त्वपूर्ण विविध सरकारी व सामाजिक संस्थाओं के योगदान पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला गया है। जो आज के समय को सबसे मजबूत बनाने में जिसका श्रेय दिया जाता है। वह है ''शिक्षा'' और शिक्षा का ज्ञान हुआ शिक्षा के प्रसार से। नारी की दशा सुधारने हेतु किये गए प्रयासों पर विस्तार से मंथन किया गया है।

आज जिस पटल पर नारी की स्थिति है, उसमें नैतिकता, अधिकार, स्वतंत्रता, संप्रभुता को अटल बनाये रखने में सबसे प्रमुख श्रेय संचार को है, जिसने की एक नयी अलख ज्योत जला दी जिसने शिक्षा का प्रचार–प्रसार कर उसके महत्त्व उसकी जरूरत को आज जगह–जगह जाकर जिस पारदर्शिता से समाज में पिरोया है, उससे आज पूरा देश, समाज एक माला के रूप बंधकर सामने आया है।

उपसंहार में ''मीणा जनजाति के आरक्षण, संस्कृति बढ़ते फैशन पर एवं लोकगीतों के आधुनिकिकरण करने की समस्या पर प्रकाश डाला गया है।

परिशिष्ठ में लोकगीत कलाकारों के नाम, परांपरागत लोकगीतों का संजीव चित्रण किया गया है। आज के युग के लोकगीत हैं। मीणा जाति शोध से संबधित आँकड़ों की तालिकाएँ हैं। लोकगीतों के बदलते स्वरूप पर भी गौर किया है। अंत में चित्र हैं। प्रस्तुत शोध पूर्णतः मौलिक है। मैंने अपनी दृष्टि से जीवन मूल्यों पर अपने विचार व्यक्त किये हैं। यत्र–तत्र तथ्यों का पुनर्स्थापन भी किया है।

अतः प्रस्तुत शोध में आदर्शात्मक, वैज्ञानिक, यथार्थवादी, साक्षत्कार एवं आधुनिक शोध विधियों की अनेक पद्धतियों का सहारा लिया गया है। अतः जीवन के मूल्यों के इस काल में इस प्रकार के अध्ययनों की महत्ती आवश्यकता है। शोध के अंत में संदर्भ सूची भी दी गई है और भावी अध्येताओं के मार्गदर्शन हेतु यह प्रस्तुत है, जो उनके लिए उपयोगी साबित होगी। स्पष्ट है कि यह शोध उन सभी के लिए अत्यंत उपयोगी व रूचिकर है जो आगे की पीढ़ी के शोधर्थियों के शोध में श्रृंखला की एक कड़ी साबित होगा। समाज शास्त्री हैं, लोकगीत एवं लोककलाकार हैं, साथ ही विशेष रूप से हिन्दी साहित्य एवं लोकसाहित्य, की विषयवस्तु में एक महत्त्वपूर्ण योगदान होगा, ऐसी मेरी आशा है।

आभार

प्रस्तुत पीएच.डी. शोधप्रबंध की पूर्णतः के लिए मैं सर्वप्रथम उन मनीषियों को नमन करता हूँ, जिनको विधाता ने एक अधिक मानवीय, अधिक सुंदर, प्रेमपूर्ण, मतभेदों रहित, विभाजन रहित, संवेदनशील, सहानुभूतिपूर्ण और उच्चतर समरस पर आधारित दुनियाँ और संसार निर्मित करने की प्रेरणा दी। जिनकी असीम कृपा से ही मैं अपना यह कार्य पूर्ण करने का प्रयास कर पाया हूँ।

प्रस्तुत शोध प्रबंध के लिए मैं अपनी शोध मार्गदर्शिका डॉ. लीला मोदी (विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, राजकीय जानकीदेवी बजाज कन्या स्नात्तकोत्तर महाविद्यालय, कोटा) के प्रति अपने हृदय के गहनतम तल से आभारी व कृतज्ञ हूँ, जिनके अत्यधिक स्नेह, अत्यधिक सहयोग, प्रोत्साहन, प्रेरणा व मार्गदर्शन से ही यह शोध–प्रबंध संभव हो पाया, क्योंकि वे हिन्दी साहित्य की सभी शाखाओं व उपशाखाओं के गहरे ज्ञान से अधिकृत है। वास्तव में उनकी दार्शनिक दृष्टि विश्लेषण दक्षता, अवधारणा, स्पष्टता तथा अभिव्यक्ति की मधुरता से ही मेरे ज्ञान का विकास और उन्नयन हुआ। इस दृष्टि से मैं सदैव उनका ऋणी रहूँगा। मुझे उनका जो विश्वसनीय सहारा रहा, वह मेरे भावी जीवन में भी अविस्मरणीय रहेगा, क्योंकि मैंने एक तरह से उनके साथ उठते–बैठते उनके स्वयं के पुत्र जैसा ही दर्जा प्राप्त कर लिया है।

प्रस्तुत शोध के लिए मैंने मेरे पीएच.डी शोध हेतु पंजीकरण के समय कोटा विश्वविद्यालय के तात्कालिक कुलपति प्रो. पी.के. दशोरा के प्रति अत्यंत आभारी हूँ, क्योंकि उनकी सद्पेक्षा से ही इस कार्य का संपूर्ण होना संभव है।

परिवार हमारे सभी प्रकार के संस्कारों की प्रथम पाठशाला है। अतः इस दृष्टि से मैं अपने माता–पिता श्री लखनलाल मीणा तथा श्रीमती रामश्री देवी का

अपने जीवन की प्रत्येक उपलब्धि समर्पित करता हूँ। मैं अपनी बड़ी बहन राजेशी मीणा व जीजा श्री अनिल कुमार मीणा तथा भाई एवं भाभी राजेश कुमार व बीना का भी हृदय से आभारी हूँ।

मैं अपनी अतिप्रिय पत्नी हेमलता व पुत्र दर्श को भूला नहीं सकता, जिसने अपनी प्यारी–सी मुस्कान से हमेशा मेरा आत्मविश्वास बढ़ाया है। साथ ही इस शोध–प्रबंध को पूरा करने के लिए प्रेरित करता रहा।

मैं प्रस्तुत शोध–प्रबंध के लिए अध्ययन सामग्री एकत्रित करने की दृष्टि से मैं कोटा शहर के विभिन्न विश्वविद्यालयों व महाविद्यालयों के पुस्तकालय प्रभारियों व उनके कर्मचारियों को भी धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ। जिन्होंने मुझे सहयोग प्रदान किया।

मैं ग्राम नंगला मीणा व मीणा समाज के प्रति भी अपने हृदय के गहनतम तल से आभारी व कृतज्ञ हूँ, जिनके अत्यधिक स्नेह, अत्यधिक सहयोग, प्रोत्साहन, प्रेरणा व मार्गदर्शन से भी यह शोध प्रबंध संभव हो पाया है। व्यक्तिगत रूप से मिलने पर मुझे मीणा समाज की नारी के व्यक्तित्त्व के बारे में बहुत सी जानकारी प्राप्त हुई हैं। उनमें सहृदयता, प्रतिभा, अंतदृष्टि, विदित ज्ञान, निरप्रेक्षता और निर्वेयक्तिकता का सुंदर समन्वय है।

इस स्पष्ट, कुशल, कम्प्यूटराईज्ड टंकण के लिए श्री रूपेश कुमार पुत्र श्री रामचरण मचैरिया (यादव कम्प्यूटर, ग्वालियर) जी को भी धन्यवाद देता हूँ, जिनके अथक प्रयत्नों से मैं इस शोध–प्रबंध को पूरा करने में समक्ष हो पाया हूँ।

इस शोध–प्रबंध में जिन विद्वानों और विशेषज्ञों की रचनाओं से कण–कण बटोरकर मैंने अपना यह शोध–प्रबंध पूरा किया, उनके प्रति भी मैं आभार व्यक्त करता हूँ। मैं स्वीकार करता हूँ कि इस शोध–प्रबंध में जो कुछ भी उत्कृष्ट है, वह सब मेरी मार्गदर्शिका डॉ. लीला मोदी की ही देन है और जो कुछ त्रुटियाँ हैं, उनका दायित्व मेरा हैं फिर भी मैं आश्वस्त हूँ कि विशेषज्ञगण उनको नजरअंदाज करेंगे और भविष्य में भी शोधरत् रहने के लिये मेरे को संकल्प बल प्रदान करेंगे।

अंत में मैं यह शोध–प्रबंध मेरे श्री गुरू के चरणों में अर्पित करता हूँ, जिनकी कृपा और अशीर्वाद से मुझे यह शोध लिखने की शक्ति मिली। मैं स्कंदपुराण के इस श्लोक के साथ इस व्यक्त भावना के साथ समाप्त करता हूँ।

यस्य स्मरण मात्रेण, ज्ञान मुत्पद्यते स्वयम्।
य एव सर्वसम्प्राप्ति, तस्मैश्री गुरूवे नमः।।

(राकेश कुमार मीना)
शोधार्थी

वार :
दिनांक

विषय–सूची

क्रं. सं.	विषय वस्तु	पृष्ठ संख्या
(अ)	प्रमाण पत्र	
(ब)	प्राकथ्थन (Preface)	i से xvi
अध्याय–1	मीणा जनजाति की नारी विषयक लोकगीतों में सामाजिक चेतना	1 से 56
अध्याय–2	जीवन में नारी की भूमिका	57 से 112
अध्याय–3	मीणा जनजाति कबीले में जन्म से पूर्व सामाजिक चेतना	113 से 148
अध्याय–4	मीणा जन्म जाति कबीले में नारी के जन्म के बाद सामाजिक चेतना	149 से 175
अध्याय–5	मीणा जनजाति में विवाहेतर सामाजिक चेतना	176 से 237
अध्याय–6	मीणा जनजाति में जन्म व मृत्यु के बाद सामाजिक चेतना	238 से 278
अध्याय–7	वर्तमान राजस्थानी मीणा जनजाति में नारी की दशा व दिशा।	279 से 319
उपसंहार		320 से 337
परिशिष्ट		338 से 364
संदर्भ ग्रंथ सूची		365 से 369

रूप – रेखा

अध्याय – प्रथम

मीणा जनजाति की नारी विषयक लोकगीतों में सामाजिक चेतना–

लोकगीत, लोक : अर्थ और स्वरुप, लोकगीतों का महत्व, करौली क्षेत्र में मीणा जनजाति की नारियों की दशा, करौली क्षेत्र की भौगोलिक सीमाएँ, करौली क्षेत्र का इतिहास– सिटी पैलेस, मदन मोहन जी मंदिर, कैलादेवी मंदिर, लाँगुरिया, श्री महावीर जी, तिमनगढ़ का किला, कैला देवी अभ्यारण, करौली क्षेत्र की संस्कृति, सभ्यता, इतिहास, समाज का एक परिचय, रीति–रिवाज, मीणा जाति का धर्म व व्यवसाय, करौली क्षेत्र का समाज, साहित्य व लोकगीत, लोकगीतों का वर्गीकरण, देवी देवताओं के गीत, देवीगीत, करवा चौथ, ऋतुओं के अनुकूल गीत, होली गीत, बच्चों के गीत, बालिकाओं के गीत, नारी विषय का सामाजिक स्वरूप, विभाजन एवं वैविध्य, आकृति तथा गठन, आवास, वेश–भूषा, खान–पान, मनोरंजन–उत्सव–मेले, सांस्कृतिक गाथाएँ, पंचायती प्रथा, मीणा जनजाति के लोकगीत– मीणा ढांचा, पछवारा, पद, कन्हैया, लोकगीतों के पात्र–गुरू, मेडिया, सहगायक, वाद्ययंत्र व वादक, जोठ, गायकों की वेश–भूषा, स्थान व समय, स्वागत व सम्मान, स्वर, रस व्यंजना।

अध्याय : द्वितीय

जीवन में नारी की भूमिका–

नारी छवि की सांस्कृतिक संरचना, त्रिया चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं, हिन्दू नारी की स्थिति, विभिन्न कालों में स्त्री की स्थिति, वैदिककाल, उत्तर–वैदिक काल, उत्तर–वैदिक काल, धर्मशास्त्र काल, मध्यकाल, ब्रिटिशकाल–पारिवारिक क्षेत्र, सामाजिक क्षेत्र, आर्थिक क्षेत्र, नारी जीवन का सामाजिक वातावरण, समाज में नारी का स्वरूप, परिवार में नारी की स्थिति, राष्ट्र में नारी की स्थिति, महिला अधिकार एवं भारतीय स्थिति, संवैधानिक उपाय, महिला अधिकार आन्दोलन, अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय में नारी की स्थिति, महिला अधिकारों की विभिन्न देशों में स्थिति, संयुक्त राष्ट्र एवं महिला अधिकार, अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदाएँ एवं महिला

अधिकार, महिला अधिकारों के विषेष प्रावधान, महिलाएँ एवं अंतर्राष्ट्रीय वर्ष व दशक की घोषणा, महिला अधिकारों से संबंधित घोषणा, महिलाएँ तथा विश्व मानवाधिकार सम्मेलन 1993, महिला अधिकारों की जागृति हेतु किये गये प्रयास, महिला अधिकारों हेतु विभिन्न देशों द्वारा समय–समय पर किये गये प्रयास, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर महिला अधिकारों के विकास से सम्बन्धित घटनाक्रम, महिलाओं के लिए सर्वश्रेष्ठ देश।

अध्याय : तृतीय

मीणा जनजाति कबीले में जन्म से पूर्व सामाजिक चेतना–

जन्म के लोकगीतों में संस्कृति, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, गर्भकाल के गीतों में सामाजिक चेतना, प्रसव व लोक–विश्वास, वैज्ञानिक धारणा, लोक विश्वास, नाज–नखरे, पितृ सत्तात्मकता, पितृ सत्तात्मक संस्कृति में नारी की भूमिका, लीपने के गीत, 'पद' विधा गीत, पुरुष वर्ग के श्रम गीत, कोल्हू के गीत, सामाजिक जीवन पर प्रभाव, हल जोतने का वर्णन, बीज बोने का वर्णन, सिंचाई का वर्णन, कटाई का वर्णन, चक्की के गीत, चरखे के गीत, मादा भ्रूण हत्या, मादा भ्रूण हत्या कानूनी अपराध, नारी के छह रूप, मुस्लिम समाज में तलाक का फतवा, मादा भ्रूण–हत्या के यक्ष प्रश्न, समस्या का समाजशास्त्रीय पक्ष, गर्भपात कानून की विशेषताएँ, गर्भपात–कानून में छूट, भ्रूण–परीक्षण एवं भ्रूण–हत्या की आवश्यकता, अनचाहे माता गर्भ, पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव, सीमित परिवार, बाल–विवाह।

अध्याय–चतुर्थ

मीणा जनजाति कबिले में नारी के जन्म के बाद सामाजिक चेतना–

जन्म के बाद नवजात बच्ची की हत्या, जन्म पर भेदभाव पूर्ण स्थिति, नारी की दुर्दशा के कारण–ब्राह्मणवाद,संयुक्त परिवार व्यवस्था, बाल विवाह, कन्यादान, वैवाहिक कुरीतियाँ, पुरुषों पर आर्थिक निर्भरता, स्त्री शिक्षा की उपेक्षा, मुसलमानों के आक्रमण, जन्म संस्कार के गीत, जन्म के बाद मादा नवजात बच्ची की हत्या, जन्म पर दाइयों को प्रताड़ित करना, नेग, लड़की के जन्म पर

कोख को दुत्कारना, बाल्यकाल में परिवार में भेदभाव पूर्ण स्थिति, जातकर्म, नामकरण, कर्ण छेदन, वेशभूषा, आभूषण। समानता की खोज, नारी एक स्वतंत्र व्यक्तित्त्व।

<u>अध्याय–पंचम</u>

मीणा जनजाति में विवाहेत्तर सामाजिक चेतना–

वैवाहिक समस्याएँ, सगाई गीतों में सामाजिकता, सगाई, परंपरा, लग्न–पत्रिका, उकीरा, वधू पक्ष, वर पक्ष, बंद्याक, बारात और बराती, वैभव का वर्णन, पिता को शीघ्र विवाह करने हेतु उपालम्भ देना, लडकी वालों की प्रबंध क्षमता, तेल, तेल चढ़ाना, तेल उतारना, बहिन की महत्वाकांक्षा, ननद–भाभी का रुचिकर संबंध, बरात प्रस्थान के गीत, तोरण, फेरे, पुनर्जन्म और कर्मवाद में विश्वास, कन्यादान, दहेज प्रथा, हण्डूकड़ी प्रथा, दहेज प्रथा की समस्या, दहेज का उद्देश्य, वधू मूल्य, दहेज के सामाजिक प्रभाव, दहेज से हानि, कम शिक्षित, अंधविश्वास, पानी भरने की विकट समस्या, राजस्थान जनगणना 2011 (संशोधित आंकड़े) मई, 2013 साक्षरता दर, अनु.जाति, जनजाति कार्यशील जनसंख्या, (0.6) आयु समूह की जनसंख्या, शिशु लिंगानुपात, करौली जिला की महिला साक्षरता, अनु. जाति एवं जनजाति राजस्थान एवं भारत जनसंख्या, नारी से महती अपेक्षाएँ, परिवार की अपेक्षायें, समाज की अपेक्षाएँ, देश की अपेक्षाएँ, विवाह में अभिभावकों की दबाव की राजनीति का अन्त, स्वावलम्बी युवक ही विवाह अनुमति योग्य, शासन हस्तक्षेप आवश्यक– विवाहपूर्व शारीरिक क्षमता प्रमाण पत्र, चरित्र प्रमाण पत्र, पंजीकरण व प्रमाण पत्र आवश्यक, गृहयोग के स्थान पर गृहस्थ योग, तलाक का मानवीकरण, सामाजिक समस्याएँ– बाल–विवाह, कन्या–मूल्य, युवाग्रहों का पतन, वेश्यावृत्ति की समस्या, वृद्धावस्था की सबसे बड़ी समस्या, सामाजिक समस्याओं से सम्बन्धित सुझाव, सांस्कृतिक समस्याओं से सम्बन्धित सुझाव, शैक्षिक समस्याओं से सम्बन्धित सुझाव, स्वास्थ्य की समस्याओं से सम्बन्धित सुझाव, अनुसूचित जनजातियों की समस्याओं का निराकरण– सरकारी प्रयास, महिलाओं का सामाजिक चेतना के प्रयास, राज्य महिला

आयोग, सामूहिक विवाह अनुदान योजना, बालिका समृद्धि योजना, स्वयंसिद्ध योजना, महिलाओं की आयवृद्धि एवं रोजगार की योजना (नौराड), महिला शक्ति अवार्ड, स्व–शक्ति परियोजना, राष्ट्रीय महिला कोष (आरएमके), महिलाओं के प्रशिक्षण एवं रोजगार कार्यक्रम हेतु सहायता (स्टेप), स्वावलम्बन, कामकाजी एवं बीमार महिलाओं के बच्चों के लिए शिशु सदन/में देख–रेख केन्द्र, कामकाजी महिलाओं के लिए छात्रावास, स्वाधार, महिलाओं तथा लड़कियों के लिए अल्पावास गृह, शिशु गृह, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना इन्दिरा महिला योजना, बालिका समृद्धि योजना, किशोरी बालिका योजना, न्यू मॉडल चर्खा योजना, महिला डेयरी परियोजना, ग्रामीण समृद्धि योजना, सुनिश्चित रोजगार योजना, रोजगार छतरी योजना, प्रधानमंत्री रोजगार योजना, उधमिता विकास कार्यक्रम, अम्बेडकर विशेष रोजगार योजना, इन्दिरा आवास योजना, राष्ट्रीय बायोगैस कार्यक्रम, ग्रामीण पेयजल योजना, स्वजल योजना, स्वच्छ शौचालय निर्माण योजना, दीनदयाल उपाध्याय ग्रामीण सम्पर्क मार्ग योजना, स्वर्ण जयन्ति ग्राम विकास योजना, अम्बेडकर ग्राम्य विकास योजना, आश्रय आवासीय योजना, राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना, राष्ट्रीय पारिवारिक लाभ योजना, राष्ट्रीय टीकाकरण कार्यक्रम, स्वास्थ्य सखी योजना, अन्नपूर्णा योजना, अनौपचारिक शिक्षा योजना, प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम, दम्पत्ति शैक्षिक योजना, शिक्षा गांरटी योजना, किसान मित्र, सघन मिनी डेयरी योजना, राष्ट्रीय सरकार द्वारा चलाए जा रहे महिलाओं से संबंधित विभिन्न कार्यक्रम–पंचधारा योजना, वात्सल्य योजना, ग्राम्य योजना, आयुष्मती योजना।

अध्याय–छठा

मीणा जनजाति में जन्म व मृत्यु के बाद सामाजिक चेतना–

मृत्यु संस्कार, मृत्यु संस्कार के गीत, मीणा जनजाति के अतः रुदन की करुण गाथा, अबोध शिशुओं के प्रति सिसकता नासूर, रुदन के बीच राहत के छींटे, पुत्र मृत्यु के उपरांत हृदय विदारक सोहर, मरने के बाद भेदभाव, अस्थि विसर्जन में भेदभाव, दार्शनिक दृष्टिकोण, शरीर की नश्वरता, पालकी,

कृष्णावतार से उद्धार की याचना, एकादशी व्रत का महत्त्व, कर्मफल का महत्त्व, आत्मा का संवाद, निर्वेद से विश्वमंगल मनोकामना, गंगा घाट का वर्णन, पिंड दान।

<u>अध्याय–सातवाँ</u>

<u>वर्तमान राजस्थानी ''मीणा जनजाती मेंनारी की दशा व दिशा –</u>

नारियों के खिलाफ हिंसात्मक अपराध, भ्रूण हत्या, बलात्कार और यौन–उत्पीड़न, दहेज उत्पीड़न, सतीप्रथा का प्रचलन, महिला कार्मिकों को कम वेतन दिया जाना, नारी की दशा सुधारने हेतु किये गए प्रयास– उन्नीसवीं शताब्दी के सुधार आंदोलन– महर्षि दयानंद सरस्वती, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, कर्वे, बीसवीं शताब्दी के सुधार आंदोलन– महात्मा गाँधी द्वारा सुधार आंदोलन, स्त्री संगठनों द्वारा सुधार आंदोलन, संवैधानिक व्यवस्थाएँ, महिला कल्याण कार्यक्रम, नारियों के उत्थान के लिए कानूनी व्यवस्थाएँ, शिशु–गृह कानून, समान वेतन अधिनियम, हिन्दू विवाह अधिनियम, दहेज निरोधक अधिनियम, बाल–विवाह निरोधक अधिनियम में संशोधन, विशेष विवाह अधिनियम, सती निरोधक अधिनियम, अन्तर्विभागीय समन्वय समितियाँ, राष्ट्रीय महिला आयोग, वीमेन्स डवलपमेण्ट कॉरपोरेशन, प्रौढ़ नारियों के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा संक्षिप्त पाठ्यक्रम, प्रौढ़ नारियों के लिए प्रकार्यात्मक साक्षरता, सीमावर्ती क्षेत्र कल्याण केन्द्र, पोषण कार्यक्रम, अन्य कल्याण कार्यक्रम, अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस, नारियों को समान अधिकार, नारियों के विकास, उन्नति और शक्ति संपन्नता के प्रारूप, नारियों के रोजगार और प्रशिक्षण पर विशेष बल, नारियों के आर्थिक विकास हेतु कल्याण और समर्थन सेवाएँ, नारियों के विकास एवं अधिकारों की प्रतिबद्धताएँ, नारियों की दशा में परिवर्तन–सुधार आंदोलन, संवैधानिक प्रावधान, स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति, आर्थिक क्षेत्र में प्रगति, राजनीतिक चेतना में विकास, सामाजिक जागरुकता में विकास, पारिवारिक क्षेत्र में अधिकारों की प्राप्ति, राजस्थान में महिला विकास कार्यक्रम, राजस्थान

सरकार द्वारा संचालित कार्यक्रम, इरादा योजना, इन्दिरा महिला योजना, किशोर बालिका योजना 'लाडली', महिला रोजगार योजना, एकीकृत जनसंख्या व विकास परियोजना, महिला नीति, स्वयं सहायता समूह, जिला महिला सहायता समिति, जनजातियों की दशा सुधारने हेतु सुझाव– आर्थिक दशा सुधारने हेतु सुझाव, सामाजिक दशा सुधारने हेतु सुझाव, सांस्कृतिक दशा सुधारने हेतु सुझाव, शैक्षणिक दशा सुधारने हेतु सुझाव, स्वास्थ्य की दशा सुधारने हेतु सुझाव, जनजातियों की समस्याओं का निराकरण–सरकारी प्रयास, संवैधानिक प्रयास, प्रशासनिक व्यवस्था, कल्याणकारी तथा सलाहकार संस्थाए, विधान मण्डलों तथा संसद में प्रतिनिधित्त्व ,सरकारी नौकरियों में आरक्षण, कल्याण योजनाएँ, केन्द्रीय परियोजनाएँ, विकास योजनाएँ, आदिम जनजाति समूहों के लिए योजना, विशेष केन्द्रीय सहायता, अनुसूचित जनजाति के बालक/बालिकाओं के छात्रावास, आश्रम विद्यालय, व्यावसायिक प्रशिक्षण, जनजातीय बालिकाओं की शिक्षा, जनजातीय अनुसंधान संस्थान, शिक्षण एवं प्रशिक्षण केन्द्र, छात्रवृत्तियाँ, अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों पर अत्याचारों की रोकथाम, विशेष केन्द्रीय सहायता, सहकारी समितियाँ, राज्य क्षेत्र की योजनाएँ– शिक्षा, आर्थिक विकास, स्वास्थ्य, आवास तथा अन्य योजनाएँ।

<u>उपसंहार–</u>

लोकगीत का महत्त्व, भाषा वैज्ञानिक महत्व, सांस्कृतिक महत्व, मीणा जनजाति की नारी के आरक्षण प्रावधान की समस्या, संस्कृति का ह्रास, सामाजिक महत्व, सामाजिक जीवन में बढ़ते हुए फैशन, मीणा जनजाति के नारी के लोकगीतों का आधुनीकरण करने की समस्या–स्थानीय भाषा, रीति–रिवाज, साक्षरता, मनोरंजन के साधन, सीमित क्षेत्र।

<u>परिशिष्ट–</u>

राजस्थानी लोकगीतकारों का संक्षिप्त परिचय, परम्परागत मांगलिक कार्यक्रमों के लोकगीत, आज के युग के लोकगीत, वर्तमान में लोकगीतों का बदलता स्वरूप, चित्र।

अध्याय – प्रथम

मीणा जनजाति के नारी विषयक लोकगीतों में सामाजिक चेतना

1.1 लोकगीत, अर्थ, स्वरूप महत्त्व, और वर्गीकरण।

1.2 करौली क्षेत्र, सभ्यता, संस्कृति, इतिहास व समाज का परिचय।

1.3 मीणा जनजाति का सामान्य परिचय धर्म व व्यवसाय।

1.4 मीणा जनजाति के लोकगीत और सामाजिक चेतना।

अध्याय – प्रथम

मीणा जनजाति के नारी विषयक लोकगीतों में सामाजिक चेतना–

लोकगीत–

लोकगीत, लोकसाहित्य की एक विधा है। हिन्दी साहित्य कोश के अनुसार ''लोकगीत, सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त लोकमानस की सुख दुखात्मक अनुभूतियों की सरस रागात्मक अभिव्यंजना का लयात्मक उपहार है। लोकगीतों में लोकसमाज के विविध भाव कमल खिलते हैं। जैसे हर्ष–विषाद, प्रेम–ईर्ष्या, मान–अपमान, घृणा, भय, आश्चर्य, ग्लानि, क्षोभ, वीरता, वात्सल्य भक्ति आदि। ये भाव सरल रागात्मक रुप में व्यक्त होते हैं। लोकगीतों में मानव मन की अनंत भावनाओं एवं कल्पनाओं का ब्रह्माण्ड समाया हुआ है। यहाँ बचपन लोरियों में झूलता है, यौवन गीतों की तर्ज पर थिरकता है तो जीवन यात्रा से थकित बुढ़ापा भक्तिगीतों में विश्राम करता है। प्रेमी युगल संयोग के क्षणों में मिलन के गीत गुनगुनाते हैं, तो वियोग में विरह–वेदना से कराहते हैं। रुठना–मनाना, मिलना–बिछड़ना, हँसना–रोना, ताना–उलाहना, रीझ–खीझ आदि भाव लोकगीतों में दिखाई देते हैं।''[1]

लोकगीत एक कण्ठ से दूसरे कण्ठ तक पीढ़ी दर पीढ़ी यात्रा करते हैं फिर भी ये कभी बासी नहीं होते हैं। क्योंकि उनमें स्वतः ही नवीनता का समावेश हो जाता है। ये प्राचीन होते हुए भी नित्य नूतन है। ये शास्त्रीय गायन की उठा–पटक से कोसों दूर सरलता एवं सरसता से ओतप्रोत हैं। इनमें निहित मिठास इतनी कर्णप्रिय होती है कि श्रोता मुग्ध हो बरबस ही झूमने लगता है।

लोकगीतों के उद्‌गम के संबंध में देवेन्द्र सत्यार्थी लिखते हैं– 'कहाँ से आते हैं इतने गीत? स्मरण–विस्मरण की आँख मिचौली, से कुछ अट्टाहास से, कुछ उदास हृदय से। कहाँ से आते हैं इतने गीत? जीवन के खेत में उगते हैं ये गीत। कल्पना भी अपना काम करती है रसवृति और भावना भी नृत्य का हिलोरा भी पर ये सब हैं खाद, जीवन के सुख–दुख ये हैं लोकगीतों के बीज।"

श्रीसत्यार्थी के अनुसार–''लोकगीत लोकसंस्कृति के मुहँ बोलते चित्र हैं। लोकगीत हृदय के खेत में उगते हैं। सुख के गीत उमंग के जोर से जन्म लेते हैं

तथा दुःख के गीत बोलते लहू से पनपते हैं और आँसुओं के साथी बनते हैं। लोकगीतों में शास्त्रीय नियमों का बंधन नहीं होता। ये आकाश की तरह उन्मुक्त एवं पवन की तरह स्वच्छंद होते हैं। इनमें पहाड़ी झरने की चंचलता सागर की गंभीरता एवं सरिता की प्रवाहशीलता है। लोकगीतों में एक ओर फूलों की भावभीनी सौरभ है, कलियों की चटक है, पक्षियों का कलरव है, तारों की जगमगाहट एवं चन्द्र ज्योत्सना का उज्जवल सौंदर्य है तो दूसरी ओर काँटो की चुभन है, मेघों का गर्जन है, निशी का तमस है, सूरज की तपन है।''[2]

लोकगीतों की विशेषता उजागर करते हुए प्रो. (डॉ.) नंदलाल कल्ला लिखते हैं लोकगीतों में जीवन के दोनों पक्ष चित्रित हुए हैं। उसमें कोमलता है तो कठोरता भी, संयोग है तो वियोग भी। लोकगीत सार्वजनिक एवं सार्वकालिक हैं। दस दिशाओं में इनका अखंड साम्राज्य है। ये अजर अमर हैं।''[3] मि. आर.बी विलियम्स लोकगीतों की तुलना विशाल वटवृक्ष से करते हैं ''लोकगीत न पुराना होता है न नया वह तो जंगल के एक वृक्ष के समान होता है जिसकी जड़ें तो धरती में दूर तक भूतकाल में धंसी हुई होती हैं ? जिसमें नित्य नई—नई डालियाँ पल्लव और फूल लगते रहते हैं।''[4]

लोक : अर्थ और स्वरूप–

'लोक' शब्द से एक समाज का बोध होता है। एक ऐसा समाज जो समष्टि के अलिखित अनुशासन में बैठकर चलता है और जो समान परंपरा से प्रेरणा लेता है। वस्तुतः लोक साहित्य में व्यवहृत लोक को समझने के लिए विभिन्न विद्वानों द्वारा लोक शब्द की व्याख्या अनिवार्य है।

एन साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका में 'लोक' शब्द का अनुवाद अंग्रेजी के ''फ़ोक'' शब्द से हुआ है। ऋग्वेद में 'लोक' शब्द एक विराट समाज की ओर संकेत करता है। ''संहस्त्रशीर्षा पुरुषः सहस्रपात" अर्थात् वह (लोक) विराट पुरुष है, जिसमें हजारों सिर, हजारों आँखे एवं हजारों चरण हैं।''[5] अतः लोक पद का अभिप्रेत जनमानस ही है यह शब्द संस्कृत की लोक दर्शन धातु में धञ् प्रत्यय जोड़ने से उत्पन्न हुआ है। इस धातु का अर्थ है देखना इस लट् लकार में अन्य पुरुष एक वचन रुप में होता है। ऋग्वेद में इस शब्द का मूल अर्थ है 'देखने वाला'।''[6] सिद्धांत कौमुदी और यजुर्वेद में भी

लोक समाज की परिकल्पना का व्यापक अर्थ होता है।'' य इमे रोदसी उभे अहंमिंद्रमतुष्टवं विश्वामित्रस्य रक्षति ब्रहोदं भारतं जनं।''[7] लोक अनेक रुपों में समाज व साहित्य में परिव्याप्त है–''बहुव्याहितो वा अयं बहुशोलोकः।''[8]

श्रीमद्भगवतगीता में लोक और लोक संग्रह शब्दों का प्रयोग अनेक स्थानों पर हुआ है लोक शब्द का प्रयोग यहाँ साधारण जनता के लिए है।''[9]

महाकवि तुलसीदास ने भी 'रामचरितमानस' में 'लोक' और 'वेद' शब्दों का प्रयोग कर समाज में इनकी पृथक सत्ता को स्वीकृति दी है–

''लोकहं वेद विदित सब काहू
लोकहि वेद सुसाहिब रीति।।''[10]

लोकगीतों का महत्त्व–

लोकगीतों का राजस्थानी जन जीवन में बहुत महत्त्व है, इसके बिना जीवन नीरस एवं शुष्क होता वास्तव में राजस्थानी नारी ने इतना गाया है कि हम उसकी गिनती नहीं कर सकते।

लोकगीत मानव जीवन को प्रमुदित करने वाली अचूक औषधि है। लोकगीत मानसिक प्रवृतियों का परिष्कार करके सुख शांति प्रदान करते हैं। दुख की बेला में सहनशक्ति व धीरज देते हैं तो सुख में मन को उल्लासित करते हैं ये प्रताड़ित को सम्बल देते हैं तो पथभ्रष्ट का मार्गदर्शन करते हैं और मोहजाल में फँसे व्यक्ति को सदुपदेश भी देते हैं। लोकगीतों का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए श्री नानूराम संस्कर्ता लिखते हैं–''लोकगीत न होते तो संसार दुःखी और निराशमय होता। लोकगीत विवाद को मिटाने शोक को समेटने एवं दुःख को मेटने वाले नये उपदेश है।''[11]

लोकगीत लोक संस्कृति के दर्पण हैं। लोकगीतों का वैशिष्ट्य बताते हुए प्रो. (डॉ.) नंदलाल कल्ला लोकसाहित्य शास्त्र में लिखते हैं कि– ''लोकगीतों में वैचारिक दर्शन का भार, अतिशयता, अलंकरण, गायक की सीमायें, कालावधि, मात्रा नियमों की शृंखलाओं का अस्तित्व नहीं होता। वे तो रस की छलकती सरिताएं हैं जिसकी प्रत्येक लहर पर मानव मन की अगणित अनुभूतियों की काल कलिकाएं खिली हुई हैं उनसे

विकीर्ण हुआ भाव गौरव सम्पूर्ण सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक परिवेश को अपूर्व आध्यात्मिकता से मण्डित कर देती है।''[12]

लोकगीतों में किसी देश का इतिहास संस्कृति एवं नैतिक आदर्श निहित रहते हैं। लाला लाजपतराय कहते हैं कि–''देश का सच्चा इतिहास, उसका नैतिक और सामाजिक आदर्श इन गीतों में ऐसा सुरक्षित है कि इनका नाश हमारे लिए दुर्भाग्य की बात होगी।''

इससे स्पष्ट होता है कि लोकगीत पारंपरिक होते हुए भी नित्य नूतन है, अक्षुण्ण है। काल के क्रूर हाथ भर इन्हें मिटा नहीं सकते। सरसता, सरलता, स्वाभाविकता एवं मधुरता लोकगीतों की प्रमुख विशेषताएं हैं।

भारतीय समाज में प्राचीनकाल से ही महिला का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। सैंधवकालीन सभ्यता के प्रमाण विशेषतः मूर्तियाँ एवं आभूषण नारियों की विशेष दशा को प्रमाणित करते हैं। महिला माँ तथा देवी के रूप में पूज्य रही है। उसे शक्ति स्वरूपा माना गया है। प्राचीन ग्रंथों में उसे ज्ञान, शक्ति और समृद्धि का प्रतीक माना गया है। वैदिककाल में नारियों को बहुत अधिक सम्मान प्राप्त हुआ था। इस काल में महिलाएँ समाज में पूज्य मानी जाती थी।

वैदिक युग के मत्स्य गणराज्य को मीणा जनजाति का वंशज माना जाता है। जो कि ''छठवीं शताब्दी वी.सी. में पल्लवित हुये मीणा भारत की अनुसूचित जनजाति वर्ग से संबंधित है। पुराणों के अनुसार चैत्र शुक्ल तृतीया को कृतमाला नदी के जल से मत्स्य भगवान प्रकट हुये थे। उसी दिन मीणा समाज में एक त्यौहार मत्स्य जयंती के रूप में मनाया जाता है। मीणा जनजाति का गणचिंन्ह (मछली) मीन था।''[13]

मूलतः मीणा एक सत्ताधारी जाति थी, और मत्स्य यानी राजस्थानी था। मत्स्य संघ के शासक थे, लेकिन उनका पतन जब हुआ तब ब्रिटिश सरकार ने उन्हें **''अपराधिक जाति''** में डाल दिया।''[14] इनकी ऐतिहासिक गाथाएँ मत्स्य पुराण में मिलती हैं। जिनसे उनकी तत्कालीन दशा एवं दिशा का सहजता से पता लगाया जा सकता है। नारियों की परम्परागत दशा के कारण ही करौली क्षेत्र की नारी में सभी आदर्श विद्यमान हैं। विद्या का आदर्श सरस्वती, धन का लक्ष्मी, पराक्रम का महामाया व

दुर्गा, सौंदर्य की रति, पवित्रता की गंगा, विकरालता की काली, प्रकाश और बुद्धि की गायत्री में यहाँ तक कि सर्वशक्तिमान भगवान को भी जगत् जननी के रूप में माना जाता है।

मीणा जनजातियों की नारियों का हर क्षेत्र में पदार्पण हो चुका है। चाहे वह समाज हो या राजनीति, शिक्षा, लोकगीत, गीत–संगीत, विज्ञान अथवा खेल की दुनिया में भी महिलाएँ इन सभी क्षेत्रों में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। पिछले कुछ वर्षो में आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक विकास संबंधी सभी क्षेत्रों में मीणा जनजातियों की नारियों ने अपनी उपस्थिति दर्ज की है।

करौली क्षेत्र में मीणा जनजाति की नारियों की दशा–

करौली क्षेत्र के इतिहास में मीणा जनजाति की नारियों की दशा एक लम्बे समय से विवाद का विषय रही है। विवाद का कारण यह नहीं है कि हम मानसिक रूप से उन्हें दोषपूर्ण मानते हैं बल्कि इसका प्रमुख कारण हमारी संकीर्ण विचारधारा है। नारियों में लज्जा, ममता, प्रेम और स्नेह के गुणों को उनकी कमजोरी समझकर समाज में उनका शोषण होने लगा। उनके पारिवारिक अधिकार तक छीन लिये गयें, किन्तु आज नारियों को पुनः सामाजिक, आर्थिक और लोकगीतों के विविध क्षेत्र में नवीन अधिकार प्राप्त हो रहे हैं। अनेक क्षेत्रों में नारियों ने पुरुषों पर अपना श्रेष्ठतम स्थापित करके यह सिद्ध कर दिया है कि जन्मजात दृष्टि से उनमें दक्षता पुरुषों से किसी भी क्षेत्र में कम नहीं है। आज अनेक संस्थाओं, कार्यालयों निजी क्षेत्रों को नारियों के द्वारा ही संचालित किया जा रहा है।

समाज के सभी पुरुष वर्चस्व वाले क्षेत्रों में भी नारियों ने शानदार प्रवेश कर लिया है। अपनी कामयाबी के साथ ही उनकी सामाजिक व आर्थिक तस्वीर भी लगातार बदल रही है।

वर्तमान समय में मीणा जनजाति की नारियों की सामाजिक जागरुता में बहुत अंतर आया है। इसके परिणाम स्वरूप नारियों में खासकर पर्दा प्रथा के प्रति एक नया दृष्टिकोण देखने को मिला है। आज महिलाएँ घर के कार्यकलापों के साथ–साथ बाहर खुली हवा में सांस ले रही हैं। उनके विचारों व दृष्टिकोणों में इतना अंतर आ चुका है

कि अब वे अन्तर्जातीय विवाह, प्रेम विवाह, व विलम्ब विवाह को भी उचित समझने लगी है। विवाह के समय उसकी अनुमति को स्वीकार किया जाने लगा है। जाति–नियमों और रूढ़ियों के प्रति नारियों की उदासीनता निरंतर बढ़ रही है। आज अनेक महिलाएं प्रमुख संगठनों, क्लबों और समाज कल्याण के कार्यों से जुड़ी हुई हैं। पारिवारिक अधिकारों में वृद्धि होने के कारण उनकी स्थिति अत्यंत सुदृढ़ हो चुकी है। परिवार के हर कार्य में नारियों की भागीदारी सुनिश्चित है। महिला के बिना परिवार का हर कार्य अधूरा माना जाने लगा है। धार्मिक कार्यों में तो नारियों को वरीयता देने की बात आज समाज में सबसे आगे है। यह सब प्रभाव आधुनिक समाज में शिक्षा एवं जागरुकता का ही परिणाम समझा जा सकता है। करौली में लोकगीतों के आधार पर नारियों में काफी तेजी से चेतना आई है। मीणा जनजाति की महिलाएँ वास्तव में लोकगीतों को आकर्षक बनाकर प्रस्तुत कर रही हैं। आज राजस्थान के इतिहास, संस्कृति, सभ्यता का परिचय तात्कालिक समय में एक लय में सरल भाषा में गयात्मक रूप में आधुनिकीकरण किया है और राष्ट्रीय–अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अनोखी कोशिश की जा रही है।

करौली क्षेत्र की भौगोलिक सीमाएँ –

करौली जिला

राज्य	–	राजस्थान
मुख्यालय	–	करौली
स्थापना	–	1 मार्च, 1997
जनसंख्या	–	14,58,459
क्षेत्रफल	–	5070 वर्ग किमी
भौगोलिक निर्देश	–	26^0 3′ से 26^0 49′ उत्तरी अक्षांष और 76^0 35′ से 76^0 26′ पूर्वी देशांतर के मध्य
तहसील	–	6 (करौली, हिण्डौन, टोडाभीम, सपोटरा, मण्डरायल, नादौती)
विधान सभा क्षेत्र	–	4 (करौली, हिण्डौन, टोडाभीम, सपोटरा)

लोकसभा	–	1 (करौली–धौलपुर)
नगर पालिका	–	3 (करौली, हिण्डौन, टोडाभीम)
कुल ग्राम	–	881
मुख्य पर्यटन स्थल	–	कैला देवी, महावीर जी, मदन मोहन जी मन्दिर
वन क्षेत्र	–	1,72,459 हेक्टेयर
बुआई क्षेत्र	–	2,01,819 हेक्टेयर
सिंचित क्षेत्र	–	1,15,076 हेक्टेयर
राजस्व ग्राम	–	878
आबाद ग्राम	–	836
ग्राम पंचायत	–	223
लिंग अनुपात	–	1000 / 858
साक्षरता	–	67.34%
स्त्री	–	49.18 %
पुरुष	–	82.96 %
ऊँचाई	–	400 से 600 मी समुद्रतल से
तापमान	–	2–49°C
ग्रीष्म	–	49°C
शरद	–	**2**°C
वर्षा	–	668
वाहन पंजीकरण	–	34
प्रमुख नदियाँ	–	भद्रावती, गम्भीर, बरखेड़ा, चम्बल

करौली जिला भारत के राजस्थान राज्य का प्रमुख जिला है, जो ऐतिहासिक और धार्मिक दोनों ही दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थान है।

करौली क्षेत्र का इतिहास–

जिला करौली का क्षेत्र पुराने करौली राज्य तथा जयपुर राज्य की गंगापुर एवं हिण्डौन निजामतों में आता है। कल्याणपुरी नामक इस क्षेत्र को वर्तमान स्वरूप प्रदान करने का श्रेय यदुवंषी राजाओं को जाता है। कार्ल मार्क्स और कर्नल टॉड ने अपनी पुस्तक में भी इसका वर्णन किया है। करौली राज्य अप्रैल 1949 को मत्स्य संघ में सम्मिलित हुआ बाद में जयपुर राज्य के साथ मिलकर वृहत संयुक्त राज्य राजस्थान का भाग बना। राजस्थान सरकार द्वारा 1 मार्च 1997 को सवाईमाधोपुर जिले की पांच तहसीलों को मिलाकर एक अलग जिला करौली का गठन किया। 15 जुलाई 1997 को करौली जिला निर्माण की अधिसूचना जारी करते हुए तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री भैंरोसिंह षेखावत ने 19 जुलाई 1997 को इस जिले का उद्‌घाटन किया। 2011 की जनगणना के अनुसार जिले की जनसंख्या 1458459 तथा क्षेत्रफल 5070 वर्ग किलोमीटर है। राज्य की प्रमुख नदी चम्बल इस जिले को मध्यप्रदेश राज्य से अलग करती है। इस जिले में बहुसंख्या में पाये जाने वाले किले एवं गढ़ इसके पुराने गौरव की ओर संकेत करते हैं। इनमें से तिमनगढ़, ऊंटगिरी, मण्डरायल के किलों का देश के मध्यकालीन इतिहास में प्रमुख स्थान रहा है।

राजस्थान का ऐतिहासिक नगर करौली है, वैसे तो राजस्थान विविधताओं में एकता वाला राज्य है। करौली क्षेत्र एक रजवाड़े में आता है। ''करौली का क्षेत्र धूंधार था व करौली रजवाड़े का ध्वज का रंग पीला था। यह स्वतंत्र रजवाड़ा जयपुर के अन्तर्गत था। करौली का राजवंश जादौन था। इसकी स्थापना सन् 955 ईस्वी के आस–पास राजा विजयपाल ने की थी। जिनके बारे में कहा जाता है कि वे भगवान श्री कृष्ण के वंशज थे। सन् 1818 में करौली राजपूताना एजेंसी का हिस्सा बना। सन् 1947 में भारत की आजादी के बाद यहाँ के शासक महाराजा गणेश पाल देव ने भारत का हिस्सा बनने का निश्चय किया।''[15] दिनांक 07.04.1942 में करौली भारत में शामिल हुआ और राजस्थान राज्य का हिस्सा बना। वैसे करौली जिला पर्यटन की दृष्टि से भी अपने आय में एक अहम स्थान रखता है। यहाँ का सिटी पैलेस राजस्थान

के प्रमुख पर्यटन स्थलों में से एक है। करौली में स्थित मदन–मोहन जी का मंदिर देश–विदेश में बसे श्रद्धालुओं के बीच बहुत लोकप्रिय एवं आस्था का केंद्र है।

राजस्थान राज्य में कुल 34 जिले हैं। जिनमें से तैतीसवां जिला करौली जिला हेडक्वाटर घोषित हुआ। सन् 1997 में सवाई–माधोपुर से अलग किया गया था। करौली जिले में कुल 6 तहसील व गाँव हैं।

मुख्यतः करौली जिले की तहसीलों में हिण्डौन सिटी व मण्डरायल है व अन्य तहसील, टोडाभीम, सपोटरा, नादौती और स्वयं करौली भी एक तहसील है। जिसमें हिण्डौन सिटी भी एक पौराणिक शहर था। जो कि भौगोलिक स्थिति में अरावली पहाड़ी के समीप स्थित प्राचीन काल में यह शहर मत्स्य के अंतर्गत आता था। मत्स्य शासन के दौरान बनाई गई प्राचीन इमारतें आज भी मौजूद है। पौराणिक मान्यताओं और धार्मिक ग्रन्थों का अवलोकन करने पर भागवत पुराण के अनुसार हिण्डौन भक्त प्रहलाद व हिरण्यकश्यप की कर्म भूमी रही है। महाभारत की राक्षसी हिडिम्बा भी इसी शहर में रहा करती थी। हिण्डौन शहर का नाम भी इस राक्षसी हिडिम्बा के नाम पर पड़ा था। आज भी बुजुर्ग लोगों के द्वारा हिण्डौन शहर को राक्षस खेड़ा माना जाता है। शहर में प्राचीन समय की बावड़ी व मंदिर आज भी है, पर इनकी हालात जीर्ण–शीर्ण है। हिण्डौन शहर के अन्तर्गत श्री महावीर जी कस्बा है, जो कि जैन धर्म के अनुयायियों के 24 वें तीर्थंकर हैं। यह दिगम्बर जैन मंदिर है। हिण्डौन शहर एक औद्योगिक नगर भी है। करौली जिले की मण्डरायल तहसील भौगोलिक स्थिति से मध्यप्रदेश के सबलगढ़ शहर व श्योपुर से सीमा लगी हुई है। यह राजस्थान और मध्यप्रदेश की सीमा पर स्थित हैं। यह भी अपने आप में एक ऐतिहासिक नगरी है। भारतीय इतिहास में मण्डरायल का महत्वपूर्ण स्थान हैं और मण्डरायल के इतिहास में एम्बर के राजा पूरनमल ने सन् 1534 में मुगलों के पड़ा में मण्डरायल के युद्ध में लड़ाई लड़ी थी। इतिहास के अनुसार राजस्थान की रानी कर्णवती, राणा सांगा चितौड़ की विधवा थी। रानी कर्णवती ने अपनी देख–रेख में राज्य का संरक्षण किया था। रानी कर्णवती ने मुगलों से दोस्ती करने के लिए हुमायूँ को राखी भेजी थी। ऊपर वर्णित राजा पूरनमल जयपुर राजा भारमल के ज्येष्ठ भाई थे। जब हुमायूँ द्वारा

बयाना के किले पर अधिकार करने के लिए युद्ध चल रहा था। उस समय सन् 1534 मुगलों की सहायता करते हुए मंडरायल की लड़ाई में मारे गये। सूरजमल का सूजा नाम का बेटा था। लेकिन उसे राजा नहीं बननें दिया और उसके छोटे भाई राजा भीमसिंह को एम्बर का सिंहासन दे दिया गया। भीमसिंह के बाद उसके बेटे राजा रतन सिंह और राजा भारमल को सन् 1548 में राजा बना दिया गया था।

करौली अपने ऐतिहासिक किलों और मंदिरों के लिए आकर्षक और आस्था का केन्द्र है। करौली दर्शनीय स्थनों में से एक है।

सिटी पैलेस –

सिटी पैलेस करौली के रजवाड़ों का रहन–सहन का स्थान रहा हैं। इसका निर्माण अर्जुन पाल ने 14 वीं शताब्दी में करवाया था। जो प्राचीन समय से ही अपनें आप में मुख्य स्थान रखता है। सिटी पैलेस के वर्तमान स्वरूप का श्रेय राजा गोपाल सिंह को जाता हैं। जिन्होंने कि इसका पुनः निर्माण 18 वीं शताब्दी में करवाया था। सिटी पैलेस लाल बलुआ पत्थर से बने हैं इस महल में सफेद पत्थरों का भी खूबसूरती से इस्तेमाल किया गया है। महल की छत से पूरे शहर का दृश्य देखा जा सकता है। इसी महल के दीवान–ए–आम की जालियां एवं रंग महल के रंगीन कोण से बने झरोखे भी देखने लायक हैं। इस महल के परिसर में राजा व रानियों द्वारा भगवान श्री कृष्ण की भव्य मूर्ती विराजमान है। जिसमें रोज सुबह राजा के द्वारा सर्वप्रथम दर्शन किये जाते थे। सन् 1950 मे यह महल मदन मोहन ट्रस्ट को सौंप दिया गया।

मदन मोहन जी मंदिर –

यह ऊपर वर्णित सिटीपैलेस से ही जुड़ा हुआ हैं। यह मंदिर भगवान श्री कृष्ण को समर्पित है। यह एक पौराणिक मान्यता है कि इस मंदिर का और जयपुर के सिटी पैलेस स्थित गोविंद देवजी और गोपीनाथ मंदिर में एक साथ दर्शन करना भी शुभ माना जाता है और मुख्यतः इतिहासकारों द्वारा यह भी माना जाता है कि भगवान श्री कृष्ण की चार भागों में उनकी साक्षात मूर्ती है जिसमें करौली स्थित मदन मोहन मंदिर

में भगवान के पैर बताये जाते हैं तथा गोविंद देव जी (जयपुर) के मंदिर में धड़ बताया जाता है।

कैला देवी मंदिर –

करौली नगर ऐतिहासिक के साथ–साथ धार्मिक नगरी भी रही है। और आज भी है, धार्मिकता का भाव लोगों में आज भी बहुत फल–फूल रहा हैं। यह सब माता रानी की कृपा है। यह मंदिर करौली मुख्यालय से 23 कि.मी. दूर उत्तर दिशा में स्थित है। यह करौली के त्रिकूट पर्वत पर स्थित है। इस मंदिर की स्थापना सन् 1100 ईसवी में हुई थी। कैलादेवी का मंदिर काली सिल पर स्थित है। मंदिर से 1 किलो मीटर दूर केदार बाबा की गुफा है। श्री कैलादेवी मंदिर पूर्वी राजस्थान, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश के लाखों लोगों की आराध्य देवी हैं प्रतिवर्ष करीब 70 लाख श्रद्धालु यहाँ दर्शनों के लिए आते हैं। यह मंदिर देवी दुर्गा की शक्तियों में से एक हैं। चैत्रमास के नवरात्रों में यहां भव्य मेलें का आयोजन किया जाता हैं। जिसकी देख रेख करौली जिला मुख्यालय की होती है। मंदिर में लक्ष्मी जी, व काली माताजी के दर्शन होते हैं। यहाँ मन की मुराद पूरी होती है। प्रतिमा बनी कैसे, बनवाई किसने इस पर कोई एक मत नहीं है। यदुवंशी होने के कारण करौली राजवंश का संबंध भगवान श्री कृष्ण से जोड़ा जाता है। जैसा की कंस व वासुदेव और देवकी को कारागृह में डाल दिया था। वहीं देवकी ने एक कन्या को जन्म दिया था। कंस ने जब उस नवजात को मारना था तो वह आकाश में उड़ गई। यह एक योग मात्र था की वह भू–मण्डल में अवतरित हुई थी। वही कन्या विभिन्न नामों से पूजी जाने लगी। लोकगीत में कैला मैय्या का वर्णन–

''माता काळी–सी बदळी,
भवानी रे बीजळ चमकै ए माय''

माता का स्वरूप ऐसा मनोहारी लगता है जैसे काली बदली के बीच बिजली चमक रही हो–

''माता बीजळ चमकै भवानी रै,
मेवलो–सो बरसै ए माय''

''माता मेवलो–सो बरसै भवानी रै,
ताळ छलकै ए माय''

माता की कृपा से बादल बरसते हैं। लोगों को पानी मिलता है। ताल भर जाते हैं। प्रकृति हरी–भरी हो जाती है। तब पशु–पक्षी कोयल, डेडर मोर आदि कूँकने और चहँकने लगते हैं–

''माता ताल सो छलकै,
भवानी रै कोयल कूँ कै ए माय
''माता कोयल कूँ कै भवानी रै
डेडर डुळकै ए माय
''माता डेडर डुळकै भवानी रै
मोर झिलोरै ए माय''

देवी गीत में चराचर जगत के लोकमंगल की चेतना हैं। देवी के आभूषण पराक्रम, का वर्णन है। भक्तों द्वारा अन्न–वस्त्र अर्पण करके आराधना करने व परिवार और समाज की मंगल कामना की मनौती है। मनोकामना पूर्ण होने पर मंदिर को भव्य बनवाने, कनक दंडौत, छत्र चढ़ाने आदि की इच्छा अभिव्यक्त की गई है।

कैलादेवी मंदिर के पुजारी को लाँगुरिया नाम से जाना जाता है। प्राचीन समय से ही लाँगुरिया का स्थान मीणा जनजाति के लोगों का रहा है। वृद्ध लोगों के अनुसार मीणा लोग ही शुरू से मंदिर की साफ–सफाई व मंदिर में पूजा–पाठ का काम करते थे। मीणा समुदाय के द्वारा देवी के मंदिर में जागरण का कार्यक्रम प्राचीन समय से आज तक जीवित है। जागरण रात्रि को किया जाता है। जागरण पुरुष व स्त्री दोनों के द्वारा ही किया जाता है। जिसमें मीणा जनजाति के लोग व लाँगुरिया का अहम स्थान हैं क्योंकि लोकगीत व भजनों के अनुसार यह सिद्ध होता हैं और पौराणिक मान्यताओं का भी यही मानना हैं। करौली के आस–पास व दूर दराज के क्षेत्रों में स्थित सर्व समाज व मीणा समाज की आराध्य देवी भी कैलादेवी है।

लाँगुरिया –

राजस्थान स्थित करौली नामक नगर में कैलादेवी का प्रसिद्ध मंदिर एक पहाड़ी पर स्थित है। यहाँ भक्तों के ठहरने के लिए आस पास अनेको धर्मशालाएं भी बनी हुई हैं। यहाँ आस–पास चारों ओर घने जंगल हैं तथा काली सिल नदी पास से निकलती है।

राजस्थान के लोक जीवन में कैला माँ की उपासना का बहुत महत्त्व है। करौली के लोक जीवन में लाँगुरिया गीत बहुत प्रचलित है। इन गीतों की धुन बड़ी सरल व रसीली है। नवरात्रियों में घर–घर में लाँगुरिया गाया जाता है। लाँगुरिया के विषय में यह कहा जाता है कि यह देवी का विशेष उपासक था। वह सदा देवी की सेवा में रहता था। करौली में कैलादेवी के मंदिर के बाहर लाँगुरिया की मूर्ति देवी की ओर मुख किये खड़ी है। यात्री लाँगुरिया के भी दर्शन करते हैं।

गीतों में बालकों तथा पुरुषों के लिए लाँगुरिया शब्द का प्रयोग किया जाता है तथा भक्तजनों को जोगिन कहा जाता है। कैलादेवी के मंदिर में जात देने वालों का तांता बना रहता है। कहा जाता है कि यहाँ लाँगुरिया की उपासना से मन की साध भी पूरी हो जाती है।

"हारे लाँगुरिया जात करन तेरी हम आये।
हम ठाड़े तेरे द्वार या लाँगुरिया,
जात करन तेरी हम आये,
तेरी मूरत कैसी प्यारी है, तेरी सूरत बलिहारी है,
रे लाँगुरिया अरज करन तेरी हम आये,
हां लाँगुरिया तेरी परकम्पा में भरी भरी,
सब लोग लुगाई नाचत।"[16]

'श्री मधुर उप्रेती ने अपनी पुस्तक ब्रज लोक साहित्य में लाँगुरिया गीतों के संबंध में लिखा है जब लोग तीर्थयात्रा करने के लिए जाते हैं तो मार्ग की थकावट दूर करने के लिए और दूसरे उस देव की आराधना में एक विशेष प्रकार के समयोचित लोक गीतों का आयोजन कर वंदना के रुप में उस देवता को प्रसन्न करते हैं। जैसे

शिवयात्रा में बम्बों से। करौली क्षेत्र में समय–समय पर गाये जाने वाले लोकगीतों में देवी के साथ लाँगुरिया का भी महत्वपूर्ण स्थान है। यहाँ लाँगुरिया में जोगिन नाचती है, लाँगुरिया ताल देता है और यात्री गाते हैं।

दै दै लम्बे चौक लाँगुरिया बरस दिना में आमिंगे,
अबके तौ हम अकेले ही आय,
अबकी जोगिन संग लै लामिगे दै दै......।
धरै डोलैगौ हथेली पै चून बारे लाँगुरिया,
अति की लड़ाई मौते मति लड़ै,
मेरे ससुर गए ऐ देवी जात कूँ,
और सासु ने लियो पंथ, बारे लाँगुरिया.....।

आज की स्थिति पहले से बहुत बदलती हुई प्रतीत होती है। जहाँ जागरण स्वयं लोग बैठकर करते थे आज वह स्थान डी.जे., मशीनों, ने ग्रहण कर लिया है। मीणा जानजाति की स्त्री का रूप अब धार्मिक भावना के साथ–साथ शिक्षा की ओर ज्यादा अग्रसर है।

श्री महावीर जी –

करौली जिले से 30 किमी. दूर व हिण्डौन शहर से 12 कि.मी दूर श्री महावीर जी स्थित हैं। यह केन्द्र जैन धर्म की आस्था का केन्द्र हैं यह जैन धर्माम्बलम्बियों का 24वाँ तीर्थंकर स्थान है। यहाँ पर नये–पुराने व छोटे बड़े कुल मिलाकर पाँच मंदिर हैं। प्राचीन मंदिर में भगवान श्री महावीर जी की ताँबे से निर्मित प्रतिमा हैं जो पदमासन में विराजमान है। मंदिर के निकट से ही गम्भीर नदी गुजरती है। जिसका उद्गम स्थान करौली मुख्यालय स्थित पाँचना बाँध से होता है जो राजस्थान का इकलौता मिट्टी से बना बाँध है। यह नदी भरतपुर के राष्ट्रीय घना पक्षी अभ्यारण, केवलादेव में विलुप्त हो जाती है। महावीर जी की प्रतिमा जमीन से प्राप्त हुई थी। जिसमें पौराणिक मान्यताओं व जैन ग्रन्थों के माध्यम से यह तथ्य प्रकट होता है कि एक ग्वाला की काम धेनु (गाय) प्रतिदिन एक टीले पर जाकर अपना सारा दूध फैला देती थी। इस घटना से आश्चर्य चकित होकर ग्वाले व गाँव वालों ने उस

मिट्‌टी के टीले की खुदाई की तो वहां से श्री महावीर की प्रतिमा निकली थी। इस प्रतिमा की धातु के चर्चे सब जगह जब चर्चित हुये तो जयपुर नरेश द्वारा इस प्रतिमा को जयपुर ले जाने की कोशिश की पर कोशिश नाकाम रही माना जाता है कि जयपुर नरेश की 900 गाड़ियाँ टूट गई थी। पर भगवान की प्रतिमा को वहाँ से 90 कदम से आगे नहीं ले जा पाये और आखिर में उनको हार माननी पड़ी। उस स्थान पर आज एक भव्य मंदिर है जो कि स्थापत्य कला का बेजोड़ नमूना है। मंदिर के पीछे कामधेनु का भी चबूतरा बना है। यहाँ प्रति वर्ष महावीर जयंती पर (अप्रैल माह में) मेले का आयोजन किया जाता है। जो पाँच दिनों तक चलता है। मेले के अंतिम दिन रथ यात्रा निकाली जाती है।

तिमनगढ़ का किला –

करौली से 40 कि.मी की दूरी पर है, मंडरायल तहसील में तिमनगढ़ किले का निर्माण 12वीं शताब्दी के मध्य में हुआ था। इतिहास के अनुसार अपने समय से तिमनगढ़ स्थानीय सभा का केन्द्र था। सन् 1916 में यहाँ के राजा कुंवरपाल को हटाकर मोहम्मद गौरी और उसके सेनापति कुतुबुद्दीन ऐबक ने इस पर कब्जा कर लिया था। इसके बाद राजा कुंवरपाल को रेवा मे शरण लेनी पड़ी, किले के मुख्य द्वार पर मुगल स्थापत्य कला का प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है, लेकिन किले के आंतरिक हिस्सों में यह प्रभाव नहीं है, इसकी दीवारें, मंदिर और बाजार अपने सही रूप में देखे जा सकते हैं। किले से सागर और मनोरम झील का विहंगम दृश्य भी देखा जा सकता है।

कैलादेवी अभ्यारण –

करौली से 23 कि.मी दक्षिण–पश्चिम में स्थित है। इस अभ्यारण में मुख्यतः नीलगाय, तेदुंए, और सियार के अलावा किंगफिशर भी मिलते हैं। कैलादेवी अभ्यारण की सीमा कैलादेवी के पास से शुरू होकर करनपुर तक जाती है और कुछ सीमा रणथम्भौर राष्ट्रीय उद्यान से मिलती है। प्रसिद्ध इतिहास लेखक कर्नल जेम्स टॉड ने ''इस राज्य का नाम रायथान रखा, क्योंकि स्थानीय साहित्य एवं बोलचाल में राजाओं के निवास के प्रांत को रायथान कहते थे। इसी का संस्कृत रूप राजस्थान बना।

हर्षकालीन प्रांतपति जो इस भाग की इकाई का शासन करते थे। राजसनीय कहलाते थे। सातवीं शताब्दी में जब इस प्रांत के भाग राजपूत नरेशों के अधीन होते गये तो उन्होंने पूर्व प्रचलित अधिकारियों के पद के अनुरूप इस भाग को राजस्थान की संज्ञा दी, जिसे स्थानीय साहित्य में रायथान कहते थे। जब भारत स्वतंत्र हुआ तथा कई राज्यों के नाम पुनः प्रतिष्ठित किये गये तो इस राज्य का भी चिर–प्रतिष्ठित नाम राजस्थान स्वीकार कर लिया गया।''[17]

करौली क्षेत्र की संस्कृति, सभ्यता, इतिहास एवं समाज का एक परिचय –

रीति–रिवाज–

राजस्थान भारत का एक प्रांत है, यहाँ की राजधानी जयपुर है। राजस्थान भारत गणराज्य के क्षेत्रफल के आधार पर सबसे बड़ा राज्य है, राजस्थान मेलों और उत्सवों की धरती है। यहाँ होली, दीपावली, क्रिसमस एवं जैन धर्म के प्रमुख राष्ट्रीय त्योहारों के अलावा अनेक देवी–देवताओं, संतों और लोकनायकों तथा नायिकाओं के जन्मदिन मनाए जाते हैं। यहाँ के महत्वपूर्ण मेले हैं तीज, गणगौर, अजमेर शरीफ और गलियाकोटा के वार्षिक उर्स, बेणेश्वर (डूंगरपुर), जंभेश्वर जी मेला (मुकाम–बीकानेर), कार्तिक पूर्णिमा और पशु–मेला (पुष्कर–अजमेर) और खाटूश्यामजी मेला (सीकर) आदि। राजस्थान के कुछ प्रसिद्ध रीति–रिवाज निम्नलिखित हैं –

आठवाँ पूजन–

स्त्री जब गर्भवती होने के सात माह पूरे कर लेती है तब इष्टदेव का पूजन किया जाता है और प्रीतिभोज किया जाता है।

पनघट पूजन या जलमा पूजन–

बच्चे के जन्म के कुछ दिनों पश्चात् (सवा माह बाद) पनघट पूजन या कुआँ पूजन की रस्म की जाती है इसे जलमा पूजन भी कहते हैं।

आख्या–

बालक के जन्म के आठवें दिन बहनें जच्चा को आख्या करती है और एक मांगलिक चिह्न 'साथिया' भेंट करती हैं

जडूला उतारना–

जब बालक दो या तीन वर्ष का हो जाता है तो उसके बाल उतरवाए जाते हैं। वस्तुतः मुंडन संस्कार को ही जडूला कहते हैं।

सगाई—

वधू पक्ष की ओर से संबंध तय होने पर सामर्थ्य अनुसार शगुन के रुपये तथा नारियल दिया जाता है।

बिनौरा—

सगे संबंधी व गाँव के अन्य लोग अपने घरों में वर या वधू तथा उसके परिवार को बुलाकर भोजन कराते हैं, जिसे बिनौरा कहते हैं।

तोरण—

विवाह के समय वर जब बारात लेकर कन्या के घर पहुँचता है तो घोड़ी पर बैठे हुए ही घर के दरवाजे पर बँधे हुए तोरण को तलवार से छूता है जिसे तोरण मारना कहते हैं। तोरण एक प्रकार का मांगलिक चिह्न हैं।

खेतपाल पूजन—

राजस्थान में विवाह के कार्यक्रम आठ दस दिनों पूर्व ही प्रारंभ हो जाते हैं। विवाह से पूर्व गणपति स्थापना से पूर्व परिवार को खेतपाल बावजी (क्षेत्रपाल लोकदेवता) की पूजा की जाती है।

कंगन डोरना—

विवाह से पूर्व गणपति स्थापना के समय तेल पूजन कर वर या वधू के दाएँ हाथ में मौली या लच्छा को बटकर बनाया गया एक डोरा बाँधते हैं जिसे कंगन डोरना कहते हैं। विवाह के बाद वर के घर में वर—वधू एक दूसरे के कंगन डोरना खोलते हैं।

बान बैड़ना व पीठी करना—

लग्नपत्र पहुँचने के बाद गणेश पूजन (कंगन डोरना) पश्चात विवाह से पूर्व तक प्रतिदिन वर व वधू को अपने अपने घर में चौकी पर बैठाकर गेहूँ का आटा, बेसन में हल्दी व तेल मिलाकर बने उबटन (पीठी) से बदन को मला जाता है, जिसको पीठी

करना कहते हैं। इस समय सुहागन स्त्रियाँ मांगलिक गीत गाती हैं। इस रस्म को 'बान बैठना' कहते हैं। पीठी का गीत तेल चढ़ाते और उतारते समय गाये जाते हैं–

''ल्याई अे तेलण तेलो तेल, सुपारी रेलो
'लखनलाल' जी के घरां गोरड़िया बहू 'रामश्री' तेल चढाईयो
''ल्याई अे तेलण तेलो तेल, सुपारी रेलो
'अनिल लाल' जी के घरां गोरड़िया बहू 'राजेशी' तेल चढाईयो

बिंदोली–

विवाह से पूर्व के दिनों में वर व वधू को सजा–धजाकर और घोड़ी पर बैठाकर गाँव में घुमाया जाता है, जिसे बिंदोली निकालना कहते हैं। इस समय प्रमुख रूप से घोड़ी के लोकगीत गाये जाते हैं। इसमें घोड़ी का रूप वर्णन देखते ही बनता है–

''घोड़ी म्हारी चन्दरमुखी, इन्दरलोक सूं आई ओ राज
आई रतनां री ओ.. ओ, तीजण ठाण बंधाई ओ राज
हरी–हरी दूब चरै, लीली दूधां री थाई ओ राज
आज बाबो नंद जी रो छावो, चोक्यां बिराज्यो ओ राज
चोक्यां बिराज्यो, ठाकुर नै देवता जंवार्यां ओ राज
बोले बाई ओ सोधरा जी, इमरत बांणी ओ राज
घोड़ी म्हारी चन्दरमुखी, साजन लोक सूं आई ओ राज

मोड़ बाँधना–

विवाह के दिन सुहागिन स्त्रियाँ वर को नहला–धुलाकर सुसज्जित कर कुल देवता के समक्ष चौकी पर बैठाकर उसकी पाग पर मोड़ (एक मुकुट) बाँधती हैं।

बरी पड़ला–

विवाह के समय बारात के साथ वर के घर से वधू को साड़ियाँ व अन्य कपड़े, आभूषण, मेवा, मिष्ठान आदि की भेंट वधू के घर पर जाकर दी जाती है जिसे पड़ला कहते हैं। इस भेंट किए गए कपड़ों को 'पड़ले का वेश' कहते हैं। फेरों के समय इन्हें पहना जाता हैं।

पहरावणी–

विवाह के पश्चात् दूसरे दिन बारात विदा की जाती है। विदाई में वर सहित प्रत्येक बाराती को वधूपक्ष की ओर से पगड़ी बँधाई जाती है तथा यथा शक्ति नगद राशि दी जाती है, इसे पहरावणी कहा जाता है।

सामेला–

जब बारात दुल्हन के गाँव पहुँचती है तो वर पक्ष की ओर से नाई या ब्राह्मण आगे जाकर कन्यापक्ष को बारात के आने की सूचना देता है कन्या पक्ष की ओर से उसे नारियल एवं दक्षिणा दी जाती है, फिर वधू के पिता अपने सगे संबंधियों के साथ बारात का स्वागत करता है, स्वागत की यह क्रिया सामेला कहलाती है।

बढ़ार–

विवाह के अवसर पर दूसरे दिन दिया जाने वाला सामूहिक प्रीतिभोज बढ़ार कहलाता है।

कुँवर कलेवा–

सामेला के समय वधू पक्ष की ओर से वर व बारात के अल्पाहार के लिए सामग्री दी जाती है, जिसे कुँवर कलेवा कहते हैं।

बींद गोठ–

विवाह के दूसरे दिन संपूर्ण बारात के लोग वधू के घर से कुछ दूर कुएँ या तालाब पर जाकर स्नान इत्यादि करने के पश्चात् अल्पाहार करते हैं। जिसमें ससुराल पक्ष की ओर से दिए गए, कुँवर–कलेवे की सामग्री का प्रयोग करते हैं, इसे बींद गोठ कहते हैं।

मायरा भरना/भात भरना–

राजस्थान में मायरा भरना विवाह के समय की एक रस्म है, इसमें बहन अपनी पुत्री या पुत्र का विवाह करती है तो उसका भाई अपनी बहन को मायरा ओढ़ाता है जिसमें वह उसे कपड़े, आभूषण आदि बहुत सारी भेंट देता है एवं गले लगाकर प्रेम स्वरुप चूनड़ी ओढ़ाता है, साथ ही उसके बहनोई एवं अन्य परिजनों को भी कपड़े भेंट करता है। लोकगीतों में काकड़ पर चूनड़ी ओढ़ाने का वर्णन–

"आज म्हारा बीरा जी काकड़ बस रैया,

ओढाई तारांभात जड़ी चूदड़ी, हरख्या रै बाळ–गिंवाळ,
हरख्या रै आळ–गिंवाळ, ओढ़ाई घणदेवा चूदड़ी,
ओढ़ूं तो हीरा बीरा झड़ पड़ै, मेलूं तो तरसै बाई रो जीव।

डावरिया प्रथा–

यह रिवाज अब समाप्त हो चुका है। इसमें राजा–महाराजा और जागीरदार अपनी पुत्री के विवाह में दहेज के साथ कुँवारी कन्याएं भी देते थे जो ताउम्र उसकी सेवा में रहती थी, इन्हें डावरिया कहा जाता था।

नाता प्रथा–

कुछ जातियों में पत्नी अपने पति को छोड़ कर किसी अन्य पुरुष के साथ रह सकती है। इसे नाता करना कहते हैं। इसमें कोई औपचारिक रीति रिवाज नहीं करना पड़ता है। केवल आपसी सहमति ही होती है, विधवा औरतें भी नाता कर सकती हैं।

नांगल–

नवनिर्मित गृहप्रवेश की रस्म को नांगल कहते हैं। अपना घर कैसा भी हो व्यक्ति को महल के समान ही लगता है। उस मांगलिक अवसर पर सभी देवी–देवताओं के गीत गायें जाते हैं। द्वार पर गणेश प्रतिमा की स्थापना करके आते–जाते शी नवपने का संकल्प है। नवगृह प्रवेश के लोकगीत में सभी देवों, देवियों और फिर परिजनों का स्वागत है–

''प्रथम बिनायक आप पधारो, ऊँचो देऊं थांनै बासणों,
रिद्ध–सिद्ध साथै पधारो बिनायक, ऊँचो देऊं थांनै बासणों,
घरां रै बारणै मूरत सजाऊं सीस नवाऊं आता–जाता रै,
ब्रह्मा, ब्रह्माणी, बिस्नु लक्ष्मी राणी, गौरां साथै भोळां,''
थाकौ ही भवन छै पधारो आखा जोड़ा ऊँचो देऊं थांनै बासणों''

मौसर–

किसी वृद्ध की मृत्यु होने पर परिजनों द्वारा उसकी आत्मा की शांति के लिए दिया जाने वाला मृत्युभोज मौसर कहलाता है।

हम यह मानकर चलते हैं कि रक्त–वंश, संस्कृति और डी.एन.ए. के आधार पर आदिवासी हिन्दू कतई नहीं हैं। जो पहले अपने को आर्य कहकर इस देश को आर्यवृत कह रहे थे वे ही अपने को हिन्दू और देश को हिन्दुस्तान कहते हैं। वास्तविकता यह है कि आर्य, भारत के मूल निवासी नहीं है और इसके विपरित आदिवासी भारत का मूल निवासी है। यदि यह मंत्र हम आदिवासियों में फूंक सके तो भारत के आदिवासी एक हो सकते हैं।

जब हम अतीत के इतिहास को उठाकर देखते हैं तो हमें यह पता चलता है, कि मीणा जनजाति राजस्थान की गौरवशाली भूमि के सपूत ही नहीं बल्कि इस देष की प्राचीनतम और आदिम जातियों में से एक हैं। ऐतिहासिक व पुरातात्विक प्रमाण इस बात के साक्षी हैं कि मीणा जनजाति इस देष के मूल निवासी हैं तथा यह एक शासक कौम भी रही है। यह जाति एक बहादुर व स्वच्छन्द प्रकृति की जीवट वाली कौम है जो कभी टूटी नहीं, कभी झुकी नहीं। मीणा जनजाति की प्राचीनता को नकारा नहीं जा सकता। वेद, पुराण, रामायण, महाभारत, बौद्ध व जैन ग्रन्थ आदि में भी (मत्स्य जाति, आदिम जनजातियों) को किसी न किसी रूप में उल्लेखित किया है।

मीणा शब्द संस्कृत के मीन अर्थात् मछली से आया है मीन से इसकी उत्पत्ति कई अर्थों में महत्वपूर्ण है। विष्णु के दशावतारों में मत्स्यावतार सर्वप्रथम है। विष्णु के अवतार जीवन की उत्पत्ति व विकास को दर्शाते हैं और इनमें मत्स्यावतार या मछली सर्वप्रथम जल से जीवन की उत्पत्ति की ओर इंगित करती है, इस प्रकार 'मीणा' जनजाति का 'मीन' से सम्बन्ध इसकी सबसे प्राचीनता का द्योतक हो सकता है। प्रागैतिहासिक शैल चित्रों में मछली का चित्र अंकन मिलता है। हड़प्पा व मोहन जोदड़ों संस्कृति के मृदपात्रों, मुद्राओं पर भी मछली का अंकन मिलता है। सिन्धु लिपि में भी 'मत्स्य' के समान चिन्ह मिलता है।

शिवराजपुर से प्राप्त मानवाकृति के सीने पर मछली का अंकन है, जो अपने आप में अद्वितीय है। मीणा जनजाति ने मछली से अपने को समीकृत कब व कैसे किया, यह एक शोध का विषय है। इतिहासकारों द्वारा ''8वीं–9वीं शताब्दी तक मीणों का राजनीतिक प्रभुत्व भारतीय स्तर पर भी स्वीकारा है, परन्तु बाद में 11वीं–12वीं

सदी में कछवाहों के आगमन से इनका पतन शुरू हुआ और ये विनाश के कगार पर पहुँचने लगे। मीणों के जनपदों–मेवासों को कछवाहों ने समाप्त किया तथा अपना प्रभुत्व स्थापित किया।''[18]

आमेर के राजा भारमल के समय में 16वीं शताब्दी में नाई (नहान) का अन्तिम मीणा राज्य अपने अधीन किया। खोहगंग में चान्दा वंश के मीणा शासन करते थे। यह इतिहास सहमत है, कि चांदा वंश के मीणों ने महिशमति नगर को त्यागकर चान्दोड़ स्थान में व वहाँ से आकर खोहगंग में राज्य स्थापित किया। यहाँ पर गढ़, कोट, कुएं, छतरियां, तालाब, नक्कार खाना, बावड़ी आदि का निर्माण कराया जो आज भी पुरावंश के रूप में खंडित पड़े हैं। ये मीणा जाति के गौरवशाली अतीत के भग्नावशेष आज भी हमारे पूर्वजों की यादें ताजा कर देते हैं।

इन शासकों की दास्तान बहुत दर्द भरी है, जिसके चारों ओर मीणा इतिहास के पन्ने बिखरे पड़े हैं। खोहगंग के शासक आलण सिंह चांदा मीणा पर धोखे से दुल्हेराय कच्छावा ने वार कर इनका राज्य संवत 1010 ईसवीं में अपने अधीन कर लिया व इनके कुटुम्ब के 1444 निहत्थे लोगों की दीपावली के दिन तालाब के किनारे अपने पूर्वजों को तर्पण करते वक्त हत्या कर दी। इस प्रकार मीणों के गणराज्य खोहगंग, मांच, नहाण, गैटोर, झोटवाड़ा व आमेर इनसे चले गये।

मीणा जाति शक्तिशाली योद्धा के रूप में अपने अस्तित्व को बनाये रखने के प्रति सजग एवं सक्रिय रही है, परिणाम स्वरूप संघर्षमय जीवन बिताते रहने के कारण अपने इतिहास को सुरक्षित रखने में असमर्थ रहे। इनके राजकाज, बहादुरी आदि के कारनामों पर आगे के शासकों, इतिहासकारों, साहित्यकारों आदि ने पर्दा डाल दिया तथा इस शूर–वीर व योद्धा जनजाति का इतिहास मात्र किवदन्तियों, अनुश्रुतियां, जागाओं तथा चारण–भाटों की बहियों में ही सिमट कर रह गया। आजकल हम जो इतिहास पढ़ते हैं, वह वास्तव में केवल विजयी जातियों का इतिहास है, जो महलों में बैठकर महलों में रहने वालों के इशारों के अनुसार लिखा गया है। यही कारण है कि उसमें राजस्थान के मीणा जाति के इतिहास को या तो अनदेखा किया गया है या

तोड़–मरोड़ कर पेश किया गया है, या उनके इतिहास व सांस्कृतिक धरोहर को भी राजपूतों का ही बना लिया गया।

आज सभी बुद्धिजीवी, राजाओं और युद्धों के राजनीतिक इतिहास के स्थान पर, जन–जन के सांस्कृतिक इतिहास लेखन के महत्त्व और जरूरत को भली–भांति समझ चुके हैं। पारस्परिक इतिहास लेखन में प्रायः लाखों लोगों के राज्य में सिर्फ चंद लोगों के चंद कार्यों को उनकी ही इच्छानुसार उन पर आश्रित कुछ लोगों द्वारा वर्णित किया जाता था। इस इतिहास से प्रायः राजाओं की वंशावली, उनके द्वारा लड़े गये युद्धों व राज्य विस्तार के विषय में ही सूचनाएँ मिलती है। इसके अतिरिक्त तत्कालीन समाज, उनके रहन–सहन, धार्मिक, रीति–रिवाजों, षिक्षा, सामाजिक, आर्थिक स्थित, संस्कृति इत्यादि महत्वपूर्ण पक्षों पर अत्यल्प अथवा नहीं के बराबर प्रकाश पड़ता था।

ऐसे ही इतिहास लेखन से आज राजस्थान के इतिहास में यहाँ के प्राचीनतम अर्थात् मूल निवासियों का उल्लेख लगभग नगण्य है। समस्त विद्वान इस विषय पर मतैक्य हैं कि मीणा राजस्थान के प्राचीनतम निवासी ही नहीं बल्कि यहाँ के मूल निवासी भी हैं। वे इसी भूमि के पुत्र हैं परन्तु इस प्राचीनतम जाति के क्रमबद्ध इतिहास लेखन के गंभीर प्रयास अभी तक नहीं हुए हैं और आज जो मीणाओं का थोड़ा बहुत इतिहास उपलब्ध है वह उनकी प्राचीनता को देखते हुए पूर्णतः अपर्याप्त व अधूरा है। इनके अतीत की बहुत सी बातों का अभी उजागर होना बाकी है।

मीणा जाति के इतिहास पर लिखने वाले सभी लेख इस विषय पर एक मत हैं कि मीणा शब्द की उत्पत्ति, मीन अर्थात् मत्स्य या मछली से हुई है। मीणा अपनी उत्पत्ति विष्णु के प्रथम अवतार मत्स्यावार से मानते हैं। जिसकी कथा मत्स्य पुराण में सविस्तार दी गई है। इसके अतिरिक्त वैदिक व अन्य पौराणिक साहित्यों में भी मत्स्य जाति का उल्लेख मिलता है।

महाकाव्य युग तक आते–आते मीणाओं के राजवंश स्थापित हो गये थे। महाभारत काल में यह प्राचीन क्षेत्र, कला व संस्कृति का प्रमुख केन्द्र था। परम्परानुसार वर्तमान बैराठ को सम्राट विराट की राजधानी कहा जाता है। इन्हीं राजा

विराट के दरबार में रहकर महाभारत के नायक पाँच पांडवों ने अपने अज्ञातवास के 12 वर्ष बिताये थे।

छठीं सदी ई. पूर्व सम्पूर्ण उत्तर भारत सोलह महाजन पदों में बटा था, जिसमें एक मत्स्य जनपद का वर्णन मिलता है। निश्चय ही इसका नाम इस क्षेत्र में रहने वाली मत्स्य या मीन नाम के मूल निवासियों के कारण पड़ा होगा। हिन्दू, बौद्ध व जैन साहित्य में भी मीन जाति का उल्लेख यत्र–तत्र प्राप्त होता है, परन्तु ये सभी उल्लेख बहुत सीमित जानकारी उपलब्ध कराते हैं। अतः मीणा जनजाति के क्रमबद्ध इतिहास को जानने, समझने व लिखने के लिए पुरातात्विक साक्ष्यों का अध्ययन व विष्लेषण ही अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है।

जहाँ इतिहास मौन है, वहाँ पुरातत्व मुखर हो उठता है। इतिहास का क्षेत्र बहुत सीमित है वहीं पुरातत्व, जो इतिहास के पुनर्निमाण की वैज्ञानिक विधि है, प्राचीन समाजों, जन–सामान्य तथा उनकी विभिन्न गतिविधियों के समस्त प्रमाणों का सूक्ष्म अध्ययन करता है। पुरातत्व सिर्फ विषाल दुर्गों, भव्य राजप्रसादों, देवप्रसादों, खजानों की खोज तक ही सीमित नहीं है। पुरातत्व में खोज होती है, मानव से सम्बद्ध लगभग हर चीज, जैसे–जमीन में समाए भूतकाल के विषाल नगरों, छोटी–बड़ी बस्तियों, वहाँ रहने वाले प्रत्येक जन–जन के घरों, उनके सार्वजनिक स्थलों, पूजा स्थलों, कार्य व व्यापार स्थलों, रहने, खाने बनाने, अनाज भरने के स्थानों, धातु पिघलाने वाली भट्टियों उनके द्वारा उपयोग में लाये गये भोजन का भी अध्ययन कर पुरातत्ववेता प्राचीन समाज का प्रमाणों पर आधारित विस्तृत एक सम्पूर्ण चित्र बनाने का प्रयास करता है।

मीणा जनजाति का प्रमुख क्षेत्र प्राचीन मत्स्य क्षेत्र भी पुरातात्विक दृष्टिकोण से अत्यन्त प्राचीन व महत्वपूर्ण है। यह क्षेत्र पाषाणकाल से ही मानव की कार्यस्थली रहा है। भानगढ़ व बैराट के निकटवर्ती क्षेत्रों में पुरातत्वविदों को प्राप्त पाषाणकालीन हथियार जैसे– हस्तकटार, परशु, खुरचनी इत्यादि मिले हैं। इन खोजों से प्रमाणित होता है कि 'सावणी नदी' के निकटवर्ती क्षेत्रों में पाषाणकालीन मानव विचरण करता होगा। इसी प्रकार बैराठ में भी पाषाणकालीन उपकरण प्राप्त हुए हैं।

हरसोरा, बानसूर व बैराइ के निकट शैलाश्रयों में प्राप्त शैलचित्र इस बात के प्रमाण हैं कि प्रागैतिहासिक काल में मानव इस क्षेत्र में निवास करता था। उनकी ये कलाकृतियां तत्कालीन इतिहास को महत्त्वपूर्ण प्रमाण प्रदान कर सकती हैं। इन चित्रों के वैज्ञानिक अध्ययन से तत्कालीन समाज के विषय में प्रामाणिक जानकारियाँ प्राप्त हो सकती है।

शैलाश्रय आदिमानव की क्रीड़ा स्थली रही है। ये मानव को प्राकृतिक आपदाओं एवं उसकी भविष्यवाणियों से बचने के लिए आश्रय स्थल थे। यहीं पर मानव ने रहकर अपनी कला एवं अभिरुचियों की अभिव्यक्ति चित्रों के माध्यम से की है। ये चित्र सामान्यतया गेरूआ रंग से बने मिलते हैं। यह गेरूआ रंग पहाड़ियों में उपलब्ध हेंमेटाइट पत्थर को पीस कर वसा के साथ मिलाकर तैयार किया जाता था। इसके अलावा कुछ शैलाश्रयों में उकेर कर बनाई हुई आकृतियाँ मिलती हैं। ऐसी ही आकृतियाँ हाजीपुर (अलवर) में स्थित शैलाश्रय से प्रकाश में आयी हैं।

आदिमानव की यह कलाकृतियाँ न केवल उनके कलापक्ष को उजागर करती हैं, अपितु उनकी आहार–विहार दैनिक कार्यकलापों, सामाजिक ढाँचे एवं स्वरूप, अस्त्र–शस्त्र तत्कालीन जन्तु–वनस्पति एवं भौगोलिक पक्ष को भी दर्शाते हैं। हाजीपुर से प्राप्त शैलाश्रय में अंकित रेखाचित्र अवश्य ही उनका तत्कालीन जातियों से सम्बन्ध दर्शाते हैं। यहाँ पर अंकित मछली की आकृति को सम्भवतः यहाँ की प्राचीन मीणा जाति के लोगों ने अपने निवास स्थलों पर अंकित किया है। वैज्ञानिक एवं मानवशास्त्रीय अध्ययन से यह बात प्रामाणिक हो चुकी है कि मानव अपनी प्राचीन परम्पराओं एवं रीतियों से सहस्त्र सदियों तक जुड़ा रहता है। यह परम्पराएँ किसी न किसी प्रकार से उस समाज का अंग होती हैं। समय के प्रवाह के साथ उनका मूल स्वरूप थोड़ा बहुत परिवर्तित अवष्य हो जाता है, परन्तु उसकी आत्मा वहीं रहती हैं। इसके अनेक उदाहरण पुरातात्विक साक्ष्यों से मिलते हैं। जैसे हड़प्पा से प्राप्त कांसे की नर्तकी की प्रतिमा जो बाँए हाथ में चूड़ी पहने है आज भी कच्छ एवं राजस्थान में जाति विशेष की महिलाएं कुहनी के ऊपर इसी प्रकार की चूड़ियाँ धारण करती हैं।

इसी प्रकार से राजस्थान की आदिम जातियों ने जन–जीवन में मत्स्य (मीन, मछली) की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस क्षेत्र में प्राचीनकाल में मछली का षिकार कर अपनी उदर पूर्ति करते रहे होंगे। इसीलिए इस आदिमानव ने मछली का अंकन अपने निवास स्थान, उन शैलाश्रयों में किया होगा। वैज्ञानिक पक्ष को देखें तो हम पाते हैं कि आज भी सभी जनजातियां अपने समाज में किसी न किसी से सम्बन्ध स्थापित कर उसे उपयोग के लिए निषिद्ध करती हैं या उसे अपने पूर्वजों से सम्बन्ध स्थापित मानकर उसकी पूजा–अर्चना करती रही हैं। इन तथ्यों के प्रकाष में निष्चय ही यह मीन आकृतियाँ मीणा समाज से सम्बन्धित मानवों की अभिव्यक्ति रही होगी।

आद्यैतिहासिक (प्रोटोहिस्टोरिक) काल में भी इस क्षेत्र में मानव द्वारा की गई विकसित बस्तियाँ थी। गणेश्वर के उत्खनन से प्राप्त प्रमाणों से ज्ञात होता है कि ये ताबें के धातुकर्म से भली–भाँति परिचित थे। यहाँ बड़ी संख्या में तांबे के मछली पकड़ने के कांटे मिले हैं जो इस क्षेत्र में मछली पालन अथवा मछली के शिकार के प्रमाण हैं। यह क्षेत्र आज भी मीणा बाहुल्य क्षेत्र है। आश्चर्य नहीं कि गणेश्वर संस्कृति के निर्माता मीणा जाति के पूर्वज ही रहे होंगे।

राजगढ़ के समीप 'संकट' नामक स्थान से चित्रित धूसर रंग के बर्तन प्राप्त हुए हैं। इन चित्रित धूसर पात्र परम्परा के निर्माताओं को महाभारत कालीन माना जाता है। यह स्पष्टतः ज्ञातव्य है कि महाभारत काल में यह प्रदेश मत्स्य देश के नाम से जाना जाता था। यदि साहित्यिक साक्ष्यों को पुरातत्व विज्ञान की दृष्टि से देखते हैं तो यह प्रामाणित हो जाता है कि यह प्राचीन स्थल 'संकट' महाभारत काल की एक बस्ती था और यह क्षेत्र मत्स्य देश का ही अंग है। इसलिए इन विशिष्ट प्रकार के पात्रों की उपलब्धता उन साहित्यिक मान्यताओं को बल देती है कि प्राचीन मत्स्य देश ही मीणा जनजाति का आदि देश है। इसके अतिरिक्त बाण–गंगा, भीमलता, भीमगदा इत्यादि स्थलों से प्राप्त प्राचीन अवशेष भी महाभारत कालीन प्रतीत होते हैं। वस्तुतः इन स्थानों के नाम भी महाभारत के नायक, पाँच पाण्डवों के नाम पर रखे गये हैं।

छठीं सदी ई. पूर्व में एक सामाजिक एवं धार्मिक जनजागृति का प्रवाह हुआ। उसके फलस्वरूप भारत में जहाँ दूसरा नगरीकरण प्रारम्भ हुआ वहीं पर इसी नगरीय भोग–विलास के परित्याग का उद्घोष बुद्ध एवं महावीर ने किया। यह संक्रमण काल था जब एक ओर यहाँ बड़े–बड़े गणराज्यों एवं राजतंत्रों का शासन विस्तृत भू–भागों पर फैला था। यहाँ राज एवं गणराज्य एक–दूसरे की सीमाओं का अतिक्रमण कर अपनी–अपनी सीमाओं का विस्तार कर रहे थे। जिसके कारण छोटी–छोटी जनजातियां एवं जनपदों का गणराज्यों में विलय हो रहा था। वर्तमान उत्तरप्रदेश, हरियाणा एवं राजस्थान की सीमावर्ती भाग, अलवर एवं आस–पास के क्षेत्र मत्स्य जनपद में आते थे। मत्स्य देश की प्रथम राजधानी उप्पल्लव थी उसके उपरान्त इसकी राजधानी विराट नगर स्थानान्तरित हो गयी थी। आज विराट नगर की पहचान वर्तमान वैराठ से की जाती है। यहाँ के पुरातात्विक उत्खनन से प्राप्त सामग्री से इसकी प्रामाणिकता सिद्ध होती है। यहाँ से प्राप्त सम्राट अशोक द्वारा लिखवाया गया शिलालेख एवं प्राप्त स्तूप बौद्ध धर्म के विस्तार की सीमा निर्धारित करते हैं।

इन पुरातात्विक साक्ष्यों से स्पष्ट होता है कि कुछ समय के लिए सम्राट अशोक ने यहाँ की पूर्व शासित मीणा जाति को पदोच्युत कर अपना अधिकार कर लिया। ईसा के एक सदी पूर्व मत्स्य क्षेत्र में पुनः आदिवासी शासकों ने जनपदों की स्थापना की। यहाँ से प्राप्त जनजातीय सिक्के इसके प्रमाण हैं। कालान्तर में शकों ने इस क्षेत्र पर अपना अधिकार कर लिया। कुषाणों के पतन के साथ ही इन जनजातियों ने पुनः अपनी स्वतंत्रता कायम कर ली। इन्होंने युद्धों में कुषाणों व हूणों को पराजित कर दिया। इसके द्वारा प्रचलित 'योद्धानाम' अर्थात् योद्धाजन विजय मुद्रा लेख अंकित यह सिक्के इसी ओर इंगित करते हैं। इनका राज्य लगभग छठवीं शताब्दी तक चलता रहा। राजगढ़ से प्राप्त 960 ई. का महेन्द्रादित्य परमेश्वर का शिलालेख इस क्षेत्र में गुर्जर प्रतिहारों का शासन होने की ओर इंगित करता है।

पूर्व मध्यकाल में यह क्षेत्र पुनः कुछ समय के लिए मीणा जाति के अधीन रहा होगा। देवली के खण्डहरों से प्राप्त पाषाण शिला जिस पर दो मछली उसके ऊपर मोर नीचे कमल का अंकन है। जे.एस.बक्सी इसको राज्य चिह्न होने की सम्भावना

व्यक्त करते हैं। यह ऐतिहासिक सत्य है कि सभी राजवंशों ने अपने राज चिह्न उन्हीं आकृतियों, पशुओं और पक्षियों को रखा है जिनसे उस राजवंश का प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कोई न कोई सम्बन्ध रहा है। इसकी प्राप्ति से इस मत को बल मिलता है कि शिला पर अंकित यह मछली आकृतियाँ एवं जिनको सुनियोजित रूप बनाकर अलंकृत किया गया है, निश्चय ही किसी मीणा शासकों द्वारा शासित क्षेत्र का राज्य चिह्न रहा होगा।

ऐतिहासिक दुर्ग भानगढ़ और अजबगढ़ के प्राचीन मंदिरों के गर्भगृह के द्वार पर उकेरी आकृतियों के हाथ में मछली को दिखाया गया है। शिवराजपुर से प्राप्त मानवाकृति के सीन पर 'मछली' का अंकन है। यह आकृतियाँ जिनके साथ मछली का अंकन किया गया है यह किसी ऐसे व्यक्तियों की है जिनका पूर्वकाल से मछली के साथ कोई सम्बन्ध रहा होगा। इसका सम्बन्ध यदि मध्यकाल की सामाजिक एवं धार्मिक पृष्ठभूमि की गहनता से देखा जाए तो इस पर कुछ प्रकाश डाला जा सकता है।

राजस्थानी जनश्रुति में आज तक नौ नाथ और चौरासी सिद्ध हुए हैं। इन सिद्धों में मत्स्येन्द्रनाथ का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। अन्य पंथों एवं धर्मों की भाँति इस नाथ सम्प्रदाय को कभी राजकीय आश्रय तो नहीं प्राप्त हुआ परन्तु इनकी जन–साधारण में काफी मान्यता रही है। इनके गीत आज भी लोक साहित्य में मिलते हैं। इन सिद्धों को अपने निश्चित लक्षण एवं चिन्ह विशेष से पहचाना जाता है। मत्स्येन्द्रनाथ के हाथ में या उनके निकट मछली का अंकन किया जाता है। सम्भव है कि भानगढ़, अजबगढ़, शिवराजपुर से प्राप्त पुरुष आकृतियाँ जिनके साथ मछली का अंकन दिखाया गया है, वह आकृतियाँ मत्स्येन्द्रनाथ की हो। यह मत्स्येन्द्रनाथ वास्तव में जिस जाति के रहे होंगे उसका सम्बन्ध 'मछली' से रहा होगा, जिसको उनके लक्षण के रूप में दर्शाया गया है।

उपर्युक्त तथ्यों में साम्य के आधार पर अधिक बल इसलिए मिलता है कि वर्तमान में अलवर नाथों का प्राचीन केन्द्र रहा है। यहीं पर भर्तृहरी का प्राचीन मंदिर बना है। यह भतृहरी गोरखनाथ के शिष्य थे। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि

यहाँ से प्राप्त आकृतियाँ एवं कला वस्तुएँ निश्चित ही मछली से सम्बन्धित जाति से अपनी साम्यता रखती है जो सम्भवतः यहाँ की मीणा जाति ही रही होगी।

अंततः प्रश्न यह उठता है कि मीणा जनजाति ने मछली से अपने को सर्वप्रथम स्वीकृत कब और कैसे किया। इस दिशा में नवीन खोज मीणाओं के इतिहास ओर प्राचीनता को सिद्ध करने में महत्त्वपूर्ण साबित होगी।

विभिन्न पुरातात्विक उत्खननों के पश्चात् यह देखा गया है कि परम्पराएँ, रीति–रिवाज व उपयोग की वस्तुएँ हजारों–हजारों साल भी बिना परिवर्तन के जस की तस निरन्तर चलती रही है। अतः मत्स्य क्षेत्र के किसी अतिप्राचीन स्थल से प्राप्त पुरावंशों का वर्तमान मीणा जनजाति की परम्पराओं से तुलनात्मक अध्ययन उनकी प्राचीनता और इस क्षेत्र में उनकी उत्पत्ति को निर्विवाद सिद्धि कर सकता है। वर्तमान में मीणा जनजाति द्वारा प्रयुक्त विभिन्न चिह्नों, रीति–रिवाजों इत्यादि का ज्ञात तिथि वाले पुरावशेषों से तुलनात्मक अध्ययन उनकी प्राचीनता को सिद्ध करने में सफल होगा। राजस्थान में विगत वर्षों में हुए पुरातात्विक अन्वेषण एवं उत्खनन द्वारा प्रकाश में आये पुरास्थलों यथा–विराट नगर, गणेश्वर जोधपुरा, सोनारी का घाट, नोही, आहड़, बालाथल, गिलुण्ड, लाछुड़ा, ओझियाना आदि से प्राप्त पुरातात्विक प्रमाणों से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि यह जनजाति अपने प्रारम्भिक काल में शैलाश्रयों, घास–फूस से बनी झोपड़ियों तथा पत्थरों एवं मिट्टी की बनी कच्ची ईंटों से निर्मित मकानों में रहती थी। ओझियाना उत्खनन से प्रकाश में आये प्रमाणों से स्पष्ट है कि ये लोग अपने घरों की दीवारों पर गोबर व मिट्टी के मिश्रण का लेप करके उन पर विभिन्न आकृतियों का चित्रण किया करते थे।

''मीणा जाति वीर योद्धा होने के साथ–साथ कृषक भी थे। उत्खनन से प्राप्त प्रमाणों से सिद्ध होता है कि ये लोग मुख्यतः ज्वार, बाजरा, मक्का, गेहूँ, जौ, ग्वार, मटर, सरसों व धान आदि की खेती करते थे।

कृषि के साथ–साथ ये लोग पशुपालन भी करते थे। यह जानकारी हमें ओझियाना उत्खनन में काफी मात्रा में उपलब्ध हुई, सांड़, गाय, भेड़,–बकरी, बैल, भैंस आदि की मिली हड्डियों व मृण आकृतियों से होती हैं। इन हड्डियां का analysis

डेक्कन कालेज Research institute, Pune **के** Dr. P.P. Goglekar द्वारा दी गयी रिपोर्ट से पुष्टिकरण होता है।''[19]

उत्खनन में मिले मिट्‌टी के बर्तनों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि ये लोग संभवतः लाल, काले मृदुभाण्ड, चित्रित धूसर मृदुभाण्ड (पेन्टेग्रेवेयर) प्रयोग में लाते थे, इनकी आकृतियाँ छोटे मुँह की घड़ानुमा सुराही, कटोरे, तश्तरियाँ, लोटे, हांडियाँ आदि प्रमुख है। उत्खनन में पत्थर की ओखली, सिलबट्‌टे आदि भी मिले हैं। जिससे ज्ञात होता है कि यह जनजाति अनाज को कूट–पीसकर प्रयोग में लाती थी उत्खनन में मिले चूल्हें, भट्‌टियाँ और उनसे मिली जुली हुई हड्‌डियों से ज्ञात होता है कि ये लोग मांस को आग पर भून कर एवं पका कर खाते थे।

इसके अतिरिक्त उत्खनन से प्राप्त अस्त्र–शस्त्रों में मुख्यतः तीर कमान, गोले, फरसे, भाला, कुल्हाड़ी, गंडासा, धारिया पत्थर के उपकरण आदि भी प्राप्त हुए हैं जो इस बात की पुष्टि करते हैं कि यहाँ की जनजाति के लोग इन अस्त्र–शस्त्रों का प्रयोग युद्ध व शिकार करने में करते थे।

''पुरातत्वविद् डॉ. एच.डी. सांकलिया ने आधुनिक अन्वेषण व शोध द्वारा 'साइन्स टुडे' नामक पत्रिका में प्रकाशित अपने लेख में मीणा जाति (द्रविड़–प्रजाति) माना है, तथा सिन्धु घाटी की सभ्यता के पतन के बाद ये द्रविड–प्रजाति दक्षिण में चले गये। पुरावशेषों पर चित्रित व अंकित जानवरों के चिह्न इनके संबंध सूचक माने जाते हैं।''

पुरातत्ववेता रेवखेड फादर हेरास ने 'जनरल ऑफ द काशी हिन्दू विश्वविद्यालय 1947' में लिखा है कि ''मोहनजोदड़ों से मीन (मछली) चिह्न से अंकित जो मुद्राएं प्राप्त हुई हैं, उससे इस बात की पुष्टि होती है कि मीणा जनजाति आर्यों से पहले ही इस देश में रहने वाले मीनगण चिह्नधारी लोगों की सन्ताने हैं।''[20]

''करौली में यादवों का शासन प्राचीन काल से चला आ रहा है पर इस क्षेत्र के मीणे सदैव प्रबल रहे हैं। मीणों के कई विशिष्ट गौत्र करौली के आस–पास पाये जाते हैं। 'झिर' गाँव के झिरवाल मीणे उनमें एक हैं। करौली के राजा गोपाल पाल जो अकबर के समकालीन थे, जिन्होंने मीणों का दमन किया और करौली शहर की रक्षा के लिये बाहर पनाह बनाई।''[21]

मीणा इतिहास के लेखक रावत सारस्वत के अनुसार –

मीणा लोग आर्यों से पहले ही भारत में बसे हुए थे व इनकी संस्कृति व सभ्यता काफी बढ़ी–चढ़ी थी। ये अरावली पर्वत श्रृंखला में बसे थे व दुर्गों का उपयोग करते थे, जहाँ इनके स्रोत आज भी हैं।

'ओझियाना' उत्खनन से फेयांस और कार्नेलियन के मनके एवं मिट्टी के केक प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार के मनके एवं केक हड़प्पा सभ्यता के पुरास्थलों से प्राप्त मनकों एवं केक से साम्य रखते हैं। यद्यपि आहड़ सभ्यता के लोग हड़प्पा से भिन्न अरावली पर्वत घाटी के मूल निवासी थे, परन्तु प्राप्त उपकरणों से ज्ञात होता है कि आहड़ सभ्यता के लोगों के साथ दूर दराज का संबंध अवश्य था। ये उपकरण यहाँ के मूल निवासियों की प्राचीनता के सूचक हैं।

ओझियाना उत्खनन में मिले इन उपकरणों व मृदुपात्रों के आकार प्रकार के साम्य को नजर में रखते हुए क्या यह कहा जा सकता है कि सिन्धु सभ्यता के लोग अहाड़ियन्स के ही पूर्वज रहे होंगे?

मत्स्य क्षेत्र में स्थित पुरातात्विक स्मारकों में प्रमुख रूप से हर्षमाता मंदिर आभानेरी, नीलकण्ठ–महादेव मंदिर, भानगढ़ व अजबगढ़, रणथम्भौर, चित्तौड़ के स्मारक व हर्षनाथ शिव मंदिर व भैरव मंदिर, सीकर की अधिकांश प्रतिमाओं में लोकवाद्यों का चित्रण मिलता हैं। जिनमें ढ़ोलक, खंजीरी, चिमटा, झाँझ–मंजीरा, अलगोजा, खरताल व बंसी प्रमुख हैं। ये लोकवाद्य आज भी यहाँ मीणा जाति द्वारा प्रयोग में लाये जाते हैं। प्राचीनता को देखते हुए उपर्युक्त ऐतिहासिक व पुरातात्विक प्रमाण बहुत सीमित जानकारी उपलब्ध कराते हैं। इनके अनसुलझे एवं अज्ञात पक्ष को उजागर करने के लिए यहाँ के असंख्य बिखरे ऐतिहासिक व पुरातात्विक साक्ष्यों को एक धागे में पिरोकर एक नवीन पहचान देने की आवश्यकता हैं। यहाँ की प्राचीनतम मीणा जनजाति पर अभी तक बहुत ही कम कार्य किया गया है। इस जाति के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक व राजनीतिक पहलुओं का व्यवस्थित शोध इनसे जुड़े पुरा स्मारकों का अध्ययन पुरास्थलों का सुव्यवस्थित ढ़ंग से उत्खनन प्राप्त पुरातात्विक साक्ष्यों का अध्ययन व विश्लेषण मीणा जनजाति के गौरवशाली इतिहास को उजागर

व प्रकाशित करने में सफल सिद्ध होगा, क्योंकि हमारे समाज से जुड़ी मीणा विरासत पुरातात्विक अतीत के अवशेष हमारी जीवन्त कहानी होती, हैं, जिसमें हमारे अतीत की धड़कने होती हैं।''[22] पुरातत्व के आधार पर लिखित इतिहास यथार्थ को वाणी देता हैं।

मीणा जाति का धर्म व व्यवसाय–

धर्म– मीणा सभी हिंदू मतावलम्बी है। करौली में केवल 4 प्रतिशत जैन, 2 प्रतिशत सिक्ख तथा दो प्रतिशत ईसाई हैं।

व्यवसाय– अधिकांश मीणा कृषि कर्मी हैं। 3,34,244 पुरुष तथा 2,59,031 स्त्रियाँ कृषि में ही संलग्न हैं। 2,21,749 पुरुष 2,55,032 स्त्रियाँ कोई कार्य नहीं करतीं, जबकि शेष लोग खेतों पर श्रमिक, पशुपालक या खान–कर्मचारी हैं। तथा बागों, जंगलों, खदानों, इमारतों, व्यापार, व्यवसाय, सवारी, आदि अर्थोंपार्जन के विविध धंधे करते हैं। यह सिर्फ मीणों की गणना है अन्य किसी की नहीं।

करौली क्षेत्र का समाज, साहित्य व लोकगीत –

लोकगीतों की परम्परा उतनी ही पुरानी है जितनी भारतीय संस्कृति। वैदिकयुग में भी पुत्रजन्म, यज्ञोपवीत, विवाह व मांगलिक कार्यों आदि के अवसरों पर सुन्दर गीत गाये जाते थे। ये गीत गाथाओं/कथाओं के नाम से चर्चित है। प्राचीन काल में उल्लिखित गाथाओं को हम लोकगीतों का प्रतिनिधि अथवा पूर्व रूप कह सकते हैं। 'गाथा' शब्द का अर्थ है 'पद्य' या 'गीत' इस अर्थ में इसका प्रयोग ऋग्वेद में अनेक मंत्रों में पाया जाता है।

गाने वाले अर्थ में 'गथिन' शब्द मिलता है। और इस प्रकार गाथा शब्द का प्रयोग एक प्रकार से विशिष्ट मंत्र के अर्थ में ऋग्वेद में पाया जाता है। ''कृष्ण देव उपाध्याय के अनुसार सायण भाष्य के अनुशीलन करने से स्पष्ट ज्ञात होता है कि विवाह के अवसर पर विभिन्न वैवाहिक रीतियों के समय जो गीत गाये जाते थे वे सभी नरसी जी का मायरा और गाथा के नाम से प्रसिद्ध थे। जिस प्रसंग में यह बात कही गई है, उससे भी इस बात की पुष्टि होती है।''[23]

ब्राह्मण ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि गाथाओं का व्यवहार मंत्र रूप से नहीं किया जाता था। प्राचीन काल में किसी विशिष्ट राजा के किसी अवदान संस्कृत्य को संक्षिप्त कर जो गीत लोक समाज में प्रचुर रूप से गाये जाते थे। वे ही गाथा नाम से साहित्य का पृथक अंग माने जाते थे। वे गाथाऍ कहीं केवल श्लोक नाम से निर्दिष्ट है, और कहीं यज्ञ गाथाऍ कही गई हैं।

''इन ऐतिहासिक गाथाओं की पररम्परा महाकाव्यों के काल में भी अक्षुण्ण दिखाई पड़ती है। ऐतरेय ब्राह्मण की गाथाएँ ठीक उसी रूप में दशम स्कन्ध में भी उपलब्ध होती हैं। विवाह के अवसर पर भी गाथाओं के गाने का विधान मैत्रायणी संहिता में दिया गया है। इसी नियम के अनुसार संस्कार गृह सूत्र में विवाह विषयक दो गाथाएँ उपलब्ध होती हैं।''[24]

निष्कर्ष यह है कि राजसूय यज्ञ, विवाह और सीमन्तोन्नयन के शुभ अवसरों पर ऐसी गाथाएँ गाई जाती थी जो प्राचीन काल से परम्परागत रूप में चली आती थी यह भी स्पष्ट है कि राजसूय यज्ञ में ऐतिहासिक गाथाओं और विवाह आदि के समय देवता विषयक प्रचलित गाथाओं के गाने का प्रचलन था। पर आज मीणा जनजाति के लोकगीत में भी प्रचलन के अनुसार बदलाव आया है। जिसमें कि वर्तमान समय की कठिन शब्दों को एक वाक्यांश में बदलकर सरल भाषा का प्रयोग किया जा रहा है।

पालि साहित्य के अध्ययन से पता चलता है कि पालि भाषा में उपनिषद्गाथायें थीं जो प्राचीन काल से प्रचलित थीं। इसके अतंर्गत महाकाव्य और पौराणिक युग में भी लोकगीतों का उल्लेख मिलता है। महर्षि वाल्मीकि ने भगवान श्रीराम के जन्म के अवसर पर गन्धर्वों द्वारा गीत गाये जाने का उल्लेख किया है। मीणा जनजाति में नारियों द्वारा संतान रत्न की प्राप्ति पर मांगलिक गीत गाये जाते हैं।

महर्षि व्यास ने भी श्रीमद्भागवत् में भगवान श्रीकृष्ण के जन्म के समय स्त्रियों द्वारा एकत्र होकर सामयिक गीतों के गाये जाने का स्पष्ट उल्लेख किया हैं। महाभारतकार के उल्लेख से स्पष्ट विदित होता है कि कृष्ण जन्म के अवसर पर स्त्रियों ने जो गीत गाया होगा वह उस समय प्रचालित लोकगीत ही होगा।

विक्रम संवत् की तीसरी शताब्दी में राजा हाल या शलिवाहन द्वारा संग्रहित गाथा सप्तशती की गाथाएँ सरल गति काव्य के उत्कृष्ट नमूने है स्पष्ट है उस समय भी लोकगीत रचने और गाने का प्रचलन था।

संस्कृत में अनेक कवियों ने लोकगीतों के गाये जाने का वर्णन किया है। प्रसिद्ध कवयित्री विज्जका ने धान कूटने वाली स्त्रियों द्वारा गीत गाने का अत्यन्त रोचक वर्णन किया है।

महाराजा हर्ष ने नैषधीय चरित में जोत चलाते समय स्त्रियों द्वारा गीत गाये जाने का वर्णन किया है। गोस्वामी तुलसीदास ने तो श्रीराम के विवाह के अवसर पर अन्य मनोहर गीतों के साथ गाली गाने का भी वर्णन किया है।

वाल्मीकी, व्यास (भागवत्कार) विज्जका और तुलसीदास में से किसी ने यह नहीं बताया है कि वे गीत कौन से थे। अवश्य ही वे गीत मौखिक और कठंस्य होंगे जो परम्परागत रूप से आज तक चले आ रहे हैं। इस प्रकार लोकगीतों की परम्परा अत्यन्त प्राचीन ठहरती है। इस प्रकार वैदिक काल से लोकगीतों की जो परम्परा चली वह आज भी अविच्छिन्न रूप से प्रवाहित हो रही है।

लोकगीतों का वर्गीकरण–

लोकगीत का शाब्दिक अर्थ है, जन–मानस का गीत, जन–जन का गीत, जन मानस की आत्मा में रचा–बसा गीत। अर्थात् जो गीत मौखिक सम्पत्ति की तरह विरासत में मिले हो वही लोकगीत है। मौखिक परंपरा का अवगाहन करते सहानुभूति से सम्पन्न ये लोकगीत किसी भी जाति समुदाय की सबसे बडी पहचान और सांस्कृतिक धरोहर है।

लोकगीतों के आचार्य डॉ. फ्रांसिस चाइल्ड का मत है–"लोकगीतों में उसके रचयिता के व्यक्तित्व का सर्वथा अभाव रहता है। उसकी वाणी में तो उसकी रचना अवश्य मिलती है परंतु उसका व्यक्तित्व बिल्कुल नहीं मिलता है। लोकगीतों का रचयिता इन गीतों की सृष्टि पर जनता के हाथों इन्हें समर्पित कर स्वयं अर्न्तध्यान हो जाता है। मराठी लेखक डॉ. सदासिव फड़के के अनुसार– "शास्त्रीय नियमों की

परवाह न करके सामान्य लोक व्यवहार के उपयोग में लाने के लिए मानव अपनी आनंद तरंग में जो छन्दोबद्ध वाणी सहज उद्भुत करता है, यही लोकगीत है।''

डॉ. सूर्यकरण पारीक के विचार में– ''आदिम मनुष्य हृदय के गानों का नाम लोकगीत है। मानव जीवन में उसके उल्लास की, उसकी उमंगों की, उसकी करुणा की, उसके रुदन की उसके समस्त दुख–सुख की कहानी इनमें चित्रित है।''[25]

अतः लोकगीत निश्चित रुप से मौखिक परंपरा के सार्थक शिलालेख हैं। लोकगीत वास्तव में आत्मतत्व से अनुप्राणित होने से संस्कृति के सार्थक शिलालेख है। लोकगीत वास्तव में आत्मतत्व से अनुप्राणित होने से संस्कृति के प्रतीक है।

सृष्टि के आदिकाल में सामाजिक चेतना के साथ लोकगीत का उदय हुआ जिसका संबंध जनजीवन से था। शनैः–शनैः मानव में ज्ञान विकसित हुआ है। और उसने लयबद्ध बोली में अपने सुख–दुख की कहानी कहना प्रारम्भ किया। यह लयबद्धता ही लोककण्ठ का आश्रय प्राप्त कर लोक गीत बनी। लोकगीत के विषय में सूर्यकरण पारीक का मत है ''कि आदि मानव हृदय के गानों का नाम लोकगीत है। मानव जीवन की उसके उल्लास की, उसकी उमंगों की, करूणा की उसके रुदन की, उसके समस्त सुख–दुख की कहानी इनमें चित्रित है।''[26]

स्पष्ट है कि लोकगीत लोक में प्रचलित गीत ही होता है पर इस प्रचलन के दो अर्थ हो सकते हैं। एक तो किसी समय विशेष में प्रचलित होता है और कुछ समय पश्चात् वह गीत समाप्त हो जाता है। दूसरे अर्थ में लोकगीत का ऐसा प्रचलन आता है, जिसकी एक परम्परा बनती हैं और वह कुछ पीढ़ियों तक चलता रहता है।

द्वितीय वर्ग के लोकगीत एक ओर तो ऐसे गीत हो सकते हैं जिनमें लोक वार्ता तत्व समाविष्ट हो। ऐसे गीतों में भू–विज्ञानविद् के लिए बहुत सामग्री रहती है। दूसरी और ऐसे भी लोकगीत होते हैं जिनसे लोक अपने मनोरंजन के उपकरण जुटाता है। इन दोनों प्रकार के गीतों में लोक संस्कृति के विविध चरण परिलक्षित होते हैं।

एक अन्य प्रकार के भी लोकगीत होते हैं। ये अपौरूषेय भी होते हैं। विविध अनुष्ठानों के अवसरों पर ये गीत स्त्रियों द्वारा गाये जाते हैं। वे भी गीत होते हैं जो

पुरुषों द्वारा गाये जाते हैं। ये गीत प्रायः लोकरंजक होते हैं। स्त्री पुरुष दोनों मिलकर सामूहिक रूप में इन्हे गाते हैं।

देवी–देवताओं के गीत–

राजस्थान धर्मप्राण प्रांत है। यहां अनेकों देवी–देवताओं की पूजा होती है अर्थात् यहाँ अनगिनत देवी–देवताओं की आराधना की जाती है। इनकी स्तुति में गीत गाये जाते हैं। इनमें प्रमुख रुप से कैला देवी, चामुण्डा देवी, करणी माता, जीणमाता, शीतलामाता, संतोषीमाता, पितरणियां आदि लोकदेवियां तथा गणेश जी, बालाजी, भैरुजी, भोमिया जी, रगत्या जी, खेतरपालजी, रामदेवजी, पाबूजी, तेजाजी, गोगाजी आदि लोकदेवता की स्तुति में गीत गाकर जनमानस ने अपनी आस्था प्रकट की।

देवीगीत–

करौली क्षेत्र के जीवन वैसे तो कृष्णमय जीवन है परन्तु यहाँ प्रत्येक देवी–देवताओं को महत्त्व दिया जाता है। लोकजीवन देवी पूजा, आराधना तथा भक्ति भी तन्मय होकर करता है। करौली में नव दुर्गा अथवा नवरात्रि चैत्र मास में होती है। इस अवसर पर देवी जागरण, देवी दर्शन आदि दिया जाता है। रात–रात भर जागकर देवी के गीत गाये जाते हैं। घर–घर में देवी पूजा होती है। व्रत रखे जाते हैं। कन्याएँ और लांगुरा जिमाये जाते हैं। देवी जागरण के गीत गाने वाले भगत कहलाते हैं। देवी गीत स्त्री और पुरुष सभी गाते हैं। इन गीतों में देवी के प्रति भक्ति, माता की उदारता एवं माता के जन कल्याण रुप का ही वर्णन रहता है।

करवा चौथ–

कार्तिक कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को यह व्रत किया जाता है। करवा चौथ का व्रत पूजन स्त्रियाँ अपने सौभाग्य के लिए करती है। स्त्रियाँ दीवार पर करवा चौथ बनाती है। स्त्रियाँ पूजन करते समय सौभाग्य चिह्न चूड़ी, मेंहदी, बिन्दी, बिछुआ, महावर आदि पहनकर पूजा करती हैं। करवा चौथ में सात भाइयों की इकलौती बहन भी बनाई जाती है। करवे, कुम्हारिन, महावर लगाने वाली नाइन चूड़ी पहनाने वाली मनिहारिन इसमें बनायी जाती है। इसकी एक प्रचलित कथा भी है पूजन करते समय स्त्रियाँ लोकगीत भी गाती है–

करवा चौथ का गीत–

''करुवा ले करुवा ले, वीर पियारी करुवा ले
बाप भाई की खट्‌टी खानी, करुवा ले करुवा ले
धोले नाड़े धोले साढ़े, तेरी जनन जाइयो,
करुवा ले करुवा ले।''

ऋतुओं के अनुकूल गीत–

जिस प्रकार प्रत्येक अनुष्ठान से सम्बंधित गीत होते हैं उसी प्रकार ऋतु से सम्बंधित भी लोकगीत मिलते हैं। मीणा जनजाति की नारी के गीतों में ऋतुओं के गीतों का अहम स्थान हैं और करौली क्षेत्र की महिला जब ऋतु के अनुसार फसल या कोई भी मांगलिक कार्य करती हैं तो स्वयं व आसपास की नारियों को एकत्रित कर ''रामजी के गीत" गाये जाते हैं। इन्हें हम मांगलिक लोकगीत भी कह सकते हैं। करौली क्षेत्र के प्रमुख तीर्थस्थान श्रीमहावीर जी के मेले पर मीणा जनजाति क्षेत्र के गांव नंगला मीणा के लोग व लुगाईयों द्वारा भगवान श्री महावीर की रथ यात्रा के सम्मुख प्रचलित गीत–

''रथ के आगे बूँद पड़ी संवत् को
धोखों नहीं मैया।

माना जाता है कि चैत्र मास में बरसात हुई है तो आगे आने वाला संवत् भी अच्छा ही होगा इसी खुशी में मीणा जाति के लोग खुश होकर हर्षोल्लास से भगवान को गालियों से रिझाते हैं।

होली के गीत–

फाल्गुन महीने में होली का त्यौहार भारतवर्ष में बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। इस अवसर पर करौली के ब्रजवासी बसंत के उन्माद में मदमस्त होकर होली और रसिया गाते हैं। इन गीतों में प्रेम और जीवन का चित्रण अधिक मात्रा में देखने को मिलता है। करौली में बसंत पंचमी के दिन से ही होली का आरंभ हो जाता है। जगह–जगह होली के खांडे रौप दिये जाते हैं। होली के खांडे के गीत में खांडे डालने के साथ परिवार के लागों व वंश का नामोल्लेख किया जाता है–

''ओ कुण होळी में खांडों घालैगो,
ओ कुण देसी मंदरी धार, अे मीणा री होळी''

होली में लोंग, इलाइची के डोडे और कपूर डालकर पर्यावरण शुद्धि की चेतना दी गई हैं—

''लूंग रै डोडां री होळी, कपूर री डळ्या री होळी''

गीत में आगे परिवार की वंशबेल का नामोल्लेख है—

''बीरो **'लखन लाल'**, होळी में खांडों घालसी जी
भतीजो **'राजेश लाल',** होळी में खांडों घालसी जी
भतीजो **'राकेश लाल'**, में खांडों घालसी जी
पोतो **'दरश लाल (दर्श)'**, होळी में खांडों घालसी जी''

लोकगीतों में इस प्रकार चार, पाँच और छ पीढ़ियों का परिचय आसानी से प्राप्त हो जाता है। साथ कुटुम्ब के सह–सम्बंध का ज्ञान भी हो जाता है। अतः लोकगीतों में 'वसुधैवकुटुम्बकम्' की महत् सामाजिक चेतना का भव्य दर्शन देखने को मिलता है—

''होळी खेलो रै 'लखनलाल' च्यार जणा,
फागण खेलो रै
'राजेश' बीरा रै हाथां मांत्या माळ, फागण खेलो रै
'राकेश' बीरा रै हाथ कैसूला री डाळ,
फागण खेलो रै, नैन्या 'दरस' रै हाथ गुलाल,
फागण खेलो रै''

इसी के साथ गुलाल की होली आरंभ हो जाती है—

''ऐसे स्यामु खिलार, रंग में रंग ड़ारी,
काहै को पचरंग बनायो, काहै की पिचकारी,
रंग में रंग ड़ारी, ऐसे स्यामु खिलार, रंग में रंग ड़ारी।''

बच्चों के गीत—

इन गीतों में अद्भुत कल्पना की छटा होती है। अथवा ये शिक्षा प्रद बालगीत है। गीत में अस्सी नब्बे और सौ गणनांक है—

''अक्कड़ बक्कड़ बम्बे बो,
अस्सी नब्बे पूरे सौ
सौ में लगा धागा
चोर निकल कर भागा''

बालिकाओं के गीत–

ये गीत बालकों के गीतों से थोड़े से अलग मिलते हैं ये गीत बालिकाओं के सृजनात्मक व खेलों से सम्बंधित होते हैं। शरतीय नवरात्रो में बालिकाएँ पन्द्रह दिनों तक दीवार पर सैंजा मांडकर गीत गाती है–

''सैंजा बाई रौ सासरियो गड़ अजमेर
परण पधारिया सांगानेर''

क्रीड़ा अथवा खेल मनुष्य जीवन के साथ ही प्रारंभ हुआ है। हँसना, हाथ पैर चलाना, किलकारी भरना तथा पैदल चलने के साथ कुछ ऐसे खेल हैं जिन्हें बालक खेलता है। खेल–खिलौने, हँसना, भागना, कूदना, छलांग लगाना यह मानव का मनोविज्ञान भी है। बालकों में खेल के अनेक गीत प्रचलित हैं। इन गीतों में बालकों की कल्पनाशीलता मुखरित होती है। इन खेलों के नाम हैं– आटे–वाटे, अटकन–बटकन, छपरी–छपरा आदि। कुछ ऐसे भी गीत हैं जिन्हें बालक गाता तो नहीं पर एक पंक्ति को दुहराता चलता है जैसे कोडा है जमालशाही, चील–झपट्टा और कब्बड़ी। खिलौने वाला हाथ मार–मार कर कहता है–

''थपरी के थपरा कोरि मोरे खपरा,
मिया बुलाये चमकत आये,
पकरि बिल्ली कौ कान
(एक दूसरे के बच्चे कान पकड़कर)
चैउ मैउ चैउ मैंउ''[27]

एक अन्य खेल में बच्चे एक उँचे स्थान पर खडे होते हैं और एक बालक नीचे फिर पूछते हैं–

''हरा समुन्दर, गोपी चंदर,
मछली मछली, किता पानी।''

मनुष्यों के काम से सम्बन्ध रखने वाले गीत– लोकगीतों का सम्बन्ध मनुष्य के कामों और उसकी गतियों से भी रहता है। चक्की पीसते समय, फसल में कार्य करते समय, घर–आँगन की सफाई करते समय आदि अवसरों पर कोई न कोई गीत गाये ही जाते हैं।

आकार के अनुसार– गीत दो प्रकार के होते हैं। छोटे गीत और बड़े गीत। उनके गाने में कई–कई दिन लग जाते हैं। इन बड़े गीतों में प्रायः लम्बी कथा ही रहती है। ऐसे गीतों के नाम उनके विषय के अनुरूप होते हैं, और उसकी लय भी बंध जाती है। ढोला नामक गीत नल के पुत्र ढोला के नाम पर है। इस गीत की तर्ज का नाम भी ढोला हो गया है। ऐसा ही एक गीत आल्हा–उदल है।

यह सत्य है कि लोकगीतों का वर्ण्य विषय इतना अधिक व्यापक है कि उनका वर्गीकरण कठिन हो जाता है। फिर भी वर्गीकरण का प्रयास होता ही रहा है। वर्गीकरण में जो भी अभाव रह जाता है उसका कारण बताते हुए डॉ. मोहनलाल बाबुलकर कहते हैं कि लोकगीतों का विभिन्न विद्वानों द्वारा क्षेत्र विशेष के अध्ययन के आधार पर ही वर्गीकरण किया गया है। अध्ययन और स्थान विश्लेषण के कारण ऐसा कोई भी वर्गीकरण उपलब्ध नहीं होता जिसे पूर्ण वैज्ञानिक कहा जा सके। हाँ, सिर्फ अंदाजा लगाया जा सकता है।

सूर्यकरण पारीक ने राजस्थानी लोक गीतों के अध्ययन संकलन के आधार पर गीतों के 29 प्रकार निर्धारित किये हैं–

1. देवी और पित्तरों के गीत
2. ऋतुओं के गीत
3. तीर्थों के गीत
4. उपवास और त्यौहारों के गीत
5. संस्कारों के गीत
6. विवाह के गीत
7. भाई–बहन के प्रेम सम्बन्धी गीत
8. साली –जीजा के गीत

9. पति–पत्नी के प्रेम गीत
10. पणहारियों के गीत
11. चक्की पीसते समय के गीत
12. बालिकाओं के गीत
13. चरखें के गीत
14. प्रभाती के गीत
15. हरजस
16. धमालें
17. देश–प्रेम के गीत
18. राजकीय गीत
19. राज–दरबार के गीत
20. जन्मे (जागरण) के गीत आदि कुल 29 भेद है।

करौली जनपद के गीतों को लें उनमें कुछ ऐसे तत्व मिल जाते हैं जो सामान्यतः सभी क्षेत्रों के गीतों में मिल जाते हैं। ऐसे समान नियमों को ही रूढियाँ कहा जाता हैं। ये लोकगीतों में पायी जाने वाली सार्वदेशिक प्रवृत्तियाँ होती हैं। किन्तु किसी एक विशेष जनपद के अनेक गीतों में समान रूप से पाये जाने वाले कुछ सामान्य तत्व भी होते हैं। उन्हें सामान्य प्रवृत्ति के नाम से सम्बोधित किया जाता है।

नारी विषय का सामाजिक स्वरूप, विभाजन एवं वैविध्य–

नारी विषय का अध्ययन क्षेत्र समाज मे निवास करने वाली विभिन्न जातियों एवं समुदायों की सामाजिक प्रथाओं, रीति–रिवाजों एवं विश्वासों तक विस्तृत रहता है। लोक साहित्य में मानव जीवन की यथातथ्य अभिव्यक्ति निहित होती है। इसलिए लोकगीत में ऐसी प्रचुर सामग्री प्राप्त हो जाती है। जिसे समाजशास्त्री अपने अध्ययन के लिए उपयोगी पाता है। अनेक जंगली, असभ्य, पर्वतीय एवं आदिम जातियों के जीवन के विविध पक्षों के परिचय का आधार प्रायः लोकगीत ही रहा है।

प्राचीन प्रथाओं, परम्पराओं सामाजिक संगठन आदि से सम्बधित अपेक्षित आचरण कैसा रहा होगा, इसका ज्ञान प्रदान करने का कार्य लोकगीत ही करता है।

व्रत, त्यौहार, अनुष्ठान, संस्कार, रीति–रिवाज आदि की जानकारी हमें लोकगीतों से ही प्राप्त होती है। यह कथन सर्वथा सत्य है।

आकृति तथा गठन–

मीणा स्त्री–पुरुषों का कद लम्बा, गठीला, नाक, प्रायः तीखी और बड़ी, चेहरा गोल भरा हुआ, आँखे लाल–मोटी और ओंठ मोटे होते हैं। उनके गठन से यह नहीं कहा जा सकता कि ये आर्योत्तर जाति के हैं। भील आदि जातियों से इनकी भिन्नता स्पष्ट है कुछ इतिहासकारों ने इन्हें शक माना है। इनका रंग भी गोरा व सांवला होता है। काले रंग के मीणे देखने में नहीं आते। पहाड़ों और वनों में रहने पर भी भीलों की तरह इनका रंग काला नहीं है। यह इनके मूल स्रोत की भिन्नता प्रकट करता है।

आवास–

मीणों के घर प्रायः पहाड़ियों पर अथवा घने जंगलों में आसानी से न पहुँच पाने वाले स्थानों पर होते थे। इन रक्षा–स्थानों को मीणों के 'मेवासे' कहा जाता था। मेवासों के इर्द–गिर्द इनके कच्चे–पक्के मकान होते थे। ऐसे मकानों का समूह 'पाल' कहलाता था। प्रायः एक पाल में एक ही गोत्र विशेष के लोग रहते थे। यदि दूसरे गोत्र के लोग रहते तो भी प्रधानता एक ही गोत्र की होती थी और उस पाल का नामकरण भी उसी गोत्र के नाम से होता था। प्रारंभ में मीणों की ऐसी 12 पालें रही थी, पर बाद में वे अनेक हो गई। आदिवासियों में भीलों की भी ऐसी पालें होती हैं। जिनके पालपति को "गमेती" कहा जाता है। गमेती की आज्ञा के बिना कोई भी पाल में प्रवेश नहीं कर सकता। राजपुरुष को भी आज्ञा लेनी होती थी। लेकिन आज मीणा जनजाति में ऐसी स्थिति नहीं है।

मीणों के इन आदिम आवासों में सुख–सुविधा के अधिक साधन नहीं रहते होंगे, पर जो लोग खेतिहर हो गए अथवा नौकरी आदि अन्य व्यवसायों में चले गए उनके आवास समय और स्थिति के अनुकूल रहे होंगे। गाँवों में बसे हुए आज के मीणा परिवारों के आवास अन्य ग्रामीणों की तरह ही हैं। शाहजहाँपुर के मीणों के विषय में कहा जाता है कि उनके आवासों में इस प्रकार के गुप्त रास्ते थे जिनसे वे बचकर निकल जाते थे। उनके साहसपूर्ण कार्यों के लिए सदैव सानिध्य में रहने वाले पशुओं

के लिए भी घर के एक भाग में स्थान सुरक्षित था। प्रायः हर घर से सटा हुआ पशुओं तथा ढोरों का बाड़ा होता था, क्योंकि मीणों का पशुधन बड़ा विख्यात रहा है। मत्स्यराज विराट की एक लाख गायें महाभारत में वर्णित है। मांसाहारी होने के कारण भी इनका पशुपालन होना आवश्यक था। पशुओं में गायें, भैंस, भेड़–बकरी मुख्य हैं। खेती के लिये बैल तथा सवारी के लिए ऊँट भी रखते हैं। प्राचीन समय में घोड़े भी रखे जाते थे।''[28]

वेश–भूषा–

वनवासी होने के कारण मीणों को वेश–भूषा के लिये अधिक ध्यान देने की आवश्यकता नहीं थी। सिर पर पगड़ी, रूमाल या केवल एक पोतिया शरीर पर अंगरखी या नंगे बदन ही तथा नीचे घुटनों तक की एक धोती ही पर्याप्त थी।

वनचर होने के कारण उनके पैर स्वाभाविक रूप से काँटों आदि के अभ्यस्त होकर कठोर बन जाते थे जिनसे उन्हें जूतों की परवाह नहीं होती थी। स्त्रियाँ घाघरा, कुरती– कांचली और ओढ़नी धारण करती थी। समय पड़ने पर घाघरे का 'काछड़ा/मोथ्या' लिया जाता और ओढ़नी से कमर कस ली जाती। खेत में अथवा युद्ध में स्त्रियाँ इसी बाने में काम करती थी। उनके साहसी और मेहनतकश हाथों से हँसिया और तीर एक ही वेग से चलता था। युद्ध में अपने पुरुषों को भोजन–पानी आदि देते रहने का कार्य मीणा स्त्रियों ने बड़ी खूबी से निभाया है।

सम्पन्न अवस्था में मीणे मध्यकालीन संस्कृति के अनुकूल कानों में मोती, हाथों–पैरों में कड़े, गले में मुक्तामाला तथा बदन पर बागा, पायजामा आदि धारण करते थे। स्त्रियाँ भी सभी प्रकार के आभूषण पहनती थी। आज साधारण तौर पर स्त्री–पुरुष पैरों में चाँदी के कड़े पहनते हैं। स्त्रियाँ चाँदी के दूसरे आभूषण और लाख तथा हाथीदाँत की चूड़ियाँ पहनतीं हैं एवं सिर पर बोर गुंथाती हैं। ढूंढ़ाड़ की मीणा स्त्रियाँ नथ नहीं पहनतीं हैं। शृंगार के लिए स्त्री–पुरुष गोदना भी करवाते हैं। पुरुष किसी देवता की छवि अथवा फूल आदि अपने हाथ पर एवं स्त्रियाँ गाल, हाथ, पैर, ठौड़ी आदि पर बिंदियां, फूल, बिच्छू, पनिहारी आदि गुदवाती है। पति और पत्नी एक–दूसरे का नाम भी हाथों पर गुदवाते हैं।

सम्पन्न मीणे अपने कानों में सोने की मुर्कियां, गले में बलेवड़ा तथा फूल–पत्ती, कमर में कणकती, हाथों में चाँदी के कड़े और दायें पैर में भी कड़ा धारण करते हैं जो एक सामाजिक प्रतिष्ठा की निशानी है। स्त्रियाँ हँसली, सोने का तिमणिया, नोगरी, पूंची, बंगड़ी, गजरा, बाजूबंद, कणकती, कड़ला, टणका, नेवरी, आंवला आदि पहनती हैं।

''जमींदार तथा चौकीदार मीणों में वेश–भूषा का अन्तर लक्षित होता है। इसी प्रकार स्थान–भेद के कारण मेवाड़, मारवाड़ खैराड़ आदि के मीणों की पोशाकों में भिन्नता स्वाभाविक है। मेव और मेर मीणों के मुसलमान धर्म होने के कारण उनमें दाढ़ी रखने की प्रथा है। दाढ़ियां हिन्दू मीणे भी रखते हैं पर उनकी तथा मुसलमानी कौम की दाढ़ियों में भी अन्तर स्पष्ट है।''[29]

चौकीदार मीणे साफे पर काला या लाल जाड़िया बांधते हैं और हाथ में लाठी रखते हैं। उनकी स्त्रियाँ लाल रंग का घाघरा–लूगड़ा और कांचली धारण करती है।

मीणों की स्त्रियाँ यद्यपि खेती का काम करती हैं पर राजस्थान के रिवाज के अनुसार उनमें पर्दे की प्रथा है। चौकीदार मीणे राजपूतों की पौली पर पर्दे का पालन करते हैं। चौकीदार वर्ग की सम्पन्न मीणा स्त्रियाँ लूगड़ी पर एक सफेद चादर लपेट कर राजपूत स्त्रियों की तरह पर्दा करती हैं। करौली क्षेत्र में मीणा जनजाति की नारी आज के परिवेश में नवीन वेश–भूषा में भी दिखाई दे रही हैं। शिक्षित नारी में साड़ी, सलवार, कमीज, टी–शर्ट, जिन्स का भी अहम प्रचलन हो गया है। परन्तु घर, खेत, परिवार में जो कार्य करते हैं उनका सामान्य लहंगा–लूगड़ी, पोलक्या का ही पहनावा है।

खान–पान–

मीणे मांसाहारी हैं तथा शराब का भी खुलकर प्रयोग करते हैं पर दूसरे खान–पान में अन्य ग्रामीणों में कोई अन्तर नहीं देखा जाता। भोजन में देशी गेहूँ, जौ, मक्का, बाजरा, तथा छाछ–दही प्रमुख होते हैं। खाने के बर्तन साधारणतः पीपल के पत्तों से बने तथा मिट्टी के ही होते हैं। कई मीणे खरगोश का मांस नहीं खाते। मारवाड़ के मीणे पूर्व में गाय भक्षी भी थे। पर अब काफी वर्षों से उनमें यह रिवाज

नहीं है। मीणे प्रायः हुक्के का प्रयोग करते हैं। आजकल बीड़ी का चलन भी है। अफीम केवल बूढ़े लोग ही लेते हैं। स्त्रियाँ भी कहीं–कहीं तम्बाकू पीती दिखाई देती हैं। जिसमें कि मीणा जनजाति करौली क्षेत्र की नारियों में यह प्रचलन अब भी विद्यमान है। करौली क्षेत्र आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न नहीं होने के कारण यहाँ की महिलाएँ आजीविका के लिये गाय/भैंस के दूध को बेचकर एवं उत्तम किस्म के घी को बाजार में बेचकर अपने परिवार का जीवनयापन करती हैं।

मनोरंजन–उत्सव–मेले–

मीणाओं की 'थाँई/चौपाल' ही पुरुषों का एकमात्र मनोरंजन–स्थल है। यहीं बैठकर वे गाँव–गली तथा समाज की बातें करते हैं। पुराने जमाने में यहाँ युद्ध की, शांति की, और राजनीति की चर्चाएँ भी होती थीं। ऐसी ऐतिहासिक थांईयाँ आज भी देखने को मिलती हैं। थाँई का महत्त्व देखते हुए मीणा लोग किसी उपयुक्त स्थान पर थाँई के लिए पर्याप्त लम्बा–चौड़ा चबूतरा बनवाते थे। कहीं–कहीं पहाड़ी चट्टानों पर भी थाँई का काम किया जाता था। मैजोड़ तथा बूज (थानागाजी तहसील) में प्राचीन समय की प्रसिद्ध थांईयाँ बताई जाती हैं। थाँई पर मीणा जाति के वरिष्ठ नागरिक एवं चरित्रवान नागरिक जिसे वहाँ की भाषा में ''पटेल" नाम से संबोधित किया जाता है। पटेलों के समूह को ''पंच" कहा जाता है और हिन्दू धर्म में पौराणिक मान्यता है कि 'पंच–परमेश्वर' होते हैं। थांईयों पर ऐतिहासिक फैसले किये जाते थे और वो निर्णय आज भी मान्य हैं।

मीणा प्रायः उत्सवप्रिय होते हैं। नाच–गाना इन्हें प्रिय है। अशिक्षा के कारण मीणा स्त्री–पुरुष शहरों में मेलों के अवसरों पर असंस्कृत गीत गाते तथा नाचते जाते हैं। ऐसे अवसरों पर ये मदिरा पीकर मतवाले हो जाते हैं। मेवात तथा ढूंढ़ाड़ में श्रीमहावीरजी, करौली की कैलादेवी, चाकसू की शीतला, बरवाड़ा की चौथ माता, घाटा–बैनाड़ा के कल्याणजी, लालसोट की पपलाद माता, नई के महादेवजी, नटाणा के पीपाभोमिया, टहला के पास नारायणी माता, गोनेर के जगदीशजी, सिकराय में रामनवमी, आमेर की शिलादेवी, रायसर में बांकी माता आदि के मेले मीणों में प्रचलित हैं। मेवात, में डेहरा (अलवर) से 8 मील दूर पश्चिमोत्तर में चूहड़सिंह का

मेला लगता है। यह मेला मेव पुरुष तथा नाई मीणा जाति की स्त्री से उत्पन्न चूहड़सिंह नामक संत के नाम का लगता है।

राजस्थान के प्रचलित त्यौहार तीज, गणगौर, दशहरा, होली, दीपावली आदि भी बड़े उत्साह पूर्वक मनाते हैं। मारवाड़ के मेर होली के अवसर पर 'आखेट' (शिकार) क्रीड़ा भी करते थे। वैवाहिक तथा मृतक–संस्कारों के अवसर पर मीणाओं के विरूद्ध याचक इनके पूर्वजों का यशगान भी करते हैं। ऐसे अवसरों पर ये लोग बड़ी उदारता से याचकों को अन्न–वस्त्र, सोना–चाँदी, पशु आदि का दान किया करते थे। इन अवसरों के अतिरिक्त भी मीणाओं के 'विरद'(यशगाथा) का श्रवण किया करते थे। जिसे 'जयमाल' कहा जाता था। जयमालों के समय मद्य–पान भी होता था।''[30]

मीणाओं की उत्सव प्रिय प्रवृत्ति ने इन्हें कई बार कर्तव्य विमुख कर शत्रुओं से परास्त होने को विवश कर दिया है। यह स्वभाव उनके आदिवासी समाज होने की एक निशानी है। उत्सव के समय ये लोग सब सुधि भुलाकर एकरस हो जाते हैं और मद्य का सहयोग इन्हें और भी उद्य्यत बना देता है।

मेलों के अवसरों पर ये लोग अलगोजा, चंग, बांसुरी आदि बजाते हैं और नये रंगीन कपड़ों में सजते हैं।

सांस्कृतिक गाथाएँ–

मीणाओं की सांस्कृतिक गाथाओं में मेवात क्षेत्र के टोडरमल–दरियाखां–श्शशिवदनी, लाली तथा घुड़चिड़ी मेवखां के आख्यान प्रसिद्ध हैं। मारवाड़ के राजू रावत, भीमटा रावत, हड़मलचीता, दाऊदखां, करणसी रावत, पपणाद आदि के आख्यान प्रचलित हैं। ढूंढाड़ में मेदा राव, हड़पो डोववाळ, भीखो देवड़वाळ आदि मेवासियों के गीत गाये जाते हैं। गोड़वाड़ में सोसू मीणा तथा फूलाड़ी की प्रेमगाथा के कभी प्रचलित होने का संकेत इस प्रेमी–युगल की एक प्राचीन छवि से मिलता है, जो चित्रकार का प्रिय विषय रही है। शेखावटी क्षेत्र में डूंगरजी, जंवारजी नामक सुप्रसिद्ध लोकगाथा के सहनायक करणिया मीणा को भी गाथा में सम्मान के साथ याद किया जाता है। अन्य क्षेत्रों में गाई व कही जाने वाली सांस्कृतिक गाथाओं की अपेक्षा है।

पंचायती प्रथा–

प्राचीन भारतीय ग्रामीण परम्परा के अनुसार मीणाओं ने आज भी पंचायती प्रथा को अपना रखा है। इनके अनेक सामाजिक मुद्दे इनकी पंचायतों के द्वारा ही सुलझा लिए जाते हैं। विशेषकर विवाह, तलाक, नाता, मौसर, चरित्रहीनता, ऋण आदि वैयक्तिक प्रश्न तथा सामाजिक महत्त्वके अन्य ऐसे मुद्दे पंचायतों के सदस्यों के द्वारा ही सुलझा लिए जाते हैं। अपराधी पक्ष को दिये जाने वाले दण्ड में कबूतरों को अनाज, जातिभोज या ब्रह्मभोज, गंगा स्नान या पुष्कर स्नान, पंचों की जूतियाँ सिर पर रखना, पंचों को भेंट देना धूप में खड़ा होना आदि मुख्य है। जाति से बाहर एवं पैसे का दण्ड सबसे बड़ा माना जाता है। जाति दण्ड में उसका अन्य ग्रामीणों के साथ हुक्का–पानी बंद कर दिया जाता है। अपराधियों के परीक्षण के लिए एक साफ–सुथरे स्थल को लीपकर उसमें देवी की ज्योति जलाई जाती है। वहाँ एक कटार जमीन में धंसाकर उसे निकालने के लिए कहा जाता है, जो सच्चा होता है वही कटार निकालने की हिम्मत करता है।

करौली क्षेत्र में आज भी ठाकुर जी के मंदिर के गेट खोलने या थाँई पर पंच पटेलों के बीच पानी का लोट्या उठाने को बोला जाता है। जो सही होता है, वही यह कार्य कर पाता है। जो गलत होता है, उसके साथ कुछ ना कुछ अप्राकृतिक अनहोनी हो जाती है। गंगा स्नान करने बाद भोज (जाति को तथा ब्राह्मणों को दिया जाने वाला भोजन) करने के बाद पुनः जाति में मिला लिया जाता है।

करौली क्षेत्र में मीणा जनजाति के द्वारा हाल ही में मीणा महापंचायत ग्राम नंगला मीणा तहसील हिण्डौन सिटी में हुई थी। जिसमें मुख्यतः समाज सुधार के लिए निम्न बिंदुओं पर प्रतिबंध लगाया गया।

1. मदिरापान
2. दहेज प्रथा
3. बाल विवाह
4. बेमेल शादी
5. लग्न टीका

6. लिंग–भेद
7. डी.जे.
8. मृत्यु भोज आदि कुप्रथाओं को पूर्ण रूप से प्रतिबंधित किया गया है।

नारियों द्वारा गाये जाने वाले गीत सुड्डा, रसिया, अश्लीलता से भरे गीतों को पूर्णतः प्रतिबंधित किया गया है। करौली क्षेत्र की मीणा जनजाति की नारी के लोकगीतों में प्रतिबंध के साथ बढ़ावा भी दिया गया है। इसमें मांगलिक गीत भगवान के गीत एवं शिक्षा से संबंधित प्रचार–प्रसार वाले लोकगीतों पर उन्हें पुरस्कृत भी किया जा रहा है।

लोकगीत, गाथाओं और कथाओं में समाज के रहन–सहन, आचार–विचार, खान–पान एवं रीति–रिवाजों का सच्चा चित्रण देखने को मिलता है और साहित्यकार सभी का अध्ययन भी करता है। अतः साहित्यकार और लोकगीत का घनिष्ठ संबंध है।

लोकगीतों के रचियताओं की जो कविताएँ उपलब्ध होती हैं, उनके अध्ययन से ज्ञात होता है कि इनमें भाव व्यंजना और छंद विधान का प्रचुर सांमजस्य है। मानव जीवन के हर्ष–विषाद, आशा–निराशा, सुख–दुखः आदि परिस्थितियों का वर्णन हुआ है।

मीणा जनजाति के लोकगीत–

राजस्थानी लोकगीतकारों में शहरी एवं ग्रामीण संस्कृति के दो प्रकार के संगीतकार हैं। इन लोकगीतकारों का सम्बन्ध वर्तमान की दिशा और दशा के साथ–साथ लोक जीवन, लोकसंस्कृति, लोकसंस्कार, लोकगाथा, लोककथा एवं लोकनाट्य को भी गायन, वादन एवं मंच के माध्यम से अपने लोकत्व को प्रदर्शित करना हैं। लोकगीतकारों का सम्बन्ध राजस्थान की विभिन्न जनजातियों से भी है। इन जनजातियों में मीणा, गुर्जर, रावत, राव, भील, कन्जर, जाट एवं सैनी इत्यादि।

आदिवासी समाज में लोकगीत का एक अहम् स्थान रहा है। मीणा जनजाति में पुरुष व स्त्री के संयुक्त गीत व एकल गीत समाज में प्राचीन काल से ही प्रचलित हैं। ये लोग यहाँ–वहाँ जब चाहें इनके दंगल गाँवों में करते देखे जा सकते हैं। राजस्थान राज्य में मुख्यतः मीणा जनजाति करौली, दौसा, सवाई माधोपुर, अलवर, जयपुर,

उदयपुर और इनके आस–पास के इलाकों में पायी जाती है इनके लोक कलाकार भी स्थानीय ही है और यह स्वाभाविक भी है।

मीणा जनजाति द्वारा मुख्य रूप से कीर्तन, कन्हैया, पद, सुड्डा, हेला ख्याल, गोठ, मीणा ढांचा, रसिया, भजन एवं क्षेत्रीय लोकगीत शामिल हैं। करौली जिले में मुख्यतः हरिकीर्तन (रामधुन), पद कन्हैया, सुड्डा मीणा गीत आज भी अपने अनोखे रूप से इस संस्कृति को संजोये हुए हैं। जो यत्र–तत्र देखने को मिल जाती है।

मीणा ढांचा–

'मीणा ढांचा' सवाई माधोपुर, दौसा, लालसोट, 'मीणा वाटी' महुआ, मण्डावर, सिकराय आदि क्षेत्रों में प्रमुख रूप से गाया जाता है।

पछवारा–

'पछवारा' जयपुर की तरफ गाये जाने वाले गीत हैं। यह ढूंढ़ाड़ क्षेत्र में गाये जाते हैं।

पद, कन्हैया–

करौली क्षेत्र में 'पद, कन्हैया' गीत मुख्य रूप से गाया जाता है। इसमें सामाजिक, धार्मिक परम्पराओं, राजनीतिक, शिक्षा, दहेज, कथाओं, पुराणों के प्रसंगों का सजीव चित्रण मौजूद है। यह समाज को व क्षेत्र को एक राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बौद्धिक सोच का विषय बना देता है। प्राचीन समय में हिन्दू धर्म में शास्त्रज्ञ का ज्ञान, अध्ययन, शिक्षा का अधिकार सिर्फ ब्राह्मण लोगों को ही था। समय के साथ मीणों ने अपना ढांचा बदलते हुए अपने बुद्धि बल व लोक प्रेमी होने के कारण अपने कुल में हो रहे रीति–रिवाजों को अपने ह्रदय की गहराईयों से मीठी, गूंजती, टेरती आवाज के साथ संजोया। जब अंतःमन से शब्द निकलते हैं तब दन लोकगीतों का प्रस्फुटन होता है।

आज करौली क्षेत्र में हर पर्व, हर अवसर पर सभी प्रकार के लोकगीत गाये जाते हैं। इन लोकगीतों के माध्यम से इन्होंने धार्मिक, सामाजिक परम्पराओं, दहेज, बाल विवाह, मृत्युभोज, भ्रूण–हत्या, अशिक्षा, भेदभाव पर जमकर प्रहार किया है और लोगों को इन मनोवृत्तियों से बाहर निकल आने का आग़ाज किया। इन लोकगीतों की

विषय वस्तु समकालीन विषयों के अलावा सामाजिक स्थिति एवं युगीन समस्याओं को भी मुखरित करती है।

मीणाओं के लोकगीत कलाकार अपनी–अपनी मण्डली, जोठ को सिखाकर संगीत की इस विद्या को प्रासांगिक व आकर्षित बनाये रखते हैं। इन जोठों में मीणा समाज के अलावा अन्य समाज के लोग भी शामिल होते हैं। जैसे माली, गुर्जर, जोगी, कुम्हार आदि जो कि लोकगीत प्रेमी हैं लोकगीत गायन में वांद्य यंत्रों का भी उपयोग किया जाता है।

लोकगीतों के पात्र–

(1) **गुरू**– यह एक विद्वान व्यक्ति होता है। जिसे शास्त्र, रीति–रिवाज, परम्पराओं का ज्ञान होता है। यह अपनी जोठ के लिए किसी भी प्रसंग पर एक गीत तैयार करता है।

(2) **मेडिया**– यह पूरी जोठ या मण्डली का मालिक होता है। मेडिया गुरू के द्वारा बनाये गये गीत को लय, ताल प्रदान करता है। अपनी मधुर कण्ठ व टेरती ऊँची आवाज से उस गीत का गायन करता है बाद में पूरी जोठ एक साथ इस गीत को ढोल व नाँद एवं तालियों के साथ संपूर्ण करती है। इस बीच मेडिया अपने हाथों के इशारों व डूं–डूं कर, मठ्ार–मठ्ार कर, बीच–बीच में नृत्य कर लोकगीतों को लौकिक बनाता है।

(3) **सह–गायक**– मेडिया के अलावा 6 से 12 तक सह–गायक होते हैं। जो जोठ में ही शामिल व्यक्ति हैं। इनका स्वर (गला) आपस सब से मिलता–जुलता है जो बीच–बीच में लोकगीत की कड़ी, मंगलाचार, साखी, क्यांणी बोलने का कार्य करते हैं। जोठ के अंदर चारों तरफ घूम–घूम कर अपने लटका–झटकाओं से व नृत्य कर लोकगीत गवानें में इनकी भूमिका अहम् रहती है।

(4) **वाद्ययंत्र व वादक**– मीणों के लोकगीतों में निम्न लिखित वाद्ययंत्र उपयोग में लिये जाते हैं। हर लोकगीत में अलग–अलग वाद्य यंत्र की जरूरत होती है जो कि निम्न हैं–

कन्हैया	–	नोबत, घेरा (ढप)।
पद	–	ढप, मंजीरा, ढोलक, चीमटा।
भजन	–	बा़जा, ढोलकी, झांझ, खरताल मंजीरा।
गोठ	–	ढोल, ढोलकी, घेरा–मंजीरा।
हरिकीर्तन	–	बा़जा, ढोलक, मंजीरा।
मीणा गीत	–	ढोलक, मंजीरा, खरताल।
होली के गीत	–	थाल, पीपा।

(4) **जोठ**– प्रत्येक लोकगीतों को गाने के लिए अलग–अलग मण्डली, जोठ होती है जिनकी संख्या इस प्रकार है–

कन्हैया	–	40–50
पद	–	15–20
हरिकीर्तन	–	15–20
गोठ	–	20–30
मीणा ढांचा/मीणा गीत	–	4–8

(5) **गायकों की वेश–भूषा**– राजस्थान में पुरुषों की पोशाक व नारियों की पोशाक सामान्यतः क्षेत्रानुसार अलग–अलग है। करौली क्षेत्र में लोकगीतों को गाते समय मीणों के पुरुषों द्वारा धोती–कुर्ता व कंधे पर तौलिया या सिर पे साफा, पगडी बाँधते हैं। पैरों में चमड़े की जूती पहनी जाती है, गले में सोनें की माला या तुलसी की माला पहनी जाती है।

महिलाएँ लहंगा, लूंगड़ी, पोलक्या पहनती हैं हाथों में लाख का चूड़ी व गले में सोनें का हार, जंतर, मंगल–सूत्र, जंजीर धारण करती हैं व पैरों में कपड़े से बनी जूती पहनती हैं।

(6) **स्थान व समय**–मीणों के द्वारा गाये जाने वाले लोकगीत का स्थान गाँव की चौपाल व गाँव के चौक में होता है। यह गाँव के बीचों–बीच एक सुंदर स्थान है। इन लोकगीतों को गाने के लिए यह इनके लिए सुगम स्थान है। गाँव के पंच–पटेलों व गाँव के जनसमूह के बीच इनको गाया जाता है इन्हें

देखने व सुनने के लिए सैकड़ों, हजारों की भीड़ होती है। जिसमें बच्चे, जवान, महिला, पुरुष, बुजुर्ग सभी शामिल होते हैं। ये लोग चौक के आस–पास के घरों की छतों पर व आस–पास के पेड़ों के ऊपर चढ़कर इन मधुर गीतों का आनंद लेते हैं।

लोकगीतों की समय अवधि समलंब तय होती है पर बीच–बीच में किसी अन्य विषय का प्रसंग आ जाये तो समय अवधी लम्बी हो जाती है। इन लोकगीतों के गाने लिए 40–50 मिनट की आवश्यकता होती है, इतना ही समय नारियों के लोकगीतों को गाने में लगता है।

कन्हैया अधिकतर दोपहर बाद एक दिन में ही पूर्ण होने वाला दंगल है। जबकि पद–सुड्डा, कीर्तन दो–दो, तीन दिन तक गाये जाने वाले लोकगीत हैं।

(7) **स्वागत व सम्मान**– मीणा लोग इन लोकगीतों के माध्यम से गाँव में उभरती हुई प्रतिभाओं का स्वागत व सम्मान करते हैं। साथ ही दंगल में आये हुए प्रत्येक जोठ के मेडिया को साफा पहनाकर उनका स्वागत व सम्मान स्थानीय गाँव के पंच पटेलों के द्वारा किया जाता है। इस अभिनंदन के समय श्रोतोओं का मन रूंआसा व गद्–गद् हो जाता है।

इसी माध्यम से अगले दंगल या सांस्कृतिक कार्यक्रम के लिए दंगल में आयी हुई जोठ के मेडिया को एक चिट्ठी भेजी जाती है। यह एक प्रकार लोककलाकारों का प्रोत्साहन देने वाला आमंत्रण पत्र है।

(8) **स्वर**– किसी भी पद्य विधा के लोकगीत में गीत को गाने या बोलने की एक ही शैली होती है, जिसमें उसे पिरोया जाता है, ताकि लोकगीत–सार्थक बन सके। लोकगीतों में भिन्न–भिन्न स्वर, लय, ताल से ये गीत गाये जाते हैं, चाहे वह कन्हैया हो, पद, सुढढा, मीणा ढांचा, कीर्तन, भजन, मीणा गीत आदि। इन सबके लिए संगीत की विद्या आवश्यक है कि किस प्रकार से गीत को गाया जाये।

(9) **रस व्यंजना**– मीणा लोकगीतों में रस की अजस्र धारा प्रवाहित होती है। मीणों के गीत कन्हैया में– ओजस्वी, वीर रस में ही गाया जाता है। जबकि पद– में करूणा का भाव होता है। मीणा ढांचा में शृंगार रस की रति का भाव देखने को मिलता है।

मीणा लोकगीतों को गाने से पूर्व भगवान की पूजा अर्चना की जाती है। उसके बाद लोकगीत गाया जाता है। इस प्रकार से कन्हैया, पद, सुड्डा, हरिकीर्तन, मीणा गीत, आदि गीतों को गाने में पूर्व जोठ के द्वारा भगवान का नाम स्मरण किया जाता है। जिसे 'भवानी' कहते हैं। इन गीतों में भक्ति रस और करुण का सागर उमड़ता है। भक्ति भाव में भक्त इतना लीन हो जाता है कि भवानी के बाद कोई प्रसाद नहीं बांटा जाता। पूजा में वाद्य यंत्रों की भी पूजा की जाती है। वाद्य यंत्रों पर मांगलिक चिह्न 'स्वास्तिक' बनाया जाता है। इसके बाद क्रमबद्ध तरीके से लोकगीत गाया जाता है। पद, कन्हैया, कीर्तन में साखी और मंगलाचार बोले जाते हैं। यह–गायकों द्वारा बोला जाता है। उसके बाद मेडिया अपनी मधुर भाषा में इस लोकगीत, की विवेचना करता है।

मीणा जनजाति के लोक कलाकारों ने अपनी सभ्यता व संस्कृति से सर्व समाज को रूबरू कराया है। या अपनी अनूठी धरोहर को सजाते हैं। जिन्होंने अपने तप, त्याग से इन गीतों का निर्माण किया व अपनी मधुर कंठ, टेरती, हूँ–हूँ कार करती आवाज से श्रोताओं को भाव–विभोर किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. हिन्दी साहित्य कोश, पृ. 118।
2. धरती गाती है– देवेन्द्र सत्यार्थी, पृ. 178।
3. राजस्थानी लोकसाहित्य एवं संस्कृति– डा. नंदलाल कल्ला, पृ. 1।
4. वहीं पृ. 1।
5. एन साइक्लोपीडियो ब्रिटेनिका भाग प्रथम– मि.आर विलियम्स, एम पृ. 448।
6. ऋग्वेद– 10.90.1।
7. सिद्धांतकौमुदी पृ. 416 (वैंकटेश्वर प्रेस मुम्बई 1990 ई.)।
8. यजुर्वेद 3.53.12।
9. जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण 3/28 महाकाव्य प्रथम अहिनक।
10. रामचरित मानस– तुलसीदास। बालकाण्ड–27/5
11. राजस्थानी लोकसाहित्य– नानूराम संस्कर्ता पृ. 48।
12. लोकसाहित्य शास्त्र– डा. नंदलाल कल्ला पृ. 98।
13. मीन पुराण भूमिका, पृ. 5।
14. मीणा जाति और स्वतंत्रता का इतिहास– श्री लक्ष्मीणारायण झरवाल, पृ. 68।
15. राजस्थान का इतिहास– कर्नल जेम्स टॉड, पृ. 20।
16. मधुर उप्रेती : ब्रज लोक साहित्य, पृ. 42।
17. राजस्थान का इतिहास– कर्नल जेम्स टॉड, पृ. 65।
18. नई दिशा पत्रिका– राष्ट्रीय मीणा महासभा, पृ. 4 ।
19. Research Institute, Pune Dr. P.P. Goglekar की रिपोर्ट।
20. 'जनरल ऑफ दा बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी– 1947' : पुरातत्वेता – रेवखेड फादर हेरास, पृ. 7–8।
21. वीर विनोद – करौली की तवारीख– श्यामलदास, पृ. 11।
22. मीणा इतिहास– रावत सारस्वत, पृ. 6।

23. ऋग्वेद 7.18.6 ।

24. ऐतरेय आरण्यक–ए.बी.कीथ, पृ. 26 ।

25. राजस्थानी लोक गीतों के अध्ययन– सूर्यकरण पारीक, पृ. 110।

26 वही पृ. 110।

27. ब्रज लोक साहित्य– मधुर उप्रेति, पृ. 59।

28. मीणा इतिहास– रावत सारस्वत, पृ. 131।

29. वही पृ. 132।

30. वही पृ. 133।

अध्याय : द्वितीय

जीवन में नारी की भूमिका–

2.1 विभिन्न कालों में स्त्री की स्थिति।

2.2 राष्ट्र में नारी की स्थिति।

2.3 अंतर्राष्ट्रीय समुदाय में नारी की स्थिति।

2.4 महिलाओं के लिए सर्वश्रेष्ठ देश।

अध्याय : द्वितीय

जीवन में नारी की भूमिका–

नारी का सम्मान करना एवं उसके हितों की रक्षा करना हमारे देश की सदियों पुरानी संस्कृति है। यह विडम्बना है कि भारतीय समाज में नारी की स्थति अत्यन्त विरोधाभासी है। एक तरफ तो उसे शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है और दूसरी तरफ ''अबला नारी'' भी कहा जाता है। प्राचीन काल से ही नारी को इंसान के रूप में देखने के प्रयास कम ही हुए हैं। पुरुष के बराबर स्थान एवं आधिकरियों की मांग ने भी उसे भुला रखा है। अतः वह आज तक ''मानवीं'' का स्थान प्राप्त करने से भी वंचित रही है।

सदियों से ही भारतीय समाज में नारी की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका रही है। उसी के बलबूते पर भारतीय समाज खड़ा है। नारी ने भिन्न–भिन्न रूपों में अत्यधिक महत्पूर्ण भूमिका निभायी है। चाहे सीता हो, झांसी की रानी, इन्दिरा गाँधी, सरोजनी नायडू हो जीवन के हर क्षेत्र में पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने वाली नारी की सामाजिक स्थिति में फिर भी ''ना'' के बराबर परिवर्तन हुआ है। घर और बाहर दोहरी जिम्मेदारी निभाने वाली नारियों से यह पुरुष प्रधान समाज चाहता है कि वह अपने को पुरुषों के समान दूसरे दर्जे पर समझे। आज चारों तरफ महिलाएँ हर क्षेत्र में अपना परचम लहरा रही हैं। किसी भी क्षेत्र में महिलाएँ पुरुषों से पीछे नहीं है। आज महिला जिस जवाबदारी से व्यावसायिक दुनिया में सफल हो रही हैं, उतनी ही कुशलता से वह घर–गृहस्थी की जिम्मेदारी भी निभा रही हैं।

पिछले कई सालों से नारी की भूमिका में काफी अंतर आया हैं। मध्य वर्ग की नारी की भूमिका घरेलू कार्यों से जुड़ी रहती थी, जैसे बच्चों की देखभाल करना ज्यादातर औरतें पैसे कमाने नहीं जाती थीं। गरीब नारियों को खासकर पैसों की कमी की वजह से काम करना पड़ता था। हांलाकि औरतों को दिया जाने वाला काम हमेशा मर्दों को दिया जाना वाले काम व प्रतिष्ठा और पैसे दोनों छोटे होते थे। भारत के बड़े शहरों में दृष्टि डाले तो हर क्षेत्र में नारी आगे बढ़ती दिखाई देती है। चाहें वह विश्वविद्यालय की छात्रा हो या डॉक्टर, वकील जैसे पेशे से जुड़ी नारियाँ या फिर हर

तरह के काम में नौकरी करने वाली, भारत में समान कार्य के बाद भी नारियों को पगार भी कम मिलती है। उन्हें काम करने के मौके भी कम मिलते हैं। ऊँचे पद पर उनकी तरक्की भी कम होती है। ऊँचे पदों पर स्त्रियाँ 3 प्रतिशत एवं पुरुष 97 प्रतिशत पर हैं। तरक्की के क्षेत्र में भारत का स्थान विश्व के 128 देशों में से 114 वाँ है।

अरविंद कुमार, कुसुम कुमार के समांतरकोश्के अनुसार चेतना का अर्थ एहसास, ज्ञान, बोध, मनोनुभूति, विबोध, वेदना, संज्ञा, संज्ञान, सहानुभूति, जागृति, आपा, इत्यादि है। नारी चेतना से अभिप्राय नारी के अपने अस्तित्व बोध से है। समाज की एक इकाई के रूप में अपने होने के एहसास से ही अस्तित्व की पहचान होती है, किन्तु नारी अस्मिता, उसकी चेतना का प्रश्न केवल अपने होने, अपनी शक्ति और क्षमता की पहचान करने मात्र से नहीं जुड़ा है। नारी को तो अपने व्यक्तित्व निर्माण की प्रक्रिया में, अपना आपा पाने के लिए, पुरातन स्थापित मिथकों से हर पल जूझना पड़ा है।

मिथ ऐसी मिथ्या कल्पनाओं या वस्तु–स्थितियों का जाल होता है, जिनमें स्थापित मूल्यों पर आस्था रखने वाली नारी सहज ही गिरफ्त में आ जाती है। नारी के लिए वास्तविक अनुभव के स्थान पर एक आदर्श स्थापित कर दिया जाता है और इस आदर्श के मिथ में वह जाने के लिए अभिशप्त रहती है।

नारी छवि की सांस्कृतिक संरचना–

समाज में नारियों की सांस्कृतिक छवि गढ़ी गई हैं। नारियों को मुख्यतः 'अच्छी' और 'बुरी' महिला की दो श्रेणियों में बांट कर देखा गया है। समाज में अच्छी छवि वाली नारियों के निर्धारित सकारात्मक 'स' के गुण अधिक हैं– सहनशील, स्वीकारने वाली, समझौते करनेवाली, सरल स्वभाव की, सहृदय, सुशील, शांत, आज्ञाकारी इसके विपरीत 'बुरी' छवि वाली महिला के गुण हैं–

अत्याचारी, दुराचारी, निंदक, अवमूल्यंन करने वाली, प्रमाण जुगाड़ु, ज़बानदराज, नाटककार भारतीय समाज में धर्म ही अच्छाई और बुराई का संदर्भ गढ़ता हैं। यही बात आज मीडिया में भी प्रतिध्वनित हो रही है। हमारी न्याय व्यवस्था भी लागों को

इन्हीं दो श्रेणियों बाँटती है। इससे जीवन की पेचीदा वास्तविकताएँ ही धुल–पुछ जाती हैं। साथ ही हम इस तथ्य को ही नहीं स्वीकार पाते कि सासें और ननदें स्वयं भी उसी पितृसत्तात्मक समाज में जीती हैं, जिसमें पुत्रवधू जीती है। औंरतें सामाजिक रिश्तों के एक तयशुदा स्वरूप के तहत ही सासें या बहुएं बनती हैं, और ये सभी रिश्ते पितृसत्तात्मक मानकों द्वारा नियंत्रित रहते हैं।

मीणा समाज में भाषा के प्रभावी उपयोग द्वारा एक ओर स्त्रियोचित सद्गुणों को बखाना जाता है तो दूसरी ओर ठीक ऐसे ही परिभाषित लीक पर न चलने वाली नारियों की असामान्यता को रेखांकित भी किया जाता है।

इस पृष्ठभूमि में अच्छी बनने की जरूरत हर समाज की नारियों को तब तक हिंसा झेलने पर मजबूर करती है जब तक हिंसा असहनीय न बन जाए। तब वे मायके के सदस्यों, मध्यस्थता करने वालों, जाति पंचायतों व स्थनीय न्याय की दूसरी संस्थाओं से मदद मांगती हैं।

चेतना की सार्थक बहस कहीं न कहीं मनुष्यत्व की अवधारणा पर जा कर टिक जाती है। मनुष्यत्व की व्याख्या अनेक संदर्भों एवं प्रसंगों से की जा सकती है, लेकिन मनुष्यत्व का केन्द्रीय स्वर सर्वस्वीकृत है। वह अन्य जीव यानि पशु जगत से गाढ़े अर्थो में भिन्न है। यह भिन्नता चेतना के स्तर पर है। यही उसे प्राणी जगत में अलग स्थान प्रदान करती है।

मनुष्य विकास प्रक्रिया का एक स्तर मात्र है, लेकिन इसके साथ यह अवश्य है। सासें भी न होवै कि अगला स्तर इसी स्तर का एक संशोधित संस्करण हैं या नहीं। नारी तो परिवार और समाज में मुँह पर ताला लगाए रहती है। यही स्वर लोकगीतों में पाया जाता है–

''गार गोबर बिन सोभा न होवै,
जठै म्हारो ओबरड़ो अंत भलो
बाड़–टाटी बिन सोभा न होवै,
जठै म्हारो फळसो अंत भलो
छड़ी–बड़ी बिन सोभा न होवै,

जठै म्हारो पाटलड़ो अंत भलो
रोटी–स्याग बिन भूख न भाजै,
सूखी–बची खाल्यूबी अंत भलो
काजळ–टीकी बिन सोभा न होवै,
जठै म्हारै रोळी–मोळी अंत भली''

अर्थात् परिवार में से बचने के बाद जो कुछ मिले अंततः उसी में भला है। आखिर उसे पेट ही तो भरना है। चिंतन का विषय है यही नारी परिवार की वंश वृद्धि करती है। समाज का विकास करती है। संस्कृति का हस्तांतरण करती है।

समाज और परिवार यहाँ नारी को भी मनुष्य की श्रेणी में मानकर चल रही है। चेतना होने का अर्थ ही उत्तरदायी होना है। किसी बाहरी सत्ता के प्रति नहीं, बल्कि अपने–अपने अस्मिता के प्रति उत्तरदायी। अपनी चेतना के प्रति उत्तरदायी होना, समाज की विकास प्रक्रिया में अपनी भूमिका को रेखांकित करने का प्रयास है। यही आज की नारी की माँग भी है और नारीवादी आंदोलनों का आधार भी।

किसी भी सामाजिक व्यवस्था की एक कसौटी यह भी होती है कि इसके अंतर्गत मनुष्य के बहुआयामी विकास को किस सीमा तक उचित वातावरण एवं सुविधाएँ मिलती हैं, जो व्यवस्था मनुष्य के विकास को या उसकी विकास की संभावनाओं को किसी भी धरातल पर रोकती है, वह सर्वश्रेष्ठ स्तर है उसमें जीवन और चेतना की अद्यतन सर्वश्रेष्ठ अभिव्यक्ति हुई है तो यह तय है कि भविष्य में इसके गुणात्मक विकास की जवाबदेही भी मनुष्य मात्र की ही बनती है।

मनुष्य (नारी) के जैवविकास की प्रक्रिया का एक स्तर मात्र है, लेकिन इसके साथ यह अवश्य है कि अगला स्तर इसी स्तर का संशोधित संस्करण होगा या होता है। इसका अर्थ यही है कि वह एक विकासशील चेतना है, क्योंकि चेतना जीवन का ही गुणोत्कर्ष है या कहें कि समस्त बौद्धिक, मानसिक समझ का अलग नाम है। जीवन की विकास प्रक्रिया चेतना की विकास प्रक्रिया से संबद्ध है, खास तौर से मनुष्य मात्र के संबद्ध में। चित तत्व के बगैर ब्रह्मा भी पूर्ण नहीं। चेतना स्वयं को जानना भी है। अपने आपको जान लेने से ही बुद्धिवाद की शुरूआत हुई।

अपने को जान लेना ही वेदांत में मोक्ष की अवस्था है, ब्रह्मा को जान लेना यह अविद्या के नाम से संभव है अविद्या के अभाव की स्थिति पूर्ण चैतन्य की स्थिति है। कहना न होगा विश्व की आबादी का अर्द्धाशं यानि नारी संसार अपने को जानने की दिशा में अग्रसर हुआ है। उसके अब तक के मोहपाश में बने रहने की अविद्या तकनीकी प्रगति, शैक्षिक वातावरण एवं अन्याय विकासोपक्रम द्वारा नष्ट हुई है। चेतना संपन्न होने पर नारी अपने विरूद्ध रचे गये मिथकों का विरोध करती है।

पुरुष की महानता का मिथ अब उसे स्वीकार नहीं है। परमपूज्य और पवित्र जिन ग्रंथों ने नारी को आदर्श के साँचे में फिट कर दिया था, आज वह उनसे बाहर निकलने के लिए तीव्र प्रयास कर रही है। आज उसके स्वरों में पुरुष वर्चस्व से मुक्ति की कामना है। वर्तमान समय मे नारी पुरुष वर्ग से प्रतिस्पर्धा न कर केवल उसके समकक्ष एक मनुष्य होने के नाते प्राप्त होने वाले अधिकारों की माँग कर रही हैं। वह पुरुष के अस्तित्व से कोई इंकार न कर एक सह नागरिक की तरह अपनी पहचान स्थापित करना चाह रही है। इसके लिए उसका सारा जोर अब तक प्रयुक्त मिथकों से अस्वीकार और स्वतंत्र इंसान के रूप में अपनी स्वीकृति का है। नारी चेतना आज विभिन्न आयामों में हमारे समक्ष है। सेक्स, प्रजनन में अपनी मर्जी, आर्थिक निर्भरता और सत्ता में हिस्सेदारी जागृत नारी चेतना के चंद उदाहरण है।

नारी को शक्तिस्वरूपा, आद्यशक्ति के रूप में स्थापित करने वाले मिथक विरोधाभास से भरे हैं। देवी दुर्गा की उत्पत्ति भी समस्त देवताओं के तेज से उनका हित साधने के लिए होती है यथा–

अतुलं तत्र तत्तेजः सर्वदेव नारीरजम्।
एकस्थं तद्–भून्नारी व्याप्त लोकत्रयं त्विशा।।[1]

स्त्रियों को सीता–सावित्री के जिस मिथक को स्वीकार करने को कहा जाता है। वे मिथक भी भ्रांतिमान है। सीता ने परम्परा को तोड़ घर की चौखट लाँघी पुत्रों का अकेले पालन–पोषण किया। सावित्री ने एक पर पुरुष से जिरह करके, सारी नियमावलियों को पीछे छोड़ दिया। उन्हें मौन, मूक आज्ञाकारिता के साँचे में फिट

करना कहाँ तक उचित है। लोकगीतों में घर में कन्या जन्म की प्रार्थना की गई है। यह प्रार्थना वैदिक युग में की गई होगी––

''सीता, सावित्री, दुर्गा, घरां माय भर दो,
दियाड़ी माय, पोळ कुँवारी भर दो''
नौ कन्या को जिमणों जी कोई
आठे नौमी वर दो, दियाड़ी माय''

कभी यह नहीं कहा जाता कि गार्गी, ज्वाला, घोषा, मैत्रेयी आदि से घर भरें। कुछ आदर्श मिथकीय देवी चरित्रों की राह पर चलने की सलाह संहिताएँ देती रहीं है जिन्हें भारत की हर स्त्री के लिए रोल मॉडल बनाया जाता रहा है। देवी सती और पतिव्रता गृहणी का आदर्श धीरे–धीरे सामूहिक अवचेतन में बदल गया।

सामूहिक अवचेतन का सिद्धांत फ्रायड के शिष्य युंग द्वारा 1924 में दिया गया। फ्रायड के अनुसार व्यक्ति के लिए सेक्स ही सब कुछ हैं। इस पर ज्यादा ही जोर दिया था। जबकि युंग की स्थापना थी कि सेक्स ही सब कुछ नहीं होता और वैयक्तिक अचेतन के साथ सामूहिक अवचेतन भी होता है जैसे एथानिक समाजों में तो सबसे अधिक शक्तिशाली होता है। अभी कुछ वर्षों पहले 'एंथ्रोपालाजिकल सर्वे ऑफ इंडिया' ने भारत के लोग शीर्षक से जो सर्वेक्षण किया है उससे भारतीय समाज की सामुदायिक जीवन में इस सामूहिक अवचेतन के प्रभावों को देखा जा सकता है। युंग और उनके बाद के मनोवैज्ञानिकों का यह विश्लेषण है कि गर्भाधान के समय जिन गुणसूत्रों से भ्रूण बनता है, उनमें माता–पिता की पिछली सात पीढ़ियों की मिली जुली विशेषताएँ होती है। उसी प्रकार मस्तिष्क में भी एक सामूहिक अवचेतन होती है जो पिछली कई पीढ़ियों के सामुदायिक जीवन की विशेषताओं से बनता है।

यही वह प्रस्थान बिन्दु है जहाँ से भारतीय स्त्रियों की पुरुष निर्भरता को समझा जा सकता है। कुछ परम्पराएँ सामूहिक अवचेतन के रूप में इस तरह बस गई है कि स्त्री का उनसे बाहर आना बहुत दुष्कर है ये परम्पराएँ है– प्रेम में स्त्री का पहल करना 'चरित्रहीनता' का प्रमाण है। सहनशीलता, लज्जा, कोमलता और निर्भरता औरत का स्वभाव है। मर्यादा पति की सेवा, घर और बच्चों का पालन पोषण उसका

दायित्व है। यदि भार्या अपवित्र है तो उसके लिए घोर नरक का द्वार है । संभवत, इसीलिए सीमोन ने कहा था– 'औरत पैदा नहीं होती बना दी जाती है।'

सीमोन द बोउजर द सैकंड सेक्स (1949) नारी केंद्रिंत सभी महत्त्वपूर्ण प्रश्नों का संतुलित जवाब देती है। सीमोन स्त्री–पुरुष को वर्गीकृत करके पहले जैविक, मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, पारिवारिक राष्ट्रीय क्षेत्रों में दोनों के मध्य द्वंद्व और द्वंद्व की परिणति को विभिन्न संदर्भों में विश्लेषित करती है–

"स्त्री कहीं झुंड बनाकर नहीं रहती। वह पूरी मानवता का आधा हिस्सा होते हुए भी पूरी एक जाति नहीं। गुलाम अपनी गुलामी से परिचित है और काला आदमी अपने रंग से, पर स्त्री घरों में अलग–अलग वर्गों एवं भिन्न–भिन्न जातियों में बिखरी हुई है। उसमें क्रांति की चेतना नहीं, क्योंकि अपनी स्थिति के लिए वह स्वयं जिम्मेदार है। वह पुरुष के साथ सहअपराधिनी है। अतः समाजवाद की स्थापना मात्र से स्त्री मुक्त नहीं हो जाएगी। समाजवाद भी पुरुष की सर्वोंपरता की ही विजय बन जाएगा।"[2]

स्त्री की स्थिति अधीनस्थता की है। यह बात सीमोन बड़े स्पष्ट शब्दों में स्वीकारती है। यही भाव भारतीय समाज की हर स्त्री में कूट–कूट की भरा है।

मीणा जनजाति की नारी का गृहस्थ जीवन व बाहरी जीवन में अपनी अहम भूमिका रही है जिसमें वह पूर्ण नारी की भूमिका से हटकर हैं जहाँ संस्कृति और सभ्यता को आज आधुनिकीरण के दौर में बतौर पुरुष के साथ कदम से कदम बढ़ा रही है। वह भूमिका में अपना वर्चस्व कायम कर रही है। चाहे वो गीत–संगीत हो या शिक्षा व आर्थिक क्षेत्र में भी मीणा जनजाति की नारी का कार्य उल्लेखनीय है। आज की स्थिति पूर्व की स्थिति से भिन्न है।

यह नारी चेतना ही है कि नारी की निंद्रा आज टूट रही है और वह इस दुश्चक्र से बाहर आ रही है आज स्त्री अपने विरूद्ध रचे गये मिथकों को तोड़ रही है।

त्रिया चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं–

त्रिया चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं–दैवों न जानाति कुतो मनुष्यः। कह कर बड़ी आसानी से औरत के चरित्र को संदिग्ध करार दे दिया गया, जबकि पुरुष को अपने भाग्य का विधाता करार दिया गया। चरित्र का मानदंड शायद ही कभी पुरुष पर लगा हो। अगर चरित्र का मानदंड होता तो पुरुष की सुविधा के लिए वेश्यालय क्यों खुलते। चरित्र का मानदण्ड यदि पुरुष के लिए होता तो वह बलात्कार करने के बाद अपनी मर्दानगी पर इतराता नहीं। किसी भी व्यक्ति विशेष पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए पुरुष उस व्यक्ति को अक्सर माँ बहन की गाली देता है, जिसका निहितार्थ यह है कि पुरुष उस व्यक्ति की माँ बहन से यौन संबंध बनाएगा। काम दोनों पुरुष यौनिक करेंगे लेकिन इससे इज्जत उस औरत की चली जायेगी। यह एक आम मानसिकता है। यहाँ स्त्रियों के चरित्र से आशय स्त्री के यौन संबंध व्यवहार से है जिसे लेकर पुरुष वर्ग हमेशा भयाक्रांत रहता है। स्त्री के यौन–संबंधी व्यवहार पर किसी न किसी में सदैव नियंत्रण की चाह रखता है। अगर कभी स्त्री अपनी इच्छा प्रकट कर दे तो वह त्रिया चरित्रं हो जाता है, जो पुरुष के लिए सदैव संदिग्ध रहता है, रहस्य होता है। जिसे लोग नहीं जानते उसे रहस्य मान लेते हैं। यह तो पुरुष का अज्ञान है फिर स्त्रियाँ चरित्रं से वह भी अपने भाग्य का निर्माण करने की दिशा में अग्रसर है।

नारी चेतना के विकास का अध्ययन करने के लिए भारतीय समाज में परम्परागत नारी की छवि एवं उसकी ऐतिहासिक रूपरेखा का ज्ञान परम उपयोगी है। वर्तमान समय में नारी चेतना जितने सशक्त रूप में उभर कर सामने आई है उसके लिए उसे एक लंबी संघर्ष पूर्णयात्रा पूरी करनी पड़ी है। प्रागैतिहासिक काल से नारी को अपनी मेधा का प्रमाण देना पड़ा है नारी ने अपनी प्रबल मेधा का परिचय विभिन्न सूक्तों की रचना करके दिया हैं। ये वैदिक सूक्त परिष्कृत मनीषा वाली समधीत स्त्रियों की एक पूरी परम्परा की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करते हैं। आज–कल की बौद्धिक नारियों के समान वैदिक युग की नारियां भी मेधा में प्रखर थी। वे विभिन्न विषयों पर शास्त्रार्थ करने की क्षमता रखती थी। इन वैदिक कालीन नारियों को

ब्राह्मणवादिनी कहा जाता था। परम विदुषी मैत्रेयी ने वैभव का परिहास करते हुए सब कुछ त्याग दिया था। यह वैदिक कालीन स्त्रियाँ गृहस्थी से परे भी अपना अस्तित्व रखती थी अश्वनी कुमारों से घोषा प्रार्थना करती है कि जब भी कोई ब्रह्मचारिणी नारी पति की इच्छा करें तो उसे उसका अनुकूल वर प्राप्त हो पति के घर वधू को जीवन के सभी साधन सुलभ रहें और सदा उसके घर दया, परोपकार, उदारता और शालीनता आदि गुण बनें रहें।

इन आर्य ग्रन्थों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि वैदिक काल में नारी को शिक्षा का अधिकार प्राप्त था। ऐसे अनुकूल परिवेश के प्रभाववश ही वागांभृणी आदि तेजस्वी स्त्रियों का आत्मविश्वास इतना प्रबल हुआ कि उन्होंने कहा–

"अहमेव वात इवं प्रवारम्यरभ माणं भुवनानि विश्रापरो
परो दिवा पर ऐना पृथिव्यैतावनी महिमा सं वभूव"

मैं कारण रूप से समस्त विश्व की रचना करती हूँ। मैं पृथ्वी और आकाश दोनों के परे हूँ। अपनी महिमा से ही मैं ऐसी हुई हूँ। इन श्लोकों के अतिरिक्त अन्य लोकों में गर्भ धारण करना और परिवार की सेवा करना स्त्री के प्रमुख कर्तव्य बताये गये।

भारत में 'स्त्रियों की स्थिति' का विषय अनेक दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। अगर हम भारतीय समाज को पूर्ण रूप से समझना चाहते हैं तो उसकी 2001 की जनसंख्यानुसार 49 करोड़ 57 लाख (48.3 प्रतिशत) भाग जो स्त्रियों का हैं, को जानना, देखना और समझना आवश्यक हैं। भारत में स्त्रियों की स्थिति भूतकाल में क्या थीं ? वर्तमान में क्या हैं ? और भविष्य में क्या होगी ? इसका ज्ञान होना आवश्यक है। इस ज्ञान के बिना भारतीय समाज का विकास अपूर्ण ही रहेगा। अगर भारतीय सामाजिक संगठन और सामाजिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाना है तो स्त्रियों की स्थिति को पुरुषों के संदर्भ में देखना होगा तथा उसमें सन्तुलन लाना होगा। स्त्री और पुरुष दोनों समाज के अभिन्न अंग होते हैं। उनमें से किसी एक (स्त्री) का शोषण होगा तो वह समाज खुशहाल तथा सुखी नहीं हो सकता हैं। इसी संदर्भ में हम हिन्दू एवं मुस्लिम स्त्रियों की स्थिति का अध्ययन करेंगे।

हिन्दू नारी की स्थिति–

अनेक वैज्ञानिक अध्ययनों, परीक्षणों तथा सर्वेक्षणों से पता चला है कि समाज के सन्तुलन, विकास तथा समृद्धि के लिए नारी की महत्वपूर्ण भूमिकाएँ होती हैं। एक नारी को शिक्षित करने का अर्थ है एक परिवार को शिक्षित करना। नारी का प्रभाव अनेक क्षेत्रों में देखा गया है। वह सन्तानों को जन्म देती है। उन्हें पाल–पोस कर बड़ा करती है तथा समाज को भावी सदस्य तथा नागरिक प्रदान करती है। अगर स्त्री या माता अथवा गृहिणी के संस्कार, शिक्षा–दिक्षा आदि उत्तम नहीं होगी तो वह समाज और राष्ट्र को श्रेष्ठ सदस्य कैसे दे सकती है ? समाज के लिए स्त्री का स्वस्थ, खुशहाल, शिक्षित, समझदार, व्यवहार कुशल, बुद्धिमान आदि होना अनेक दृष्टिकोणों से महत्वपूर्ण है। जब उसकी स्वयं की स्थिति सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, शैक्षिक आदि दृष्टिकोणों से निम्न होगी तो स्वाभाविक है परिवार, समाज और राष्ट्र की स्थिति अच्छी नहीं हो सकती है। एक तो स्त्रियाँ स्वयं राष्ट्र की आधी जनसंख्या है तथा दूसरा बच्चे, युवा, प्रौढ़ वृद्धजन उन पर अपनी अनेक पारिवारिक आवश्यकताओं के लिए निर्भर रहते हैं। भारत में स्त्रियों की स्थिति का विभिन्न कालों में अध्ययन करना आवश्यक है तभी इनकी वर्तमान स्थिति का वास्तविक चित्र सामने आ पाएगा।

विभिन्न कालों में नारी की स्थिति–

वेदों में स्त्री के कर्तव्य तो विस्तार से बताये गये पर पुरुष के कर्तव्य, इसके विषय में वेद प्रायःमौन है। केवल एक लोक में पुरुष के कर्तव्य बतायें गए हैं बाहरी आक्रमणों से स्त्री की रक्षा करना।

हमारे समाज ने घोषा, मेत्रैयी, गार्गी और माधवी को हमारा आदर्श नहीं बनने दिया। नारी जाति के लिए सीता और सावित्री को आदर्श माना गया। इसका कारण नारी को परिवार तक सीमित रखना था। प्रारम्भ में कबीलाई समाज में नारी स्वतंत्र और निरंकुश थी। उसकी सुरक्षा के नाम पर परिवार एवं घर नामक संस्था का बीजारोपण हुआ। हमारे दैवीय ग्रन्थों में भी पूरे देवी परिवार का उल्लेख हुआ है और वे अन्य देवताओं के निर्देश पर सारे कार्य करती है। वैदिक युग में स्त्री की दशा

समुन्नत थी। स्त्री का समाज में वही स्थान था जो शरीर में 'नाड़ी' का होता है। शरीर में नाड़ी का तीव्र गति या मन्द दोनों ही गतियाँ अस्वस्थता की द्योतक है। अतः चिकित्सा शास्त्र के अनुसार शरीर में नाड़ी का समभाव में चलना ही श्रेयस्कर माना जाता है। वैदिक समाज में यही स्थिति नारी की थी। समाजशास्त्रियों एवं इतिहासवेत्ताओं के अनुसार स्त्रियों की स्थिति का क्रमबद्ध अध्ययन अग्र कालों के अनुसार किया जा सकता हैं–

वैदिक काल–

इस काल के उपलब्ध साहित्य से पता चलता है कि स्त्रियों की स्थिति सभी प्रकार से अच्छी थी। स्त्री–पुरुष में कोई भेद नहीं था तथा दोनों की सामाजिक प्रस्थिति समान थी। लड़कियाँ ब्रह्मचर्य का पालन करती थीं। आश्रम में शिक्षा प्राप्त करती थीं। सह–शिक्षा का प्रचलन था। यजुर्वेद के अनुसार इस काल में कन्या का उपनयन संस्कार होता था। उसे सन्ध्या करने का अधिकार था। पी.एच. प्रभु ने लिखा है कि जहाँ तक शिक्षा का सम्बन्ध था, स्त्री–पुरुष की स्थिति सामान्यतः समान थी। स्त्रियाँ शिक्षा प्राप्त करती थीं तथा शास्त्रों का अध्ययन करती थीं। इस काल में अनेक विदुषी स्त्रियाँ हुई थीं। लड़कियों का विवाह युवा अवस्था में होता था। स्त्रियाँ चाहतीं तो अपना जीवन बिना विवाह किए व्यतीत कर सकती थीं। लड़कियाँ अपना जीवन साथी चुनने के लिए स्वतंत्र थीं। पत्नी का अपने परिवार में सम्मान था। **महाभारत** के अनुसार, ''वह घर, घर नहीं अगर उस घर में पत्नी नहीं।'' गृहिणीहीन घर 'जंगल' है। **अथर्ववेद** में लिखा है कि ''नववधू तू जिस घर में जा रही है वहाँ की तू साम्राज्ञी है। तेरे श्वसुर, सास, देवर और अन्य व्यक्ति तुझे साम्राज्ञी समझते हुए तेरे शासन में आनन्दित हों।'' स्त्री सन्तान उत्पन्न नहीं होने पर अथवा उत्तम सन्तान के लिए नियोग द्वारा सन्तान प्राप्त कर सकती थी। बहुपत्नी विवाहों को मान्यता प्राप्त थी। विधवा पुनर्विवाह कर सकती थी। देवर या अन्य व्यक्ति से वह इच्छानुसार विवाह कर सकती थी। पर्दा–प्रथा नहीं थी। स्त्रियाँ सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने के लिए स्वतन्त्र थीं। पुरुषों द्वारा स्त्रियों की रक्षा करना परम कर्त्तव्य माना जाता था। उनका अपमान करना लोग पाप समझते थे।

स्त्री–पुरुष समान रूप से धार्मिक कृत्यों को करते थे। किसी भी यज्ञ आदि में पति–पत्नी दोनों का होना आवश्यक था। **ऐतरेय ब्राह्मण** में स्त्री को 'जाया' कहा गया है जिसक अर्थ है कि स्त्री अपने पति को दूसरा जन्म देती है (जायति पुनः)। **वाल्मीकि** के अनुसार स्त्रियों को अकेले यज्ञ करने का अधिकार प्राप्त था। कौशल्य स्वयं 'स्वस्ति यज्ञ' करती थी। पी.एच. प्रभु के अनुसार सीता भी 'संध्या' करती थी। पुत्र के जन्म को अधिक महत्त्व दिया जाता था। पुत्र का महत्त्व वंश विस्तार, तर्पण, पिण्डदान आदि के कारण अधिक था। **ऋग्वेद** में वीर पुत्रों की कामना के लिए बार–बार प्रार्थना का उल्लेख मिलता है। पुत्रियों के साथ पक्षपात का व्यवहार नहीं किया जाता था। पुरुष स्त्रियों की रक्षा करना अपना धर्म समझते थे। उपर्युक्त तथ्यों से यही निष्कर्ष निकलता है कि वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति पुरुषों के समान अच्छी थी। उसे सभी क्षेत्रों–सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि में पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त थे।

उत्तर–वैदिक काल–

ईसा से 600 वर्ष पूर्व से लेकर ईसा के 300 वर्ष बाद तक का काल उत्तर–वैदिक काल कहलाता है। महाभारत की रचना उस काल में प्रारम्भ हुई थी जो एक संस्कृति काल था तथा उसमें स्त्रियों की स्थिति के बारे में भिन्न–भिन्न तथा विरोधी विचार मिलते हैं। वैदिक काल में तो स्त्रियों की स्थिति अच्छी थी परन्तु बाद में उनकी स्थिति में परिवर्तन होने लगा। **अनुशासन–पर्व** में भीष्म पितामह के अनुसार स्त्री को सदैव आदरणीय मानकार उससे स्नेह का व्यवहार किया जाना चाहिए। ''यत्र नार्यस्तु पूजन्ते, रमन्ते तत्र देवताः।'' अर्थात् जहाँ स्त्रियों की पूजा की जाती है वहाँ देवताओं का निवास होता है। यह भी लिखा है कि इनकी अनुपस्थिति में सारे कामकाज पुण्यरहित हो जाते हैं। भीष्म पितामह ने नारी के दो प्रकारों का उल्लेख किया है–साध्वी और असाध्वी। साध्वी नारी धरती की माँ और संरक्षिका है तथा असाध्वी नारियाँ वे हैं जिन्हें उनके पापपूर्ण व्यवहार के कारण कहीं भी पहिचाना जा सकता है। उत्तर वैदिक काल के प्रारम्भिक वर्षों अर्थात् ईसा के करीब 300 वर्ष पूर्व तक स्थिति ठीक थी। सम्पन्न परिवार की लड़कियों को शिक्षा दी जाती थी। वे वेदों

का अध्ययन कर सकती थीं। वे अपना वर स्वयंवर में पसन्द कर चुनती थीं। उनके धार्मिक और सामाजिक अधिकार यथावत् थे। बाद में नारी की स्थिति में परिवर्तन आए जो निम्नांकित हैं।

जैन और बौद्ध धर्म के प्रभाव इस काल में प्रभावशाली हो गए। ये धर्म स्त्री को सम्मान देते थे। अनेक स्त्रियों ने इन धर्मों के प्रचार का कार्य किया। बाद में जब इन धर्मों का पतन हुआ तो उसके साथ–साथ स्त्रियों की स्थिति भी बिगड़ती चली गई। **ए.एस. अल्तेकर** के अनुसार, आर्यगृह में अनार्य नारी का प्रवेश नारियों की सामान्य स्थिति की अवनति का मुख्य कारण है। यह अवनति ईसा के करीब 1000 वर्ष पूर्व से धीरे–धीरे अति सूक्ष्म रूप में प्रारम्भ हुई और करीब 500 वर्ष पश्चात् काफी स्पष्ट मालूम पड़ने लगी। बाद में मनु–परम्परा आ गई। इस काल में नारियों की स्वतंत्रता पर अनेक प्रतिबन्ध लगा दिए गए। यज्ञ करना तथा वेदों का अध्ययन प्रतिबन्धित हो गए। विधवा–पुनर्विवाह पर रोक लगा दी गई। शिक्षा प्राप्त करना कठिन हो गया। इससे उनकी स्थिति धीरे–धीरे बिगड़ने लगी।

स्मृति युग में स्त्रियों के समस्त अधिकारों को समाप्त कर दिया गया। स्मृतिकारों ने स्त्री को प्रत्येक अवस्था में परतंत्र बना दिया। उसे बचपन में पिता के संरक्षण में, युवावस्था में पति के और वृद्धावस्था में पुत्र के संरक्षण में रहने के आदेश दिए गए। स्त्री के लिए एक मात्र कर्त्तव्य पति की सेवा करना रह गया। विधवा पुनर्विवाह बन्द कर दिए गए तथा सती का प्रावधान निश्चित कर दिया। इस प्रकार स्त्रियों की स्थिति सिद्धान्त रूप में पूर्ण रूप से खराब कर दी गई जो आगे चलकर व्यावहारिक रूप में विकसित हो गई।

धर्मशास्त्र काल–

यह काल ईसा के पश्चात् तीसरी शताब्दी से लकर 11 वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक का है। जो कुछ मनुस्मृति में स्त्रियों के प्रतिबन्धों के बारे में लिखा था उसे धर्मशास्त्र काल में व्यावहारिक रूप दिया गया। इस काल में **पराशर, विष्णु** और **याज्ञवल्क्य संहिताओं** की रचना **मनस्मृति** को ही आधार मानकर की गई। समाज तथा स्त्रियों पर इतने अधिक प्रतिबन्ध लगाए गए कि इसे सामाजिक और धार्मिक

संकीर्णता का काल कहते हैं। स्त्रियों को परतन्त्र, पराधीन, निस्सहाय और निर्बल बना दिया गया। स्त्री–शिक्षा पर पाबन्दी लग गई। स्त्री के लिए एक मात्र विवाह संस्कार रह गया। कन्याओं के विवाह की आयु घट 10–12 वर्ष रह गई तथा बाल–विवाह का प्रचलन बढ़ गया। बाल विवाह के कारण वह शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाती थी। वर के चुनाव में कन्या की भूमिका समाप्त हो गई। कुलीन विवाह तथा अनुलोम विवाह का महत्त्व बढ़ने से बहुपत्नी विवाह होने लगे। रखैल रखने का रिवाज प्रारम्भ हो गया। विधुर 8 या 10 वर्ष की कन्या से विवाह करने लगा। विधवाओं की संख्या बढ़ने लगी। इस धर्मशास्त्र काल या संकीर्णता के काल में स्त्रियाँ माता से 'सेविका' तथा गृहलक्ष्मी से 'याचिका' बन गई। स्त्री के लिए पति ही देवता और विवाह ही एकमात्र उसके लिए धार्मिक संस्कार रह गया। पति की मृत्यु के बाद सती होना सर्वश्रेष्ठ आदर्श स्थापित करने का प्रयास किया गया। स्त्रियों के पतन का सबसे अधिक जिम्मेदार धर्मशास्त्र काल रहा हैं। **मनुस्मृति** में लिखा है, ''स्त्री कभी भी स्वतन्त्र रहने योग्य नहीं है। अविवाहित होने पर पिता, युवा अवस्था में पति और वृद्धावस्था में पुत्र ही उसका संरक्षक है।'' इस काल ने नारी को उपभोग की वस्तु मात्र बना दिया। इस काल में स्त्रियों का स्थान सभी क्षेत्रों में पुरुष से निम्न हो गया।

मध्यकाल–

11वीं शताब्दी से लेकर 18वीं शताब्दी तक का समय मध्यकाल कहलाता हैं। 11वीं शताब्दी के प्रारम्भ से मुसलमानों का प्रभाव भारत पर बढ़ने लगा। हिन्दू धर्म और संस्कृति को मुस्लिम धर्म और संस्कृति से सुरक्षित रखने के लिए अनेक प्रयास किए गए। सर्वप्रथम स्त्रियों की सुरक्षा के लिए अनेक कदम उठाए गए। स्त्रियों के सतीत्व की रक्षा तथा रक्त की शुद्धता के लिए अब 5 या 6 वर्ष की आयु में ही कन्याओं का विवाह किया जाने लगा। बाल–विवाहों को प्राथमिकता दी जाने लगी। स्त्रियों को घर की चारदीवारी में रखा जाने लगा। इससे कुप्रभाव स्त्री शिक्षा पर भी पड़ा बाल–विवाह, प्रर्दा–प्रथा, जीवन को चारदीवारी में होने से स्त्रियाँ शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाती थीं। स्त्री– शिक्षा पर बाद में रोक लगा दी गई।

विधवा–पुनर्विवाह पर रोक लगा दी गई। सती–प्रथा को प्रोत्साहित किया जाने लगा। सम्पत्ति में स्त्रियों के अधिकार को समाप्त कर दिया गया। आर्थिक दृष्टिकोण से स्त्रियाँ परतंत्र हो गईं। पति तथा परिवार की सेवा करना एक मात्र उसके जीवन का लक्ष्य रह गया। मुसलमानों की इस प्रवृत्ति ''जेहि की कन्या सुन्दर देखी तेहि पर जाइ धरे हथियार'' ने बाल–विवाह को अत्याधिक प्रोत्साहित किया।

मध्यकाल में जहाँ अनेक कारकों एवं परिस्थितियों ने स्त्रियों की दयनीय स्थिति और शोषण में वृद्धि की थी वहीं इनकी धार्मिक और सामाजिक स्थिति को सुधार के लिए भक्ति आन्दोलन एवं सन्तों के प्रयास भी देखे जा सकते हैं। प्रथम प्रयास रामानुजाचार्य के माध्यम से स्त्रियों के धार्मिक और सामाजिक जीवन को सुधारने का प्रयास किया। स्त्रियों को धार्मिक पूजा–पाठ, धार्मिक–स्वतन्त्रता, पर्दा–प्रथा की समाप्ति आदि के लिए चैतन्य, नानक, कबीर, तुलसी, मीरा, तुकाराम आदि सन्तों ने प्रयास किए। इनके प्रयासों के परिणामस्वरूप स्त्रियाँ भजन–कीर्तन, प्रवचन, कथा आदि में जाने लगीं। इन साधु–सन्तों के प्रयासों से स्त्रियाँ स्वयं को शिक्षित करने एवं धार्मिक ग्रन्थ पढ़ने के लिए प्रयास करने लगीं।

सारांश में यही तथ्य सामने आते हैं कि मध्यकाल में धर्म के नाम पर तथा मुसलमानों से हिन्दू धर्म तथा संस्कृति की सुरक्षा की आड़ में भारतीय हिन्दू नारी पर अनेक प्रतिबन्ध लगा कर उसका घोर शोषण किया गया वहीं इनके सुधार के लिए सन्तों के प्रयास भी देखे जा सकते हैं।

ब्रिटिश काल–

18वीं शताब्दी के अन्तिम वर्षो से लेकर 1947 तक के समय को ब्रिटिश काल मानते हैं। अँग्रेजी सरकार ने भारत के मुसलमानों से राजनीतिक सत्ता प्राप्त की थी। मुसलमान उनके विरूद्ध थे ही, वे हिन्दुओं को अपने विरूद्ध नहीं करना चाहते थे। इसलिए अँग्रेजों ने हिन्दुओं के धार्मिक और सामाजिक क्षेत्रों में कोई सुधार नहीं करने की नीति अपनाई थी। इसका परिणाम यह हुआ कि ब्रिटीश शासन काल में हिन्दू स्त्रियों के सुधार के लिए भी अँग्रेजी सरकार ने कोई उल्लेखनीय कार्य नहीं किया। इस काल में भी स्त्रियों की स्थिति निम्नलिखित क्षेत्रों में दयनीय रही–

पारिवारिक क्षेत्र– पारिवारिक जीवन में उन्हें कुछ भी अधिकार प्राप्त नहीं थे। परिवार का मुखिया पुरुष होता था। सारी शक्तियाँ, निर्णय आदि के अधिकार उसी के पास होते थे। स्त्रियों को परिवार के बाहर जाने का अधिकार नहीं था। वह तो केवल सन्तानें पैदा करती तथा घर–गृहस्थी के कार्य करती। बाल–विवाह होता था। वर के चुनने में उससे पूछा नहीं जाता था। पति कैसा भी हो उसे विवाह–विच्छेद करने का अधिकार नहीं था। विधवा होने पर तो उसकी स्थिति बड़ी करुणामय हो जाती थी। मनोरंजन के कोई साधन नहीं थे। बस उसके भाग्य में काम करना लिखा था।

सामाजिक क्षेत्र– सामाजिक क्षेत्र में भी स्त्रियों को कोई अधिकार प्राप्त नहीं थे। बाल–विवाह तथा पर्दा–प्रथा के फलस्वरूप वह घर के बाहर जाकर कोई औपचारिक शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं रखती थी। स्वतंत्रता–प्राप्ति से पहिले स्त्रियों में साक्षरता का प्रतिशत मात्र 6 प्रतिशत था। समाज में उसका कोई स्वतंत्र व्यक्तित्व नहीं था। बहुपत्नी विवाह सम्पन्न परिवारों में प्रचलित थे। स्त्री को उसके साथ सामंजस्य या व्यवस्थापन करना पड़ता था। धार्मिक और पारम्परिक दृष्टि से स्त्रियों का कार्यक्षेत्र घर की चारदीवारी था।

आर्थिक क्षेत्र– सन् 1937 से पहिले स्त्री को आर्थिक क्षेत्र में कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं थे। पणिक्कर के अनुसार हिन्दू समाज में पुत्री के अधिकार को कानून द्वारा समाप्त कर दिया गया, पत्नी पति के परिवार का एक अंग बन गई और विधवाओं को मृत समान मान लिया गया। स्त्रियों को केवल स्त्री–धन सम्बन्धी अधिकार प्राप्त थे। स्त्रियाँ घर के बाहर जाकर कोई आर्थिक कार्य नहीं कर सकती थीं। कुलीन परिवार में काम करना हीन माना जाता था। संयुक्त परिवार में इन्हें कोई भी सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार प्राप्त नहीं थे। स्त्रियों को तो वस्तु समान उपभोग की वस्तु माना जाता था। आर्थिक रूप से पराश्रित होने के कारण पुरुष इनका शोषण करते थे। स्त्रियाँ पुरुषों के अत्याचार सहती थीं। अविवाहित लड़की का संयुक्त परिवार की सम्पत्ति में कोई अधिकार नहीं था। नाभिक परिवार में उसका अधिकार लड़कों और विधवाओं के बाद आता था। कुल मिलाकर नारी की आर्थिक दृष्टि अति दयनीय स्थिति थी।

नारी जीवन का सामाजिक वातावरण–

प्राचीन काल से ही दुनिया भर में नारियों को उनकी शारीरिक रचना के कारण पुरुषों की अपेक्षा भिन्न स्थान दिया जाता रहा है, परन्तु शिक्षा और औद्योगिक विकास के साथ–साथ विकसित देशों में नारियों के प्रति सोच में परिवर्तन आया और ''नारी समाज को पुरुष के बराबर मान, सम्मान और न्याय प्राप्त होने लगा। उन्हें स्वतत्रंता व कानून का बराबर अधिकार प्राप्त है। कोई समाजिक नियम नारियों एवं पुरुषों में भेदभाव नहीं करता।''[3] हमारे देश की स्थिति अभी भी प्रथम है यद्पि कानूनी रूप से महिलाएँ एवं पुरुषों को समान अधिकार मिल गये हैं परन्तु सामाजिक जीवन में नारी का वातावरण वैसा का वैसा ही बना हुआ है। उसकी गति बहुत धीमी है शिक्षित पुरुष भी अपने स्वार्थ के कारण अपनी सोच बदलने में रूची नहीं लेता, उसे अपनी प्राथमिकता को छोड़ना आत्मघात प्रतीत होता है। यही कारण है कि महिला आरक्षण विधेयक कोई भी दल पास नहीं करा पाया। आज भी माँ–बाप, पुत्री का कन्यादान करके संतोष अनुभव करते हैं। दो प्राणियों का मिलन नहीं है अथवा साथ–साथ रहने का वादा नहीं है एक दूसरे के पूरक बनाने का संकल्प नहीं है बल्कि लड़की का संरक्षक बदलना मात्र है।

व्यक्ति की अनेक मानसिक तथा शारीरिक आवश्यकताएँ ऐसी है जिनकी पूर्ति समाज में रह कर ही संभव हो सकती है। व्यक्ति का जीवन में जो लक्ष्य होता है उसकी पूर्ति समाज में रह कर ही संभव है। समस्त समाज से पृथक सर्वथा एकांकी जीवन की कल्पना भी उसके लिए असहाय है। पुरुष ही समाज को बनाते हैं। अतः परिवार में व्यक्तित्व को बनाना परोक्ष रूप से समाज का ही निर्माण है। किसी समाज में नारी का क्या स्थान है इससे उस समाज की स्थिति पर बहुत कुछ प्रकाश पड़ता है। जिस समाज में नारी जाति का शोषण होता है उसका अर्थ है समाज का आधा अंग शोषित और पीड़ित है। यदि नारी के अधिकारों का हनन हो, उसे आगे बढ़ने से रोका जायें तो ऐसी स्थिति में संपूर्ण समाज की उन्नति संभव नहीं होगी। प्राचीन काल से स्त्री की स्थिति समाज का विकास नापने का मापदंड रही है।

आदिवासी क्षेत्र एवं मीणा जनजाति में यह प्रथा बहुल रूप से देखी जा सकती है। इन इलाकों में आज भी लड़की का अपना स्वत्रंत अस्तित्व नहीं है। उसे एक रखवाला चाहिए उसकी अपनी भावना कोई मायने नहीं रखती। उसे जिस खूँटे से बाँध दिया जाये उसकी सेवा करना ही उसकी नियती बन जाती है। यही कारण है की परिवार में पुत्री के जन्म पर निराश होते हैं और लड़का होने पर उत्साहित। जब लड़का एवं लड़की में समान स्तर का व्यवहार नहीं होगा तब तक नारी का सामाजिक उत्थान संभव नहीं है।

समाज में नारी का स्वरूप–

भारतीय संस्कृति में नारी को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। वह शिव भी है और शक्ति भी, तभी तो भारतीय संस्कृति में सनातन काल से अर्धनारीश्वर की कल्पना सटीक बैठती है। इतिहास गवाह है कि ''भारतीय समाज ने कभी मातृशक्ति के महत्त्व का आकलन कम नहीं किया और जब भी ऐसा करने की कोशिश की तो समाज में कुरीतियाँ और कमजोरियाँ ही पनपी हैं। हमारे वेद और ग्रंथ नारी शक्ति के योगदान से भरे पड़े हैं।''[4] विश्वास, लोमषा, लोपामुद्रा तथा घोषा जैसी विदुषियों ने ऋग्वेद के अनेक सूक्तों की रचना करके और मेत्रैयी, गार्गी, अदिति इत्यादि विदुषियों ने अपने ज्ञान से तब के तत्वज्ञानी पुरुषों को कायल बना रखा था। नारी को आरंभ से ही सृजन, सम्मान और शक्ति का प्रतीक माना गया है। शास्त्र से लेकर साहित्य तक नारी की महत्ता को स्वीकार किया गया है– ''यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते, रमन्ते तत्र देवता।'' सिंधु संस्कृति में भी मातृदेवी की पूजा का प्रचलन परिलक्षित होता है। नारी का कार्यक्षेत्र न केवल घर बल्कि सारा संसार है। प्रकृति ने वंश वृद्धि की जो जिम्मेदारी नारी को दे रखी है, वह न केवल एक दायित्व है अपितु एक चमत्कार और अलौकिक सुख भी। इन सबके बीच नारी आरंभ से ही अपनी भूमिकाओं के प्रति सचेत रही है।

नारी को आरंभ से ही कोमलता, भावुकता, क्षमाशीलता, सहनशीलता की प्रतिमूर्ति माना जाता रहा है पर यही नारी आवश्यकता पड़ने पर रणचंडी बनने से भी परहेज नहीं करती। वह जानती है कि यह कोमल भाव मात्र उन्हें सहानुभूति और

सम्मान की नजरों से देख सकता है, पर समानांतर खड़ा होने के लिए अपने को एक मजबूत, स्वावलंबी, अटल स्तंभ बनाना ही होगा। इतिहास गवाह है कि आजादी के दौर में तमाम नारियों ने स्वतंत्रता–आंदोलन में बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया। एक तरफ इन्होंने स्त्री–चेतना को प्रज्वलित किया, वहीं आजादी के आंदोलन में पुरुषों के साथ कंधा से कंधा मिलाकर आगे बढ़ी। कईयों ने तो अपनी जान भी गँवा दी, फिर भी नारियों के हौसले कम नहीं हुए। रानी लक्ष्मीबाई, झलकारीबाई, बेगम हजरत महल, ऊदा देवी जैसी तमाम वीरांगनाओं का उदाहरण हमारे सामने है। जब आज़ादी का ज्वार तेजी से फैला तो तमाम महिलाएँ इसमें शामिल होती गई। इस क्रम में सरोजिनी नायडू, सविताबाई फुले, स्वामी श्रद्धानन्द की पुत्री वेद देवी बाहरा, सुशीला दीदी, अरुणा आसफ अली, सुचेता कृपालानी, ऊषा मेहता, कस्तूरबा गाँधी, डॉ0 सुशील नैयर, विजयलक्ष्मी पण्डित, कैप्टन लक्ष्मी सहगल, राजकुमारी अमृत कौर, इन्दिरा गाँधी, एनी बेसेंट, मैडम भीकाजी कामा, भगिनी निवेदिता, मैडेलिन 'मीरा बहन' इत्यादि नारियों ने न सिर्फ आजादी बल्कि समानांतर रूप में नारी के हकों की लड़ाई भी लड़ी। आखिर तभी तो महात्मा गाँधी ने कहा था कि– 'भारत में ब्रिटिश राज मिनटों में समाप्त हो सकता है, बशर्ते भारत की महिलाएँ ऐसा चाहें और इसकी आवश्यकता को समझें।"[5]

बीसवीं शताब्दी की भारतीय स्त्री पश्चिमी स्त्री से प्रभावित हुई है, पर यह प्रभाव मुख्य रूप से महानगर तक केन्द्रित है या अति उच्च सुसम्पन्न एवं सुशिक्षित परिवारों में ही परिलक्षित होता है पर्वतीय और आदिवासी नारियों की स्थिति तो त्रिशंकु के समान है। वे पश्चिम का अनुकरण करना चाहती है, पर कर नहीं पाती और विशुद्ध भारतीय नारी बन कर जीना अब उनके लिए संभव नहीं। अतः इस वर्ग की मीणा नारियों में अंतर्द्वन्द, संघर्ष और कुंठा अधिक मात्रा में हैं। आर्थिक रूप से स्वतंत्र नारी आज भी विवश ही अधिक है। वह अपने कर्तव्य को भी पूरा नहीं निभा पाती। पाने की अपेक्षा उसने खोया अधिक है। लोकगीतों में मुखारित नारी भी सारा दिन कार्य करने के कारण बच्चों को ठीक प्रकार से नहीं पाल पाती। दिन–रात बच्चों

की भलाई के लिए जुटी रहती है। उन्ही बच्चों के सारा दिन घर पर न रहने के कारण, बुरी हालत देखकर गाँव वाले उसे माँ के रूप में बुरी होने का ताना देते हैं–

''बाबल गया रै परदेस, खेतां में सूखो पड़ गियो
टूटी टपरिया, टपटप टपूकड़ो
मांग–तूंग लाऊँ, थारै, खाबो को टूकड़ो''

कामकाजी व्यस्त माँ होने के कारण बच्चों को यथोचित समय नहीं दे पाती जिससे बच्चों का बचपन अभावपूर्ण जैसा होता है। बच्चें चाहते हैं कि उनकी माँ भी घर में रहने वाली माँ ओ की तरह उनके लिए खाना बनाए लेकिन वह ऐसा नहीं कर पाती। भारतीय समाज में मान्यता है कि पत्नी पति से कम उम्र की होनी चाहिए। लोकगीत की नायिका इसी अपराध भावना की शिकार हैं–

''बाबो सा करम यो छोको
नैणां रै सामैं धोखो
नान्यां बर सूं परणा दी
उं नान्यो म्हूँ. गरणागी''
म्हूँ मरूं शरम की मारी
नैणा में जळ री झारी
इण जोबनियां सूं हारी''

''बड़ा हो, कौन कहता है आदमी का स्वर आश्चर्य में डूबा था औरत रोती चली जा रही थी। मैं जानती हूँ। मैंने तुम्हें धोखा दिया मेरा ब्याह बाबा सा नै तय किया था। पति के लिए उसका बड़ा होना बुरा नहीं है। वह उसे स्वीकार कर रहा है मगर नारी को फिर भी स्वयं में एक तरह का अपराध बोध घेरे हुए है जो उसको इस विभेद करने वाले समाज से ही प्राप्त हुआ है।''

परिवार के ढाँचे पर अभी भी रूढ़िवादी धारणाओं का गहरा प्रभाव है। एक ही परिवार में बेटे और बेटी के पालन–पोषण में अन्तर से आरंभ से ही लड़कियों में अलग तरह के संस्कार पनपने लगते हैं। वे अपने ही भाई की तुलना में अपने को हेय समझने लगती हैं। कथाकार इस प्रथा के प्रति विद्रोह प्रकट करते हैं, जो कि समान

अधिकार भावना की बजाय, अपने अधिकारों को त्यागने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देती है। यह भावना लड़कियों में खास तरह का संस्कार विकसित करती हैं। घरेलू कार्यों में भी लड़कियों और लड़कों में फर्क किया जाता है। लड़की को रसोई के कामों में जुटाया जाता है तो लड़कों को बाहर के कार्यों में। ये संस्कार ही बाद में रूढ़ रूप ले लेते हैं। स्वयं माताएँ अपनी पुत्रियों को वैसी शिक्षा देती हैं। घर में अपनी माँ की स्थिति लड़की के लिए आदर्श बन जाती है। नारी की इस असन्तुलित स्थिति पर विचार करते हुए आशा रानी व्होरा ने एक जगह लिखा वैदिक काल में शास्त्रार्थ करने वाली विदुषी महिला धीरे–धीरे अशिक्षा के अंधकार में डूबती चली गई। आम स्त्री स्वतंत्र प्रेम और चुनाव अपना अधिकार खो कर मानसिक गुलामी और शारीरिक शोषण का शिकार हुई।''[6]

आज के परिवेश में नारी भी सामाजिक चेतना से पूर्ण हो रही है। अपनी सामाजिक भूमिका में पुरुषों से बराबरी का अधिकार मांग रही है और इस दिशा में वह संघर्षशील भी है। सामाजिक कुरीतियों का सबसे ज्यादा शिकार नारी वर्ग हो रहा है। उसमें समाजवादी चेतना आयी है परन्तु सदियों से चली आ रही निरक्षरता के कारण वह इस दिशा में कम ही प्रयत्नशील हो पायी है। लोकगीतों में सामाजिक मूल्यों की सही लड़ाई का समर्थन किया गया है। ये लोकगीतों में नारी के लिए समाज द्वारा निर्मित नैतिक मूल्य व्यवस्था के छटपटाहट को गहराई से महसूस कराती है।

लोकगीत, लोक परम्पराएँ, लोकवार्ता एवं लोकनाट्य, सभ्यता के विकास के प्रत्येक चरण में नैतिक अनैतिक प्रश्न नारी को बार–बार अग्नि परीक्षा के लिए खड़ा करते हैं। सामाजिक परिवर्तन लाने हेतु विभिन्न चेतनाओं का प्रभाव नारी के मस्तिष्क पर पड़ता है। यह परिवर्तन मानवीय रूप से नारी को सुसंस्कृत एवं सभ्य बनाते हैं। संस्कृति और समाज द्वारा निर्धारित लैंगिक भूमिकाओं के कारण कुंठित सम्भावनाओं वाली अनेक जिन्दगियों की तरफ से आवाज उठाते हुए नारी की सीमित भूमिका संकट और अस्तित्व को सामने लाती है। शिक्षा, सामाजिक जागरण, और परिवार कल्याण कों प्राथमिकता मिल जाने के कारण मीणा जनजातियों की नारियों को कई

जटिलताओं से मुक्ति मिली है और उनमें आत्मानुशासन, आत्मचेतना एवं आत्मबल उत्पन्न हुआ। जो समाज और राष्ट्र के लिए एक सहारा है।

परिवार में नारी की स्थिति–

सामाजिक चेतना उत्पन्न होने पर सर्वप्रथम मीणा जनजाति की नारियों ने यह विचार करना प्रारम्भ किया कि परिवार और समाज में अब तक उसे उसका वास्तविक स्थान नहीं मिल पाने का क्या कारण है ? इसका उत्तर उसने परिवार में व्याप्त विभिन्न प्रकार की विसंगतियों में खोजनाचाहा। ये विसंगतियां धर्म एवं आस्था, परम्परा एवं मूल्यों के प्रति दोहरे मानदण्ड के कारण हैं जो पुरुष एवं स्त्रियों के लिए एक समान नहीं है। इसलिए उसके मन में परिवार के प्रति असंतोष है। शोषण के प्रति उसकी अभिव्यक्ति मुखर हो उठी है। प्रायः मीणा जनजाति के परिवारों में जीवन ग्रामीण परिवेश एवं धर्म पर केन्द्रित रहा है। नारियों के समस्त क्रिया–कलापों को संचालित करने में परिवार की केन्द्रिय भूमिका सर्वस्वीकार्य है। धर्म कोई बाह्याडंबर नहीं है। वे तो मानव जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित करने वाली वह व्यापक अभिवृति है जो सर्वाधिक मूल्यवान, पवित्र सर्वज्ञ तथा शक्तिशाली समझे जाने वाले आदर्श और अलौकिक उपास्य विषय के प्रति अखंड आस्था एवं पूर्ण प्रतिबद्धता के फलस्वरूप उत्पन्न होती है। मीणा जनजाति की नारियों के दैनिक आचरण प्रार्थना पूजा–पाठ, रहन–सहन एवं आचरण में प्रदर्शित होती है। अर्थात् जो परिवार को, व्यक्ति को धारण करें, वही धर्म है। अर्थात् जो समाज को व्यक्ति को धारण करें, वही धर्म है। भाव यह है कि यदि धर्म न रहे तो समाज अस्तित्व हीन हो जायेगा। धर्म का कोई निश्चित स्वरूप तो नहीं बताया जा सकता, क्योंकि धर्म का स्वरूप अनेक परिवर्तन एवं विकास के बीच आगे बढ़ता बदलता रहता है। धर्म के समान्यतः दो रूप है– व्यक्तिगत धर्म और संस्थागत धर्म। व्यक्तिगत धर्म में विश्वास एवं आस्था को प्रगट किया जाता है। व्यक्तिगत दृष्टि से धर्म एक मानसिक क्रिया है। धर्म में विश्वास आस्था एवं प्रेम आंतरित तत्त्व के रूप में काम करते हैं। धार्मिक क्रियाएँ जैसे–पूजा–पाठ संस्कार आदि बाह्य तत्व है और यह धर्म का संस्थागत रूप है।

प्रारम्भ से ही नारी का धर्म में बहुत विश्वास रहा है। वह स्वभाव से ही पुरुष की अपेक्षा अगाध श्रद्धा एवं विश्वास रखती है। नारी धर्म का अवलंब पाकर सफलता से अपना जीवन व्यतीत कर देती है, क्योंकि धार्मिक भावना का मूलाधार विश्वास है जो पुरुष की अपेक्षा नारी में अधिक पाया जाता है। नारी ने पूर्वजों के उत्तराधिकार को सुरक्षित रखा है। हमारे धर्म मनीषियों ने नारी की देवी और पराशक्ति के रूप में कल्पना की है। संसार में जितनी ईश्वरीय शक्तियाँ हैं उन सब की कल्पना उन्होंने नारी रूप में की है। हमारे धर्म में जहाँ देव योनि में पुरुषों की कल्पना की गई है वहीं नारी को भी देवी रूप में सर्वप्रथम स्थान दिया गया है। सबसे अधिक पवित्र गायत्री मंत्र की कल्पना मानव की सर्वोत्कृष्ट कल्पना एवं सबको सुरक्षित रखने के श्रेष्ठतम साधन शक्ति की पूर्णतम कल्पना भारत में नारी स्वरूप है। हम राम बाद में कहते हैं, सीता पहले कहते हैं। कृष्ण बाद में कहते हैं, राधा पहले कहते हैं। हमारा आदरसूचक विशेषण श्री भी, स्त्रीलिंग है। अतः देवी के रूप में बल, शक्ति, विद्या, धन आदि के प्रतीक को माना गया है। इसी प्रकार नारी के मातृत्व रूप में देवत्व की पत्नी में देवी व स्वर्ग की कन्या में छोटी देवी की पवित्र एवं सुन्दर कल्पना की गई है। इस प्रकार धार्मिक रूप से नारी को मानव समाज में आदर प्रदान किया गया हैं। नारी अपनी निष्ठा, त्याग, तपस्या, तथा सरल प्रकृति के कारण समाज में धर्म को स्थिर रखने में सफल रही है। अतः धार्मिक क्षेत्र में नारी का विशेष योगदान रहा है।

राष्ट्र में नारी की स्थिति–

भारतीय नारियों ने अपना वर्तमान स्तर प्राप्त करने के लिए जो सराहनीय प्रयास किया है तथा वे संघर्षों के जिस दौर से गुजरी है वर्तमान पीढ़ी को उस सबका कितना ज्ञान है। और क्या भावी पीढ़ियों को भारतीय पुनर्जागरण का पथ प्रशस्त करने वाली इन नारियों के साहस, धैर्य, बुद्धिमत्ता, अपनी नियति में अटूट विश्वास और बलिदानों का तनिक सा भी मान हो पायेगा। वह सब हमारी समृद्ध विरासत है तथा यह नितांत उपयुक्त होगा कि भारतीय महिलाओ में उसकी चेतना हो और वे उसे अपनी स्मृति में संजोकर रखें।

भारतीय पुनर्जागरण भारतीय राष्ट्रवाद के उदय और विकास तथा देश की स्वतंत्रता में उसकी चरम निष्पत्ति का समकालीन रहा है। उसकी एक अनूठी विशेषता यह रही कि उसमें पुरुषों के साथ ही नारियों ने भारी संख्या में सक्रिय भूमिका निभायी। सामाजिक अत्याचार तथा पूर्वाग्रहों के विरूद्ध अदम्य संघर्ष और भारतीय कला, साहित्य तथा सांस्कृतिक विकास के अन्य रूपों के पुनरोदय के लिए उत्कृष्ट प्रयास राष्ट्रीय आंदोलन के समानान्तर चलता रहा।

भारतीय नारियों की ब्रिटिश एवं कुछ अन्य औद्योगिक दृष्टि से विकसित देशों की नारियों द्वारा चलाये गये मताधिकार–आंदोलन की तरह का कोई आंदोलन नहीं चलाना पड़ा। तथापि उन्हें अपनी समस्त गतिविधि में सामाजिक पूर्वाग्रहों की जिन बाधाओं को लाँघना पड़ा वे अत्यंत दुर्लभ थी। उनके द्वारा निभायी गयी भूमिका अपने आप में इस देश के राजनीतिक और सामाजिक इतिहास की एक महान संघर्ष गाथा है। उनमें से अनेक नारियों को घर, समाज, कार्यक्षेत्र तथा विदेशी प्रशासन तक प्रत्येक स्तर पर घोर विरोध का सामना करना पड़ा। 19वीं सदी के उत्तरार्ध तथा 20वीं सदी में उभरने वाली इन अग्रणी नारियों ने राष्ट्र की वंचित नारियों के विराट समूह को दिशा और प्रयोजन की चेतना प्रदान की। आज एक नयी सहस्त्राब्दि के विहान की बेला में भारतीय नारियों में यह चेतना उत्पन्न हुई है। संवैधानिक अधिकारों तथा अवसरों के रूप में उन्हें काफी कुछ मिला है। तथापि भारतीय सामाजिक और राजनीतिक ढाँचे के भीतर अपना स्थान प्राप्त करने की दृष्टि से उन्हें अभी काफी लंबी मंजिल तय करनी है। नीति–निर्माता तथा समाज दोनों यह स्वीकार करते हैं कि राष्ट्रीय प्रगति के समान अवसरों के माध्यम से नारियों का सशक्तीकरण राष्ट्र की प्रगति के समान अवसरों के माध्यम से नारियों का सशक्तीकरण राष्ट्र की प्रगति के लिए बुनियादी तौर पर आवश्यक है। अपने आप में यह कोई महत्वहीन उपलब्धि नहीं है। यद्यपि अनेक नारियों को परिवर्तित वातावरण का पूरा लाभ मिला है तथापि भारतीय नारियों का एक बड़ा भाग अभी तक वंचना और भेदभाव की प्रवृत्ति का शिकार है।

भारतीय पुनर्जागरण में अग्रणी महिलाएँ समाज के सभी वर्गों से आयी हैं। उनमें से कुछ काफी धनाड्य और शिक्षित परिवारों की थीं। परम्पराओं से जकड़े हुए मध्यवर्ग की पृष्ठभूमि की नारियों का योगदान और भी अधिक महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि वे परिवर्तन की उस लहर की सच्ची प्रतिनिधि थी जिसने जनसाधारण को गहराई से प्रभावित किया था। उनमें वे साहित्यकार, शिक्षाविद् और गृहणियाँ शामिल थीं जिन्होंने पुनर्जागरण का अभियान चलाया।

भारतीय संविधान के अनुछेच्द 14 में–

राज्य किसी भारतीय नागरिक के विरूद्व केवल लिंग के आधार पर विभेद नहीं करेगा।

भारतीय संविधान के अनुछेच्द 15 इसी अनुछेच्द के भाग–3 में–

यह भी स्पष्ट किया गया है कि इस अनुच्छेद की कोई बात राज्यों को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से नहीं रोकेगी। संसद में उनके हितों की रक्षा हेतु 33 प्रतिशत आरक्षण की माँग की जा रही है। इससे आधी दुनिया कही जाने वाली नारी दशा में बहुत परिवर्तन आएगा।''[7]

महिला अधिकार एवं भारतीय स्थिति–

मानवाधिकारों विशेषकर नारियों के अधिकारों की प्राप्ति के क्षेत्र में भारत की लंबे संघर्ष की कहानी है। सदियों से भारत में सती प्रथा, पर्दा प्रथा, दहेज प्रथा, अधिकार विहीनता, रूढ़िवादिता समाज का अंग था। परंतु 19वीं शताब्दी में पश्चिमी शिक्षा के आगमन से संस्कृतियों में टकराव हुआ फलस्वरूप महिला अधिकारों की बात की जाने लगी। लोग परम्परागत ढांचे से बाहर निकलकर सोचने लगे तथा नारियों की शिक्षा को बढ़ावा दिया जाने लगा। 1917, 1926 और 27 में क्रमशः भारतीय महिला संघ, भारतीय महिला परिषद व अखिल भारतीय महिला सम्मेलन की स्थापना की गई तथा स्वतंत्रता के बाद नारियों के विरुद्ध हिंसा के मुद्दों पर विचार किया गया व भारत में राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकारों को लागू करने के लिए 1950 में संवैधानिक उपाय किये गये।

संवैधानिक उपाय–

भारत में संविधान की प्रस्तावना में 'हम भारत के लोग' शब्द से प्रारंभ है जिसका अर्थ है स्त्री और पुरुष को समानता का दर्जा दिया गया। संविधान का लक्ष्य नागरिकों के लिए सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय विश्वास और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा बंधुता को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्र की एकता आश्वस्त करती है। भारतीय संविधान में मूल अधिकारों के संदर्भ में नारियों के लिए महत्त्वपूर्ण प्रावधान किए गए।

अनुच्छेद 15–

(1) राज्य किसी नागरिक के विरुद्ध किसी आधार पर भेदभाव नहीं करेगा।

(2) कोई नागरिक केवल धर्म, वंश, जाति, लिंग के आधार पर किसी भी निर्योग्यता दायित्व, या शर्त के अधीन नहीं होगा।

(3) अनुच्छेद को कोई भी प्रावधान राज्य को नारियों और बच्चों के लिये विशिष्ट प्रावधान बनाने से नहीं रोक सकता।

अनुच्छेद 16–

(1) राज्य के अधीन किसी पद के संबंध में धर्म, वंश जाति, लिंग के आधार पर कोई नागरिक अयोग्य नहीं होगा।

अनुच्छेद 21–

यह प्राण, दैनिक स्वतंत्रता और संरक्षण के अधिकार की व्यवस्था करता है। यह अधिकार स्त्री पुरुष को समान संरक्षण देता है।

अनुच्छेद 39–

* पुरुष और स्त्री, नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो।
* पुरुषों और स्त्रियों दोनों का समान कार्य के लिए समान वेतन हो।
* पुरुष और स्त्री कर्मकारों के स्वास्थ्य और शक्ति का दुरुपयोग न हो। अनुच्छेद द्वारा नारियों के लिए प्रसूतिकाल में राहत की व्यवस्था तथा काम के स्थान पर मानवीय सुविधा की व्यवस्था करेगा।

अनुच्छेद 43–

* यह मजदूरों के लिए वेतन तथा अच्छा जीवन जीने की व्यवस्था करता है।

अनुच्छेद 44–

* राज्य भारत के समस्त क्षेत्र में नागरिकों के लिए समान दीवानी संहिता प्राप्त करने का प्रयास करेगा।

अनुच्छेद 51–

* प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हैं।
* संविधान के नीति निर्देशक तत्त्वों में नारियों के अधिकार सुनिश्चित किये गये।

अनुच्छेद 325, 326–

निर्वाचक नामावली में महिला और पुरुष को समान रूप से मत देने और चुने जाने का अधिकार देता है।

भारत में महिला मानवाधिकारों को मूल अधिकारों के साथ जोड़ा गया है तथा नारियों के लिए विस्तृत अधिकारों की विवेचना की गई है तथा इस संदर्भ में संविधान में विभिन्न अधिनियमों को स्थान दिया गया है –

1. **सती प्रथा निवारण अधिनियम 1987** – इस अधिनियम के अंतर्गत सती कर्म करने के लिए कारावास और जुर्माना दोनों की सजा का प्रावधान है।
2. **दहेज निवारण अधिनियम 1961 (संशोधित 1986)** – इसके अंतर्गत दहेज लेने और देने के लिये दंड की व्यवस्था की गई है। तथा दहेज मृत्यु पर 7 वर्ष से लेकर आजीवन कारावास का प्रावधान है।
3. **अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम 1956 (संशोधित 1986)** – इसके अंतर्गत व्यवस्था है कि संदिग्ध या अपराधी महिला से पूछताछ, तलाशी एवं गिरफ्तारी केवल महिला पुलिस या महिला सामाजिक कार्यकर्ता द्वारा की जायेगी।

4. **बाल विवाह अवरोध अधिनियम, 1929 (संशोधित 1976)** – इस अधिनियम में 1976 में संशोधन कर विवाह की आयु लड़के के लिए 21 वर्ष तथा लड़की के लिए 18 वर्ष की गई तथा अपराध को संज्ञेय बना दिया गया।
5. **औषधियों द्वारा गर्भ गिराने से संबंधित अधिनियम, 1971** – यह अधिनियम प्रारंभिक रूप से महिलाएँ विशेषज्ञ के माध्यम से गर्भ गिरा सकती है, संबंधित कागजात गुप्त रखे जायेंगे।
6. **स्त्री अशिष्ट रूपण (प्रतिबंध) अधिनियम, 1986** – इस अधिनियम के अंतर्गत किसी भी महिला को इस प्रकार चित्रित नहीं किया जायेगा जिससे जिसकी उसकी सार्वजनिक नैतिकता को आघात पहुँचे। समस्त विज्ञापन, प्रकाशन आदि में अश्लीलता पर प्रतिबंध लगाया गया है।
7. **चलचित्र अधिनियम, 1952** – इस अधिनियम में फिल्म सेंसर बोर्ड के गठन का प्रावधान किया गया है जो ऐसी फिल्मों पर रोक लगाएगा जिनमें नारियों की मर्यादा भंग होती हो।
8. **विशेष विवाह अधिनियम 1954** – इसमें नारियों को पैतृक सम्पत्ति में उत्तराधिकार प्रदान किया गया है। हिन्दू विवाह अधिनियम, 1956 स्त्रियों को भरण–पोषण और दम्पत्तिक प्रदान करता है।
9. **प्रसव पूर्व निदान तकनीकी अधिनियम, 1994** – इसमें गर्भावस्था में बालिका भ्रूण की पहचान कराने पर रोक लगाई गई है।
10. **73वाँ एवं 74वाँ संविधान संशोधन, 1993** – इस अधिनियम के द्वारा नारियों को त्रिस्तरीय पंचायतों में एक – तिहाई आरक्षण प्रदान करने का प्रावधान है।
11. **समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976** – इसके अंतर्गत समान कार्य हेतु नारियों को भी पुरुषों के समान पारिश्रमिक देने का प्रावधान किया गया है।''[8]
12. **2017 मुस्लिम नारियों के लिए स्वर्णकाल है। प्रधानमंत्री श्री दामोदर नरेन्द्र मोदी के अथक प्रयासों व मुस्लिम समाज के पुरुषों, मुल्लाओं और काजियों के विरोध के बावजूद भी से तीन बार ''तलाक तलाक**

तलाक'' से निकाह खारिज़ करने के असंवैधानिक कानून से मुक्ति मिल गई है।

भारत की नारियों को अनेकानेक कानूनी व्यवस्थाओं के द्वारा उनके अधिकारों को सुरक्षा एवं संरक्षण प्रदान करने के साथ–साथ नारियों के लिए सरकार के द्वारा अनेक विकास कार्यक्रमों तथा कल्याणकारी योजनाओं का संचालन भी किया जा जा रहा है, जिससे कि उनके जीवन स्तर में सुधार आ सके और देश के विकास में नारियों की भागीदारी सुनिश्चित हो सके। अतः नारियों में हर क्षेत्र में चेतना लाने एवं सशक्तिकरण हेतु ''केन्द्र सरकार द्वारा चलाई गई विशेष योजनाएँ इस प्रकार है–

क्र. सं.	योजना का नाम	प्रारंभ करने का वर्ष	योजना का मुख्य उद्देश्य
1	ड्वाकरा योजना	1982	ग्रामीण नारियों को स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध कराते हुए उनके स्वास्थ्य, शिक्षा, पोषाहार, स्वच्छता तथा शिशुओं की देखभाल करने जैसी मूलभूत सेवाएँ प्रदान करना।
2	न्यू मॉडल चर्खा योजना	1987	ग्रामीण क्षेत्र की महिआओं को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने हेतु आर्थिक सहायता, प्रशिक्षण तथा अनुदान प्रदान कर स्वावलंबी बनाना।
3	नौराड प्रशिक्षण योजना	1989	नारियों को विभिन्न व्यवसायों, जैसे–दरी, चिकन, ब्लॉक प्रिंटिंग, स्क्रीन प्रिंटिंग आदि से संबंधित प्रशिक्षण सत्रों का आयोजन कर उन्हें आर्थिक गतिविधियों से संलग्न करना।
4	महिला समाख्या योजना	1989	सजगता के लिए शिक्षा की समुचित व्यवस्था करना।

5	मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य कार्यक्रम	1992	माता और शिशुओं को पोषाहार उपलब्ध कराकर सुरक्षित मातृत्त्व तथा टीकाकरण आदि के माध्यम से शिशुओं तथा मातृ मृत्युदर में कमी लाना।
6	किशोरी बालिका योजना	1992	गरीब परिवारों की बालिकाओं को समुचित स्वास्थ्य एवं पोषण और शिक्षा की व्यवस्था सुनिश्चित करना।
7	महिला समृद्धि योजना	1993	ग्रामीण नारियों में बचत की आदत डालना और सशक्त बनाना।
8	राष्ट्रीय महिला कोष	1993	गरीबी की रेखा के नीचे के परिवारों की नारियों में आर्थिक–सामाजिक परिवर्तन लाने हेतु उत्पादन गतिविधियों के लिए ऋण संबंधी सुविधाएँ उपलब्ध कराकर उनकी आय बढ़ाना।
9	राष्ट्रीय मातृत्त्व लाभ योजना	1994	गरीबी रेखा के नीचे के परिवारों की नारियों को प्रसूति हेतु आर्थिक सहायता प्रदान कराना।
10	इंदिरा महिला योजना	1995	ग्रामीण और शहरी गंदी बस्तियों की नारियों को आर्थिक रूप से स्वावलंबन प्रदान करना।
11	मार्जिन मनी ऋण योजना	1995	नारियों को स्वतः रोजगार प्रारंभ करने के लिए बैंकों से ऋण तथा मार्जिन मनी उपलब्ध कराकर उन्हें आर्थिक विकास के अवसर प्रदान करना।
12	ग्रामीण महिला विकास	1996	ग्रामीण नारियों की भागीदारी में वृद्धि करना, उन्हें जागरुक बनाना तथा

	परियोजना		भेदभाव को समाप्त करना।
13	राज राजेश्वरी बीमा योजना	1997	गरीबी की रेखा के नीचे की बालिकाओं में नारियों को बिना किसी प्रीमियम के भुगतान पर विकलांगता की स्थिति में आत्म–सम्मान के साथ जीवन–निर्वाह हेतु एकमुश्त आर्थिक सहायता प्रदान करना।
14	स्वास्थ्य सखी योजना	1997	अनुसूचित जाति/जनजाति की नारियों को प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य के विषय में आवश्यक प्रशिक्षण प्रदान कर उन्हें आर्थिक लाभ प्रदान करना।
15	बालिका समृद्धि योजना	1997	गरीबी की रेखा के नीचे परिवारों में जन्म लेने वाली बालिका की माता को पौष्टिक आहार, बालिका की कक्षा 10 तक पढ़ाई हेतु नकद शैक्षिक अनुदान देकर सहायता प्रदान करना।

1979 में भारत अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर हुए समझौते में शामिल हो गया। 1979 में भारत आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय संविदा और साथ ही सिविल और राजनीतिक अधिकारों पर संविदा का सदस्य बन गया है। भारत में वर्ष 2001 महिला सशक्तिकरण के रूप में मनाया गया।''[9]

महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करने, उन्हें शोषण और अत्याचार से मुक्त कराने व संवैधानिक अधिकारों की क्रियान्विति को सुनिश्चत करने के लिए 1990 में संसद द्वारा महिला आयोग अधिनियम पारित किया गया।

इसी संदर्भ में भारत में 1992 में राष्ट्रीय महिला अधिकार आयोग का गठन किया गया। उसमें नारी स्वतंत्रता, समानता व न्याय संदर्भ में प्रयास करने तथा नारी शोषण व उत्पीड़न रोकने और महिला का शक्तिकरण के सकारात्मक उपाय करने हेतु राष्ट्रीय विकास की धारा में सकारात्मक योगदान को स्वीकार किया गया।

विश्व महिला सम्मेलन 1995 के बाद नारी विकास की योजना भारत सरकार ने भी बनाई। इस हेतु राष्ट्रीय नीति का प्रारूप तैयार किया। श्रीमती मोहनी गिरि के अनुसार महिलाएँ जब तक अपने अधिकारों के प्रति संघर्ष नहीं करेंगी तब तक पुरुष समाज उनको कुछ नहीं देगा। 21 नवम्बर 1995 को राष्ट्रीय नीति का प्रारंभिक प्रारूप जारी किया इसमें निम्न बिंदुओं को समाहित किया गया–

- नारियों की राजनीतिक निर्णय की प्रक्रिया में साझेदारी।
- नारियों और बालिकाओं के साथ होने वाला भेदभाव समाप्त किया जाये।
- नारियों के उत्थान के लिए समुचित मशीनरी का विकास।
- नारियों के शिक्षा, स्वास्थ्य, सम्पत्ति सूचना में बराबरी का अधिकार।
- लिंग आधारित जनगणना का विश्लेषण कर समाज में स्थापित कमियों को दूर किया जाये।

महिला अधिकार आन्दोलन–

समाज का लगभग आधा हिस्सा महिलाएँ होती हैं। भारत ही नहीं बल्कि विश्व के सभी देशों में नारियों के साथ प्रारम्भिक काल से ही अत्याचार एवं अन्याय किये जाते रहे हैं। अब तक तो महिलाएँ अत्याचार सहन करती आयीं हैं। परन्तु 20 वीं शताब्दी के मध्य से नारियों में अपने अधिकारों के प्रति जागृति लगातार बढ़ती जा रही है। नारियों के अधिकारों की लड़ाई में न केवल नारियों का ही योगदान रहा बल्कि पुरुषों द्वारा भी बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया गया है।

आज भारत में प्रजातांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था के तहत् नारियों ने अपने दमन के खिलाफ सशक्त आंदोलन किए और पुरुषों के बराबर समान नागरिक हक प्राप्त करने का प्रयास किया। एक महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि जहाँ आजादी से पहले उच्च श्रेणी की महिलाएँ ही इस आंदोलन में शामिल होती थीं। वहीं आजादी के बाद ज्यादा

से ज्यादा आम महिलाएँ इसमें शामिल होने लगीं। इस आन्दोलन की कई कड़ियाँ हैं जिन्हें अलग–अलग करके देखा जा सकता है।

आजादी से पहले का आंदोलन– भारत में दुनियां के अन्य भागों के समान जनतांत्रिक चेतना के विकास के साथ महिला आंदोलन का उदय हुआ। आंरभ में नारियों के लिए सामाजिक न्याय की वकालत करने वाले शिक्षित एवं बौद्धिक पुरुषों ने इसकी शुरुआत की। जिनका संबंध अपेक्षाकृत ऊँचे वर्ग और जाति से था। 19वीं शताब्दी में पश्चिमी शिक्षा के आगमन से संस्कृतियों का टकराव हुआ और इसके फलस्वरूप नारियों के अधिकारों की बात की जाने लगी। लोग परम्परागत ढाँचे से निकलकर सोचने लगे। राजा राम मोहन राय, ईश्वरचन्द विद्यासागर और बंगाल में ब्रह्म समाज में सती प्रथा पर प्रहार किया और सुधारकों ने विधवा विवाह को सामाजिक मान्यता प्रदान किये जाने की माँग की।

स्वतंत्रता आंदोलन के समय आंदोलन– आजादी की लड़ाई के साथ–साथ इस शताब्दी के आरंम्भ में महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए भी आंदोलन चलाये जाने लगे। 1917, 1926 और 1927 में क्रमशः भारतीय महिला संघ, राष्ट्रीय भारतीय महिला परिषद् और अखिल भारतीय महिला सम्मेलन की स्थापना की गई। यह सभी संगठन नारियों की सामाजिक समस्याओं और उन्हें शिक्षित करने के सरोकार से जुड़े थे। महात्मा गाँधी के नेतृत्त्व में जब स्वतंत्रता आंदोलन में नारियों ने बढ़े पैमाने पर हिस्सा लिया तब सामाजिक आधार की संकीर्णता काफी हद तक टूटी। गाँधी जी ने हिन्दू शब्दावली और कल्पनाशक्ति (उदाहरण के लिए नमक सत्याग्रह) का उपयोग करते हुए नारियों को इस प्रकार लामबंद किया जिसके कारण काँग्रेस नेतृत्त्व का एक हिस्सा नारियों की समानता की विचारधारा का समर्थन करने लगा और इसके परिणाम स्वरूप नारियों को समान अधिकार दिये जाने की बात की जाने लगी। जिसके परिणाम के रूप में भारतीय संविधान में नारियों के लिए विशेष प्रावधान किये गये।

आजादी के बाद 1972–75 के दौरान बम्बई में हुआ मूल्य वृद्धि विरोधी आंदोलन और नेल्लौर आंध्र प्रदेश में ताड़ी विरोधी आंदोलन ने महिला आंदोलन को

एक नई दिशा दी। इस प्रकार गढ़वाल क्षेत्र के चिपको आंदोलन की सफलता ने भी महिला आन्दोलन को सुदृढ़ बनाया।

1975–78 में जब अन्तर्राष्ट्रीय महिला दशक घोषित करते हुए नारियों के मुद्दों को अन्तर्राष्ट्रीय रूप से मान्यता प्रदान की गई तथा इसके साथ ही नारियों के कल्याण के लिए कार्य करने हेतु कई प्रकार के विकासात्मक वित्त उपलब्ध कराये गये। परिणामस्वरूप नारियों के कल्याण के लिए कार्य करने हेतु कई प्रकार के विकासात्मक वित्त उपलब्ध कराये गये। परिणामस्वरूप नारियों के कल्याण के लिए कार्य करने वाले गैर सरकारी संगठनों का निर्माण हुआ जिन्होंने अभी तक स्वायत्त समूहों द्वारा किये जाने वाले दायित्वों को अपने हाथों में ले लिया। 1981 में बम्बई के एस.एन.डी.टी. महिला विश्वविद्यालय में महिला अध्ययन का पहला सम्मेलन हुआ और यही भारतीय महिला अध्ययन संगठन की स्थापना की गई। संगठन को शिक्षा की एक नई शाखा के रूप में विकसित किया गया जो कि इस प्रकार के और इससे जुड़े सम्मेलन कराता रहा है। 1988 में भारत सरकार ने राष्ट्रीय महिला दृष्टिकोण योजना के तहत नारियों की स्थिति और उनके लिए समान अधिकार प्राप्त करने की दिशा में हुई प्रगति पर एक विश्लेषणात्मक दस्तावेज प्रस्तुत किया। जिसके आधार पर 1991 में राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना नारियों के अधिकारों के संरक्षण हेतु की गई। इससे इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि भारत में नारियों के भाग्य का उदय हो गया है।

अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय में नारी की स्थिति–

विश्व भर के पुरुष प्रधान शिकंजे में नारी पर इतने शर्मनाक आतंकपूर्ण और अमानुषिक अत्याचार होते रहे हैं कि सोचना पड़ता है कि आदमी नारी से प्यार करता है कि नफरत। वास्तविकता तो यह है कि दुनिया में अब तक नारियों पर जो अमानुषिक अत्याचार हुए है उनका विवरण शब्दों में नहीं किया जा सकता। नारियों के शोषण की कहानी अनन्त है। कई देशों में अब तक नारी शोषण के कई घृणित रूप प्रचलित है। ''खाड़ी देशों में खुलेआम दुनिया भर की औरतों के हरम सजाये जा रहे हैं। पर्दा–प्रथा तथा अनेक प्रकार की वर्जनाओं से उनकी दीन स्थिति का एहसास

हो जाता है।''[10] पाकिस्तान में 'जनरल जिया' के इस्लामीकरण की प्रक्रिया के दौरान भेदभावपूर्ण कानून औरतों के भारी विरोध के बावजूद बनाया गया। इस कानून के अनुसार– ''दो औरतों की गवाही एक पुरुष की गवाही के बराबर बन गई हैं। ख्वातीन महाज के शब्दों में इसका मतलब निकलता है कि औरत आधी इंसान है।''[11] ''बांग्लादेश में परिवार में कन्या का जन्म कभी वांछनीय नहीं होता। क्योंकि प्रचलित समाज व्यवस्था किसी लड़की को आदमी का दर्जा ही नहीं देती।''[12] बेटे के जन्म लेने पर बंगाली मुसलमान प्रसवगृह की दुआरी पर खड़ा होकर अजान देता है मुसलमानों के लिए अजान एक पवित्र पुकार है। बेटी के जन्म लेने पर अजान देने का रिवाज नहीं है। जन्म से इस भेद–भाव के साथ ही बचपन और किशोरावस्था की विषमताएँ शुरू होती हैं। मुख्य रूप से लड़कियों के शरीर और मन का घर के काम–काज में लगाने के लिए ही यह व्यवस्था की गई थी।

आज की नारी शिक्षित और अपने अधिकारों के प्रति सजग है। अतः प्रश्न उठता है कि फिर नारी पुरुष की तरह स्वतंत्र क्यों नहीं है। ममता कालिया के अनुसार ''नारी को अपने जीवन से जड़ता को निकाल फेंकना होगा। उनके अनुसार आज महज इतना कि जीवन से जड़ता को निकाल फेंकना उतना ही जरूरी है जितना रसोई से तिलचट्टे निकाल फेंकना।''[13] ''आज की चिंतनधारा के अनुसार जो नारी अपने अधिकार की बात नहीं समझती वे बहुत बड़ी भूल करती हैं। क्या आज भी नारी इसलिए जन्म लेती है कि पढ़–लिख कर चिंतन भी न कर सके दो क्षण आराम से बैठ कर अपनी समस्याओं को न सोच सके।'' नारियों द्वारा मौलिक स्वतंत्रता की पूर्णता संयुक्त राष्ट्र की प्राथमिकता है।

महिला अधिकारों की विभिन्न देशों में स्थिति–

महिला अधिकारों के हनन के विभिन्न तरीके विभिन्न देशों में देखे जा सकते हैं। जैसे ऐशियाई देशों भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, श्रीलंका में लड़कियों का पैदा होना अभिशाप माना जाता था। इन देशों में यह स्थिति नारियों के प्रति सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से अपेक्षापूर्ण रवैया तथा पुत्र प्राप्ति की मानसिकता के कारण लंबे समय से चली आ रही है। अमेरिका में स्त्रियाँ सबसे अधिक यौन शोषण, मानसिक

अत्याचार, बलात्कार की शिकार होती रही है। अधिकांश विकासशील देशों के परम्परागत समाज में नारियों को आर्थिक आत्मनिर्भरता से वंचित रखा जाता रहा है। वहाँ नारी की स्वतंत्रता को पारिवारिक जीवन के विघटन के रूप में देखा जाता है।

बांग्लादेश में सबसे ज्यादा लड़कियों की मौत गर्भ के समय जन्म के बाद और दहेज के कारण होती है। श्रीलंका में नारियों को भोग की वस्तु समझा जाता रहा है।

आज विश्व के मुखर देशों में जो कि मानव अधिकार विकास की बात करते हैं, जिसमें पश्चिमी यूरोप व अमेरिकन देश है, नारियों के प्रति इन देशों में अनुदार दृष्टिकोण ही हावी रहा है। अमेरिका ने अपने स्वतंत्रता के संदेश में यह बात सर्वप्रथम स्वीकार की थी कि ''मनुष्य स्वतंत्र व समान पैदा हुआ है'' किन्तु उसी अमेरिका ने नारियों को 80 वर्ष बाद मत देने का राजनीतिक अधिकार दिया। विश्व के सम्मुख प्रत्यक्ष प्रजातंत्र का अनूठा उदाहरण पेश करने वाले स्विट्जरलैण्ड ने 1971 में नारियों को मताधिकार दिया।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विश्व स्तर पर नारियों की स्थिति को ऊपर उठाने की दिशा में विश्व स्तरीय प्रयास किये गये तथा नारी स्वतंत्रता, सहभागिता, शक्तिवाद, मुक्ति की बात की गई। इससे एक उत्तर औपनिवेशिकता की विवधता से युक्त विश्व का उदय हुआ। इसके बाद भी केवल 31 देशों ने नारियों को मतदान का अधिकार दिया। ब्रिटेन जैसे देश ने 1948 में नारियों को मतदान का अधिकार प्राप्त हुआ। नारी को अधिकार देकर शक्तिशाली बनाने की बात का प्रारंभ U.N.O. ने किया। इस दिशा में पहल करते हुए संयक्त राष्ट्र संघ ने 1946 में संयुक्त राष्ट्र महिला हैसियत आयोग की स्थापना की।

विश्व पटल पर आज राजनीतिक उपनिवेशवाद का पटाक्षेप हो रहा है और उसके स्थान पर आर्थिक उपनिरवेशवाद अपनी जड़े मतबूत कर रहा है, भारत भी इस स्थिति से अछूता नहीं है। तब प्रश्न यह उठता है कि नारियों को अधिकार कैसे और कब दिये जाये तथा कितनी हद तक दिये जायें ? इस पर भी मतैक्य की स्थिति नहीं है। आज का परिवेश बताता है कि शिक्षा व नियोजन के क्षेत्र में नारियों का जो

पिछड़ापन है, राजनीतिक आरक्षण के लिए जो अवरोध है वे पुरुष की संकीर्ण मानसिकता के कारण है।

नारियों को सशक्तिकृत करने की दिशा में उनको आर्थिक स्वतंत्रता प्रदान करना एक महती आवश्यकता है, क्योंकि जनसंख्या का लगभग आधा हिस्सा होने के कारण किसी भी देश की आर्थिक संरचना को वे प्रभावित करती हैं। नारियों की क्षमताओं को पूर्ण विकसित किए बिना किसी भी आर्थिक व्यवस्था का विकास संभव नहीं है और भी राष्ट्रीय विकास तब तक अपूर्ण है, जब तक उसमें नारियों का विकास और विकास का लाभ नारियों तक पहुँचाने की व्यवस्था नहीं हो। तृतीय विश्व के देशों की कमजोर आर्थिक स्थिति और विश्व–अर्थव्यवस्था में उनकी स्तरीय अवस्थिति महिला के प्रति भेदभाव को और बढ़ावा देती है।

समाज की आधारशिला वस्तुतः आदर्श जीवन व्यवस्था पर आधारित है। यह व्यवस्था नैतिक व्यवस्था कहलाती है, जो वास्तविकता के धरातल पर मानव हिताय सम्यक व्यवस्था होनी चाहिये। उसके आधार पर विधान बनाकर अपना संचालन करता है। इस आदर्श व्यवस्था के नैतिक संविधान के कारण जो सामाजिक व्यवस्था बनी उसके अनुसार जीवन जीना चाहिये था, किन्तु सशक्त मानव समुदाय ने ऐसा होने दिया चाहिए और अधिकारों का केन्द्रीकरण कर लिया।

मूलतः मानवाधिकार की अवधारणा संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 10 दिसम्बर 1948 को घोषित उस सार्वभौमिक घोषणा पत्र से संबंधित है जिसमें सम्पूर्ण विश्व के समस्त राष्ट्रों के प्रत्येक नागरिक को सम्मानपूर्वक जीवन यापन करने का अधिकार दिया गया। इसके अन्तर्गत जाति, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, जन्म अथवा अन्य किसी प्रकार के भेदभाव के बिना सभी व्यक्तियों को जीवन जीने का अधिकार व स्वतंत्रता दी गई है। अधिकाधिक तौर पर संयुक्त राष्ट्र ने 1948 में जो मानवाधिकार की घोषणा की जिसे हासिल करने के लिए सदियों से संघर्ष चल रहा था। दासता, नस्ल, उपनिवेशवाद के विरुद्ध और मानव द्वारा श्रेष्ठ तथा सभ्य अस्तित्व को बनाये रखने के लिए अधिकारों हेतु संघर्ष जारी रहा। मानवाधिकार 20वीं सदी में दिया गया नाम है जिसकी आधुनिक संकल्पना 1945 के अंत में प्रकट हुई।

यद्यपि मानवाधिकार पुरुष व महिला दानों वर्गों की दृष्टि से एक ही हैं, नारियों के परिपेक्ष्य में मानवाधिकारों का प्रश्न इसलिये अलग से विचारणीय और महत्त्पूर्ण हो जाता है कि पुरुषसत्तात्मक विश्व में लिंग भेद की परम्परा सदियों से चली आ रही है। वस्तुतः मानव जगत में यदि कोई सबसे प्राचीन असमानता अथवा विभाजक रेखा है तो वह लिंग भेद ही है। जाति, धर्म, सम्प्रदाय, रंग आदि सभी विभाजक तथा भेदभावात्मक प्रक्रियाओं का जन्म इसके बाद ही हुआ है। लिंग भेद की अवधारणा ने मानव जीवन को दो ध्रुवों में बाँट कर स्त्री व पुरुष को परस्पर पूरक होने का अवसर न देकर स्त्री को पुरुष का अनुगामी घोषित किया।

मानव सभ्यता के विकास, साम्यवाद एवं समाजवाद की अवधारणा की व्यापक स्वीकृति, शिक्षा एवं विज्ञान के प्रचार–प्रसार के द्वारा 20 वीं शताब्दी में महिलाओं की समानता तथा भूमिका के मुद्दे पर जागृति के स्वर लगभग प्रत्येक देश में उठे हैं। धर्म, राजनीति व सत्ता सभी महत्त्वपूर्ण बुनियादी पक्षों को इस सदी में यह स्वीकारना पड़ा है कि महिला का स्थान पुरुष के समान है और कोई भी ऐसा अधिकार, कानून या विधान नहीं हो सकता जो लिंग भेद के आधार पर स्त्रियों को द्वितीय श्रेणी का नागरिक करार दे सके। नारियों के मानव अधिकार सर्वव्यापी मानव अधिकारों के अभिन्न अंतरंग और अविभाज्य अंग है। इनको मानव अधिकार के मुद्दों से पृथक, विभाजित या अलग नहीं किया जा सकता। नारियों के मानव अधिकार अभिन्न और अविभाज्य है क्योंकि महिलाएँ, महिलाएँ होने के नाते, और मानव होने के नाते, भेदभाव विशिष्ट रूप में और समान तौर से संसार की विभिन्न जनसंख्या का अंग होने के नाते हर क्षेत्र के मानवाधिकार के मुद्दों से प्रभावित होती हैं। नारियों द्वारा मौलिक स्वतंत्रता की पूर्णता संयुक्त राष्ट्र की प्राथमिकता है। अतः संयुक्त राष्ट्र ने महिला अधिकारों हेतु अनेक उपबंध किये हैं–

संयुक्त राष्ट्र एवं महिला अधिकार–

संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के प्रस्तावना में कहा गया है कि ''हम संयुक्त राष्ट्रों के लोग मूलभूत मानवाधिकारों में मानव की गरिमा और महत्त्व व मूल्य में तथा स्त्री पुरुष के समान अधिकारों में आस्था व्यक्त करते हैं। साथ ही चार्टर में नारियों की समानता

के अधिकार की घोषणा की गई। मानवाधिकारों का सार्वभौमिक घोषणा पत्र 1948 को सभी सदस्य राष्ट्रों द्वारा इसका सम्मान करने के लिए बाध्य किया गया। घोषणा पत्र के अनुच्छेद 2 के अन्तर्गत– प्रत्येक इस घोषणा पत्र में तय किये गये अधिकारों और स्वतंत्रता हेतु अधिकृत है। बिना प्रजाति, रंग, भाषा, धर्म, सामाजिक उद्‌भव, सम्पत्ति के आधार पर विभेद नहीं किया जायेगा।'' इस प्रकार पत्र में नारियों को बिना भेदभाव के अधिकारों की प्राप्ति का अधिकारी माना गया।

अनुच्छेद 16(1) के अनुसार वयस्क पुरुष व स्त्रियों को मूल वंश राष्ट्रीयता या धर्म के कारण किसी भी सीमा के बिना विवाह करने और कुटुम्ब स्थापित करने का अधिकार हैं इसके माध्यम से नारियों को अपनी पसन्द एवं इच्छा के अनुसार विवाह करने का अधिकार प्राप्त होता है। विवाह करने एवं परिवार स्थापित करने में धर्म एवं राष्ट्रीयता के बन्धन को तोड़ देने के कारण ही नारियों को अर्न्तजातीय विवाह करने एवं अपना मन पसन्द जीवन साथी चुनने का अधिकार प्राप्त होता है जो कि सभी मनुष्यों को प्राप्त होता है।

अनुच्छेद 23(2) के अन्तर्गत बिना भेदभाव के समान कार्य के लिए समान वेतन का अधिकार है। अर्थात् समान कार्य के लिए स्त्रियां एवं पुरुष दोनों को समान वेतन दिया जाना अनिवार्य कर दिया गया है।

अनुच्छेद 26(1) के अनुसार सभी व्यक्तियों को शिक्षा पाने का अधिकार है। महिला शिक्षा के प्रतिशत जो कि विश्व के सभी देशों में पुरुषों की अपेक्षा बहुत कम रही है। इस कमी को दूर करने के लिए ही मानव अधिकार की सार्वभौमिक घोषणा में यह प्रावधान किया गया है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष।

अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदाएँ एवं महिला अधिकार–

''सिविल और राजनीतिक अधिकारों के अन्तर्राष्ट्रीय करार'' 1966 का अनुच्छेद 2(1) के अनुसार सभी राज्य अपने क्षेत्र में इस करार में स्वीकृत अधिकारों को बिना प्रजाति रंग, लिंग, भाषा, धर्म के आधार पर बिना भेदभाव अधिकारों का सम्मान और सुनिश्चित करने का वचन देता है। अनुच्छेद 3 के अनुसार करार में दिये गये सभी

सिविल और राजनीतिक अधिकारों का लाभ उठाने के लिए पुरुष व स्त्रियों को समान अधिकार होंगे। इसी प्रकार का प्रावधान आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों का अन्तर्राष्ट्रीय करार में भी किया गया है।

महिला अधिकारों के विशेष प्रावधान–

संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानवाधिकार घोषणा पत्र में अधिकार संरक्षण और संवर्धन के उद्देश्यों को स्पष्ट कर स्त्री पुरुष दानों को एक पूर्ण इकाई मानकर अग्रिम विकास का श्रीगणेश किया। नारियों के अधिकार के प्रश्न को सुलझाने हेतु संयुक्त राष्ट्र को एक महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करना था। इस दिशा में पहल करते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ ने CSW की स्थापना की।

महिला हैसियत आयोग (CSW) 1946 – महिलाओं के प्रश्न पर लोगों को जागृत करने के लिए और राजनीतिक विचार विमर्श की ओर अग्रसर करने के लिए व महिला हितों के रक्षार्थ **(CSW)** की स्थापना की। आयोग ने प्रत्येक व्यक्ति को घोषणा पत्र में प्रकाशित समस्त अधिकारों व स्तंत्रताओं का बिना किसी भेदभाव के अधिकृत करते हुए सभी को समान अधिकार दिया। नारियों के राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक अधिकारों को बढ़ावा देने तथा नारियों के लिए विश्वव्यापी नीतियों का निर्माण करने हेतु व नारियों को उन्नति और विकास के उचित अवसर देने के लिए आयोग ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। आयोग ने समस्त विश्व में नारियों की स्थिति के संबंध में आँकड़े एकत्रित किए तथा सार्वभौम मानव अधिकार उद्घोषणा का मसौदा तैयार करने में मदद की। तथा वैधानिक दृष्टि से नारियों को 'स्पष्ट समानता' प्राप्त हो। इसके अतिरिक्त शारीरिक व्यापार और वेश्यावृति को दबाने के लिये 1949 में भी नीति का निर्माण किया गया।

1952 में नारियों के राजनीतिक अधिकारों पर आम सभा में समझौता हुआ जिसमें कानून के अन्तर्गत समान राजनीतिक अधिकारों का प्रथम विश्वव्यापी अनुमोदन किया गया। 1957 में शादीशुदा नारियों की राष्ट्रीयता के संबंध में करार घोषित किया गया।

1967 में अंगीकृत ''नारियों के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभावों के उन्मूलन की उद्घोषणा'' नारियों के विषय में आरंभिक और दूरगामी उपलब्धि थी। इसके अन्तर्गत जीवन और कानून में नारियों के लिए समानता का आह्वान किया गया और समानता की संकल्पना को नागरिक और राजनीतिक क्षेत्रों के परे ऐसे अधिकारों के लिए विस्तृत किया जैसे– शिक्षा, रोजगार के अवसर तथा स्वास्थ्य की देखभाल। साथ ही साथ विवाह या विवाह विच्छेद, शैक्षणिक या व्यावसायिक किसी भी क्षेत्र में महिला पुरुष में भेदभाव वर्जित है।

इसी क्रम में 1970 में पुनः प्रस्ताव पारित किया गया जिसमें घोषणा की गई कि ''नारियों के उत्थान में विकास के सभी साधनों का प्रयोग किया जाए।''

महिलाएँ एवं अंतर्राष्ट्रीय वर्ष व दशक की घोषणा–

नारियों के विकास के संदर्भ में सम्पूर्ण विश्व में नारी उत्थान और विकास के प्रति चेतना जगाने के लिए महासभा ने 18 दिसम्बर 1972 की बैठक में 1975 को ''अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष'' घोषित करने के लिए निर्णय किया गया। इसके तीन उद्देश्य स्पष्ट किये–

1. पुरुष और नारियों को समानता का दर्जा देना।
2. विकास कार्यों में स्त्रियों का योगदान।
3. विश्व शांति स्थापना की दिशा में महिला सहयोग प्राप्त करना।

अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष को ट्रिब्यून के नाम से जाना जाता है। इसमें प्रथम विश्व कार्य योजना बनाई गई और महिला समानता विकास तथा शांति के लिए प्रथम दशक (1975–1984) की घोषणा की। महिला वर्ष के कार्यक्रमों को नवीन दिशा और सहयोग के बिन्दु पर बल देते हुए इसके निम्न कार्यक्रम बनाए गए–

1. सामाजिक अन्याय समाप्त होना चाहिये।
2. नारियों को द्वितीय श्रेणी का मानव न समझकर एक समान मानव समझना चाहिये।
3. देश व समाज के निर्माण में नारियों की अधिकाधिक साझेदारी।

4. विश्व शांति में नारियों की अधिकाधिक साझेदारी सुनिश्चित हो तथा महिला विकास व सहयोग की अपेक्षा की जानी चाहिये।
5. नारियों के समान वैधानिकता को समान सामाजिक दर्जे में बदला जाना चाहिये।
6. नारी के साथ जन्मजात, जातिगत, धर्म राष्ट्रगत भेदभाव नहीं होना चाहिये।

अतः महिला के व्यक्तित्व विकास में सकारात्मक, रचनात्मक जीवन शैली, दिशा तथा दृष्टिकोण बदलने में शिक्षा महत्वपूर्ण साधन है। इस तथ्यों पर 1975 में सर्वाधिक बल दिया गया।

महिला अधिकारों से संबंधित घोषणा–

1967 में अंगीकृत उद्घोषणा के घोषणा पत्र के सिद्धांत के बाद एक अनिवार्य अन्तर्राष्ट्रीय समझौता 1979 में आम सभा द्वारा अपनाया गया जिसे ''नारियों के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन उद्घोषणा'' के नाम से जाना जाता है। इसमें प्रस्तावना तथा 30 धाराएँ हैं। यह समझौता विश्व व्यापी मानव अधिकार दस्तावेजों में सबसे आधुनिक है और व्यक्ति व समूह के प्रति अन्तर्राष्ट्रीय नियमों को परिभाषित करता है। यह समझौता परिभाषित करता है कि नारियों के विरुद्ध भेदभाव किससे निर्मित होता है और इस प्रकार के विभेद को मिटाने के लिए कार्यसूची तैयार करता है। अनुच्छेद–1 के अनुसार ''नारियों के विरुद्ध भेदभाव'' मानव अधिकार और आर्थिक, सामाजिक, नागरिक, राजनीतिक या अन्य किसी क्षेत्र में मौलिक स्वतंत्रताओं का उलंघन है। यह पुरुष महिला समानता पर आधारित है। समझौते को मान्यता देते हुए विश्व के स्वाधीन देशों ने नारियों पर होने वाले भेदभाव को समाप्त करने के लिए सहमति व्यक्त की। समझौता–

–नारियों को राजनीतिक और सार्वजनिक जीवन, शिक्षा और रोजगार में समानता तथा अवसर की सुनिश्चितता कराने का आधार प्रदान करता है।

–नारियों के संतानोत्पत्ति अधिकार स्वयं की और उनके बच्चों के लिए राष्ट्रीयता प्राप्त करने, बदलने की स्वीकृति देता है।

–स्वतंत्र राष्ट्र नारियों के देह व्यापार और उत्पीड़न के समस्त स्वरूपों के विरुद्ध कदम उठाने पर सहमति देता है।

–राष्ट्र विधान सहित सभी उपायों पर सहमत है जिससे महिलाएँ अपने समस्त मानवाधिकारों और स्वतंत्रताओं को प्राप्त कर सके।

अनुच्छेद–18 व्यवस्था करता है कि जिन्होंने समझौते को माना है वे कानूनी रूप पर इसके विधानों को लागू करने के लिए प्रतिबद्ध है तथा संधि के अनुरूप कार्य करने के लिए किये गये उपायों पर राष्ट्रीय रिपोर्ट 4 साल में कम से कम एक बार अवश्य प्रस्तुत करेंगे। यह समझौता 3 सितम्बर 1981 को प्रवृत्त हुआ।

महिलाएँ तथा विश्व मानवाधिकार सम्मेलन 1993–

नारियों के मानवाधिकार की दिशा में दूसरा चरण 1993 में संयुक्त राष्ट्र द्वारा अपनाया गया नारियों के विरुद्ध हिंसा की समाप्ति पर घोषणा पत्र है। 1993 में वियना में हुए विश्व मानवाधिकार सम्मेलन में उन सभी मानवाधिकारों की पुनर्पुष्टि की जो 1948 के घोषणा पत्र में शामिल है। 25 जून 1993 को, 171 राज्यों के प्रतिनिधियों ने सर्वसम्मति से मानवाधिकार पर विश्व सम्मेलन के लिए कार्य योजना और वियेना उद्घोषणा को अपनाया। इसके अन्तर्गत नारियों और बच्चों के मानव अधिकार सार्वभौमिक मानव अधिकारों का एक अभिन्न, आंतरिक और अविभाज्य अंग है। राष्ट्रीय क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर राजनीतिक, नागरिक, आर्थिक और सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन में नारियों की पूर्ण और समान भागेदारी और स्त्री–पुरुष के आधार पर हर प्रकार के भेदभाव का उन्मूलन, अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के प्राथमिक उद्देश्य हैं। भेदभाव परक हिंसा, हर प्रकार का यौन दुर्व्यवहार और उत्पीड़न, सांस्कृतिक पक्षपातों और अंतर्राष्ट्रीय देह–व्यापार का उन्मूलन होना चाहिये। नारियों के मानव अधिकार संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार गतिविधियों का, अभिन्न हिस्सा होना चाहिये। मानवाधिकारों पर हुए विश्व सम्मेलन में सरकारों, संस्थाओं, अन्तर–सरकारी और गैर सरकारी संगठनों से नारियों और बच्चियों के मानवाधिकारों की संरक्षण और संवर्धन के प्रयासों को तेज करने का आह्वान किया गया।

विश्व मानवाधिकार सम्मेलन में एक नई व्यवस्था बनाई जो नारियों के विरुद्ध हिंसा पर रिपोर्ट करने के लिए एक रिपोर्टकर्ता की नियुक्ति की गई और नारियों के अधिकारों की उन्नति और रक्षा के लिए महत्त्वपूर्ण कदम उठाया तथा हिंसा के उन्मूलन पर घोषणा पत्र अपनाया गया। इसके अनुसार हिंसा का अर्थ भेदभाव परक हिंसा के उस कार्य से है जिसका परिणाम नारियों को शारीरिक, मनोवैज्ञानिक कष्ट हो। घोषणा पत्र में 6 अनुच्छेद शामिल हैं। इसके अनुसार नारियों को किसी कार्य की धमकी, क्रूरता चाहे वह सार्वजनिक जीवन में या निजी जीवन में नहीं दी जा सकती है।

1994 में काहिरा में हुए अन्तर्राष्ट्रीय जनसंख्या और विकास सम्मेलन में नारियों के संतानोत्पत्ति अधिकार और विकास के अधिकार की पुनर्पुष्टि की गई।

विश्व में 1990 से 2000 का दशक महिला दशक के रूप में मनाया गया तथा 8 मार्च को सारी दुनिया में महिला दिवस के रूप में मनाया जाता है।

महिला अधिकारों की जागृति हेतु किये गये प्रयास–

यह सत्य है कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर महिला के समुचित विकास पर संयुक्त राष्ट्र ने विश्व महिला सम्मेलन आयोजित करने का निर्णय किया ताकि महिलाएँ स्वयं के विकास के संदर्भ में अपने विचार व्यक्त कर सकें तथा नीति निर्धारण में उनके विचारों को प्रमुखता दी जा सके। इस परम्परा में अभी तक विश्व महिला सम्मेलन आयोजित हो चुके हैं।

1. प्रथम विश्व महिला सम्मेलन 1975 मैक्सिको
2. दूसरा विश्व महिला सम्मेलन 1980 कोपेनहेगन
3. तीसरा विश्व महिला सम्मेलन 1985 नैरोबी
4. चौथा विश्व महिला सम्मेलन 1995 बीजिंग (पेइचिंग)

मैक्सिको सम्मेलन– वर्ष 1975 में 19 जून से 2 जुलाई तक प्रथम अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन प्रथम प्रयास के रूप में महिला कल्याण हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ ने आयोजित किया और 1975 से 1984 दशक घोषित किया। नारियों के लिए इसमें पंचवर्षीय योजना बनाई गई जिसमें निम्नलिखित बातों पर बल दिया गया–

* स्त्री शिक्षा पर बल

* लिंग भेदभाव मिटाना

* नारियों के लिए रोजगार के अवसर बढ़ाना

* नीति निर्धारण में नारियों को शामिल करना

* समान राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, नागरिक अधिकार देने की घोषणा करना शामिल है।

इस सम्मेलन में संघ के 133 सदस्य राज्य से प्रतिनिधि मंडलों ने हिस्सा लिया। तथा अलग से 6000 गैर सरकारी संगठन के प्रतिनिधि भी एकत्रित हुए। इस सम्मेलन में 75 से 85 के दशक के लिए विश्व योजना बनाई तथा नारियों के विकास हेतु दिशा निर्देश तय किये। सम्मेलन की समाप्ति पर विश्व कार्य योजना बनाई गई जिसे मैक्सिको उद्घोषणा के नाम से जाना जाता है। इसमें मुख्य रूप से समानता, भागीदारी और विश्व शांति में योगदान मुख्य उद्देश्य थे। सम्मेलन का प्रमुख आधार था कि महिलाएँ न केवल राजनीतिक और वैधानिक क्षेत्र में बल्कि घरेलू और पारिवारिक स्तर में भी पुरुषों के समान हैं। इसके तहत दो ऐजेन्सी बनाने का निर्णय लिया गया–

(अ) संयुक्त राष्ट्रीय विकास फण्ड – इसकी स्थापना 1976 में महासभा द्वारा की गई। इसका प्रमुख उद्देश्य नारियों को विकास कार्यक्रम में भागीदारी बनाना था।

(ब) अंतर्राष्ट्रीय शोध एवं प्रशिक्षण संस्थान – नारियों के उत्थान हेतु 1975 में महासभा द्वारा इसकी सिफारिश की। इसका प्रमुख उद्देश्य नारियों से संबंधित समस्याओं का शोध करना था।

कोपेनहेगन सम्मेलन – वर्ष 1980 में द्वितीय विश्व महिला सम्मेलन कोपेनहेगन में 14 जुलाई से 31 जुलाई तक आयोजित हुआ। इस सम्मेलन में निम्न लक्ष्य रखे गये–

* राजनीति व निर्णय प्रक्रिया में नारियों को कानूनन भागीदारी

* नारियों के लिए ऐसे कार्यालय कक्ष या आयोग बनाना जो नारियों से संबंधित है।

* सरकारी और गैर सरकारी संगठन में सहयोग स्थापित करना।
* सामाजिक और आर्थिक विकास के लिऐ सभी को मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य संबंधी सेवाएं उपलब्ध कराना।
* शिक्षा और प्रशिक्षण में सभी को समानता का दर्जा देना।
* रोजगार के संदर्भ में समानता।

इस सम्मेलन में मैक्सिको सम्मेलन के परिणामों को आलोचनात्मक मूल्यांकन करते हुए माना कि नारियों की प्रतिष्ठा में सुधार लाने के लिए राजनितिक इच्छा शक्ति की कमी है तथा नारियों की आवश्यकता पर ध्यान नहीं दिया जा रहा तथा बहुत कम महिलाएँ निर्णय लेने के पद पर विराजमान है। अतः इस सम्मेलन में जोर दिया गया कि उक्त लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु उचित वातावरण तैयार किया जाये।

नैराबी सम्मेलन – नैरोबी में 1985 में 15 से 26 जुलाई के बीच तीसरा विश्व महिला सम्मेलन आयोजित हुआ। इस सम्मेलन में 124 देशों द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्ट से ज्ञात हुआ कि महिला दशक में निश्चित किए गए लक्ष्यों को प्राप्त करने में आंशिक सफलता ही प्राप्त हुई। तथा यह तथ्य प्रत्यक्ष रूप से सामने आया कि अभी भी नारियों का दर्जा पुरुषों की अपेक्षा निम्न है।

इस सम्मेलन में महिला विकास के लिए प्रगतिशील रणनीति तैयार की गई तथा मैक्सिको कार्य योजना में सुधार किया गया। विभिन्न कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर समानता स्थापित करना प्रमुख रणनीति के रूप में शामिल किया गया। तथा प्रत्येक देश को अपनी विकासात्मक नीतियों के अनुसार अपनी प्राथमिकताएँ तय करने का अधिकार दिया गया।

बीजिंग सम्मेलन– बीजिंग में 1995 में 4 से 15 सितम्बर तक चौथा विश्व महिला सम्मेलन आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में सरकारी अधिकारियों के अतिरिक्त गैर सरकारी संगठनों ने भी भाग लिया। इसमें संयुक्त राष्ट्र संघ के 185 सदस्य देशों ने भाग लिया। इसके मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित निर्धारित किये गये–

* नारियों को समर्थ बनाने के लिए योजनाएँ बनाना।
* प्रतिनिधि मंडलों की प्रगतिशील उपलब्धियों का पुनरावलोकन करना।

* ऐसी कार्य योजना की रूपरेखा बनाना जिससे प्रगतिशील नीतियों का क्रियान्वयन किया जा सके।
* 21वीं शताब्दी की वैज्ञानिक, तकनीकी, आर्थिक और सामाजिक विकास संबंधी आवश्यकताओं का सामना करने के लिए साधन उपलब्ध कराना।
* ऐसी सामाजिक स्थिति का निर्माण करना जिसमें नारियों की प्रगति को प्रोत्साहन मिले।

इसके आतिरिक्त सम्मेलन में संभावना व्यक्त की गई कि विकासशील देशों में अंतर्राष्ट्रीय दबाव के कारण अपनाई जा रही नीतियों में नारियों पर प्रभाव, जनसंख्या नीति, घरेलू जीवन में नारियों की स्थिति में सुधार आदि पर भी प्रभाव पड़ेगा। सम्मेलन में अगले 15 वर्षों में अंतर्राष्ट्रीय समुदाय द्वारा किये जाने वाले 12 प्राथमिकता वाले क्षेत्रों की घोषणा की गई। ये 12 क्षेत्र इस प्रकार है –

1. गरीबी से उभरने में महिला की सहायता करना।
2. स्वास्थ्य रक्षा का स्तर सुधारना।
3. हिंसा को समाप्त करना।
4. स्तरीय शिक्षा सुनिश्चित करना।
5. महिला के मानवाधिकारों में वृद्धि करना।
6. राजनीति में नारियों को प्रोत्साहन देना।
7. सैन्य संघर्षों से नारियों की रक्षा करना।
8. पर्यावरण विकास में नारियों की भागीदारी।
9. सामाजिक नीति–निर्धारण में लिंग भेद समाप्त करना।
10. सूचना और संचार माध्यमों तक पहुँच में समानता।
11. अर्थ और संचार माध्यमों तक पहुँच में समानता।
12. बालिकाओं के विरुद्ध भेदभाव और दुर्व्यवहार समाप्त करना।

नई दिल्ली सम्मेलन 1997 – इन सम्मेलन के अतिरिक्त 1997 में 29 सितम्बर से 1 अक्टूबर तक ''वीमेन्स पॉलिटिक्ल वाच'' नामक गैर सरकारी संगठन ने संयक्त राष्ट्र संघ और राष्ट्रीय महिला आयोग के सहयोग से विश्व सांसद सम्मेलन नई दिल्ली में आयोजित किया। इसका उद्देश्य नारियों की सत्ता में भागीदारी बढ़ाना था तथा इस भागीदारी को कैसे सुनिश्चित किया जाए और इसे कैसे उत्तरोत्तर बढ़ाया जाए ?

इसी संदर्भ में 10 फरवरी से 14 फरवरी 1997 को भारत की राजधानी दिल्ली में अंतर संसदीय सम्मेलन व महिला राजनीतिक भागीदारी बढ़ाने के संदर्भ में सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस सम्मेलन में 80 देशों के 250 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसमें स्त्री पुरुष भेदभाव समाप्त करने और नारी को सत्ता में भागीदारी देने की वकालत की गई।

महिला अधिकारों हेतु विभिन्न देशों द्वारा समय–समय पर किये गये प्रयास–

आज वर्तमान समय में विश्व में नारियों के समुचित विकास के लिए अनुकूल वातावरण बनता जा रहा है। इसी आधार पर 21वें शताब्दी को नारियों की शताब्दी के नाम से भी पुकारा जाने लगा है। चाहे विकसित देश हो या विकासशील महिलाएँ पुरुषों के साथ कदम मिलाकर अपनी अन्तर्निहित क्षमता व आत्मविश्वास और साहस के साथ पुरुष प्रधान समाज में अपने अस्तित्व हेतु सफल प्रयास कर रही है। नारियों की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक स्थिति में सुधार करने के लिए विश्व में सभी जगह प्रयास किये जा रहे हैं। इसी संदर्भ में रूस में 1993 में ''वीमेन ऑफ एशिया'' नामक राजनीतिक संगठन बनाया गया। 1997 में बोरिस येल्तसिन ने नारियों को राजनीति तथा प्रशासन में अधिक प्रतिनिधित्व के लिए अध्यादेश जारी किया गया। हमेशा से नारियों के लिए राजनीति और प्रशासन ने प्रतिबंध लगाने वाले देश ईरान ने भी अमेरिका, कनाडा में सर्वेक्षण के अनुसार महिलाएँ अच्छी अधिकारी सिद्ध पाई गई। जापान में भी नारियों की स्थिति सुदृढ़ करने हेतु तथा सभी क्षेत्रों में उनकी भागीदारी वें वृद्धि करने के प्रयत्न किये गए। यद्यपि नारियों को प्रशासन और राजनीति में

समान अधिकार प्रदान करने के पहले प्रयास फ्रांस, ब्रिटेन, जापान आदि देशों में शुरू किये गये। जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट है परंतु अब यह लगभग विश्वव्यापी है।

''अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर महिला अधिकारों के विकास से सम्बन्धित घटनाक्रम–

क्र.सं.	वर्ष	देश का नाम	घटना विवरण
1	1611	संयुक्त राज्य अमेरिका	मैसाच्युसेट्स राज्य में नारियों को वोट देने का अधिकार प्राप्त हुआ।
2	1780	संयुक्त राज्य अमेरिका	मैसाच्युसेट्स राज्य में नारियों को वोट देने का अधिकार प्राप्त हुआ।
3	1788	फ्रांस	फ्रांसीसी राजनीतिज्ञ कांडसैंट ने नारियों को शिक्षा, नौकरी प्रदान करने तथा राजनीति में भाग लेने की स्वीकृति की माँग की थी।
4	1840	संयुक्त राज्य अमेरिका	लुक्रीशिया ने ईक्वल राइट एसोसिएशन अर्थात् 'समान अधिकार संगठन' की स्थापना करके अन्य नारियों की भाँति नेग्रो नारियों के समान अधिकारों की जोरदार माँग की थी।
5	1857	संयुक्त राज्य अमेरिका	8 मार्च, 1857 को न्यूयार्क के सिलाई उद्योग और वस्त्र उद्योग में कार्यरत नारियों ने पुरुषों के समान वेतन एवं 10 घंटे के कार्य दिवस के निर्धारण हेतु हड़ताल की थी। इसी दिवस को विश्व भर में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में मनाया जाता है।
6	1859	सोवियत संघ	सेंट पीटर्सबर्ग में महिला मुक्ति आंदोलन का सूत्रपात हुआ था।
7	1869	संयुक्त राज्य अमेरिका	अमेरिका में राष्ट्रीय महिला मताधिकार संगठन की स्थापना की गई।

8	1882	फ्रांस	फ्रांस के प्रसिद्ध लेखक विक्टर ह्यूगो के संरक्षण में महिला अधिकार संगठन की स्थापना की गई।
9	1893	न्यूजीलैण्ड	यहाँ नारियों को पहली बार मत देने का अधिकार दिया गया।
10	1904	संयुक्त राज्य अमेरिका	अमेरिका में 'इन्टरनेशनल वीमेन्स राइट एलाइन्स' अर्थात् अंतर्राष्ट्रीय महिला मताधिकार समिति की स्थापना की गई।
11	1906	फिनलैण्ड	यहाँ पहली बार नारियों को मत देने का अधिकार प्राप्त हुआ।
12	1908	ब्रिटेन	'वीमेन्स फ्रीडम लीग' अर्थात् महिला मुक्ति संगठन की ब्रिटेन में स्थापना हुई।
13	1911	जपान	जापान में पहला महिला मुक्ति आंदोलन प्रारंभ हुआ।
14	1912	चीन	नारियों की मताधिकार की माँग को लेकर नानकिंग में कई महिला संगठनों की जोरदार बहस हुई।
15	1913	नार्वे	यहाँ नारियों को प्रथम बार मताधिकार दिया गया।
16	1913	आस्ट्रेलिया	आस्ट्रेलिया में पहली बार महिला दिवस मनाया गया।
17	1913	स्विटजरलैण्ड	यहाँ पहली बार महिला दिवस मनाया गया।
18	1913	डेनमार्क	डेनमार्क में प्रथम महिला दिवस 1913 में मनाया गया।
19	1936	फ्रांस	(1) नारियों को पहली बार फ्रांस में मताधिकार दिया गया। (2) नोबेल पुरस्कार से सम्मानित मैडम क्यूरी सहित तीन महिलाएँ पहली बार फ्रांस में मंत्री बनीं।

20	1945	इटली	नारियों को इटली में मताधिकार दिया गया।
21	1951	अंतर्राष्ट्रीय स्तर	अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने नारियों को पुरुषों के समान वेतन दिलाने हेतु समान श्रम के लिए समान वेतन संबंधी नियम पारित किया।
22	1952	अंतर्राष्ट्रीय स्तर	संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने भारी बहुमत से नारियों के राजनीतिक अधिकारों को नियम पारित किया।
23	1957	ट्यूनीशिया	यहाँ स्त्री–पुरुष समानता का कानून पास किया गया।
24	1959	श्रीलंका	श्रीलंका में विश्व की 'प्रथम महिला प्रधानमंत्री' के रूप में भंडारनायके चुनी गई।
25	1968	ईरान	यहाँ नारियों को अपने पति की आज्ञा के बिना नौकरी का अधिकार प्रदान किया गया।
26	1975	अंतर्राष्ट्रीय स्तर	इस वर्ष पूरे विश्व में अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन का आयोजन किया गया।
27	1975	अंतर्राष्ट्रीय स्तर	'कोपेनहेगन' में पहला अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन आयोजित किया गया।
28	1985	अंतर्राष्ट्रीय स्तर	'नैरोबी' में दूसरा अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन आयोजित किया गया।
29	1993	रूस	'वीमेन ऑफ एशिया' नामक राजनीतिक आंदोलन की नींव रखी गई और इस आंदोलन की 21 सदस्या 1993 के संसदीय चुनाव में विजयी हुई।
30	1993	भारत	नारियों की सेना के साथ–साथ नौ–सेना और वायुसेना में भी नियुक्तियाँ की गई।
31	1995	चीन	'शंघाई' में तीसरा अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन आयोजित किया गया।

32	1997	ईरान	पहली बार चार महिला न्यायाधीशों की नियुक्तियाँ की गई।''[14]
33	2017	सउदी अरब	पहली बार नारियों को कार चलाने की वैधानिक अनुमति मिली।

इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर महिलाएँ अपने अधिकारों के प्रति सचेत एवं जागरुक बनी रहती हैं

महिलाओं के लिए सर्वश्रेष्ठ देश—

दुनिया भर में महिलाओं के साथ यौन शोषण, घरेलू हिंसा और लिंग भेद की घटनाएं आए दिन घटती रहती है। इन खबरों के बीच दुनिया के कुछ देशों में उन्हें मिलने वाली सुविधाएं, महत्त्व और सम्मान सुकून देने वाली बात है। वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम की मानें तो दुनिया में बहुत सी जगहों पर महिलाओं के लिए परिस्थितियां लगातार सुधर रही है।

''आइसलैंड— एक महिला के रूप में आइसलैंड में रहना सबसे अच्छा अनुभव हो सकता है क्योंकि दुनिया भर के सभी देशों की तुलना में यहाँ राजनीति, शिक्षा, रोजगार और इलाज के मामलों में पुरुषों और महिलाओं के बीच किसी प्रकार का भेदभाव नहीं बरता जाता। इस मामले में यमन सबसे बुरा और अफगानिस्तान सबसे खतरनाक देश माना गया है।

जापान— लंबी आयु के मामले में महिलाओं के लिए सबसे पसंदीदा देश होगा। यहाँ पुरुषों की औसत आयु 80 वर्ष है, जबकि महिलाओं की 87 वर्ष है। आयु के मामले में महिलाओं के लिए सबसे खराब देश लिसोथो है, जहाँ महिलाओं की औसत आयु 48 साल है। वैसे यहाँ पुरुष भी आमतौर पर 50 साल की आयु तक ही जीते है। हाँ, युंके में महिलाओं की औसत आयु 82 वर्ष है, जबकि पुरुषों की 78 वर्ष है।

खांडा— एक राजनीतिज्ञ के रूप में किसी महिला के लिए खांडा सबसे अच्छा देश माना जाता है। यहाँ 80 में से 45 सीटों पर महिला राजनेता काबिज रह चुकी है।

इस मामलों में सऊदी अरब, यमन, कतर ओमान, बेलीज सबसे खराब माने गए हैं। यहाँ महिला राजनीतिज्ञों की संख्या नगण्य है।

थाईलैंड– प्रबंधन के उच्च्तम स्तर पर महिलाओं का वर्चस्व कहीं देखना है तो थाईलैंड पर नजर डालें। दुनिया के अन्य देशों की तुलना में यहाँ वरिष्ठ प्रबंधन स्तर पर महिलाओं का बोलबाला है, जबकि विकसित देशों की श्रेणी में गिने जाना वाला जापान भी इस मामले में बेहद पिछड़ा हुआ है, जहाँ सीनियर मैनेजमेंट लेवल पर मात्र आठ फीसदी महिलाएँ ही हैं।

श्रीलंका– आपको यह जानकर हैरानी होगी कि श्रीलंका की राजनीति में महिलाओं को अव्वल स्थान मिला है। यहाँ अब तक 23 साल महिलाओं ने राष्ट्र का संचालन किया है। जबकि दुनिया में दर्जनों ऐसे देश हैं, जहाँ कभी किसी महिला ने राष्ट्र प्रमुख की भूमिका का निर्वाह नहीं किया है।

ग्रीस– माँ बनने के लिए किसी महिला के लिए ग्रीस दुनिया का सबसे सुरक्षित देश है। यहाँ 31800 प्रसवों में सिर्फ एक मामला ऐसा होता है, जहाँ बच्चे को जन्मते वक्त माँ की मृत्यु होती है। इस मामले में दुनिया की सबसे खराब व्यवस्था दक्षिणी सूदान में है, जहाँ पूरे देश में बमुश्किल 20 दवाईयां है और डिलेवरी के दौरान सबसे ज्यादा मौते होती हैं।

लिसोथो– पढ़ाई–लिखाई के लिए महिलाओं को सबसे माकूल माहौल यदि कोई उपलब्ध कराता है तो वो देश है लिसोथो। जहाँ 95 प्रतिशत महिलाएँ साक्षर और पढ़ी–लिखी हैं। यह अनुपात यहाँ पुरुषों से भी ज्यादा है, जो 83 फिसदी के आंकड़े पर अटके हुए हैं। इथोपिया इस मामले में सबसे बेकार देश है, जहाँ 42 फिसदी साक्षर पुरुषों के मुकाबले मात्र 18 फिसदी महिलाएँ लिखने–पढ़ने में सक्षम हैं।

अमरीका– जो महिलाएँ एथेलिटिक्स में अपने हुनर का प्रदर्शन करना चाहती हैं, उनके लिए अमरीका दुनिया का सर्वोत्तम देश है। वर्ष 2011 में 10 सबसे ज्यादा कमाई करने वाली महिला एथेलीट्स में 5 तो सिर्फ अमरीका से ही थीं। जबकि सऊदी अरब में महिलाओं को स्टेट स्कूल्स तक में खेलने से हतोत्साहित किया जाता है।

कैरिबियन देश– पत्रकार के रूप में किसी महिला के लिए कैरिबियन देश सर्वोत्तम हैं। यहाँ टीवी, प्रिंट मीडिया और रेडियो न्यूज स्टोरीज का कम से कम 45 फिसदी हिस्सा महिलाएँ ही तैयार करती हैं। इस मामले में अफ्रीका सबसे पिछड़ा देश है, जहाँ सिर्फ 30 फिसदी महिलाएँ ऐसा करती हैं।

लक्जमबर्ग– कमाई के मामले में महिलाओं का फेवरेट देश है लक्जमबर्ग। यहाँ महिला–पुरुषों का जीडीपी में योगदान समान है। महिलाएँ औसतन 40,000 डॉलर कमाती हैं तो पुरुष भी इतना ही कमाते हैं। युएई में पुरुष के 36,727 डॉलर के मुकाबले महिला मात्र 7157 डॉलर कमाती है।

भारत– टैक्सी ड्राइवर के रूप में महिलाओं के लिए सबसे अच्छी जगह है दिल्ली। आज तो महिलाएँ मेट्रो रेल चला रही हैं। आमतौर पर टैक्सी चालन में पुरुषों का वर्चस्व है लेकिन यहाँ इस पेशे में महिलाएँ पुरुषों को टक्कर दे रही है। एक एनजीओ की कोशिशों से यहाँ पहली ऐसी रेडियो टैक्सी सर्विस लांच हो चुकी है, जिसमें सिर्फ महिलाएँ ही चालक है। इस मामले में सबसे बेकार स्थिति सऊदी अरब की है, जहाँ महिलाओं के लिए कार चालन पर पाबंदी है। 2017 में यह पाबंदी हटा ली गई है।''[15]
अतः अब विश्व की नारियों में चेतना देखी जा रही है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. श्रीमद् भगवद् स्कंध 12, अध्याय 1।
2. नारी उपेक्षिता– सीमोन द बोउवार अनुवादक– प्रभा खेतान पृ. 82।
3. नारी के बदले आयाम– डॉ. राजकुमार– पृ. 34।
4. 1988 गाँधी ऑन वोमन, सेन्टर फोर बोमन, डेवलपमेंट स्टडीज दिल्ली– जोशी पुष्पा, पृ. 11 ।
5. वही, पृ. 11 ।
6. महिला सशक्तिकरण– गुप्ता कमलेश कुमार, पृ. 67।
7. भारतीय संविधान अनुच्छेद– 15, 16, 21, 39, 43, 44, 51, 325, 326।
8. मानव अधिकार और कर्तव्य– संपादक प्रोफेसर आर. पी. जोशी, पृ. 129।
9. वही, पृ. 131।
10. वही, पृ. 42।
11. मध्यकालीन भारत का इतिहास– वी.डी. महाजन, पृ. 24।
12. वोमेन्स राइड्स, ए.डी.वी. पब्लिशर्स– शैलजा नागेन्द्र, पृ. 44।
13. स्त्री विमर्श और सामाजिक आन्दोलन– डॉ. राजनारायण, पृ. 76।
14. वही पृ. 126–128।
15. राजस्थान पत्रिका, परिवार आजकल, 27/09/2017– पृ.4

अध्याय : तृतीय

मीणा जनजाति कबीले में जन्म से पूर्व सामाजिक चेतना–

3.1 पितृ सत्तात्मक संस्कृति में नारी की भूमिका।

3.2 जन्म से पूर्व नारी की स्थिति।

3.3 मादा भ्रूण–हत्या के यक्ष प्रश्न।

3.4 भ्रूण–परीक्षण, मादा भ्रूण–हत्या और गर्भपात कानून।

अध्याय : तृतीय

मीणा जनजाति कबीले में जन्म से पूर्व सामाजिक चेतना–

जन्म के लोकगीतों में संस्कृति–

करौली क्षेत्र में सतंति सांस्कृतिक चेतना का प्रमुख आधार रहा है। शिशु का जन्म वंश वृद्धि का प्रतीक माना जाता है। पुत्री की अपेक्षा पुत्र का महत्त्व अधिक है। हर परिवार की यही इच्छा रहती है कि उसके घर पुत्र का ही जन्म हो। पुत्र जन्म पर उत्सव धूमधाम से मनाया जाता है। पुत्र जन्म के लिए गर्भाधान के साथ ही एक मनोवैज्ञानिक वातावरण बनाया जाता है। यह वातावरण विभिन्न संस्कारों एवं उत्सवों के द्वारा बनता है इनमें पुंसवन संस्कार प्रमुख है।

पुंसवन–

गर्भाधारण का निश्चय हो जाने के पश्चात् गर्भस्थ शिशु को पुंसवन नामक संस्कार के द्वारा अभिव्यक्त किया जाता है। ''पुंसवन का अभिप्राय उस कर्म से है जिसके अनुष्ठान से (पुरुष) का जन्म हो।'' इस अनुष्ठान से यह समझा जाता है कि इस स्त्री के पुत्र होगा और यदि पुत्री भी होगी तो भी यही सोचा जाता है कि आगे चलकर वह पुरुष संतति उत्पन्न करेगी। यह संस्कार गर्भ स्थापित होने के पश्चात् दूसरे महीने में किया जाता है। यदि गर्भ लक्षण अव्यक्त हो तो इस गर्भ धारण के चिह्न प्रकट होने पर सम्पन्न किया जाता है, यह संस्कार उस समय किया जाता है जब चन्द्रमा किसी पुरुष नक्षत्र में होता है। गर्भिणी स्त्री की घ्राणेन्द्रिय के दाहिने रन्ध्र में वट वृक्ष का दूध गर्भपात के निरोध तथा पुत्र के जन्म के निश्चय के उद्देश्य से छोड़ा जाता है।[1]

सीमन्तोन्नयन–

गर्भ काल का तीसरा संस्कार 'सीमन्तोन्नयन' है। इस नाम का अर्थ यह है कि इस कृत्य में गर्भिणी स्त्री के केशों को उपर उठाया जाता है। यह गर्भ के चतुर्थ अथवा पंचम मास में करना उचित है। जन साधारण का विश्वास था कि गर्भिणी को अमंगलकारी शक्तियां ग्रसित करती हैं। इसके निराकरण के

लिए विशेष संस्कार की आवश्यकता प्रतीत हुई। आश्वलायन स्मृति में इसका उल्लेख है कि रुधिर शमन में तत्पर कतिपय दुष्ट राक्षसियां पत्नी के प्रथम गर्भ को खाने के लिए आती हैं। पति को उक्त राक्षसियां मुक्त कर देती हैं। यह अलक्ष्य, क्रूर, मांसभक्षी प्रथम गर्भकाल में स्त्री पर अधिकार जमा लेती हैं तथा उसे पीडा पहुंचाती है। अतः इन्हे भगाने के लिए सीमन्तोन्नयन संस्कार का विधान किया गया है। वर्तमान में यह संस्कार लुप्त हो गया है।

गर्भकाल के गीतों में सामाजिक चेतना–

गर्भकाल से संबंधित गीतों को 'गर्भकाल के गीत' कहते हैं। इन गीतों में दोहद साध व सोहर के गीत गाये जाते हैं। जो संस्कृति की अभिव्यक्ति करते हैं।

प्रसव व लोक विश्वास–

''लोक मानस, अन्ध–विश्वासों एवं परम्परित मान्यताओं का आगार होता है। वह पीपल, बड़, बबूल, इमली, नीम, खण्डहर, अर्जुन वृक्ष, कुओं, बावड़ी व जल के समीप भूत प्रेत इत्यादि का निवास स्वीकारता है। इन स्थानों के समीप जच्चा का जाना वर्जित है। लोकगीतों में जच्चा के लिए प्रसव के पूर्व एवं प्रसव के बाद कई दिनों तक सूतिका गृह से बाहर आना मना है।''[2] प्रमुख रुप से इसके पीछे वैज्ञानिक धारणा है।

वैज्ञानिक धारणा–

संध्या समय जच्चा का घर से बाहर आना–जाना निशेध है क्योंकि द्वाभा के कारण पूर्ण रुप से कोई वस्तु स्पष्ट दिखाई नहीं देती अतः गिरने का भय रहता है जो गीत में इस प्रकार अभिव्यक्त है–

''बंस बधावण म्हारी जच्चा थू सांझ न पर घर जाय
आमां तो सामां छे दादा बाबाजी को ओबरा
दन को दिवाडो छे घणी बार को''[3]

लोक विश्वास–

"हिरणाखी म्हारी जच्चा, तू सांझ न सरवर जाय
आमली री छांव न जाय, बबूळ्या री छांव न जाय
आमली री छांव न जाय, ताळ–तळैय्या री ठांम न जाय"

लोक मानस इमली, बबूल और जल के समीप अति मानवीय शक्तियों का निवास मानता है। अतः जल के समीप संध्या समय जच्चा का जाना वर्जित है। इमली और बबूल के वृक्षों को अस्वास्थवर्धक माता है।

नाज नखरे–

गर्भावस्था में गर्भिणी की प्रत्येक इच्छा को परिवार के सभी सदस्य पूरा करते हैं। दुआसु भी अपनी विशिष्ट इच्छाओं को पूरा करवाती है। इन विशिष्ट इच्छाओं के साथ जच्चा के नखरे भी गीतों में देखने को मिलते हैं। जच्चा जामुन खाना चाहती है। वह अपने पति से जामुन मंगाने का आग्रह करती है साथ ही कहती है –

"हाथाँ की टूटी म्हंई न भावे, तो सूंना की छड़ी सूं तुड़वादे
नीचे दुपट्टो बिछवा दे, ओ पिया रंग रस की ,जामुनियां मंगा दे।

पितृ सत्तात्मकता–

पुत्र जन्म पर पिता व परिवार के समस्त लोगों की प्रसन्नता की कोई सीमा नहीं रहती। आज वह सर्वस्व लुटा देना चाहते हैं। ठीक इसके विपरीत स्थिति है पुत्री के जन्म लेने पर। प्रसव से पूर्व ही पति, पत्नी से कहता है कि यदि तुमने पुत्र को जन्म दिया तो तुम्हें घर के अंदर चौबारे में सुलाया जायेगा अर्थात् मान सम्मान होगा साथ ही बधाई की पात्र बनोगी–

"थे भल जणज्यो डावड़ा,
थाँकी चौबारा बिछावेंगा खाट
बधाई सुंदर म्है करां जी"

यदि तुमने लड़की को जन्म दिया तो तुम्हारी बाहर कूड़े के उपर खाट बिछाई जायेगी साथ ही तुम्हें कोई भी सम्मान नहीं देगा–

"थे भल जणज्यो डावड़ी
थाँकी रेवड़्याँ बिछावेंगा खाट
बधाई सुंदर म्हैं न करां जी ओ राज"

यहाँ पिता ही परिवार का प्रधान होता है और उससे पुत्र अपने पिता के वंश को आगे बढ़ाता है। यहाँ की संस्कृति में पितृ–सत्तात्मक परिवार ही है।"[4]

पितृ सत्तात्मक संस्कृति में नारी की भूमिका–

लीपने के गीत–

लीपने के गीतों में लीपने, पोतने व मांड़ने आदि क्रियाओं का वर्णन पाया जाता है। किसी वस्तु पर चढ़ी हुई किसी गाढ़ी व गीली वस्तु की तह को लेप कहते हैं। करौली क्षेत्र में इसे 'लीपणा' के नाम से अभिहित किया जाता है। गोबर व मिटटी को मिलाकर लीपने के काम में लिया जाता है। गीत में मिट्‌टी व गोबर लाने से लेकर घरों में चौक मेड़ी, पोल, चूल्हे, चौक, ढूमले व चक्की आदि लीपने का वर्णन है–

"चालो री भाइल्याओ गार खोदबा चालां
चालो री भाइल्याओ गोबर उगाबा चालां
आयो आयो कातिक को मास घर बार लीपणा छे
पोळ्यां की उपड़्या लेवड़ा घर बार लीपणा छे
मेड़यां की खूट्या लेवड़ा घर बार लीपणो छे
चूल्हा चौका लीपणा छे, ढूमला भी लीपणा छे"
लीपणी छे चाकड़ली की चूल, घर बार लीपणो छे

मीणा जनजाति की नारी के लोकगीतों में रोड़ू, ढेड़, डियो, काळो, परण्यों, बलमा, गिदोंड़ी, लोहड़ी, छोरी, छोरा, भायेलो, आदि ग्रामीण शब्दों का प्रयोग अपने प्रियतम के लिए किया गया है। मीणा लोकगीतों के द्वारा सामाजिक चेतना का विकास हुआ है। इन गीतों में मीणा लोकसंगीत को आगे बढ़ाने और इस विद्या को जीवित करने पर इन लोकगीतों के कलाकारों पर मीणा समाज को गर्व है।

'पद' विधा गीत–

मीणा समाज में प्रचलित जितने भी लोकगीतों से मेरा परिचय हुआ उनमें मुझे यह प्रतीत हुआ है कि कुछ गीतों की विधाएं अपनी विषय–वस्तु विशेष के लिए जानी जाती रही है। पद विद्या गीत रचना लम्बी होती है जिसमें बाकयदा 'स्थायी' व 'अंतरों' के व्याकरण का निर्वहन होता है। 'पद' गाने से पहले मुख्य गायक कथा के 'मूल' से अवगत कराता है। इसके बाद लम्बे आलाप से गायन की शुरूआत की जाती है। कहाँ द्रुतगति से गाना है, कहाँ जोर से गाना है, कहॉ स्थायी गति की पुनरावृत्ति की जाती है यह सब पूर्व में निर्धारित होता है। इसे रोचक व अद्यतन बनाने के आशय से राजनीतिक सामाजिक बुराईयों का सजीव चित्रण सुनने को मिलता है। यही स्थिति ख्याल गायिकी में भी मिलती है। इन दोनों विधाओं के गीत लम्बे होते हैं। इसमें कथा विशेष की 'कहण' से प्रेषित की जाती है, अन्य विद्याओं में रसिया, लाँगुरिया व अत्याधुनिक विद्या 'सुड्डा' गायकी है। आज के दौर में ''सुड्डा'' केवल नारियों के द्वारा गाया जाता है। उत्साह जनक यह है कि सुड्डा गायिकाएँ ''प्रोफेशनल एक्सपर्ट'' के रूप में प्रसिद्धी पाने लगी हैं। यह दुखद है कि पुराने ख्यालों के पुरुष यत्र–तत्र इसका विरोध करते हैं। यह कहकर कि 'औरतों का मंच पर चढकर गाने का क्या मतलब.....? इन तीनों विद्याओं में एक–एक पंक्तियां जुड़कर गीत श्रृंखला का रूप लेती हुई अग्रसर होती है।

इन मीणा लोकगीतों के माध्यम से हम कह सकते हैं कि, ये समस्त गीत, रसिया, पद, सुड्डा, ख्याल, मांगलिक गीत, मीणावाटी, मीणाढांचा, कन्हैया, कीर्तन, लम्बे गीत जो मीणा समाज से तालुक रखते हैं जो गायक–गायिका एवं प्रथक–प्रथक टोलियों, मोड़िया, को विविध प्रकार की छोटी–मोटी शारीरिक पावन भंगिमाओं से लेकर नृत्य प्रस्तुति तक दी जाती है। यह उल्लेखनीय है कि इन गीतों में मीणा लोकगीतों में प्रचलित अद्यतन शब्दों, विषयों, प्रतीकों, उपमाओं, मुहावरों आकांक्षाओं, इशारों, लटका–झटकाओं इत्यादि को समेटा जा रहा है जो सांस्कृतिक समृद्धि का सुखद घोतक है।

लोकगीत के भविष्य को ध्यान में रखकर जगदम्बा प्रसाद पाण्डेय कहना चाहते हैं कि, 'हिन्दी साहित्य' पर लोकगीत का प्रभाव हमेशा कुछ न कुछ किसी न किसी रूप में बना ही रहेगा। लोकगीत में सर्वसाधारण के ह्रदय को छूने की जो शक्ति थी वह आज भी उसमें निहित ही है। साहित्य का मूल अभिप्राय भी यही होता है, अधिक से अधिक लोगों तक अपनी सम्प्रेषणीयता बनाये रखना। इस कारण से आज के साहित्यकार भी लोकगीत के मूल अभिप्राय से विमुख नहीं हो सकते हैं। आज के साहित्यकार और साहित्य का मूल अभिप्राय बहुजन संप्रेषण का माध्यम बनना ही तो है।

वर्तमान समय में लोकगीत का स्वरूप पूर्ण रूप से बदल चुका है जिसका मुख्य कारण लोकगीत पर और फिल्मी गीतों का प्रभाव उसके साथ–साथ नई पीढ़ी में अरुची है। करौली क्षेत्र के विभिन्न मीणा जनजाति के परिवारों की बहुत सी महिलाएँ महानगरों मे रहने लगी हैं। आज वो अपनी संस्कृति भूलती जा रही हैं। अब लोकगीतों के स्थान पर विभिन्न मांगलिक कार्यक्रमों में फिल्मी गीत गायें जाते हैं न कि लोकगीत।

विभिन्न पर्व, त्यौहार एवं उत्सवों पर भी लोकगीत नहीं गाये जाते उनके स्थान पर फिल्मी गीत गाये जाते हैं जैसे रॉक्स गीत, डी.जे. गीत एवं पाश्चात्य गीत गाये जाते हैं जिन्होंने हमारे लोकगीत, लोकसंस्कृति एवं लोकसाहित्य को प्रभावित किया। मीणा जनजाति की नारियों को किस प्रकार से इन लोकगीतों से जोड़ा जाय जिससे कि उनमें सामाजिक चेतना बनी रही और उसके साथ–साथ करौली क्षेत्र की लोकसंस्कृति एवं लोकसाहित्य।

राजस्थानी जनजीवन में बसे इन विविध प्रकार के गीतों को अवसरानुसार गाया जाता है। ये सब गीत करौली क्षेत्र की सरल संस्कृति और सामाजिक, आर्थिक आदि पक्षों के दर्पण के रूप में विद्यमान है। ध्यान रहें ये सुरक्षित रहें और समाज की मर्यादा उज्ज्वल बनी रहें इसके लिए हमें प्रयत्नशील बनें रहना है। इन गीतों का आवास आसन नारी कंठ होता है। आज कल सभ्य, नारी शिक्षित इन लोकगीतों के प्रयोग और स्मरण से भाग रहीं

है। करौली क्षेत्र के ग्रामीण परिवारों में लोकगीतों के परम्पराएँ आज भी चल रही है। नगरों के जीवन में भी इनके अस्तित्व को यथावत बनायें रखने के उपायों पर हमें चिंतन करना होगा।

पुरुष वर्ग के श्रम गीत–

पुरुष वर्ग के गीत उनके कार्यो से संबंधित होते हैं। पुरुषों को अधिक शारीरिक श्रम करना पड़ता है। अतः श्रम परिहार करने के लिए गीतों का निर्माण करके गीत गाते हैं। इन गीतों में कर्जे, कोल्हू, बुवाई, सिंचाई आदि के गीत प्रमुख हैं। ये गीत श्रृंगार पक्ष की प्रधानता लिये हुए हैं।

कोल्हू के गीत–

करौली क्षेत्र में उत्पन्न गन्ने की पैदावार होती है। गन्ने से गुड़ व शक्कर बनाई जाती है। यहां के कृषक बैलों के द्वारा खींचे जाने वाले कोल्हू से गन्ना पेल कर उसके रस से गुड़ या राब बनाते हैं। कोल्हू चलाने का कार्य प्रायः रात्रि भर होता है। कोल्हूओं पर चारों ओर जागरण रखने के लिए गीत गाये जाते हैं। इन गीतों को कोल्हू गीत के नाम से पुकारते हैं। यह गीत उँची टेर में गाये जाते हैं। प्रायः यह गीत दो पंक्तियो में गाये जाते हैं। इन गीतों के छोटे होने पर भी हमारी संस्कृति के विभिन्न तथ्य व सत्य परिलक्षित है।

सामाजिक जीवन पर प्रभाव–

सामाजिक जीवन में विभिन्न प्रकार के सुनहरे स्वप्नों के ताने–बाने बुने रहते हैं। कृषक की पत्नी और बच्चों के अर्थाभाव में सभी स्वप्न टूट जाते हैं। मन मस्तिष्क में अर्थाभाव के कारण जीवन की विषमतायें विकराल रुप लेती चली जाती हैं। जो पारिवारिक जीवन को बिखरने और आर्थिक विसंगतियों को उत्पन्न करने में सहायक होती हैं।

हल जोतने का वर्णन–

परिवार के सभी पुरुष पात्र हल द्वारा जमीन हलने का कार्य कर रहे हैं। जेठजी बोझा उठाने का और देवर व नायिका के पति द्वारा हल चलाने का वर्णन है–

"जेठजी म्हारा बोझा ढोवे, देवरियो करे हल जोत रे
बालम जी म्हारा हळियो चलावे, म्हां खवावां बण रोठ रे

बीज बोने का वर्णन–

गेहूँ अन्न का राजा है। करौली क्षेत्र में अधिकांशतः कृषक वर्ग जौ, गेहूँ व चने की पैदावार करते हैं। गीतों में जौ व चनों को बोने का व काटने का वर्णन इस प्रकार है–

"म्हारा धण्या मण्या रा काका
म्हारे जौ लावणी आग्या रे
धण्या मण्या रा काका"

सिंचाई का वर्णन–

बीज बोने के पश्चात् पानी पिलाने का कार्य होता है। कृषक की पत्नी इसकी आवश्यकता के लिये कुंआ खुदाने का आग्रह कर रही है–

"कुओ खुदाओ जी बलम जी, कुओ खुदाओ जी
बिना कुऑ के खेत बलम जी, सूखा पड़ गया जी
कुओ खुदाऊँगो, फूलझड़ी, चड़स चलाऊँगो
मेर–मेर पे धोरां सूं फाणी पुगवाऊँगो।"

राजस्थान में पानी की कमी होने से किसान की पत्नी अपनी व्यथा प्रकट करते हुए कहती है कि आप ऐसी फसल मत बोना जिसमें पानी की अधिक मात्रा में आवश्यकता पड़ती हो। जीरा तो कभी मत बोना। क्योंकि पानी देते–देते मेरे पॉव गल गए हाथ के चाँदी के कड़े भी घिस गये हैं–

"मत बावें म्हारा परण्या जीरो
यो जीरा जीव रो बैरी रै मत बावें...
पाणत करता पगल्या घसग्यां
कड़ला घसग्यां हाथां रा
मत बावें म्हारा परण्या जीरो

कटाई का वर्णन–

फसल कटाई का कार्य कृषि के सभी क्रिया कलापों में उल्लासपूर्वक पाया जाता है। यह उनके द्वारा किये गए सामूहिक परिश्रम का प्रतिफल है। यह कार्य हर्ष, उल्लास व मनोरंजन पूर्ण वातावरण में सम्पन्न किया जाता है। फसल काटने का वर्णन कई गीतों में पाया जाता है।

''खेतां नबज्या मोती, बाँटा न्हाळे ये खलियाण
दाँथळी उठाओ साथी, काटण चाला धान रे''

चक्की के गीत–

गेहूँ पीसने के पत्थर से बने घरेलू यंत्र को ''घट्टी'' कहा जाता है। लोक जीवन में स्त्रियों के लिए चक्की का विशेष महत्त्व है। चक्की जीवन के कर्म चक्र प्रवर्तन का प्रतीक है। उनके दैनिक कार्य का आरंभ प्रातः इसी से होता था। करौली क्षेत्र में यह कहावत है ''घट्टी बना कांई घर'' अर्थात् ''चक्की के बिना क्या घर।'' इससे घर में चक्की के महत्त्व का बोध परिलक्षित होता है। चक्की पीसना स्त्रियों के लिए विशेष स्वास्थ्यप्रद व्यायाम सिद्ध होता है। इससे उनका स्वास्थ्य उत्तम रहता है। साथ ही बच्चे भी हृष्ट–पुष्ट रहते हैं। चक्की पीसते समय वह जो गीत गाती रहती थी उससे जीवन धारा शुद्ध होती थी। समय का सदुपयोग होता था। परिश्रम करने की आदत बनी रहती थी। पैसों की बचत भी होती थी।

हाथ की चक्की का काम अब देहातों में भी मशीन की चक्की ले रही है। मशीन हमारे गेहूँ पीसने के साथ साथ हमारे चक्की के गीतों को भी पीसती जा रही है। चक्की पीसने का समय प्रातः है। अतः इस समय भजन और ईश वंदना की जाती है। इन गीतों में चक्की का वर्णन बहुत कम मिलता है। प्रायः चक्की की दो चार पंक्तियों के बाद कोई भजन प्रारंभ हो जाता है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति प्रातःकाल ईश्वर का नाम स्मरण करके दिन का प्रारंभ करना चाहता है।

चरखे के गीत–

ऊन और कपास के सूत कातने का देशी यंत्र चरखा कहलाता है। चरखा आदिकाल से ही हमारी ग्रामीण आर्थिक व्यवस्था का महत्त्वपूर्ण अंग रहा है। चक्की, चूल्हा और चरखा देहातों में घर–घर होते थे। चक्की से गेहूँ पीस लिया चूल्हे पर रोटियां सेकी और इन कामों से अवकाश मिला तो चरखे पर सूत तैयार कर लिया। इन तीनों 'च–कारों' के माध्यम से देहात के लोग सुखी, स्वस्थ और स्वतंत्र रहते थे। लोकगीतों में चरखे का सूत कातने का वर्णन उपलब्ध है –

''दोहराण्या, जठाण्या बैठी कातबा जी
कोई सूरज की उगाळ, बध–बध चलावे
चरखा की चाल, म्हां बेठ्या कातबा
पीढ़ली डाल, बध बध चाले चरखा की चाल
सासू जी सब रा ही पूण्यां बणाय
बाई जी सब ने ही रिया पकड़ाय
दोराणी काती दो, दो कूकड़्याँ
जी कोई जेठाणी काती च्यार
थारी फूलझड़ी काती छ एकली''

लोग प्रश्न कर रहे हैं, क्यों उद्विग्न हैं औरतें आजकल छुपा कर नहीं रख पा रही है दुख दर्द, सार्वजनिक कर दे रहीं है। सब कुछ भूल गई वो नसीहत अपने दुःखों को, धरती मुझे अपने में समा ले। आज बरसों की खामोशी टूट रही है। विषमताओं से भरा मन कुछ नया करना चाहता है। जो स्वप्न नारी का सदियों से आकार गढ़ रहा है।

कहते हैं, कितनी औरतें सिसकीं तो कविता बनी, कितनी औरते रोयीं तो बनी कहानियाँ। आज भी एक आम औरत शायद रातों में रोती रहती है, पति और नारी चेतना का आयाम विस्तृत हो चुका है। प्रायः नारी चेतना जबकि आज नारी चेतना का आयाम विस्तृत हो चुका है। प्रायः नारी चेतना से आशय

साहित्याकारों द्वारा रचित पारिवारिक सन्दर्भों, स्त्री–पुरुष सम्बन्धों, स्त्रियोंचित पीड़ा और उनके देह के विमर्श से लगाया जाता रहा है। जबकि नारी चेतना मात्र अश्रुगाथा न होकर व्यापक सामाजिक संदर्भों एवं मूल्यों को स्पर्श कर चुकी है। आज नारी पुरुष सत्तात्मक समाज में व्याप्त विषमता के विरूद्ध विद्रोह करते हुए अपनी देह–चेतना एवं अस्तिव के गहरे विमर्श से ही आगे पूँजीवादी व्यवस्था एवं उपयोगवादी दृष्टि को बदलने के लिए प्रयत्नशील दिखाई पड़ती है। आज नारी–चेतना व्यापक सामाजिक संदर्भो को स्पर्श कर चुकी है। प्राचीन कथाओं में व्यक्त त्याग की गाथाएँ अब समाप्त हो चुकी है। आज नारी अपने अपदस्थ मुकाम को प्राप्त करने के लिए प्रयासशील दिखलाई पड़ती है। ऐसा प्रतीत हो रहा है मानों नारी यह कह रही हो बस बहुत हो चुका जुल्म, अब और नहीं सहेंगे। सदियों से सहते–सहते उसके सब्र का बाँध अब टूट चुका है। अब शोषण के प्रति वह अस्वीकार की मुद्रा में है। सर पर कफन बाँध के वह अब गृह की कारा से कर्म–क्षेत्र में उतर चुकी है। जब इस धरती पर हर एक समान अधिकार है तो नारी यह प्रश्न उठाती है कि वह अपने अधिकारों से वंचित क्यों है? क्या सचमुच शेषिता (स्त्री) को किसी तरह का हक नहीं बनता।

किसी भी सामाजिक व्यवस्था की एक कसौटी यह भी होती है कि इसके अन्तर्गत मनुष्य के बहुआयामी विकास को किस सीमा तक उचित वातावरण एवं सुविधाएँ मिलती हैं। जो व्यवस्था मनुष्य के विकास को या उसकी विकास की सम्भावनाओं को किसी भी धरातल पर रोकती है, वह उचित व्यवस्था नहीं हो सकती। जब हम कहते हैं कि मनुष्य जैविक विकास का सर्वश्रेष्ठ स्तर है। उसमें जीवन और चेतना की अद्यतन सर्वश्रेष्ठ अभिव्यक्ति हुई है तो यह तय है कि भविष्य में इसके गुणात्मक विकास की जवाबदेही भी मनुष्य मात्र की ही बनती है।

आज यह प्रश्न बार–बार हमारे समक्ष उपस्थित होता है कि स्त्री के कर्तव्य पुरुष के कर्तव्य से अलग क्यों है। इसका उत्तर यह है कि स्त्री की

अनुभूति का लेखन है। ऐसी अनुभूतियाँ हैं जो अब तक दबी हुई थीं दमित थी, उत्पीड़ित थी। प्रभुत्वशाली पुरुषवर्ग ने उसे समाज एवं लेखन से बहिष्कृत कर रखा था। स्त्री को कुछ सीमित क्षेत्रों में ही काम करने की पुरुष–वर्ग द्वारा अनुमति दी गई थी। अन्य विशिष्ट क्षेत्र उसके लिए प्रतिबंधित थे। जब स्त्री ने प्रतिबंधित क्षेत्रों में प्रवेश करना शुरू किया तो पितृसत्ता की व्यवस्था कमजोर हुई।''[5] पुरुषवादी दृष्टिकोण ने स्त्री की सत्ता ध्वंस की, उसे हेय समझा, उसके अस्तिव की व्याख्या की जिसके फलस्वरूप स्त्री की अस्मिता खंडित हुई। स्त्री की उपेक्षा हुई। स्त्री की सभ्यता और इतिहास का लोप हुआ।

मीणा समाज में आजकल बहुत से परिवर्तन हो रहे है। उसका कारण अर्थिक निर्भरता, पितृ–सत्तात्मक परिवार होने के कारण नारियों के अधिकार सीमित थे। जैसे–जैसे युग बदला वैसे–वैसे उनकी परिस्थितियाँ बदली।

करौली क्षेत्र की संस्कृति 'पुरुष प्रधान' संस्कृति है। हिन्दू धर्म ने सदियों से स्त्री का दमन किया है। मंजुल भगत की 'संबंधहीन' में यह संदर्भ है जिसमें ''नारी को अपने देवी नाम को सार्थकता देनी होती है और वही स्त्री रूपी देवी जब मानवी बनने लगती है जब कोई अहं परिलक्षित होने लगता है तो पुरुष उसके देवी रूप होने की याद दिला कर, वापस प्रतिमा में प्रविष्ट करा देता है।'' अतः महिला को देवी बन कर रहने में कोई दिलचस्पी नहीं है। नारी यह सवाल उठाती है कि जिस नैतिक व्यवस्था को वह इतनी निष्ठा से निभाती है वह व्यवस्था अन्ततः उसे क्या देती है।

मादा भ्रूण हत्या–

''कसूर मोकू आज बता मेरी मैया?

यह अजन्मी कन्या का माता से प्रश्न है और भी अनेक प्रश्न इस प्रकार हैं। जो आज के आधुनिक गीतों में चीत्कार कर रहे हैं–

अध काची मिटा दी अजन्मी बेट्यां?
अजन्मी बेट्यां की दुसासां?
पूछण छावै आज?

म्हूँ भी जीवण चाउँ माय?

आगे माँ को दोष देती आश्चर्य प्रकट करती है–

थारी कोखां में आई, जन्म क्यूं नीं पाई!
काई यो ही धरम, कोखां में कबर बणाई!
थरो खून तो पायो म्हांनै, दूध क्यूँ नीं पी पाई!
मिटगी कोख में पण, आसूँ तक बहा नीं पाई।।
दुर्दशा देख के म्हारी, ब्रह्मा भी पछतायो होगा।
साथै ले जाता हया, जम भी थर्राया होगा।।
जन्म लेवण दो बेट्यां नै, बेटा सूं बढ़कर दिखावैगी।
धरज्यां की बात छोड़ों, तोड़ आभौ रा तारा लाऊँगी।।
जे थे बेट्यां ईं मरवाओगे, मायड कठी सूं पाओगा।
खो जावैगो बैनड़ रौ दुलार, लाड कुण सूं लड़ाओगा।।

अंतिम संदेश यही है मेरा बचा लो जीवन। आपकी अजन्मी बिटिया का! वरना मिट जायेगा, इस दुनिया से मानव का अस्तित्व। इसमें सृष्टि के भूत और भविष्य दोनों के प्रति सामाजिक चेतना कूट–कूट कर भरी है।

''घटता नारी आँकड़ा पे छुरी क्यूं घसी
चरूं मेर उड़ री छै झांक तो हँसी''

कन्या को लक्ष्मी की उपमा देने वाली हमारी संस्कृति आज क्रूर और अमानवीय हो गई है। आज हमारे यहाँ स्त्री–पुरुष अनुपात तेजी से घट रहा है अर्थात् प्रति हजार पुरुषों पर नारियों की संख्या में तेजी से गिरावट आ रही है और इसका बहुत बड़ा कारण है कन्या भ्रूण–हत्या।

कन्या को पालने–पोसने, उसकी अस्मिता की रक्षा करने और जवान होने पर भारी दहेज देकर, उसका विवाह करने से बचने के लिए आजकल लोग कन्या जन्म को अभिशाप मानने लगें और इस अभिशाप से बचने के लिए वे कन्या भ्रूण की माँ की कोख में ही हत्या (गर्भपात) कर देते हैं।

जन्म से पहले ही भ्रूण हत्या विज्ञान की देन है। पुरुष प्रधान समाज में पहले लड़की को जन्म के बाद मारा जाता था। कन्या के जन्म लेने के तुरंत बाद उसे अफीम चटाकर, गर्म पानी में उलटा लटकाकर, आक का जहरीला दूध पिलाकर, गला घोंटकर या फिर ऐसी ही दूसरी विधियों से मारने के किस्से पुराने नहीं हुए हैं। इन सारी परिस्थितयों के मद्देनजर क्या एक बात माता–पिता को मथती नहीं कि उस शिशु का क्या दोष है जिसकी वजह से अल्ट्रासाउंड के जरिए पहिले ही उनके लिंग का पता लगाकर जन्म लेने से पूर्व ही जिसे मार दिया जाता है। चिंतन की बात यह उस देश की स्थिति है जो एक धर्म प्रधान देश है। जिसे अहिंसा एवं आध्यामिकता प्रेमी और नारी–गौरव–गरिमा पर गर्व करने वाला देश माना जाता है।

मादा भ्रूण हत्या कानूनी अपराध–

गर्भधारण कर पूर्व व प्रसव पूर्व निधान तकनीक (लिंग चयन प्रतिषेध) अधिनियम, 1994 के अन्तर्गत गर्भधारण से पूर्व या बाद में लिंग चयन या बाद में कन्या भ्रूण हत्या करना कानूनी अपराध घोषित किया गया है। गर्भ का चिकित्सीय समापन अधिनियम, 1971 के अनुसार निम्नलिखित परिस्थितियों में एक महिला गर्भपात करवा कर सकती है–

1. जब गर्भ की वजह से महिला की जान को खतरा हो।
2. महिला के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को खतरा हो।
3. गर्भ बलात्कार के कारण ठहरा हो।
4. बच्चा गंभीर रूप से विकलांग और अपाहिज पैदा होने का खतरा हो।
5. महिला और पुरुष द्वारा अपनाया गया परिवार नियोजन का साधन असफल हो गया हो।

आईपीसी की धारा 313 के तहत स्त्री की सम्मति के बिना गर्भपात करने के बारे में कहा गया है कि इस प्रकार से गर्भपात करवाने वाले को आजीवन कारावास और जुर्माने से भी दंडित किया जा सकता है। धारा 314 के अंतर्गत बताया गया है कि गर्भपात करने के आशय से किए गए कार्यों द्वारा मृत्यु में

दस वर्ष का कारावास या जुर्माना या दोनों से दंडित किया जा सकता हैं। मगर यदि गर्भपात स्त्री की मर्जी के खिलाफ कराया गया हो तो आजीवन कारावास होगा। धारा 315 के अंतर्गत बताया गया है कि शिशु को जीवित पैदा होने से रोकने या जन्म उपरांत उसकी मृत्यु कारित करने के कार्यों से संबंधित अपराध में दस वर्ष का कारावास या जुर्माना या दोनों हो सकता है।''[6] वर्तमान में देश में बहुत अल्ट्रासाउण्ड स्कैनिंग सैंटर और सोनोग्राफी सैंटर हैं। सभी के सामने यहाँ लिंग निर्धारण परीक्षण नहीं होता है का तख्ता लटका रहता हैं। भ्रूण हत्या को रोकेने के लिए सरकार ने बड़ी तेजी से अभियान चलाया हुआ है। प्रिंट मीडिया, इलैक्ट्रॉनिक मीडिया व जगह–जगह होर्डिंग्स लगाकर लोगों को व उनसे बने समाज को जागरुक करने की भरसक कोशिश हो रही है। 11वीं पंचवर्षीय योजना में भ्रूण हत्या को रोकने के लिए रोड मैप तैयार हुआ था। पालन घर बनाकर नवजात बच्चियों की परवरिश, शिक्षा का पूरा खर्च वहन करने की योजनाएँ बन चुकी हैं। लाल किले की प्राचीर से 60वें स्वतंत्रता दिवस के समारोह के अवसर पर राष्ट्र को संबोधित करते हुए डॉ. मनमोहन सिंह के भाषण में नारियों की सुरक्षा को प्राथमिकता व कन्या भ्रूण हत्या के बारे में प्रतिवचन, उस मामले में केन्द्र सरकार की गंभीरता को दर्शाते हैं। केन्द्र सरकार तो भ्रूण हत्या पर अंकुश लगाने के लिए स्कूली छात्राओं की मदद भी चाह रही है। जागरुकता कार्यक्रम में लगी बच्चियों की पढ़ाई बाधित होने के एवज में अतिरिक्त अंक दिए जाते हैं लेकिन फिर भी किलकारियां निकलने से पहले ही मारी जा रही हैं बच्चियाँ। बुद्धिजीवी, शिक्षाविद्, समाज सुधारक तथा कानूनविदों के सभी प्रयास निरर्थक साबित होते हैं जब आज भी लड़की का जन्म परिवार वालों के चेहरे पर चिंता की लकीरें खींच देता है। पुत्र मोह में लोग अपना देश छोड़ कर विदेश तक का रुख करते हैं। जिससे गर्भपात व्यापार फल–फूल रहा है। लिंग चयन इलाज में महारत हासिल लास एंजल्स के एक फर्टिलटी विशेषज्ञ जैफरीस्टीनबर्ग ने एक बार कहा था कि 'हर महीने करीब दो भारतीय उनके फर्टिलिटी केन्द्र में इलाज हेतु आते हैं और उनमें से

अधिकतर की मांग नर भ्रूण यानी बेटे की होती है।' इन्हीं वैज्ञानिक तकनीकों के दुष्परिणाम का नतीजा है कि भारत के कुछ गाँवों में बारात नहीं आती।

नारी के छह रूप–

महिला के छह रूप बताए गए हैं। कामकाज में मंत्री के समान सलाह देने वाली, कार्य करने में दासी के समान सेवा करने वाली, शयन में अप्सरा के समान सुख देने वाली, धर्म के अनुकूल चलने वाली, क्षमा आदि गुण धारण करने में पृथ्वी के समान स्थिर रहने वाली। नारी में धैर्य, साहस, सहनशीलता, दृढ़ इच्छा शक्ति जैसे ऐसे गुण हैं जो ईश्वर प्रदत्त हैं। मनुष्य के लिए कभी वह मातृ स्वरुपा तो कभी प्रेयसी, कभी बहन तो कभी पत्नी रूपा बन उसका साथ देती है। देवासुर संग्राम में दशरथ को कैकई के रण कौशल ने ही विजयी बनाया था तथा गार्गी, मैत्रेयी, विद्योतमा आदि के रूप में नारी सम्माननीय है। आदर्श नारी का समाज में सर्वोच्च स्थान रहा हैं। समाज तथा देश की कल्याणकारिणी के रूप में वह सम्मान पाती रही हैं। वीर व साहसी पुत्रों की जननी होने पर उसे वीर प्रसूता कहा जाता है लेकिन परतंत्रता के साथ नारी का पतन प्रारंभ हुआ। उसकी सेवा भावना पुरुष के लिए दासी का पर्याय बनकर रह गई और वह घर की चारदीवारी में कैद कर दी गई। सभ्यता के आरंभ से ही पुरुष ने अपने शारीरिक बल के गुमान पर नारियों के ऊपर रौब जमाया हुआ है। इसी के बल पर परदा, दहेज और सती–प्रथा जैसी रुढ़ीवादी विचारधाराएँ समाज में विद्यमान हैं। इसमें कोई शक नहीं कि बतौर माँ, बहन और बेटी महिला का महत्त्वपूर्ण किरदार हैं। किन्तु बात जब उन अधिकारों की आती है तो वे उसके पास नहीं हैं। यह सब इसलिए ही है कि पुरुष नारियों को बराबर का भागीदार नहीं बनाना चाहता। महत्त्वपूर्ण मसलों जैसै जायदाद की बांट और जागीदारी प्राप्ति के मामलों में लड़कों को ही प्राथमिकता मिलती है। शादी के बाद उसका माँ–बाप की जायदाद में से हिस्सा समाप्त मान लिया जाता है। उसके नाम के आगे पति के नाम का उपनाम लग जाने के परिणाम स्वरुप उसकी रही सही पहचान भी समाप्त हो जाती है।

मुस्लिम समाज में तलाक का फतवा–

मुस्लिम समाज के बारे में कहा जाता है कि पुरुषों का वर्चस्व बहुत ही ज्यादा हैं। वे चार पत्नियाँ रख सकते हैं। तीन बार तलाक–तलाक–तलाक शब्द का उपयोग करने पर अपनी पत्नी को तलाक दे सकते हैं। मुस्लिम समाज के गीत में तलाक का फतवां कसाई के समान बताया है। कानून की दुर्दशा यह है कि हरा रूमाल तलाक देने की स्वीकृति को संकेत है। यह हर मुस्लिम घर की नारी की सदियो पुरानी दारुण गाथा है–

''हरियो रुमाल सिपायां को
फतवो तलाक, कसायां को
घर–घर में राग लुगायां को....

घर की स्थिति ऐसी है एक आदमी के चार बीबियां हैं। जबकि एक बीबी का भार उठाना ही बड़ा कठिन है। चार बीबियों से घर में बच्चे इतने हैं कि चूहे बिल्ली जैसे शोर शराबा करते रहते हैं। सारे दिन घर में अशांति का वातावरण बना रहता है–

''नवाब यो चार लुगायां को
चाऊँ–म्याऊँ उधम मचायां को
घर–घर में राग लुगायां को....''

इन परिस्थितियों के कारण ही आर्थिक विपन्नता सर्वत्र व्याप्त है। मद्र बेरोजगार है। कोई काम धंधा भी नहीं करता। भविष्य के लिए एक फूटी कौड़ी भी नहीं बचती है–

''कौड़ी न बचे बचायां को
काम ही कौनी कमायो को
घर–घर में राग लुगायां को...''

ऐसी हालत में यह घर नरक के समान है। उपर से तलाक के बाद हलाल की प्रथा का निर्वाह मात्र अपनी पेट की भूख प्यास मिटाने के लिए

मजबूरी में करना पड़ता है। इससे जीवन भर अपनी और समाज की निगाह में हँसी उड़ाना ही है–

> "दोजख भूख तिसायां को
> फतवो हलाल, हँसायां को
> घर–घर में राग लुगायां को....

भारत में प्रधानमंत्री आदरणीय नरेन्द्र मोदी की पहल व नारी विषयक चिंतन से इस कुप्रथा को समाप्त किया गया है। कुछ देशों में तो वे मतदान के अधिकार से भी वंचित है। न्यायालयों में उसकी गवाही भी मान्य नहीं होती। कुछ क्षेत्रों में तो उसके साथ दूसरे दर्जे के नागरिकों वाला बर्ताव होता है। मगर मुस्लिम बुद्धिजीवियों का दावा है कि स्त्री–पुरुष अनुपात उनके धर्म में बराबर है, दहेज के लिए हत्याएं भी नहीं होती तथा पत्नियों को जलाकर मारा नहीं जाता। दूसरी तरफ अधिकतर मामलों में पालन पोषण तक रहता हैं।

संयुक्त एवं रुढ़ीवादी परिवार की विचारधाराएँ मादा भ्रूण हत्या का प्रमुख कारण रही हैं। सड़े गले संस्कारों के तहत बेटा मुक्ति का मसीहा बनकर जब तक चिता को आग नहीं देगा, आत्मा मुक्त नहीं होगी, क्योंकि वह बुढ़ापे का सहारा है। कुछ परंपराओं को मानने से भी भ्रूण हत्या दर में बढ़ोतरी होती है। भारत में परिवार की सहमति से की गई शादियों की सफलता प्रेम विवाह से की गई शदियों की सफलता दर से ऊपर है। प्रेम प्रसंग की असफलता भी भ्रूण हत्या का कारण बन सकती है। अवैध संबंध और बलात्कार जैसी कुरीतियाँ भी भ्रूण हत्या के प्रतिशत को बढ़ाने में सहायक हैं। पूर्व में डॉक्टरों का व्यवसाय समाज की सेवा के लिए जाना जाता था किंतु अब इसके अभिप्राय बदल गए हैं। जिसके लिए रुढ़ीवादी समाज ही जिम्मेदार है। किसी समय डॉक्टरों को भगवान का रूप मानकर पूजा जाता था। गरीबों और मरीजों का इलाज ही उनका मिशन होता था। आजकल डॉक्टर भौतिक सुख–सुविधाओं और संपत्ति के दूत का काम कर रहे हैं व धन कमाने की लालसा में भ्रूण हत्या जैसे जघन्य अपराधों में शामिल हो रहे हैं। सरकारें तो इस सामाजिक बुराई को

समाप्त करने में सहयोग देने वालों को नई–नई सुविधाएँ दे रही हैं। एक तरफ भारत सरकार का बेटी बचाओ–बेटी पढ़ाओ अभियान है, वहीं दूसरी ओर एक ऐसी डॉक्टर कानून की गिरफ्त में फंसी है जो चलती कार में भ्रूण हत्या का कारोबार चला रही थी। भ्रूण हत्या जैसे जघन्य अपराध को रोकने के लिए सामाजिक ताने–बाने में फँसी रुढ़ीवादी सोच बदलने के लिए धर्म गुरुओं और धार्मिक चैनलों का योगदान मील का पत्थर साबित हो सकता है। संयुक्त परिवार की विचारधारा गाँवों व शहरों में लगभग समाप्त हो चुकी है। जबकि गाँवों में जमीन कम होने की वजह से ग्रामीण रोजगार की तलाश में शहरों की ओर पलायन करते हैं व शहरों में न्यूक्लियर परिवार पद्वति पाई जाती है, जहाँ शादी के बाद बच्चे अलग स्वतंत्र जीवनयापन के लिए चले जाते हैं। संयुक्त परिवारों के टूटने के बाद बेटा, माँ–बाप की सेवा कर पाएगा यह विचारणीय पक्ष समाज के सामने लाना आवश्यक है। भ्रूण हत्या में कानूनी खामियां दूर करके इसे और अधिक सख्त बनाना भी बहुत जरुरी है। भ्रूण हत्या में संलिप्त दोषियों के लिए सख्त से सख्त सजा का प्रावधान व पुरुषों और नारियों के अनुपात में बराबरी लाने में सहायक नागरिकों के लिए पुरस्कार ही आज के समय की मांग है।

कन्या भ्रूण का गर्भपात कराना कानूनन अपराध घोषित कर दिया गया है, स्वास्थ विभाग के 2 जुलाई 1995 के परिपत्र के अनुसार तीन माह से अधिक आयु के भ्रूण का गर्भपात एम.टी.पी. एक्ट में नहीं आता और भारतीय दण्ड संहिता की धारा 312 और 316 के तहत यह एक गम्भीर दण्डनीय अपराध है। इसके अतिरिक्त केन्द्रीय सरकार ने भ्रूण परीक्षण के बढ़ते दुरुपयोग को देखते हुए भ्रूण की लिंग जाँच 1 जनवरी 1996 से गैर कानूनी कर दी है।

आज इन कानूनों को ताक में रखकर लिंग परीक्षण कराना एक आम बात बन गई है। स्त्री चाहे ग्रामीण हो या नगरीय, शिक्षित हो या अशिक्षित सभी में अल्ट्रासाउण्ड के माध्यम से लिंग की जाँच की जिज्ञासा बनी रहती है और जब भ्रूण लिंग परीक्षण के द्वारा ज्ञात होता है कि गर्भस्थ शिशुकन्या है तब

तुरन्त ही उसका गर्भपात (हत्या) करा दिया जाता है। समाज में निरन्तर ऐसी अमानवीय घटनाएँ घट रही है। हमारे मानस पटल पर ऐसे अनेक प्रष्न आये कि ऐसा क्यों होता है ? क्या लडकी होना पाप है? वे कौन सी परिस्थितियाँ या मजबूरियाँ हैं जिनके तहत एक अबोध अजन्मी कन्या का वध माँ के गर्भ में ही करा दिया जाता है।

आज हम भले ही 21वीं शताब्दी में जी रहे हैं परन्तु जब समाज में कन्या का अस्तिव ही मिट जायेगा तब इस समाज को, इस सभ्यता और संस्कृति को आगे बढ़ाने के लिए किसे लायेंगें? इन्हीं सभी प्रष्नों को दृष्टि में रखते हुए इस शोध में उत्तर देने का लघु प्रयास किया गया है।

समाज के दो अभिन्न अंग हैं– नर और नारी। इन दोनों के बिना समाज अपूर्ण है। अंग रूपी समाज को दोनों मिलकर पूर्ण बनाते हैं। इस अटूट सत्य के बावजूद समाज में पुरुष का अस्तित्व तो है, परन्तु औरत की विड़म्बना यह है कि जिस समाज को सम्पूर्ण बनाने में वह आदमी को बराबर का सहयोग देती है, उसी समाज में उसका कोई अस्तिव नहीं हैं क्योंकि हमारा समाज पुरुष– प्रधान समाज है जहाँ पुरुषों का बर्चस्व है।

सृजनशीलता, बौद्धिक छटपटाहट का सुपरिणाम होती है। समाज का अभिन्न अंग होने के कारण दिन–प्रतिदिन घटित होने वाली घटनाएँ, दुर्घटनाएँ असंगतियाँ–विसंगतियाँ प्रायः विचारशील मस्तिष्क को हर्ष व विषाद के बीच दोलन की तरह झूलती रहती हैं। किसी विशिष्ट कर मन को रंजित करता है तो दुर्घटना, अंसगति–विसंगति के दृश्य विषाद के गहरे तल तक ले जाकर मस्तिष्क को झकझोरतें हुए हृदय को विर्दीण कर मन में खिन्नता उत्पन्न करते हैं। दैनिक जीवन में समाहित से समस्त बिन्दु और सम्बन्धित उपादान बौद्धिक छटपटाहट पैदा करते हैं। परिणामस्वरूप सृजन को दशा मिलती है। जब सृष्टा ही संहार करते देखा अथवा जब अजन्में शिशु को मैंने जन्म से पहले ही मरते देखा तो मेरा हृदय चीत्कार उठा, मस्तिष्क सोचने पर विवश हो गया कि क्यों

इन मासूम, नन्हीं जानों को इनके जन्म लेने के अधिकार से वंचित किया जा रहा है ?

अचानक जब किसी अजन्में शिशु की हत्या की खबर सुनने में भी मिलती है, खासतौर से जबकि भ्रूण लिंग परीक्षण के बाद प्रमाणित होने पर कि गर्भस्थ भ्रूण कन्या है और उसका गर्भपात करा दिया गया तो न बरबस ही उनकी इस अमानवीय मृत्यु पर सोचने और शोक करने लगता है। किसी भी संवेदनीय और मानवीय विचार वाले व्यक्ति के मन में शिशुओं की जन्म से पहले मौत को देखकर विभिन्न प्रकार की कल्पनाएँ उठना स्वाभाविक रूप से तरह तरह के भाव उठें, सहसा हमें वह गीत याद आता है एक छात्रा ने करौली महाविद्यालय में कन्या हत्या पर एक कविता सुनाई, वह कविता आज भी मेरे मानसपटल पर अंकित है और उस कविता की पंक्तियाँ आज भी हमारे ह्रदय तंत्रिका को झकझोरती रहती है। वह कविता निम्न प्रकार है–

''चाहे मुझको प्यार न देना।
चाहे तनिक दुलार न देना।
कर पाओ तो इतना करना।
जन्म से पहले मार न देना।
मैं बेटी हूँ , मुझको भी है जीने का अधिकार।
मैया जन्म से पहले मत मार, बाबुल जन्म से पहले मत मार।
मेरा दोष बताओं मुझको क्यों बेबात सताओ मुझको।
मैं भी अंश तुम्हारा ही हूँ तजकर फेंक न जाओ मुझको।
जीने का जो हक दे दो तुम, देख लूँ ये संसार।
थोडी नजर बदलकर देखों, संग समय के चलकर देखो।
बेटी से नाम चलेगा, ठहरो जरा संभलकर देखो।
चौथेपन की लाठी बन दूंगी दृढ आधार।
जब मैं आँगन में डोलूँगी, मिश्री सी बोली बोलूँगी।
सेवा, करुणा, प्यार, तपस्या के नूतन द्वार खोलूँगी।
दोनों कुल के नाम की खातिर जन्म न दूँगी बार।''

सहज ही मन में बात आयी कि इन अजन्में शिशुओं के विषय में कुछ बात उठायी जाये। शास्त्रों में नारी की महत्ता और उसकी गरिमा का वर्णन करते हुए कहा गया है कि नारी एक विधा, श्रद्धा, पवित्रता, कला और वो सभी कुछ है, जो इस संसार में सर्वश्रेष्ठ रूप में दृष्टिगोचर होता है, नारी मूर्तिमान, कामधेनू, अन्नपूर्णा, सिद्ध ऋषि और वो सभी कुछ है जो मानव प्रणाली के समस्त अभावों, कष्टों और संकटों के निवारण करने में समर्थ है यदि उसे श्रद्धाशक्ति सद्भावना से सींचा जाए तो यह सोमलता विश्व के कण–कण को स्वर्णीय परिस्थितियों से ओत–प्रोत कर सकती है।

भगवान वेदव्यास ने नारी को उक्त इक्कीस नामों से सम्बोधित करते हुए गुणगान किया है और कहा है –

''गंगासमः तीर्थ नास्ति, नास्ति विष्णुसमः प्रभुः।
नास्ति शम्भूसमः पूज्यो, नास्ति मातृसमो गुरु।।''[7]

अर्थात् गंगा के समान कोई तीर्थ नहीं है, विष्णु के समान कोई भगवान नहीं है और शिव के समान कोई पूजनीय नहीं तथा वात्सल्य स्रोतस्विनी मातृहृदय नारी के बराबर कोई गुरु नहीं, जो इस लोक और परलोक के कल्याण का मार्ग प्रषस्त करे।

कहा जाता है कि सृष्टि ने रचयिता दी है। प्रथम बह्मा जी और उसके बाद हम सबको जन्म देने वाली माँ अर्थात् नारी। इसलिए माँ के बारे में कहा जाता है कि 'जननीजन्मभूमिश्चस्वर्गदपिगरीयसी' अर्थात् जन्म देने वाली माँ तथा जन्मभूमि का स्थान स्वर्ग से बढ़कर होता है। हर नारी किसी की माँ, किसी की बहन तथा किसी की बेटी होती है किन्तु नारी, नारी की क्या होती है? और कुछ भले हो पर नारी ही नारी की दुश्मन होती है क्योंकि मादा भ्रूण– हत्या का जो वीभत्स दौर चल रहा है उससे तो यही अनुमान लगाया जा सकता है कि नारी ही नारी की दुश्मन है। इस घृणित कृत्य में पुरुष उनका साथ देते हैं। भारतीय समाज की यह विड़म्बना है कि यहाँ उन समस्त उच्च मानवीय मूल्यों एवं मान्यताओं की मुक्त कंठ से प्रशंसा की जाती है, जिसमें मानव

(पुरुष एवं स्त्रियों, बालक तथा बालिकाओं दोनों की) गरिमा का वर्णन है या उनकी गरिमा को बनाये रखने के लिए धार्मिक, सांस्कृतिक एवं शास्त्रीय निर्देश दिए गए हैं। इसके विपरीत दूसरी ओर सैद्धान्तिक रूप से स्वीकृत तथा मानवीय और सामाजिक रूप से स्वीकृत समस्त मूल्यों एवं मान्यताओं का खुलकर उजागर होना है। जब हम एक ओर तो यह कहते हैं कि भारतीय समाज में स्त्रियों को देवी का स्थान प्राप्त है तथा उनकी पूजा की जाती है। ठीक वहीं और बिल्कुल विपरीत हम यह पाते हैं कि बालिकाएँ भ्रूण लिंग परीक्षण का शिकार बन रही हैं। सिद्धांत एवं वास्तविकता के बीच की दूरी इतनी अधिक तथा भयावह है जिसको देखकर यह लगता है कि बालिकाओं को लड़कों के समान अधिकार की बात में कितना छलावा छिपा है।

एत्नियासेन्टोसिस व अल्ट्रासाउण्ड जैसी तकनीकों ने जहाँ गर्भ में ही भ्रूण के लिंग परीक्षण को संभव बनाया है वहीं ये तकनीकें कन्या भ्रूणों के लिए अभिशाप बन गई हैं। दरअसल इन तकनीकों का विकास पेट में पलते भ्रूणों की शारीरिक विकृतियों और बीमारियों का पता लगाने के लिए हुआ था लेकिन दुरुपयोग अब भ्रूणों के लिंग परीक्षण में होने लगा है। पेट में पलते भ्रूण का लिंग जानकर तथा मादा भ्रूण होने की स्थिति में गभ्रपात कराने की घटनाएँ बड़ें पैमाने पर होने लगी है।

लिंग परीक्षण की आधुनिक वैज्ञानिक पद्धतियों द्वारा भ्रूण का पता लगाकर लड़की की स्थिति में अधिकांश मामलों में गर्भपात की बढ़ती संख्या के विरूद्ध नारी संगठनों द्वारा व्यापक स्तर पर आन्दोलन छेड़ा गया। लड़कियों के प्रति इस जाँच के दुरुपयोग को रोकने के लिए संसद के पिछले सत्र में इस सम्बन्ध में एक विधेयक पेश किया गया। क्या इस विधेयक के कानून बन जाने पर पूर्ण रूप से दुरुपयोग रूक पाया है या रूक पाएगा? क्या बालिका वध' तथा मादा भ्रूण हत्या को मात्र कानून बना देने से रोका जा सकता है? अभी तक ऐसा कोई मामला प्रकाश में नही आया है जिसमें विवाह के बाद गर्भस्थ शिशुनर भ्रूण को पहले ही मार दिया गया हो। शायद इसलिए विश्व भर में

औरतों की जन्म दर संख्या में निरन्तर भारी गिरावट देखने में आ रही है। इस लिंगानुपात असन्तुलन को मात्र कानून बना देने या आन्दोलन करने से नहीं समाप्त किया जा सकता है, आवश्यकता है कि हमें न सिर्फ सैद्धान्तिक तौर पर अपितु व्यावहारिक तौर पर भी प्रयास करने होंगे।

नारियों को यह अधिकार प्राप्त है कि वह तय कर सकें कि उनको कितने बच्चे चाहिए, कब चाहिए और कितने पुत्र/पुत्रियाँ चाहिए। जमीनी सच्चाई यह है कि नारियों को उनके अपने शरीर के नियन्त्रण पर अधिकार वास्तविकता में नही है।

स्त्री कन्या वध की घटनाएँ कोई आज की नई घटनाएँ नही हैं, पहले भी होती रही हैं परन्तु अंतर इतना है कि आज के चिकित्सकीय तथा शल्य चिकित्सा की आधुनिक तकनीकों एवं प्रौद्योगिकी के विकास के साथ कुछ नई प्रवृत्तियाँ उत्पन्न हुई हैं और एक नई बुरी संस्कृति का जन्म हुआ है। इस संस्कृति के कारण बालिकाओं के जन्म लेने के अधिकार पर रोक लग रही है। चिकित्सा विज्ञान में आई नई प्रौद्योगिकी नारियों के लिए अभिशाप के रूप में भी सिद्ध हुई है और जन्म पूर्व ही गर्भस्थ शिशु का लिंग पता कर उससे छुटकारा पाने की काली करतूत पनपी है। पश्चिमी देशों में इन आधुनिक तकनीकों का विकास मानव समुदाय की बेहतरी के लिए हुआ था जिसके तहत माँ के गर्भ में पनपने वाले शिशु की असमान्य एवं असाधारण स्थितियों का पता चल सकें। परन्तु हमारे देश में आज इसका इस्तेमाल मुख्यतः बालिका भ्रूण के विरूद्ध किया जाता है। समस्या की बर्बरता को देखते हुए कुछ प्रश्न उठते हैं, जिन पर विचार करना आवश्यक है।

मादा भ्रूण–हत्या के यक्ष प्रश्न–

यक्ष प्रश्न निम्नवत है–

1. क्या मादा भ्रूण–हत्या परिवार को सन्तुलित करने का तरीका है?
2. क्या यह जनसंख्या नियन्त्रण का उचित माध्यम है ?

3. क्या कन्याओं का जन्म के बाद भोगने से अच्छा है कि जन्म से पहले ही मर जाना ?
4. क्या यह आज हमारी सामाजिक आवश्यकता है जिसे हमें स्वीकार कर लेने चाहिए ?
5. क्या कानून बना देने मात्र से ही समस्या का सामाधान सम्भव होगा ?
6. क्या कोई नर भ्रूण–हत्या भी करता है ?
7. क्या समाज इस समस्या पर आँखें मूंदे रहेगा और यदि नहीं तो इस समस्या के निदान या निराकरण के लिए क्या करना होगा ?

इन समस्त प्रश्नों पर विचार करते समय यह भी विचारणीय है कि मादा भ्रूण हत्या को रोकने के लिए किए गये प्रयास तथा अनेक भाषण एवं आश्वासन धरातल की वास्तविकताओं से दूर क्यों है? वास्तविकता तो यह है कि बालिकाएँ भेदभाव का शिकार इसलिए हैं कि वे बालिकाएँ है और उन्हें एक बोझ समझा जाता है।

समस्या का समाजशास्त्रीय पक्ष–

भारतीय धार्मिक ग्रन्थ नारियों का कितना भी गुणगान करें, कितनी बार यह कहें कि ''नारियों को भारतीय समाज में उच्च सामाजिक स्थान प्राप्त था, यह सब एक कल्पना मात्र लगता है। सत्य तो यह है कि भारतीय समाज में नारियों की स्थिति सदैव से ही पुरुषों की अपेक्षा निचले स्तर की रही है। हमारे शास्त्रों में अनेकोनेक दृष्टांत उपलब्ध है जिनमें यह दर्शाया गया है कि पुत्र का स्थान बड़ा है।''[8] और पुत्री का छोटा, जिसे हमारे समाज में स्वीकार किया है। यही कारण है कि पुत्र को वर्चस्व प्राप्त है और पुत्री को निम्नवत् स्थिति। इस पुत्र–पुत्री पहेली के पीछे छिपा है मादा भ्रूण हत्या का रहस्य, अतः उसका समाजिक पक्ष प्रकाश में लाना आवश्यक है। पुत्र–पुत्री की आशा भारतीय समाज और उसमें भी विशेषतः हिन्दुओं में ही सबसे अधिक होती है। इसके अनेक धार्मिक, सामाजिक एवं आर्थिक कारण हैं। उदाहरणार्थ– हिन्दू धर्मानुसार शास्त्रों में यह बताया गया है कि पिता को मरणोपरान्त मोक्ष तभी मिलेगा

जबकि उसकी कपाल क्रिया उसका पुत्र करे। इसका तात्पर्य यह है कि जो पुत्र विहीन है वह मोक्ष–विहीन होंगे, अतः पुत्र प्राप्ति अनिवार्य है। आज दाह संस्कार बेटियां भी कर रही है–

"जुग बदल्यो अब सोच बदल दो बेटो मोक्ष दिलावे
अरथी ने कांधो दे बेट्यां दाह करम कर आवै
तिया का ये फूल चुण के हरिद्वार ले जावै
नैण हिया गंगा नै थाम्यां गरुड़ प्राण बचवावै
सरयू अर गया में तरपण पिंड दान कर आवै
बेट्यां संस्कृति को सार, बचाओ संसार
कोखां में मत मार"

दहेज की समस्या के चलते हुए भी पुत्री अनचाही हो गई है, उसे बोझ समझा जाता है और बहुधा यह माना जाता है कि पुत्री के लालन–पालन, उसकी शिक्षा–दीक्षा तथा उसके विवाह आदि पर खर्च किया धन बेकार चला जाता है क्योंकि वह पराये घर चली जाती है। अतः पुत्री अनेक प्रकार की निरन्तर चलने वाली देयता है। इस वस्तुस्थिति के बने रहने के कारण पुत्री जन्म को बहुत से लोग एक आई हुई मुसीबत के रूप में देखते हैं।

गर्भपात कानून की विशेषताएँ–

गर्भ गिरा लेने से ही तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या को रोका जा सकता है। इसलिए गर्भ गिराने का कानून पास हो चुका है और हर स्त्री गर्भपात केन्द्रों में जाकर अपना गर्भ गिरवा सकती है। गर्भ गिराने को अब बहुत आसान और हानिरहित बना लिया है। गर्भपात की विशेषताएँ निम्न है–

1. गर्भ रोकने वाली गोलियाँ वर्षों तक खाते रहने से स्त्रियों को कई रोग हो जाते हैं। लूप से स्त्रियों को कैंसर, गर्भाशय से रक्तस्त्राव और दूसरे अनेक रोग हो जाते हैं। इसलिए भी आजकल गर्भ गिराने का प्रचलन बहुत बढ़ गया है।

2. स्टेलाईजेषन नसबन्दी की विधि भी गर्भ से बचने के लिए बहुत अच्छी है। इस विधि से बाद में स्त्री को बच्चों की जरुरत हो तो गर्भ नही हों सकता। कई बार किसी स्त्री के सब लोग या दुर्घटना से मर जाते हैं तो ऐसी अवस्था में स्त्री की इच्छा होती है कि उसको गर्भ हो जाए परन्तु इस विधि से नसबन्दी हो जाने के कारण स्त्री को गर्भ नहीं हो सकता और नही वह पुरुष गर्भ ठहराने के योग्य होता है। गर्भ गिरा लेने के बाद स्त्री को जब भी वह चाहे गर्भ ठहर सकता है।

3. एक सादा सा उपकरण रसक्शन पम्प बनाया गया है जिससे स्त्री के गर्भ का तरल निकालकर स्त्री का रक्त बहने या संक्रमण होने का डर नहीं रहता है। अब बड़े–बड़े डॉक्टर तीन महीने का गर्भ होने से पहले ही स्त्री का गर्भ गिरा देते हैं, जिससे स्त्री को कोई हानि नहीं होती है। एक अनजाने शिशु को जन्म देने से तो बेहतर है कि उसे नष्ट कर दिया जाए क्योंकि समाज उसे आगे जीने नहीं देगा।

गर्भपात की विशेषताओं के वर्णन के पश्चात् गर्भपात करने की प्रक्रिया को जानने से पहले यह जानना जरूरी है कि गर्भ किसे कहते हैं? यह कैसे धारण होता है ? और यह कैसे भ्रूण के रूप में परिवर्तित हो जाता है। संक्षेप में, गर्भधारण की प्रक्रिया इस प्रकार है।

गर्भपात–कानून में छूट–

सन् 1972 में संसद में गर्भपात–कानून पारित हुआ था। इस कानून का उद्देश्य महिलाओं को अवांछित गर्भ गिराने की स्वतंत्रता देना था, लेकिन इस कानून का खुलकर उपयोग मादा भ्रूण–हत्या के लिए हुआ। जहाँ गर्भपात कानूनन अपराध है, वहाँ कुछ नये तरीके गर्भपात के लिए अख्तियार किये जा रहे हैं। इन तरीकों में आजकल एक तरीका राजस्थानी संस्कारों की जड़ों में पहुँचना भी है। राजस्थानी संस्कारों मे 'मनुस्मृति' के अनुसार पहला संस्कार गर्भाधान संस्कार है। इस संस्कार में यह बताया गया है कि किस दिन, किस समय पुरुष और स्त्री का संयोग होगा तो गर्भस्थ शिशुबालक होगा या

बालिका।'' मनुस्मृति के अनुसार दूसरा संस्कार पुंसवन संस्कार है। इस संस्कार की जरुरत तब पड़ती है, जब यह पता न हो कि गर्भस्थ शिशुबालक है या बालिका। अतः संस्कार भी ढूँढे जा रहे हैं तो सिर्फ इसलिए ताकि मनचाही संतान पैदा हो सके। इसलिए लिंग निर्धारण परीक्षण को प्रतिबंधित करने वाला कानून पिछले गत वर्षों में संसद में पारित किया गया है। इस कानून के तहत ऐसे परीक्षण करवाने वाले व्यक्ति को कारावास तथा जुर्माना दोनों ही सजा का प्रावधान है, परन्तु यह कानून व्यावहारिक न होकर सैद्धांतिक बनकर रह गया है।

केन्द्रीय सरकार ने भ्रूण–परीक्षण के बढ़ते हुए दुरुपयोग को देखते हुए भ्रूण की लिंग जाँच को अवैध घोषित कर दिया है। गर्भस्थ शिशु की लिंग जाँच के लिए अल्ट्रासोनोग्राफी, एम्नियोसेंटेसिस टेस्ट इत्यादि जैसे–प्रसव पूर्व निदान तकनीक का प्रयोग करना और भ्रूण के लिंग संबंधी जानकारी देना 01जनवरी 1996 से गैर–कानूनी है।

लिंग परीक्षण की इजाजत सरकारी अस्पतालों तथा निजी क्लीनिकों को दे दी है। लिंग–परीक्षण प्रतिबंध विधेयक में अल्ट्रासाउंड या अन्य वैज्ञानिक तरीकों से गर्भस्थ शिशु का लिंग जानना उचित नहीं है। ऐसा करके हम समाज में औरतों के सम्मान एवं स्थान को अपमानित करते हैं, क्योंकि परीक्षण के बाद मादा भ्रूण ज्ञात होने पर मादा भ्रूण–हत्या का फैसला किया जाता है। इस कानून का उल्लंघन करने पर प्रसव पूर्व निदान तकनीक अधिनियम 1996 के तहत दण्ड का प्रावधान है। प्रसव पूर्व निदान तकनीक का प्रयोग केवल उल्लंघन करने वाले को सजा के तौर पर सरकार ने 1000 से 5000 रू. अथवा एक से पाँच साल की कैद का प्रावधान है अथवा उनका लाइसेंस निरस्त कर देने का प्रावधान है, सरकार ने अपने अध्यादेश में निम्न गर्भस्थ बीमारियों के अंतर्गत भ्रूण–परीक्षण की छूट दी है।

भ्रूण–परीक्षण एवं भ्रूण–हत्या की आवश्यकता–

अब वो जमाना गया जब प्रसव के दौरान अनजानी जटिलताओं के कारण माँ तथा शिशु या दोनों ही जान से हाथ धो बैठते थे। आधुनिक चिकित्सा ने अब ऐसी सुविधाएँ उपलब्ध करा दी हैं कि समय रहते विकारग्रस्त शिशु का पता लगाया जा सके और उसका उपचार भी किया जा सकता है। दुर्भाग्य से ऐसी सुविधा का हमारे देश में खुले रूप से दुरुपयोग हो रहा है। इस उत्तम परीक्षण विधि को लिंग जाँच का माध्यम बना लिया गया है। आज हमारे देश में अल्ट्रासाउण्ड द्वारा गर्भस्थ भ्रूण का लिंग परीक्षण करवाना आम बात है। हांलाकि यह भ्रूण, परीक्षण करवाना गैर कानूनी है फिर भी लोग इस तरह मादा भ्रूण का पता चलने पर उस भ्रूण को नष्ट करवा देते हैं, बहुत कम लोग इसका प्रयोग शिशु की शारीरिक व मानसिक स्थिति एवं विकास जानने के लिए करते है।

एम्नियोसेन्टेसिस और ऐसी कई दूसरी तकनीकों द्वारा भ्रूण में पनपने वाली बीमारियों का पता लगाया जा सकता है और समय रहते गर्भ में ही उनका उपचार भी किया जा सकता है यदि माता पिता दोनों में एक का दोषपूर्ण जीन हो तो उन्हें एम्नियोसेन्टेसिस तकनीक का सहारा अवश्य लेना चाहिए। एम्नियोसेन्टसिस तक से उन कोशिकाओं का अध्ययन किया जाता है जो गर्भ से भ्रूण के चारों ओर पाये जाने वाले एम्नियोटिक फ्लूड में भ्रूण द्वारा छोड़ी जाती है। इस फ्लूडटेस्ट से गर्भस्थ की विकृतियों का पता चला जाता है।

यदि गर्भस्थ शिशु ऐसी वंशाणु विकृतियों से ग्रसित है जो जन्म के बाद ठीक नहीं हो सकती तो ऐसी अवस्था में गर्भपात कराना ही श्रेष्ठ होता है अन्यथा विकलांग शिशु का जन्म एक समस्या बन जाता है।

अल्ट्रासोनोग्राफी, एम्नियोसेन्टेसिस, कोरिओनिक विल्स, प्री इम्लान्टेशन स्टेजडायग्नासिस सेकड पोलर बॉडी टेस्ट, 3–डी इकोग्राम इत्यादि प्रणालियों (विधियों) द्वारा विभिन्न बीमारियों को गर्भास्था में ही पहचान कर ठीक किया जा

सकता है। भ्रूण की बीमारी जन्म के बाद भी लाईलाज है तो उस भ्रूण का गर्भपात करना ही उचित है।

हमारे देश में जहाँ हर वर्ष लाखों नाजायज गर्भपात होते हैं, और जन्मगत रोगों की ओर कम ध्यान दिया जाता है, वहाँ आधुनिक तकनीकों की मदद से भ्रूण के विकारों का पता लगाकर गर्भपात कराने की दशा में माँ–बाप को कम मानसिक तनाव का सामना करना पड़ेगा।

आज की बालिका कल की स्त्री है। क्या स्त्री यानी आधी दुनिया को समाज की मुख्यधारा से अलग रखकर देश का समुचित विकास सम्भव है? क्या बिना उनके सहयोग से एक मजबूत राष्ट्र की कल्पना की जा सकती है? उपेक्षित, शोषित, प्रताड़ित, अपमानित और अशिक्षित बालिकाओं से हम कैसे उपेक्षा कर सकते हैं कि वे बड़ी होकर समाज और राष्ट्र की उन्नति व समृद्धि में अपना योगदान करेंगी? अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि समाज बालिकाओं का महत्त्व समझे और पारम्परिक सामाजिक रूढ़ियों से मुक्त होकर बालिकाओं की देखभाल व उनकी प्रगति के लिए ईमानदारी से प्रयास करें।"[9] पुरुषों पर जिम्मेदारी ज्यादा है क्योंकि पुरुषों की मानसिकता के चलते स्त्रियाँ वह सम्मान और दर्जा नहीं पा सकी हैं जिनकी वह वास्तव में हकदार हैं। आज हमारे देश में लिंग भेद का जो भीषण दौर चल रहा है उसे जितनी शीघ्रता से समाप्त किया जाए उतना ही अच्छा है। जरुरत है तो बस बेटियों के प्रति अपनी मानसिकता बदलने की इस तथ्य को हम आज के दौर की कविता द्वारा स्पष्ट कर रहे हैं–

मीणा जनजाति में आधिकांशतः करौली क्षेत्र लड़की को देवी के रूप में माना जाता है। आज की एक कविता में ज्वलंत प्रश्नों की बोछार देखिए–

कलियों को ही कुचलोगे तो फूल कहाँ से पाओगे।
करते रहे कन्या भ्रूण–हत्या तो दुल्हन कहाँ से लाओगे।
नवरात्रि में चरण पूजते हो–कन्याओ के।
देवी की हत्या करने का पाप कहाँ छुपाओगे।

अनजानी आकांक्षाओं के बादल से क्यों डरते हो।

माता–पिता सोचे वंश बेल भी हमारी कोख से ही विकसित होगी। ऐसे तो समूची संस्कृति ही विनाश के कगार पर पहुँच जायेगी–

"वंश बेल ही सूख गयी तो आगे किसे बढ़ाओगे।
बेटा–बेटी हैं समान फूलों में रंग सुगंध बने।
पशुता पूर्ण कृत्य का कब तक राग बेसुरा गाओगे।
अभी वक्त है समझदार को एक इशारा ही काफी है।
वरना आगे चलकर फिर सिर धुन–धुन कर पछताओगे।
नन्हीं जान गर्भ में ही यूँ कब तक मारी जायेगी।
आखिर अपनी बुद्धि पर खुद तरस कभी तो खाओगे।"

अभी भी समय है संभल जाने का पुत्र–पुत्री के विभेद को समाप्त करने का पुत्र व पुत्री को समान समझा जाए अन्यथा सामाजिक विकृतियों के अतिरिक्त कुछ भी भारतीय समाज के भाग्य में नहीं बचेगा। समय रहते हम सचेत नहीं हुए तो बालिकाओं में प्रतिशोध की भावना विकसित होने लगेगी। लड़कों के बीच अहम के लिए जबर्दस्त टकराव हो सकता है। देश में टकराव की ऐसी स्थिति से प्रगति अवरुद्ध हो सकती है और आडंबरधारी धर्मगुरु द्वारा स्थापित समाजिक प्रणाली ताश के पत्ते के घर की तरह धराशायी की परिकल्पना को साकार बना सकती है। हमें नई सदी में प्रगति व खुशहाली की परिकल्पना को साकार रूप देना चाहते हैं तो लड़के व लड़की के प्रति निष्ठुर मनोवृत्ति त्याग कर दोनों को समान मानने की मनोवृत्ति का विकास करना वांछित है।

जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ देवताओं का वास होता है। इस महान् धारणा वाले भारतवर्ष में कन्या के जन्म लेने से पूर्व ही लिंग परीक्षण द्वारा गर्भपात कराके हत्या कर देना यह मानवीय कृत्य नहीं है।"[10] हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारी बेटी भविष्य में रानी लक्ष्मीबाई, श्रीमती इन्दिरा गाँधी,

सरोजनी नायडू, किरण बेदी, लता मंगेशकर जैसी बन सकती हैं। हमारे कुल का भी नाम रोशन कर सकती है–

''आशा अरु लता कै जैड़ो
अेक दन म्हूँ भी गाऊँ
साक्षी सिंधु जसां ही म्हूँ भी
जग में नावं कमाऊँ।''

हम तो उपहार हैं। हमें सहेज कर रखो–

''बेट्यां धरत्यां रो उपहार,
यां सूं महकै छै घर–संसार
मत करो रै गरभ में वार''

अनचाहे माता गर्भ–

गर्भपात कराने में सामाजिक परिस्थितियाँ भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। कोई स्वेच्छा से गर्भपात करवाती है तो कोई मजबूरी के कारण। समाज का डर हर इन्सान के मन मस्तिष्क में इस कदर बैठ गया है कि वह इससे परे सोचने की हिमाकत नहीं कर सकता है। इसलिए ज्यादातर कुँवारी माँ, विधवा एवं अधिक आयु की नारियों (जो गर्भपात ठहरने के योग्य है) ऐसी माताएँ गर्भ को गिरा देना ज्यादा उचित समझती हैं। अगर वह ऐसा न करे तो उन्हें सामाजिक प्रताड़ना का शिकार होना पड़ेगा क्योंकि हमारा समाज पुरुष प्रधान समाज है। जन्म से लेकर मृत्यु तक बच्चे को पिता के नाम से जाना जाता है। प्रकृति ने नारी को कोख दी है माँ बनने के लिये नौ महीनें तक बच्चे को अपने खून से सींचने के लिए परन्तु वो अपनी भूमिका अदा करने पर मजबूर हो गई है। कुछ सामाजिक परिस्थितियों के कारण महिलायएँ गर्भधारण करने की अपेक्षा उसे गर्भपात करा देना ज्यादा उचित समझती है वो निम्न है–

(अ) पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव– करौली क्षेत्र में होने वाले कुल गर्भपातों में लगभग एक तिहाई अवैध होते हैं। जैसे–जैसे शिक्षा का प्रसार हुआ और स्त्रियाँ घर से बाहर और रोजमर्रा के काम के लिए निकलने लगी,

वैसे–वैसे ये नई बीमारी जोर पकड़ने लगी। ऐसा नहीं है कि करौली क्षेत्र के गाँवों एवं कस्बों में रहने वाली स्त्रियाँ इस बुराई से दूर हैं। यह बुराई लगभग समान रूप से ही शिक्षित व अशिक्षित दोनों वर्गों में पाई जाती है।

कुँवारे मातृत्त्व के सन्दर्भ में उचित शब्द का प्रयोग करना ही अनुचित है। आज पाश्चात्य संस्कृति की अंधा–धुंध दौड में हमारे फैशन परस्त विचारक अपने तर्क एवं दलीलों द्वारा नारी के प्राकृतिक अधिकारों की दुहाई देते हुए कुँवारे मातृत्त्व के औचित्य पर चाहे कितने ही नारे लगा लें किन्तु सच तो यह है कि इस प्रकार की आधुनिकता हमें आदिम युग की ओर ले जाएगी, जहाँ से हमनें मानव जाति की शुरुआत की थी। तब पारिवारिक और सामाजिक संरचना नहीं थी।

आज हम परिवार में रहते हैं और सामाजिक प्राणी होने के नाते उसके नियमों और मर्यादाओं से बंधे हैं। हमारे समाज में विवाह मात्र प्राणी शास्त्रीय आवश्यकता के रूप में ही स्वीकार नहीं किया गया है बल्कि इसे सामाजिक एवं आध्यात्मिक अभ्युत्थान प्रदान करने वाला स्तम्भ भी माना गया है। हमारे समाज में विवाह सिर्फ वैधानिक संविधान न होकर धार्मिक कृत्य भी है। विवाह संस्कार के द्वारा व्यक्ति की स्थिति में परिवर्तन होता है। इस परिवर्तन के द्वारा वह पूर्णता प्राप्त करता है। जहाँ व्यक्ति को यह पूर्णता प्राप्त नहीं होती है, उसका व्यक्तित्व अवरूद्ध हो जाता है।

हमारे परिवेश में कुँवारा मातृत्व एक प्रश्न चिह्न है, जो नाना प्रकार की सामाजिक एवं नैतिक समस्याओं को जन्म देने वाला है। स्त्री को कदम–कदम पर कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। उसके दुःख–सुख की साझेदारी करने वाला कोई नहीं रहता। सामाजिक एवं आर्थिक रूप से भी वो असुरक्षित अनुभव करती है। कुँवारेपन में जन्मे बच्चे को भी जिन परेशानियों का सामना करना पड़ता है उन पर विचार करें तो यही पायेंगे कि ऐसे बच्चे को घोर सामाजिक उपेक्षाओं का शिकार होना पड़ता है। बच्चे को माँ के वात्सल्य भाव के अतिरिक्त पिता के स्नेह और संरक्षण की भी आवश्यकता होती है। कैसी

विडम्बना है कि एक कुँवारी स्त्री अपनी मर्जी से माँ बनती है तो उसको तरह–तरह से प्रताड़ित किया जाता है और यदि कोई व्याहता माँ नही बनती या नहीं बनना चाहती तो उसे भी व्यंग्य बाणों का सामना करना पड़ता है।''[11]

करौली क्षेत्र में होने वाले गर्भपातों का एक अन्य प्रमुख कारण पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण भी है। कुँवारी लड़कियाँ के गर्भधारण करने का मामला तेजी से बढ़ता जा रहा है। जयपुर में राजधानी सहित अन्य महानगरों में ऐसी लड़कियों की संख्या तेजी से बढ़ती जा रही है। एक गैर सरकारी संगठनों के आँकड़ों के अनुसार पिछले तीन–चार वर्षों में विभिन्न नर्सिंग होम में होने वाले गर्भपातों में चालीस प्रतिशत गर्भपात कुंवारी लड़कियों द्वारा करवाए गए हैं।

(आ) सीमित परिवार–

''गर्भनिरोधक साधनों की असफलता के कारण उस गर्भ को अनचाहे गर्भ की संज्ञा देकर गर्भपात करवा दिया जाता है। कई बार अन्य कारणों से भी गर्भपात करवाए जाते हैं जैसे– दो बच्चे हो गए हो और दम्पति को आगे बच्चे की इच्छा नहीं हो या फिर शादी के बाद पति–पत्नी दोनों बेरोजगार हों या आय का कोई स्थायी साधन न हो। ऐसी स्थिति में विचार विमर्श कर पति पत्नी गर्भपात की ओर प्रवृत्त हो जाते हैं।

(इ) बाल–विवाह–

गर्भपात करने वाले कारणों में से प्रमुख कारण बाल विवाह है। मीणा जनजाति में कम उम्र में शादी होने से या तो वे जल्द ही माँ बन जाती है या गर्भपात करवा देती हैं। छोटी उम्र की विवाहित स्त्रियाँ कितना जोखिम भरा कदम उठाती हैं इसका उन्हें अनुमान तक नहीं होता है। उनके द्वारा उठाया गया कदम भविष्य में भी उनके लिए घातक सिद्ध हो सकता है। इसके परिणाम कितने अत्यन्त गम्भीर हो सकते हैं।''[12]

करौली क्षेत्र की मीणा जनजाति में भ्रूण हत्यायें और महिलाओं का जीवन बड़ा विचारणीय है। उसका मुख्य कारण है अभी भी शिक्षा के क्षेत्र में जागृति व ''चेतना का अभाव'' है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. हाड़ौती लोकगीतों में संस्कृति–डॉ. लीला मोदी, पृ. 42।
2. वही पृ. 49।
3. वही पृ. 49।
4. वही पृ. 51।
5. मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य में नारी भावना– डॉ. उषा पाण्डेय,पृ. 47।
6. स्त्री विमर्श और सामाजिक आन्दोलन– डॉ. राजनारायण, पृ. 88।
7. वेदव्यास–गीता।
8. वोमेन्स राइड्स– ए.डी.वी.,पृ.36।
9. नारी शोषण– जयप्रकाश, पृ. 11।
10. स्त्री विमर्श और सामाजिक आन्दोलन– डॉ. राजनारायण, पृ. 128।
11. वही पृ. 11।
12. राष्ट्रीय महिला आयोग कुरूक्षेत्र– सुरेशलाल श्रीवास्तव, पृ. 37।

अध्याय–चतुर्थ

मीणा जनजाति कबिले में नारी के जन्म के बाद सामाजिक चेतना–

4.1 जन्म पर भेदभाव पूर्ण स्थिति।

4.2 नारी दुर्दशा के कारण।

4.3 जन्म के बाद मादा नवजात बच्ची की हत्या।

4.4 समानता की खोज, नारी एक स्वतंत्र व्यक्तित्त्व।

अध्याय–चतुर्थ

मीणा जनजाति कबिले में नारी के जन्म के बाद सामाजिक चेतना–

''यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवताः'' अर्थात् जहाँ नारी की पूजा होती है, वहाँ देवता निवास करते हैं, जैसा कि अध्ययन के आरंभ में ही इसका वर्णन किया गया है, परन्तु अध्ययन के बाद यह ज्ञात हुआ कि ऐसी युक्तियाँ केवल किताबों में ही सही हैं। वास्तविक जीवन में नारी को घृणा, तिरस्कार एवं अपमान के अलावा कुछ नहीं मिलता। इसका सर्वप्रमुख कारण महिलाएँ आर्थिक तौर पर और साथ ही साथ सामाजिक तौर पर भी पुरुषों पर निर्भर रहती हैं, जिससे समाज में स्त्रियों की स्थिति पुरुषों से दोयम दर्जे की मानी जाती है।

दहेज प्रथा के कारण तो लड़कियों को बोझ ही समझा जाने लगा है। इसी प्रथा के कारण लड़कों के जन्म पर खुशियाँ मनाई जाती हैं, जबकि लड़की के जन्म पर मातम छा जाता है। लड़की के जन्म के पश्चात् ही माँ–बाप लड़कियों से मुक्ति पाने के उपाय सोचने लगते हैं। सर्वसुलभ उपाय है नवजात बच्ची की हत्या।

जन्म के बाद नवजात बच्ची की हत्या–

जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने की दृष्टि से और गर्भपात को लेकर महिलाओं के प्रति कानून का उदारतापूर्ण दृष्टिकोण के कारण गर्भपात के रूप में एक अन्य बुराई ने जन्म ले लिया है। एम्नियोसेन्टेसिस नामक तकनीक से गर्भवती महिलाओं को भ्रूण–हत्या ने स्त्री जाति के अस्तित्व को ही खतरे में डाल दिया है। कुछ मीणा जनजाति के परिवारों में जन्म के बाद मादा नवजात बच्ची की हत्या कर दी जाती है, इसका कारण वह लोग जो दूसरों के सामने झुकना नहीं चाहते हैं या आर्थिक तंगी। गर्भपात कराना या जन्म के बाद लड़की की हत्या कर देना अपराध दोनों ही है। माँ कभी नहीं चाहेगी कि गर्भ में पली हुई बच्ची का गर्भपात किया जाए या जन्म लेने के पश्चात उसे मार दिया जाए दोनों ही अमानवीय कृत्य है।

जन्म के बाद मादा नवजात की हत्या, गर्भपात, कानून एवं भ्रूण–लिंग परीक्षण कानून की कमियाँ इस प्रकार हैं–

1. कानून के प्रथम पैरा में दिया गया है कि यदि यह संभावना हो कि संतान अपंग या मानसिक रूप में विकृत होगी, तब उसका गर्भपात किया जा सकता है। 12वें हफ्ते अथवा 20वें हफ्ते के गर्भस्थ शिशु के अपंग होने अथवा मानसिक रूप से विकृत होने का परिणाम यंत्र अथवा भ्रूण परीक्षण विधि के द्वारा भ्रूण परीक्षण करके ही ज्ञात होता है चूँकि यह परीक्षण गर्भस्थ शिशु के प्रत्येक अंग का परीक्षण करता है। अतः इससे बच्चे का लिंग भी पता चल जाता है और कन्या भ्रूण होने पर उसका गर्भपात करा दिया जाता है और नाम होता है भ्रूण की अपंगता का। इस प्रकार डॉक्टर और मरीज दोनों ही कानून की अंधी आँखों में धूल झोंकते हैं।
2. कानून के दूसरे और तीसरे में जो कुछ कहा गया है वह तो बहुत ही विचारणीय एवं चिंतनीय है। कोई महिला यह कहे कि इसका गर्भ बलात्कार से ठहरा है या गर्भ निरोध के साधनों के विफल हो जाने से ठहरा है तो इस अवस्था में डॉक्टर क्या उनकी बात सच मानकर उसका गर्भपात कर देंगे, क्योंकि बलात्कार से कृत्रिम साधनों के विफल हो जाने से या फिर प्रणय–प्रसंग के परिणाम से गर्भ ठहरा है, इस अवस्था में यह कैसे निर्णय किया जा सकता है कि वास्तविकता क्या है, यह तो डॉक्टर को अच्छी विपदा में डालने वाली बात है। गर्भधारण हुआ है यहाँ तक तो ठीक है, लेकिन गर्भधारण में जबरदस्ती हुई, साधनों की विफलता हुई या राजी से हुआ, ये विकल्प तो बने रह सकते हैं, लेकिन डॉक्टर्स को इसकी तह तक पहुँचने में काफी समय लग सकता है। शायद तब तक वह इस विचार को ही बदल दें और वह इस तरह के गर्भपात के कार्य को न करें। शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की हानि होने की बात बार–बार आई है। गर्भधारण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके कारण महिला को शारीरिक एवं मानसिक कष्ट होना स्वाभाविक है। कानून के दूसरे तथा तीसरे पैरा में बार–बार मानसिक

तथा शारीरिक कष्टों से बचाने के लिए गर्भपात करने की इजाजत दी गई है। जबकि गर्भपात तो स्वयं ही शारीरिक कष्टों एवं मानसिक तनाव का जनक है।

प्रत्येक गर्भपात असुविधाजनक होता है। शरीर में भी गर्भधारण एक जोखिम है और जोखिम उठाये बिना सृष्टि–क्रम चलता ही नहीं है। जोखिम उठाने से निजात पाने का उपाय गर्भपात ही हो सकता है, यह बात नासमझ–समझ की हो सकती है। गर्भपात कराने के बाद महिला को कितनी शारीरिक परेशानी झेलनी पड़ती है यह तो वह स्वयं ही जान सकती है। अतः यह कानून का नियम कानून को ही काटने की बात कहता है। एक ओर शारीरिक कष्ट से बचाने के लिए गर्भपात की अनुमति देता है तो दूसरी ओर गर्भपात की विशेष परिस्थितियों में अनुमति देकर उसके लिए शारीरिक कष्ट की राह खुली छोड़ देता है।

3. कानून के चौथे और पाँचवें पैरा में यह बात कही गई है कि महिला के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को खतरा यदि आस–पास के वातावरण या निकट भविष्य में होने वाले वातावरण जन्य कष्ट से अपना बचाव कर सकती है। महिला को उस दूषित वातावरण से दूर हटाने की आवश्यकता नहीं है, हानिकारक वातावरण बना रह सकता है, उसको हटाने के अनिवार्यता की जिम्मेदारी कानून लेने को तैयार नहीं हैं। गर्भ गिराकर कष्ट से यदि मुक्ति प्राप्त होती है, तब कानून गर्भवती महिला की मदद कर सकता है।

यह ऐसी बात प्रतीत होती है जैसे–किसी बंद कमरे में कोई गर्भवती महिला गर्मी से परेशान हो रही हो, तब उसे कमरे से बाहर निकालने या खिड़कियाँ खोलने की बात न कहकर सीधा उसे यह कहना है कि तुम घबरा रही हो, इससे अच्छी बात यह हो सकती है कि तुम गर्भ के झंझट से ही मुक्त हो जाओ। गर्भपात करने से चाहे वह रक्तहीनता, श्वेतप्रदर, अनिद्रा, सूजन, गर्भाशय जैसी भयंकर बीमारियों से ग्रस्त रहे और उससे होने वाले

कष्ट शारीरिक कष्ट या मानसिक स्वास्थ्य को प्राणलेवा खतरे से इस कानून को कोई सरोकार नहीं है।

4. पैरा छः में कानून स्वयं यह स्वीकार कर चुका है कि गर्भपात से हानि होती है और हानि की संभावना बनी रहती है। इसके बावजूद डॉक्टर के खिलाफ अदालत में कार्यवाही नहीं की जा सकती है। इस तरह भारतीय महिलाओं को शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य से शाब्दिक सहानुभूति रखने वाले विधि–विशेषज्ञों ने महिलाओं को असफल गर्भपात, जिसके परिणामस्वरूप भले ही स्त्री जीवनभर के लिए रोगी बन जायें, इसके बावजूद भी डॉक्टर के विरुद्ध अदालत में जाकर किसी तरह की कार्यवाही नहीं की जा सकती है।

कानून की सीमा मर्यादा देखते हुए ऐसा लगता है कि डॉक्टर जिस किसी भी स्थिति में गर्भपात करने को स्वतंत्र है और महिला जिस किसी दशा में ठहरे गर्भ का अंत कराने को स्वतंत्र है। इस कानून के होने से कितनी ही महिलाएँ यह अनुभव कर सकती है कि स्वतंत्र भारत की हमारी सरकार हमारे प्रति कितनी सहानुभूति रख रही हैं। बाकी परेशानियाँ तो परिवार की दृष्टि से होगी ही, परन्तु उन्हें गंभीरता से इस बारे में विचार करना होगा। यह एक ऐसा दूषित–विष है, जिसका स्वाद मीठा हो सकता है, किंतु परिणाम अत्यंत घातक है।

प्रस्तुत कानून परिवार–नियोजन की दिशा में आगे बढ़ने के लिए एक व्यापक कदम है और इसके लिए भारतीय महिलाओं को उनके स्वास्थ्य के सब्जबाग दिखाकर उन्हें भ्रूण–परीक्षण के उपरांत भ्रूण–हत्या के लिए तैयार करता है। भारतीय डॉक्टर्स को व्यापक अधिकार देकर इसलिए खुलकर दिया गया है कि वे बेहिचक गर्भ में तरंगे ले रहे मक्खन की तरह कोमल शिशुओं को दवाओं से और दवायें उन्हें बाहर न निकाल सकें तो औजारों से काटकर बाहर निकाल सकें।

करौली क्षेत्र के नर–नारी अनुपात के आँकड़ों को देखने पर यह ज्ञात हुआ कि करौली क्षेत्र में सदैव ही स्त्रियों का जनसंख्यात्मक अनुपात पुरुषों के

अनुपात में अपेक्षाकृत कम ही रहा है, परन्तु कुछ वर्षों से करौली क्षेत्र में नर–नारी अनुपात में स्त्रियों की संख्या लागातार कम होती जा रही है, जिससे प्राकृतिक संतुलन डगमगा सा गया है। ''कराह उठी है यह धरती मादा भ्रूण–परीक्षण का बोझ सहते–सहते।'' आखिर कब तक भ्रूण–परीक्षण के बहाने भ्रूण लिंग–परीक्षण होता रहेगा। कब तक अस्वस्थ नारी की संज्ञा देकर कन्याओं को मौत के घाट उतारा जाता रहेगा।

ऐसी ही परिस्थितियों पर नियंत्रण रखने के लिए तथा प्राकृतिक संतुलन को बनाये रखने के लिए केन्द्र सरकार ने अल्ट्रासाउंड (भ्रूण लिंग–परीक्षण) एवं भ्रूण–हत्या (गर्भपात) कुछ विशेष परिस्थितियों में ही अल्ट्रासाउण्ड एवं गर्भपात कराने की अनुमति दी गई ही। जिसे हम भ्रूण–परीक्षण कानून एवं गर्भपात कानून के नाम से जानते हैं।

अवैध गर्भपात रोकने व नारियों को स्वस्थ एवं सुरक्षित गर्भपात की सुविधा उपलब्ध कराने के उद्देश्य से सन् 1971 में ये अधिनियम पारित किया गया था। इस कानून का नाम एम.टी.पी. अधिनियम 1972 रखा गया। इस अधिनियम के अनुसार इस बात पर कठोर निर्देश दिया गया है कि गर्भपात केवल सरकारी अस्पतालों या सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त चिकित्सा केंद्रों पर ही किया जा सकता है, परन्तु भारतीय समाज की यही सबसे बड़ी त्रासदी है कि तमाम कानूनी प्रावधानों को ताक में रखकर अयोग्य, अकुशल तथा झोलाछाप चिकित्सकों की सहायता से गर्भपात जैसी नाजुक प्रक्रिया को अंजाम दिया जाता है जो कि कदापि चिकित्सकों की श्रेणी में ही नहीं आते हैं। कई बार तो अशिक्षित महिलाँ दवाइयों से ही गर्भपात कर लेती हैं।

यह बात तो तय है कि इस प्रकार के गर्भपात कराने का असली उद्देश्य पैसे की बचत करना तथा कानून प्रक्रिया से बचना है। दूसरी ओर इनकी मजबूरी का लाभ उठाकर कुछ लोग पैसा कमाने में जुटे हैं, परन्तु ऐसे गर्भपात हर स्थिति में अवैध गर्भपात ही कहलाते हैं, क्योंकि इन लोगों के पास सरकारी मान्यता नहीं होती है, परन्तु दूसरी ओर इस अमानवीय पक्ष का विरोध करने

वाले बुद्धिजीवों तथा जागरुक लोग चिकित्सकों तथा संबंधित व्यक्तियों पर अंकुश लगाने पर जोर दे रहे हैं। इसके लिए राजस्थान सरकार ने एम.टी.पी. एक्ट तथा भ्रूण लिंग–परीक्षण कानून पास कर दिये हैं, ताकि नारी के अस्तित्त्व की रक्षा की जा सके। वरना मादा भ्रूण–हत्या करने वाली मानसिकता हमें पता नहीं किस पिछड़ेपन की ओर ले जायेगी।

4.1 जन्म पर भेदभाव पूर्ण स्थिति–

जन्म संस्कार के गीत–

करौली क्षेत्र में जन्म संबंधी अनुष्ठानों का लम्बा कार्यक्रम होता है। गर्भाधान से प्रसव तक का संस्कार पुंसवन संस्कार होता है। यह संस्कार लोकसमाज में इस संस्कार के नाम से विख्यात नहीं है। यहाँ इसे साध पूजा कहा जाता है। लोक की प्रतीक शैली में इसे चौक भी कहते हैं। गर्भ के सातवें मास में यह संस्कार होता है। पति और पत्नी को चौक पर बिठाया जाता है। इस अवसर पर गाये जाने वाले गीतों को सोहर कहा जाता है। सोहर गीतों में एक गीत ऐसा होता है जो गर्भिणी की प्रत्येक मास की दशा को वर्णित करता है।

''पहलौ महीना जब लागिए, बाकौ फूलु गहयो फलु लागिए''
ए बाई दूजौ महीना जब लागिए
राजे तीजौ महीना जब लागिए, बाकौ खीर खांड मन आइए।''[1]

इन गीतों में सन्तानोत्पत्ति की कामना, गर्भाधान तथा प्रत्येक मास में होने वाली जच्चा की इच्छाओं का मनोवैज्ञानिक वर्णन मिलता है तथा बच्चे के जन्मोत्सव एवं सूरज पूजन पर गीत गाये जाते हैं। इनमें 'हालरा', 'पीला' आदि प्रमुख है।

''छीको तो पडियो ए माता चूरमो ए
ठणके सिरावण मांगण वाणो नहीं अे माता कैला जी ए
म्हाने माणस क्यों सिरज्या।''[2]

मीणा जनजाति में जन्म पर कई परिवारों में भेदभाव पूर्ण व्यवहार किया जाता है। इन परिवारों में लड़की के जन्म पर नारियों को सताया जाता है तथा उसका अपमान किया जाता और उसे तिरस्कार की दृष्टि से देखा जाता है। लड़के के जन्म पर मिठाइयाँ बाँटी जाती हैं तथा कई प्रकार के लोकगीत भी गाये जाते हैं। पुत्र जन्म के अवसर पर सोहर गाया जाता है। सामूहिक स्वर में स्त्रियाँ गीत की स्वर पिचकारी से जो सुधा–वर्षा करती हैं वह रोम–रोम में भिग जाती है, कर्ण कुहरों में अमृत घोल देती है, अह्लाद छूने लगता है। मन आनंद तरंग में बहने लगता है। श्रोताओं को भिगानें के बाद बाबा, भाबू–माई को आँगन के पलने में कल्पना करने के लिए विवश कर देता है। अवधी सोहर गीतों के कुछ उदाहरण देखिए–

(1) ''हुये आयोध्या में राम रानी कौशल्या के।
दायी आवै, ललन जनामै, मांगे अपना नेग।
सासू आंवे चरवे घरावैं मांगे अपना नेग।
राजा दशरथ जी से।''[3]

(2) कंगनवा मांगै ननदी लाल की बधाई।
मेरे मंगनवा मेरे भईया की कमाई,
रुपैया लेजी ननदी लाल की बधाई।

(3) जे दिन राम क जनम भये, बदरी ओनय आये हो।
बदर बरसैं कंचन बूंद मोतिन भरि लागैं हो।।
आवहु गोरी नउनिया, बोलउआ दइ आवउ हो।
रामा, आजु मोरे रामा के जनमवाँ, गोतिनि सब आवहु हो।।
रामा, सखिया जे बइठी अंगनवाँ, महल मोरा भरिगे हो।।

परन्तु लड़की के जन्म होने पर किसी भी प्रकार के कोई सोहर गीत नहीं गाये जाते हैं, बल्कि उसके जन्म लेने पर मीणा परिवारों में मातम सा छा जाता है, अर्थात् पूरा परिवार जच्चा को कोसता है, जबकि जच्चा निर्दोष होती है

नारी की दुर्दशा के कारण–

ईसा से 300 वर्ष पूर्व से लेकर 1947 तक नारी की दशा हर क्षेत्र में निम्न से निम्नतर होती चली गई। इसके प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

ब्राह्मणवाद–

हिन्दू धर्म में ब्राह्मणवाद ने स्त्रियों को एक प्रकार से योजनाबद्ध तरीके से शोषण की स्थिति में पहुँचा दिया तथा उसे दासी बनने पर बाध्य किया। इसकी स्थिति का ह्रास मनुस्मृति काल तथा धर्मशास्त्र काल से प्रारम्भ हुआ। धर्मशास्त्र काल में पराशर संहिता, विष्णु–संहिता और याज्ञवल्क्य–संहिता मनुस्मृति के आधार पर लिखी गई। इनमें स्त्रियों पर अनेक प्रतिबन्ध लगाए गए। स्त्री–शिक्षा पर प्रतिबन्ध बाल–विवाह को मात्र धार्मिक संस्कार बनाना, विधवा–पुनर्विवाह पर प्रतिबन्ध लगाए गए। ब्राह्मणवाद ने स्त्री को उपभोग की वस्तु बना दिया। पति की मृत्यु के बाद सती को आदर्श कृत्य बताया गया। ब्राह्मणवाद को जब–जब अवसर मिला उसने स्त्री पर प्रतिबन्ध लादे तथा पुरुष को देवता तुल्य बनाया। पति की सेवा करना स्त्री का परमोधर्म आदर्श बना दिया जिसके द्वारा स्त्री मोक्ष तथा स्वर्ग प्राप्त कर सकती थी। स्त्रियाँ जो अनपढ़, अन्धविश्वासी, धार्मिक–विश्वास, प्रवृति वाली होती हैं उन्होंने भी इन प्रतिबन्धों को सहर्ष स्वीकार करके अपनी स्थिति को दयनीय बनाने में एक प्रकार से सक्रिय योगदान दिया।

संयुक्त परिवार व्यवस्था–

संयुक्त परिवार व्यवस्था को बनाए रखने के लिए मध्यकाल में तथा इसके बाद अनेक प्रयास किए गए जो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से स्त्रियों की प्रस्थिति को गिराने में सहायक सिद्ध हुए। संयुक्त परिवार प्रणाली के लिए

आवश्यक था कि स्त्री उसमें सहयोग करे अथवा उसे इतना दबा कर रखा जाए कि वह आवाज नहीं उठा सके। परिस्थितियाँ कुछ ऐसी बनती चली गईं कि उस पर अनेकानेक प्रतिबन्ध लदते चले गए। पणिक्कर ने भी लिखा है कि स्त्रियों की सामाजिक स्थिति संयुक्त परिवार प्रणाली के कारण भी निम्न है। निम्न प्रतिबन्धों, तरीकों तथा व्यवस्थाओं द्वारा स्त्रियों को संयुक्त परिवार में दबा कर रखा गया। कन्या को हिन्दू संयुक्त परिवार में कोई भी अधिकार नहीं दिया गया। उसे शिक्षा प्राप्त करने से वंचित रखा गया क्योंकि शिक्षित होने पर वह समझदार हो जाती, व्यवसाय करने योग्य हो जाती, स्वावलम्बी हो जाती। इस प्रकार वह संयुक्त परिवार में रहना पसन्द नहीं करती। अपने पसन्द के योग्य व्यक्ति से विवाह करना पसन्द करती या हो सकता है कि अविवाहित जीना पसन्द करती। शिक्षा पर प्रतिबन्ध लगाने के साथ–साथ उसका बाल्यकाल में विवाह भी कर दिया जाने लगा। सन्तान उत्पन्न होने तथा पराधीन होने के कारण वह सपने में भी परिवार को त्याग करने की बात सोचने लायक भी नहीं रही। विधवा को सम्पत्ति में अधिकार से वंचित कर दिया गया। इससे उसके पास परिवार में बने रहने के अतिरिक्त और कोई आर्थिक विकल्प नहीं रहा जिससे वह अपना भरण–पोषण कर सके। परिवार की अटूटता बनाए रखने के उपर्युक्त प्रयास स्त्री के लिए अभिशाप सिद्ध हुए और वह ऐसे पति की सेवा करने के लिए भी बाध्य हो गई जो कोढ़ी, पतित, अंगहीन, बीमार, कामी और निर्धन ही क्यों न हो। उसके लिए तो पति परम देवता समान होता था। संयुक्त परिवार ने जितना शोषण और ह्यास स्त्री जाति का किया है उतना शायद ही अन्य कारक ने किया हो।

बाल विवाह–

स्त्रियों की स्थिति के गिरने का मुख्य कारण बाल–विवाह रहा है। कन्या का जब तक शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक दृष्टिकोण से विकास हो भी नहीं पाता है कि उसका छोटी उम्र में विवाह कर दिया जाता है तो उसके विकास के सारे द्वार बन्द हो जाते हैं। स्त्री केवल मात्र सन्तानोत्पत्ति, बच्चों का

पालन–पोषण, परिवारजनलों तथा पति की सेवा आदि का साधन बन कर रह गई। उसके व्यक्तित्व का विकास होना असम्भव हो गया। वह पुरुष वर्ग की दासी मात्र रह गई। उपनयन संस्कार, शिक्षा तथा चरित्र के विकास के स्थान पर वह उपभोग तथा सेवा करने की वस्तु मात्र बन गई। बाल–विवाह ने उसे कहीं का नहीं छोड़ा। रजस्वला से पहिले विवाह करना माता–पिताओं का धार्मिक कर्तव्य हो गया। छोटी उम्र में सन्तानों की जिम्मेदारी ने उन्हें असमर्थ और परिवार पर आश्रित बना दिया। उनका अपना कुछ नहीं रहा। पिता, पति और पुत्र के संरक्षण में जीवन व्यतीत करना मात्र जीवन का लक्ष्य हो गया। बाल–विवाह ने स्त्रियों को सभी प्रकार के नियंत्रण मानने के लिए मजबूर कर दिया।

कन्यादान–

कन्यादान की प्रथा स्मृतिकाल तक तो ठीक–ठीक चलती रही लेकिन स्मृतिकाल तथा उसके बाद इस प्रथा का रूप बिगड़ा, उसने स्त्री को कहीं का नहीं छोड़ा। ब्राह्मविवाह, दैव विवाह, आर्ष विवाह और प्राजापत्य विवाहों में कन्यादान स्त्री के लिए सम्मानजनक धार्मिक कृत्य था। परन्तु यही कन्यादान कालान्तर में स्त्री के लिए अभिशाप बन गया। पहिले कन्यादान से तात्पर्य था सुयोग्य वर ढूँढ़ कर उसे कन्या देना। परन्तु बाद में कन्या को दान की वस्तु समझा जाने लगा जिसे विधवा होने पर न तो वापिस लिया जा सकता है तथा न जिसे पुनः दान में दिया जा सकता है अर्थात् पुनः विधवा का विवाह नहीं किया जा सकता। कन्या वस्तु बन गई। दान में प्राप्त करने वाला जैसे चाहे वैसे उसका उपभोग करे। कन्या के साथ अत्याचार होने लगे; उसका सामाजिक, पारिवारिक और अन्य प्रकार से शोषण होने लगे। उसे सब प्रकार के अधिकार समाप्त हो गए जिसका कोई इलाज अथवा समाधान नहीं रहा। इसने स्त्री को जानवर से भी बुरी स्थिति में पहुँचा दिया।

वैवाहिक कुरीतियाँ–

विवाह से सम्बन्धित अनेक कुरीतियों ने नारी की पारिवारिक और सामाजिक स्थिति को बहुत ज्यादा विकृत कर दिया। बाल–विवाह, कुलीन–विवाह, अन्तर्विवाह, विधवा पुनर्विवाह पर रोक, दहेज बहु–पत्नी विवाह आदि हिन्दू–विवाह की उल्लेखनीय कुरीतियाँ हैं जिनके कारण नारी का कन्या, पत्नी और विधवा के रूप में कोई अस्तित्व नहीं रहा। वह केवल मात्र दासी रह गई तथा उसे भार समझा जाने लगा। कन्यादान, दहेज तथा उत्सवों आदि में वर–पक्ष को धन, वस्तुएँ, उपहार, फल–फूल, मिठाईयाँ भेजना, माता–पिता के लिए व्यवस्था करना कठिन हो गया। कन्या का परिवार में जन्म ही एक अभिशाप बन गया। इन सब परिस्थितियों ने स्त्रियों की स्थिति को प्रत्यक्ष में गिरा दिया। विवाह से सम्बन्धित निषेध, जैसे–अन्तर्विवाह तथा कुलीन विवाह ने माता–पिता के लिए योग्य वर प्राप्त करने का क्षेत्र बहुत सीमित कर दिया जिसका परिणाम अधिक दहेज की माँग के रूप में सामने आया। दहेज के तथा कुलीन विवाह को प्राथमिकता, बेमेल विवाह, बाल–विवाह तथा विधवा की समस्याओं को और उग्र बना दिया गया। इन सब ने हिन्दू नारी की धार्मिक, सामाजिक आदि क्षेत्रों में दयनीय स्थिति बना दी।

पुरुषों पर आर्थिक निर्भरता–

उत्तर–वैदिक काल के बाद तथा–स्मृति–काल और धर्मशास्त्र–काल से स्त्रियों की स्थिति इतनी गिरती चली गई कि वह अपनी प्रत्येक आवश्यकता, भोजन, वस्त्र और आवास के लिए पूर्ण रूप से परुषों पर निर्भर हो गई। पति पर पत्नी की इसी निर्भरता के फलस्वरूप पति 'भर्ता' बन गया। स्त्री शिक्षा पर रोक, बाल–विवाह, दहेज, विधवा पुनर्विवाह पर प्रतिबन्ध तथा स्त्रियों का आर्थिक लाभ के लिए घर के बाहर जाने पर प्रतिबन्ध, पर्दा–प्रथा आदि ने नारी को आर्थिक रूप से पराश्रित, निर्बल, निस्सहाय और पुरुष की दया का पात्र बना दिया। उसका स्वयं का व्यक्त्वि और अस्तित्व पूर्ण रूप से नष्ट हो गया। वह अपनी सभी छोटी–बड़ी आवश्यकताओं के लिए पुरुष–पिता पर निर्भर हो गई।

परिवार में शोषण होने पर वह परिवार का त्याग नहीं कर सकी थी। उत्तर–वैदिक काल के बाद स्त्री के सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार भी समाप्त हो गए। उच्च जातियों की स्त्रियाँ पूर्ण रूप से पराश्रित हो गईं परन्तु निम्न जातियों की स्त्रियाँ क्योंकि बाहर कार्य करती थीं इसलिए उनकी आर्थिक स्थिति फिर भी कुछ ठीक थी। हिन्दू समाज पुरुष–प्रधान बनता चला गया तथा स्त्री की स्थिति आर्थिक दृष्टि से इतनी खराब हो गई कि वह अपने अधिकारों की माँग करने योग्य भी नहीं रही।

स्त्री शिक्षा की उपेक्षा–

पुरुषों की तुलना में स्त्रियों की स्थिति के निम्न होने का मुख्य कारण स्त्रियों का अशिक्षित होना तथा उनकी शिक्षा की उपेक्षा करना रहा। अनेक राजनीतिक, सामाजिक, और धार्मिक कारणों से स्त्रियों पर अनेक प्रतिबन्ध लगाए गए जिनका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से स्त्री–शिक्षा की रोक पर प्रभाव पड़ा। घर के बाहर निकलने पर रोक, मुसलमानों द्वारा धर्म परिवर्तन के डर से तथा उनकी इज्जत की सुरक्षा के लिए बाल–विवाह का करना आदि कारणों ने स्त्री–शिक्षा में बाधा उत्पन्न कर दी। उसका परिणाम यह हुआ कि स्त्रियाँ अशिक्षित, अन्धविश्वासी और रूढ़िवादी हो गईं। वे अपने अधिकारों के प्रति तटस्थ तथा निष्क्रिय हो गईं। धीरे–धीरे उनके अधिकार समाप्त होते गए और वे घर की चारदीवारी में बन्द हो गईं। घर के बाहर नौकरी करने लायक नहीं रहीं वे अशिक्षित होने के कारण सामाजिक कुरीतियों का अक्षरशः पालन करने लगीं। स्त्रियों को शिक्षा के नाम पर पतिव्रता के आदर्श पति को परमेश्वर मानने के मूल्य, व्रत आदि रखना सिखाया जाने लगा। इन सबका परिणाम स्त्रियों की निम्न स्थिति हो जाना है।

मुसलमानों के आक्रमण–

भारत में मुसलमानों के आगमन और आक्रमण के अनेक प्रभाव पड़े। स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आई। मुसलमान आक्रमणकारियों में स्ति्रयों की कमी थी। उन्होंने हिन्दू स्त्रियों से विवाह करने के प्रयास किए चाहे वे विधवा

ही क्यों न हों। सैद्धान्तिक रूप में तो स्त्रियों को अनेक अधिकारों से वंचित किया जा चुका था। इन परिस्थितियों में उनको कठोरता से व्यवहार में लाया गया। स्त्रियों पर चारों ओर से प्रतिबन्ध लगा दिए गए। पर्दा–प्रथा, शिक्षा पर रोक, बाल–विवाह आदि को व्यावहारिक रूप दे दिया गया। विधवाओं का जीवन नरकमय हो गया। स्त्रियों को घर से बाहर नहीं निकलने दिया जाता था। सतीत्व के आदर्श की रक्षा के लिए अनेक प्रतिबन्ध लगा दिए गए। स्त्रियों की सामाजिक स्थिति खराब हो गई।

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट हो जाता है कि भारत में हिन्दू स्त्रियों की स्थिति अनेक क्षेत्रों–धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि में निम्न हो गई। इसके मुख्य कारण बाल–विवाह, दहेज, अशिक्षा, ब्राह्मणवाद, संयुक्त परिवार प्रणाली, पुरुषों का एकाधिकार, अशिक्षा, पर्दा–प्रथा, मुसलमानों का आक्रमण आदि–आदि रहे।

हिन्दू स्त्रियों पर अनेक प्रतिबन्ध स्मृति काल में तथा धर्मशास्त्र काल में लगने शुरू हुए जो बढ़ते–बढ़ते 19वीं शताब्दी तक सभी क्षेत्रों में फैल गए। स्त्रियों के लिए अनेक पारिवारिक और वैवाहिक समस्याएँ उत्पन्न हो गईं और इनका जीवन नरकमय हो गया। सदियों से स्त्रियों का शोषण होता रहा। उनके अनेक अधिकार छिन गए। बाल–विवाह, अशिक्षा, विधवा–पुनर्विवाह पर रोक, दहेज, विवाह–विच्छेद पर निषेध, बेमेल विवाह, अन्तर्जातीय विवाह पर रोक, बहु–पत्नी विवाह, कन्यादान एक आदर्श, पर्दा–प्रथा आदि अनेक समस्यों ने उग्र रूप धारण कर लिया। इतना ही नही, कुछ पारिवारिक समस्याएँ भी इनके लिए अभिशाप बन गईं, जैसे– परिवार का पुरुष–प्रधान हो जाना, स्त्रियों को सम्पत्ति में अधिकार नहीं देना, पति की सेवा करना उनका एकमात्र धर्म बना देना, परिवार में उसे दासी का दर्जा दे देना आदि।

जन्म पर दाइयों को प्रताड़ित करना–

प्रसव के बाद जच्चा को सूतिका गृह से सूरज पूजन के दिन बाहर निकाला जाता है। इस समय देवर भाभी का पल्ला पकड़कर सूतिका गृह से

बाहर लाता है। इस अवसर पर देवर को पल्ला पकड़ने के उपलक्ष्य में नेग देते हैं। लड़का होने पर मुँह मांगा उपहार दिया जाता है। लोकगीतों में इस प्रकार अभिव्यक्त है–

देवरियां को नेग चुकाती जी हजारी ढोला
बोलो क्यूं न बटुवों खां भूल्या।''[4]

नेग–

विवाहादि मांगलिक अवसरों पर सगे संबंधियों तथा पौनियों को खुश करने के लिए द्रव्य वस्त्र आदि इस रस्म के निमित्त दिया जाने वाला द्रव्य वस्त्र आदि जो व्यक्ति जच्चा के लिए कोई भी कार्य करे। उसे उस कार्य के बदले में कोई वस्तु जैसे जेवर, कपड़े, आदि या दान दिया जाता है। इसमें पारिश्रमिक के साथ–साथ प्यार व सदभावनाएं छिपी रहती है। नेग सास, जेठानी, देवरानी, ननद, दाई देवर आदि को दिया जाता है नेग दो प्रकार के होते हैं–

1. प्रसव पूर्व –सास, जेठानी, देवरानी व नंनद।
2. प्रसव के बाद –दाई, देवर व नंनद को नेग दिया जाता है।

नेग प्रत्येक कार्य के लिए अलग समय पर बार–बार दिया जाता है। दोहद की इच्छा पूरी करने पर भी नेग देने का वर्णन मिलता है। लोकगीतों में वर्णन इस प्रकार है–

''दाई माई हो घुड़ल असवार
झटकत महल पधारो जी''[5]

घर के सदस्य व जच्चा भी प्रसव से पूर्व दाई से मुँह मांगा नेग देने को कह रही है–

''थाँने सिर की रखड़ी देवस्यां जी,
थाँने कानां की गुट्यां देवस्यां जी,
थाँने मुँखड़ा रो बेसर देवस्यां जी,
मूँढ़ा का मांग्या देवस्यां जी,
अजी झटकत जणादो नंद लाल।''

प्रसव के बाद दाई के प्रति व्यवहार में परिवर्तन देखते ही बनता है–

दाई दारी के आवे छे आँख्याँ में गीजड़ा जी,
आवे छे म्हाँने सूँग, दाई थी बेगा जाओ जी।''[6]

जच्चा कह रही है कि दाई की आँखों में कीचड़ आ रही है। अतः मुझे घिन आ रही है। दाई तुम जल्दी से तुम्हारे घर जाओ इतना ही नहीं वह परिवार के लोगों से कह रही है –

''आंगळियाँ में मूंग बखेरो,
दाई रफट पड़ेगी जी।''

यहाँ दाई के साथ हास–परिहास का भाव मिश्रित है। दाई के नेग मांगने पर वह पुनः घर जाते समय घोड़े मंगवाने पर परिवार वाले कहते हैं–

''दाई माई घोड़ा तो चरबा गया छे,
थाँ तो पग्या ही जाओ जी,
यहाँ वह नेग की बात ही नहीं करते।''

हमारे देश में सभी धर्मों के लोग रहते हैं। सभी में पवित्र, धार्मिक भावना रहती है। सभी धर्म संतान को ईश्वर की देन मानते हैं, यहाँ तक कि हिन्दू धर्म में नारी को अम्बे, काली, चण्डी, चामुंडा, गौरी, लक्ष्मी आदि के रूप में पूजा जाता है, लेकिन एक ओर नारी को पूजना, दूसरी ओर उसकी जन्म के समय ही हत्या करना क्या समूची मानव–जाति की दोहरी और भेदभावपूर्ण मानसिकता का परिचायक नहीं है। वैसे तो भारत आध्यात्मिक दृष्टि से विश्व में सबसे आगे माना जाता है और यहाँ भक्तों का भंडार भरा पड़ा है, परन्तु आज यहाँ साधक ही संहारक बन गया है, जो हाथ साधक के रूप में स्त्री शक्ति के आगे जुड़ते हैं, वही हाथ कन्या भ्रूण–हत्या करने का संकेत भी करते हैं, जो सिर साधक के रूप में माँ की शक्ति के आगे झुकता है, वही सिर आज कन्या के जन्म होने पर दाई को भी कोसा जाता है, जिसका कारण परिवार की बहुत सी भावनाएँ पुत्र को प्राप्त करने के साथ जुड़ी हुई है न कि पुत्री को।

कैसी विड़म्बना है जिस देश में पुरुष पूरे तन–मन के साथ शक्ति माँ अम्बे की साधना करता है, उसका ही स्वरूप विद्या के देवी सरस्वती के रूप में वन्दना करता है, धन की प्राप्ति के लिए वह माँ लक्ष्मी की अराधना करता है और दूसरी तरफ वही व्यक्ति वही भक्त कन्या भ्रूण–हत्या की स्वीकृति देता है। वर्तमान स्थिति में अपने देश में जितनी भी भ्रूण–हत्यायें की जा रही हैं, उनमें 98 प्रतिशत मादा भ्रूण–हत्यायें हैं। क्या यह सरासर अनुचित नहीं कि लगभग मादा भ्रूणों को ही जन्म से पूर्व समाप्त करना और जन्म ले तब उन पर नस्ल के आधार पर जीवन भर भेदभाव करना। भ्रूण–हत्याओं के कारण ही मादाओं की संख्या में निरंतर गिरावट आती जा रही है। आज भ्रूण–हत्या ने झूठी अनैतिक आधुनिकता का अमलिजामा पहन लिया है और एक के बाद एक इसमें बहता जा रहा है। इस तरह के कार्य नित्य कर्म बन गये हैं। समाज में यह घृणित कार्य अनुसरण का पाठ बन गए हैं।

अहम् बात तो यह है कि भ्रूण–हत्या को बड़े तबके का समर्थन मिलता जा रहा है, क्योंकि वे अपने नीच कर्मों को कन्या हत्या के माध्यम से छुपाने में सफल हो जाते हैं बड़े वर्ग के मूक समर्थन के कारण यह समस्या दिनों–दिन बढ़ती चली जा रही है, अर्थात् दाई को भी कई प्रकार से तिरस्कार किया जाता है।

आज की बालिका कल की स्त्री है। क्या स्त्री यानी आधी दुनिया को समाज की मुख्यधारा से अलग रखकर देश का समुचित विकास संभव है। क्या बिना उनके सहयोग से एक मजबूत राष्ट्र की कल्पना की जा सकती है। उपेक्षित, शोषित, प्रताड़ित, अपमानित और अशिक्षित बालिकाओं से हम कैसे उपेक्षा कर सकते हैं, कि वे बड़े होकर समाज और राष्ट्र की उन्नति व समृद्धि में अपना योगदान करेंगी। अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि समाज बालिकाओं का महत्त्व समझे और पारम्परिक सामाजिक रूढ़ियों से मुक्त होकर बालिकाओं की देखभाल व उनकी प्रगति के लिए ईमानदारी से प्रयास करें। पुरुषों पर जिम्मेदारी ज्यादा है क्योंकि पुरुषों की मानसिकता के चलते स्त्रियाँ

वह सम्मान और दर्जा नहीं पा सकी हैं, जिनकी वह वास्तव में हकदार हैं। आज हमारे देश में लिंग भेद का जो भीषण दौर चल रहा है, उसे जितनी शीघ्रता से समाप्त किया जाए, उतना ही अच्छा है। जरुरत है तो बस बेटियों के प्रति अपनी मानसिकता बदलने की। साथ–साथ दाइयों को प्रताड़ित न किया जाये, क्योंकि वो अपना कर्तव्य बहुत ईमानदारी और सच्चाई से करतीं है।

अभी भी समय है संभल जाने का पुत्र–पुत्री के भेद को समाप्त करने की एवं पुत्र व पुत्री को समान समझा जाए। अन्यथा सामाजिक विकृतियों के अतिरिक्त कुछ भी भारतीय समाज के भाग्य में नहीं बचेगा। यदि समय रहते हम सचेत नहीं हुए तो बालिकाओं में प्रतिशोध की भावना विकसित होने लगेगी। लड़के के बीच अहम के लिए जबरदस्त टकराव हो सकता है। देश में टकराव की ऐसी स्थिति से प्रगति अवरूद्ध हो सकती है और आडंबरधारी धर्मगुरू द्वारा स्थापित सामाजिक प्रणाली ताश के पत्ते के घर की तरह धराशायी होने की प्रबल सम्भावनाएँ बन सकती है। यदि हम नई सदी में प्रगति व खुशहाली की परिकल्पना को साकार रूप देना चाहते हैं तो लड़के व लड़की के प्रति निष्ठुर मनोवृत्ति त्याग कर दोनों को समान मानने की मनोवृत्ति का विकास करना वांछित है।

''जहाँ नारी की पूजा होती है, वहाँ देवताओं का वास होता है।'' इस महान धारणा वाले भारतवर्ष में कन्या के जन्म लेने से पूर्व ही लिंग परीक्षण द्वारा गर्भपात कराके हत्या कर देना यह मानवीय कृत्य नहीं है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारी बेटी भविष्य में रानी लक्ष्मीबाई, इन्दिरा गाँधी, सरोजनी बाई नायडू, किरण बेदी आदि बन सकती हैं। हमारे कुल का नाम रोशन कर सकती है–

''काम काज में माय बाप को बेट्यां हाथ बटावै
मात पिता अर मित्र गुरु बण पीड़ा तुरत नसावै
धरम अर्थ अर काम मोक्ष को बेड़ो पार लगावै

सासरिया सागर में बेट्यां गंगा जसां समावै
बण कहार ये दोय कुळां को कांधे भार उठावै
दो कुळां नै दै ये तार, बेट्यां सोळा संस्कार
कोखां में मत मार''

लड़की के जन्म पर कोख को दुत्कारना–

लड़के के जन्म पर सोहर गीत गाए जाते हैं, परन्तु लड़की के जन्म पर कोई भी सोहर गीत नहीं गाए जाते हैं। पुत्र जन्म के अवसर पर उल्लास का होना स्वाभाविक है, नव–प्रसूता स्त्री की पीड़ा हरण के लिए हृदय में गुदगुदी पैदा करने वाले गीत गायें जाते हैं। सोहरों का प्रधान विषय सम्भोग श्रृंगार का वर्णन होता है। डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय का कथन है कि– स्त्री–पुरुष की रति–क्रीड़ा, गर्भाधान, गर्भिणी का शरीर यष्टि, प्रसव पीड़ा, दोहद धाय को बुलाना और पुत्र जन्म का वर्णन मिलता है, परन्तु पुत्री के जन्म पर कोई भी सोहर और दोहद नहीं गाये जाते हैं–

मोकू मोरे पिय, मोकू सिर सीस बलम हो,
पिया, मोकूं नौरंगिया की साध, नौरंगिया लै आओ रे,
तू मोकूं मोरी धनिया से धनिया, तोकूं घरुराइन रे,
धनिया, पेड़े–पेड़े बैठ रखना, रस न रसले तोड़यो रे,
मोकूं पियवा, जागै न पेड़ रखना, घरे चल आयो रे,
धीरां–धीरां नमीं डळिया रस रसीली तोड़ लाज्यो रे।''[7]

पुत्र जन्म के समय जहाँ दोहद और सोहर के गीत गाये जाते हैं वहीं पुत्री जन्म पर विषाद छा जाता है। माता कहती है कि जैसी पुरइन का पत्ता हवा के कारण कांपता है उसी प्रकार मेरा हृदय कांप रहा है अर्थात् कोख को दुत्कार रही है यही कारण है कि पुत्री के जन्म पर सोहर नहीं गाये जाते हैं। ऐसी कुभावना पहले भी थी और आज भी है।

बाल्यकाल में परिवार में भेदभाव पूर्ण स्थिति–

बालक के जन्म के बाद जच्चा और नवजात शिशु की प्रसव जन्य अपवित्रता के लिए सहज सावधानी तथा सुरक्षा अपेक्षित थी, जिसके फलस्वरुप जातकर्म से संबंधित अनेक विधि–विधान आवश्यक हुए। जो हमारी संस्कृति के विभिन्न अंग हैं।

जातकर्म–

यह संस्कार नाभिबंधन के पूर्व सम्पन्न होता था। इसमें निम्न कृत्य सम्पन्न किये जाते हैं–

1. मेधाजनन– इसमें पिता अपनी चौथी अंगुली और सोने की शलाका से शिशु को मधु और घृत अथवा केवल घृत चटाता था।
2. आयुष्य– इसमें शिशु की नाभि अथवा दाहिने कान के निकट पिता गुनगुनाता हुआ शिशु के दीर्घजीवी होने की कामना करता था।
3. बल– इस कृत्य में पिता शिशु के दृढ, वीरतापूर्ण व शुद्ध जीवन के लिए प्रार्थना करता था। वर्तमान में यह संस्कार नहीं पाया जाता है।

नामकरण–

भारतीय हिन्दू धर्म में प्राचीन काल से ही व्यक्तिगत नामों के महत्त्व को स्वीकार कर नामकरण की इस भाषा शास्त्रीय समस्या को धार्मिक संस्कार में परिणत कर दिया था। बृहस्पति ने वीर मित्रोदय संस्कार भाग में नामकरण की वांछनीयता इस प्रकार व्यक्त की है नाम अखिल व्यवहार का हेतु है। यह शुभावह कर्मों में भाग्य का हेतु है। नाम से ही मनुष्य कीर्ति प्राप्त करता है अतः नामकरण कर्म अत्यंत प्रशस्त है।

कर्ण छेदन–

आभूषण पहनने के लिए विभिन्न अंगों को छेदने की प्रथा प्रचलित है। परवर्ती काल में कर्ण छेदन की उपयोगिता सिद्ध हो जाने के उपरांत इसकी आवश्यकता पर बल देने के लिए इसे धार्मिक आवरण से भी आवृत कर दिया गया। सुश्रत का कथन है– रोग आदि से रक्षा तथा भूषण या अलंकरण के

निमित बालक के कानों का छेदन करना चाहिए ''अण्डकोष वृद्धि तथा आन्त्र वृद्धि के निरोध के लिए वे पुनः कर्ण वेध का विधान करते हैं।''

बृहस्पति के अनुसार यह संस्कार शिशु के जन्म के पश्चात् दसवें, बारहवें अथवा सोलहवें दिन किया जाता है। ''श्री पति'' शिशु के दाँत निकलने के पूर्व और जब शिशु माता की गोद में खेलता हो कर्णवेध संस्कार सम्पन्न करना चाहिए।''

''कर्ण वेधन शुभ मुहुर्त में पूर्वाभिमुखासीन बालक के क्रमशः दायें फिर बायें कान को छेदा जाता है।''

कर्ण वेध संस्कार में आभूषणों के प्रति प्रेम व स्वास्थ्य प्रति जागरुकता का भाव निहित है। प्रायः कर्ण, छेदन, मुण्डन के साथ ही कर दिया जाता है। इस अवसर पर मुण्डन संस्कार के समय गाये जाने वाले गीत ही गाये जाते हैं।

वेशभूषा–

''हाथ में थख्ती, बगल में पोथी,
माथे पगड़ी रेशम डाल,
पगां पावड़्याँ मृगछाला ले,
मांड धोवती पटल्यां दार,
बाळो कासी चाल्यो री,
बाळो कासी चाल्यो री।''[8]

प्राचीन काल में विधार्थी गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त करते थे। हमारा जीवन सादा व उच्च विचार वाला रहा है। गीत में विधार्थी की वेशभूषा का वर्णन है। उसके हाथों में लकड़ी की बनी तख्ती, बगल में पुस्तक, सिर पर रेशम की पगड़ी, पैरों में लकड़ी की बनी खड़ाऊ, बैठने व सोने के लिए मृगछाला है। उसने धोती पहन रखी है। यह वेशभूषा हमारी संस्कृति की प्रतीक है। यहाँ भी बेटी लिए समाज में शिक्षा व्यवस्था का प्रावधान नहीं देखा जाता।

आभूषण–

हँसली गंळा की लाया
हाथां का कड़ला लाया
कळाई नजर्यां लाया
कमर कणकत्यां लाया
पगां छम छम्यां लाया
बेटी ने सब भूल गया''[9]

बच्चे के लिए हंसली, कड़े, करधनी और पायल आदि आभूषण आते हैं। बेटी के लिए आभूषण नहीं ओा हैं। यह सभी आभूषण सौंदर्य के साथ–साथ स्वास्थ्य प्रदत भी है। हंसली पहनाने से गले की हसली ऊपर की अस्थि नहीं उतरती है। पायल की ध्वनि बच्चे का मनोरंजन करती है साथ ही चलने की क्रिया को सहज बनाती है। बच्चों की कमर की अस्थि को कांधी उतरना कहते हैं। कमर में कणकती पहनाने से यह अस्थि नहीं उतरती ऐसी मान्यता है। विड़म्बना है कि कन्या के लिए कहीं से कुछ भी नहीं आता। मात्र कपड़े आते हैं।

भारत ने अपनी आजादी की अर्धशत्ी में ऐसे कई थाने प्रकोष्ठ बना लिए हैं, जहाँ पुलिस से लेकर थानेदारी और अफसर तक महिलाएँ ही है लेकिन जिस तेजी से कन्या भ्रूण–शिशुओं की हत्याएँ बढ़ी हैं। हर राज्य में नवयुवतियों की दहेज हत्याओं/आत्महत्याओं के अधिकाधिक मामलें दर्ज हो रहे हैं और तमाम निरोधक कानूनों के बावजूद नारियों का सती होना या उसकी चेष्टा करना भी जारी है, उससे लगता है कि ये असमर्थ पुलिस ईकाइयाँ शायद हमारी नारियों की अंदरूनी स्थिति और उनकी जरुरतों के हिसाब से नहीं, बल्कि राजनीतिक कारणों और विदेशों में निन्दा के भय से ही बनायी गयी है।

किसी भी लड़की के लिए आर्थिक आत्मनिर्भरता अपने लिए आजादी और इज्जत कमाने की पहली शर्त है। पाँव पर खड़े होने के लिए सबसे पहली जरुरत है, शिक्षित होना। शिक्षा के द्वारा ही उसमें अपने आस–पास की

परिस्थितियों का विश्लेषण और उसमें अपनी जगह की पहचान करने की समझ विकसित होती है। यह एक निहायत गलत धारणा है कि पुरुष प्रधान समाज को नकारने के लिए आज लड़कियाँ स्वावलम्बी होना चाहती हैं। ''हकीकत यह है कि एक घरेलू औरत या घरेलू महिला का दर्जा एक संभ्रांत भिखारी से ज्यादा नहीं होता। हर समाज में वर्चस्व का निर्धारण अर्थसत्ता से ही होता है। स्त्री का अर्थिक रूप से स्वतंत्र होना ही सामाजिक बदलाव की पहली शर्त है। उसकी आर्थिक आत्मनिर्भरता से बहुत सारे समीकरण बदल जाते हैं।''[10]

समानता की खोज–

आज की नारी न ता पुरुष के आगे रहना चाहती है नही उसके पीछे। वह तो उसके बराबर रहना चाहती है। गीत में यही भाव प्रतिध्वनित है–

''म्हूँ तो लार बरोबर चालूंगी
धण्यां मण्यां रा काका
आगै भी नीं चालूं
म्हूँ तो पाछै भी नीं चालूं
थारै लार बरोबर रेबो चाहूँ
धण्यां मण्यां रा काका।''[11]

सम्पूर्ण विश्व में स्त्रियाँ पुरुषों के समान अधिकार तथा पद चाहती हैं। सदियों से इनका शोषण हो रहा है। नारीवाद की उत्पत्ति ने महिला आन्दोलन और नारी–मुक्ति संगठनों को जन्म दिया है। आज घर के अन्दर पत्नी के समान, बहिन भाई के, पुत्री पुत्र के, बहूँ बेटी के समान अधिकार, सम्मान तथा समानता की माँग कर रही है। दूसरी ओर घर के बाहर समाज में नारी पुलिस, डॉक्टर, इन्जीनियर, पायलट और ऐसी ही अन्य सेवाओं में अपने हिस्से की माँग कर रही हैं। नारी घर और उसके बाहर समानता चाहती है। जो सुख–सुविधाएँ पुरुषों को प्राप्त हैं नारी भी वैसी सुख–सुविधाएँ और वस्तुएँ चाहती है। शिक्षित स्त्रियाँ बाहर व्यवसाय करने लगी हैं। अब नारी घर की चारदीवारी में नहीं रहना चाहती है। मूल्यों में वृद्धि का विरोध नारियाँ भी करने लगी हैं।

पितृसत्तात्मक समाज में स्त्रियाँ समानता की माँग कर रही हैं। महिला सामाजिक कार्यकर्ताओं, महिला–संगठनों राजनीतिज्ञों ने मूल्य–वृद्धि, दहेज, बलात्कार, शोषण आदि मामलों को उठाया है। इससे स्त्रियों में समानता के प्रति जागरुकता पैदा हुई है। अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस, अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष, नारी उत्थान सम्बन्धी सभाएँ, गोष्ठियाँ, अनुसन्धान आदि इसके परिणाम हैं। भारत सरकार द्वारा नियुक्त स्त्री प्रस्थिति सम्बन्धी समिति, 1974 की रिपोर्ट का सभी ने स्वागत किया था।

नारी की वस्तुस्थिति आज भी भयावह है। बम्बई, दिल्ली, कानपुर आदि महानगरों और नगरों में दहेज, हत्या, स्त्री–हत्या, बलात्कार आदि के विरुद्ध आए दिन हड़ताल और जुलूस निकलते हैं। अखबार ऐसी खबरों से भरे रहते हैं। मध्यम वर्ग, उच्च जातियों आदि में दहेज–हत्या तथा दहेज के लालच में वधुओं को जला देते हैं, अमानुषिक व्यवहार करते हैं। वधू, उसके माता–पिता, सम्बन्धियों आदि का आर्थिक तथा अन्य प्रकार से शोषण किया जाता है। अविवाहित–कामकाजी नारियों को वस्तु तथा धन समझा जाता है और सरलता से कम दहेज में विवाह सम्पन्न हो जाता है। ये सब घटनाक्रम यही स्पष्ट करते हैं कि नगरों में नारियों की स्थिति दयनीय है। माँग समानता की अवश्य हो रही है।

ग्रामीण क्षेत्रों में नारियों की स्थिति का अध्ययन करने से पता चला है कि वहाँ भी इनका जीवन घर की चारदीवारी में निम्न स्थिति में व्यतीत हो रहा है। आंद्रे बेत्तेई ने पाया है कि उच्च जातियों की देखा–देखी मध्यम एवं निम्न जातियों के ठीक आर्थिकी वाले परिवारों ने अपने घर की नारियों को घर के बाहर खेतों पर काम करने से रोक लिया है। समाज में ऐसे परिवारों की प्रतिष्ठा बढ़ जाती है, परन्तु ऐसा करने से नारियों की परम्परागत स्थिति में कोई अन्तर नहीं पड़ता है। स्त्रियों की दशा सुधारने में, अभी अनेक प्रयास करने होंगे तथा समय भी बहुत लगेगा।

नारी एक स्वतंत्र व्यक्तित्त्व–

नारी बचपन, जवानी आरै बुढ़ापे के प्रत्येक सौपान पर पुरुष के अधीन रहती है। लोकगीत में वह पति से निवेदन कर रही है कि तू तो मुझे गुलामी से मुक्त कर दे–

"पिंजरो खोल दे, गुलामी रौ भरतार,
कबूतरी नै उड़बा दे, हाँ पिंजरो खोल दे...
बाळपणा में बाबुल छाया, भरी जवानी बालम,
बुढ़ापे पूत री परछाई, भरगी आत्मा हरजाई
अब तो पिंजरो खोल दे... गुलामी रौ भरतार।"[12]

गीत के माध्यम से वह कहती है कि मैंने पग–पग पर नारी धर्म का निर्वाह किया है। अब तो मेरी काया खोखली हो गई है। मेरी हड्डी और फसलियाँ काम करते–करते घिस गई है। अब मैं भी स्वतंत्र होना चाहती हूँ–

"नारी धरम निभाता म्हारी खोळी होगी काया
हाड़–फांस्ळ्यां घसग्या म्हारा, सबनै जोड़ी माया
हाँ पिंजरो खोल दे... गुलामी को भगवान
पिंजरो खोल दे...गुलामी रौ भरतार।"[13]

सदियों से नारी को कभी भी एक स्वतंत्र व्यक्तित्त्व के रूप में समाज में स्थान नहीं दिया गया। धर्मशास्त्रों में नारी को बचपन में पिता, युवावस्था में पति तथा वृद्धावस्था में पुत्र के संरक्षण में रहने के विधान का उल्लेख है। पुत्री, वधू माता, सास, पत्नी आदि। एक सम्प्रदाय ने नारी शोषण एवं नारी की प्रस्थिति की समानता पूँजीवादी समाज में शोषित श्रमिकों से की है। पुरुष प्रधान परिवार में नारी पुरुषों पर भरण–पोषण के लिए आश्रित होती है। ग्रामों में वह खेतों पर भी काम करती है और घर में भी पूरा काम करती है। पितृसत्तात्मक परिवार में स्त्रियाँ पराधीन होती हैं। पुरुषों के अत्याचार सहन करती हैं। कामकाजी महिलाएँ भी पुरुषों के अधीन जीवनयापन करती हैं।

भारतीय नारी के अपने व्यक्तिगत मित्र नहीं होते हैं। उसके परिवार के बाहर उन्हीं लोगों से सम्बन्ध होते हैं जो परिवार के अन्य सदस्य स्थापित करते हैं। अगर नारी स्वयं स्वतंत्र रूप से मित्र बना लेती है तो उसे अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। अन्य पुरुष से सम्बन्धों को समाज हमेशा शक की नजर से देखता है। पर्दा–प्रथा एक अभिशाप है। दहेज हत्या, दुल्हन–दाह स्त्रियों की स्थिति को स्पष्ट करता है कि उसकी अलग से पहचान तो दूर की बात है वह एक जीव प्राणी के रूप में आत्म–रक्षा भी नहीं कर सकती है।

अनुलोम विवाह ने नारी की स्थिति निम्न कर दी है। संविधान ने यौन–भेद और जाति–भेद समाप्त कर दिया है। विवाह, तलाक, दहेज, बलात्कार, विधवा पुनर्विवाह, सम्पत्ति पर अधिकार आदि कानून बन गए हैं परन्तु व्यवहार में नारी इनका लाभ नहीं उठा पा रहीं है। अनेक तर्क तथा तथ्य देकर सिद्ध किया जाता है कि नारी पुरुष के समान है। परन्तु देखा जाए तो स्त्री–पुरुषों में अन्तर बढ़ गए हैं। साक्षरता, रोजगार, शिक्षा और प्रशिक्षण, स्त्री–मृत्यु–दर, स्वास्थ्य रक्षा, चिकित्सा सुविधाओं का उपयोग आदि में पुरुष की स्थिति अच्छी है। पुरुष–प्रधान समाज होने के कारण स्त्रियों का पिछड़ापन समाप्त नहीं हो पा रहा है। इस क्षेत्र में बहुत सुधार तथा प्रयास की आवश्यकता है।

स्त्रियों की दयनीय प्रस्थिति को धनी–निर्धन, शिक्षित–अशिक्षित ग्रामीण नगरीय संदर्भ में समझना होगा। लेओन ट्राटस्की का कथन है, ''पुरोषोचित अहंवाद की कोई सीमा नहीं है। संसार को समझना होगा संसार को समझने के लिए हमें इसको नारियों के नेत्रों से देखना होगा।''

मीणा समाज की कुछ नारियों में चेतना आकंठ है किंतु इन्हें सोई हुई नारियों को जागृत करने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन– डॉ. सत्येन्द्र पृ. 42।
2. राजस्थानी लोक साहित्य– नाथूराम संस्कर्ता, पृ. 42।
3. भोजपुरी लोकसाहित्य का अध्ययन– डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, पृ. 56।
4. हाड़ौती लोकगीतों में संस्कृति– डॉ. लीला मोदी, पृ. 52।
5. वही पृ. 52।
6. वही पृ. 52।
7. ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन– डॉ. सत्येन्द्र पृ. 72।
8. हाड़ौती लोकगीतों में संस्कृति– डॉ. लीला मोदी, पृ. 58।
9. वही पृ. 58।
10. राजस्थानी ग्रामीण गीत– रमापति शुक्ल, पृ. 45।
11. हाड़ौती लोकगीत– डॉ. लीला मोदी, पृ. 37।
12. वहीं– पृ. 41।
13. वहीं– पृ. 54।

<u>अध्याय–पंचम</u>

मीणा जनजाति में विवाहेत्तर सामाजिक चेतना–

5.1 वैवाहिक समस्याएँ।

5.2 दहेज प्रथा की समस्या।

5.3 विवाहेत्तर सामाजिक चेतना के विविध पक्ष।

5.4 राज्य एवं राष्ट्रीय सरकार की योजनाएँ एवं कार्यक्रम।

अध्याय–पंचम

मीणा जनजाति में विवाहेत्तर सामाजिक चेतना–

मीणा जाति मूल रूप में आदिम जनजाति है। शोषित और पीड़ित जातियों का अध्ययन करने वाले विद्वान मण्डलों ने भी इसे अनुसूचित जनजाति माना है, जो उपयुक्त भी है। आदिकाल से ही इनका इतिहास इसका साक्षी है कि ये लोग बीहड़ जंगलों तथा पर्वतों में रहकर आत्मरक्षा करते हुए अपना जीविकोपार्जन करते आये हैं। कुल–परम्परा का निर्वाह करते हुए इन्होंने अपने छोटे–छोटे राज्यों की स्थापना की और उन्हें संघबद्ध कर व्यवस्थित भी किया। तत्कालीन भारतीय राजनीति में मत्स्य भूमि के मीणाओं का संघ एक प्रबल और मान्य शक्ति के रूप में गिना जाता रहा हैं। फिर भी प्रायः स्वेच्छाचारी और बुद्धिजीवी होने के कारण इनकी संस्कृति अधिक विकसित नहीं हो पाई। यह बात इनके ऐतिहासिक इतिवत्त से स्पष्ट हो जाती है।

वास्तव में अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए किये जाने वाले संघर्ष और उसके निमित्त अपने आपको समृद्ध व सम्पन्न करने में मीणाओं को इतना अधिक श्रम व समय लगाना पड़ा कि जीवन के अन्य उच्च लक्ष्यों के प्रति इनका ध्यान आकर्षित नहीं हो सका। महाभारतकालीन मत्स्यराज विराट के जिस वैभव का वर्णन किया गया है उसे देखते हुए यह भी मानना पड़ता है कि किसी समय इनकी सभ्यता और संस्कृति उच्च स्तरीय थी। हो सकता है कि राजवर्गीय अल्पसंख्यक मीणे सम्पन्न और सुसंस्कृत हुए हों तथा बहुसंख्यक आदिवासी अपने तौर–तरीकों को ही अपनाए रहे हों।''[1] नागरिक जीवन से दूर रहने तथा वनों–पर्वतों में अभावों से घिरे रहने के कारण संभवतः ये सांस्कृतिक दृष्टि से पिछड़े रहे हों। वर्तमान समय में मीणा जनजाति में काफी तेजी से सामाजिक चेतना आयी जो एक प्रकार से समाज को गतिशीलता प्रदान कर रही है। आज मीणा जनजाति की नारियों से कई प्रकार की अपेक्षाएँ रखी जा रही है। मीणा समाज और संस्कृति के विशिष्ट पक्षों की कुछ उदाहरण के माध्यम से सामाजिक चेतना को स्पष्ट करने का प्रयास किया जा रहा है।

वैवाहिक समस्याएँ–

जन्म के उपरांत विवाह संस्कार ही सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। विवाह संस्कार का आरंभ पक्की से होता है। पक्की हो जाने के उपरांत सगाई होती है। लड़की वाला कुछ भेंट नाई तथा ब्राह्मण के हाथ भेजता है। लड़का चौक पर बैठकर उस भेंट को ग्रहण करता है। जो सम्बंधी वहाँ आते हैं उन्हें सगाई बढ़ जाने पर पान के बीड़े तथा बताशे बाँटे जाते हैं। सगाई पर यह गीत गाया जाता है–

''चंदण की चंदण पालकी ओ गढ़ि लायो लाल लुहार रे।
आंचळ मंचवणि मैमर डरावे, पाटन पै अरसी लगादूं रे।
रेसम बाण बुणाई पालिकड़ी, दौनि लगाई मखतुन की रे।
आदूत पादूत गिडु आऔ लागै सबकूं दिखाउं पोळ रे।
जा पे बैठे दोउ मिलि साजन खेलत झुंझना सारिए रे।''[2]

वैवाहिक मंगल कार्यों का आरंभ पीली चिट्ठी से होता है। वधु पक्ष से पीली चिट्ठी आती है। उसमें विवाह की तिथि निश्चित होती है तथा लगुन की तिथि भी तय होती है। इसके उपरांत बुआ एवं बेटी बहिनों को निमंत्रण भेजे जाते हैं। ये सभी लगुन लिखे जाने से पहले ही विवाह वाले घर में आ जाते हैं। निश्चित तिथि को लग्नपत्रिका आती है। यह विधिवत लड़के के हाथ पर रखी जाती है। उधर वर पत्रिका लड़की के हाथ पर इसमें इनके विवाह का कार्यक्रम लिखा होता है। लगुन लिखकर जिस लड़की का विवाह होता है उसके हाथ पर रोली अक्षत लगाकर कलाई से बाँधकर लगुन रखी जाती है। उस समय महिलायाँ लगुन गीत गाती है–

''लगुन गीत–हाथ डंडा मुख और खेलत है
चौहान मनोहर साँवरे।
घर आऔ न लाल लड़ाइते, लगुनादूत
उबे द्वार मनोहर साँवरे।
लला कौन रुके तुम नीतियां, और कौन

बबुल के पूत मनोहर साँवरे।
लला अपुने अनुज के नातिया,
अरु अपने बबलू रजपूत मनोहर साँवरे।''[3]

इस लगुन गीत में सम्पूर्ण वंश जैसे बाबा, ताउ, पिता, चाचा, दादी, ताई, माता, चाची, बहन आदि के वर्णन मिलते हैं। पूरा परिवार इस विवाह से प्रसन्न है और कन्या पक्ष के लोगों को लगता है कि अब तो बेटी परायी हो रही है।

जब बालक युवा हो जाता है तो गृहस्थ आश्रम में प्रवेश हेतु उसका विवाह करवाया जाता है। विवाह दो हृदयों के मिलन की सामाजिक स्वीकृति है। विवाह के पूर्व सगाई होती है जिसमें कन्या पक्षवाले वर के तिलक कर शगुन के तौर पर नारियल, गुड़–मिठाई, चाँदी का सिक्का देते हैं तथा परिवार के बड़े बुजुर्गों को सामर्थ्यानुसार रुपये, कपड़े आदि देते हैं। विवाह के कुछ दिनों पहले मूंग उछाणा अथवा पाँच धान बिखेरने की रस्म होती है। जिसमें परिवार की औरतें व आस–पड़ोस की औरतें मूंग आदि अनाज साफ करते हुए गीत गाती हैं। उन्हें मांगलिक गुड़ दिया जाता है। शुभ दिन शुभ घड़ी देखकर गणेश जी की स्थापना की जाती है। फिर वर वधू को 'बाने' पाट बिठाया जाता है। पीठी, (उबटन) चढ़ाई जाती है। वर वधु का रंग हल्दी की तरह निखर उठे इस अवसर पर हल्दी लोकगीत गाया जाता है–

''म्हारी हळ्दी रे रंग सुरंग, निपजै माळवे
मौलावे सुगनां बाई रा भाबोसा
माताजी रै मन रळे
वांरा माताजी चतुर सुजान, केसर केवड़े
बना थे हो केसर जोग, हळ्दी अंग चढ़ै।''

संस्कारों में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण संस्कार विवाह संस्कार है। गृहस्थ जीवन का प्रारंभ इसी संस्कार से है। भारतीय समाज में विवाह का अत्यंत महत्त्व माना गया है। विवाह जीवन की धुरी है। यह संस्कृति का जनक है।

समाजशास्त्र के अनुसार विवाह एक संस्था है जिसके अनुसार विवाह के कार्य व उद्देश्य इस प्रकार निर्धारित किये गए है–

1. स्त्री और पुरुष के यौन सम्बन्धों का नियंत्रण तथा वैधीकरण।
2. नैतिक, धार्मिक तथा सामाजिक कर्तव्यों का पालन करना।
3. संतान की उत्पत्ति, संरक्षण, पालन, शिक्षण आदि करना। उसे सुयोग्य बनाकर विवाह आदि करना।

विभिन्न स्मृतियों में आठ प्रकार के विवाहों का उल्लेख मिलता है जो इस प्रकार हैं–

1. ब्रह्मा 2. देव 3. प्राजापत्य 4. आर्य 5. असुर 6. गन्धर्व 7. राक्षस 8. पैशाच

इन आठ प्रकार के विवाहों में प्रथम चार प्रकार के प्रशस्त व शेष अप्रशस्त माने जाते हैं। विवाह का पैशाच प्रकार सबसे अधम है। ब्रम्हा विवाह, विवाह का सर्वश्रेष्ठ प्रकार माना जाता है। इस विवाह में पिता सर्वगुण सम्पन्न वर को स्वयं आमंत्रित कर उसका विधिवत संस्कार कर दक्षिणा के साथ यथाशक्ति वस्त्राभूषणों से अंलकृत कर कन्या का दान करता था।

करौली क्षेत्र में विवाह का ब्रह्म प्रकार ही वर्तमान हिन्दू समाज में प्रचलित है। करौली क्षेत्र में विवाह संस्कार का आरंभ सगाई और अन्त गोणा से होता है। इनमें आरंभ से अन्त तक की सभी क्रियाओं का सम्पादन गीतों के द्वारा होता है। विवाह विभिन्न अवसरों पर होने वाले कार्यों की समष्टि है। विवाह सगाई लग्न, विनायक, तेल, मंडप, निकासी, घोड़ी, पाणिग्रहण, विदाई और गौना आदि अनेक प्रमुख क्रियाएँ हैं।

सगाई गीतों में सामाजिकता–

सगाई–

सगाई से आशय विवाह से पूर्व होने वाली एक रस्म है जिससे विवाह संबंध निश्चित हो जाता है।

परंपरा–

इसका प्रारंभ कन्या पक्ष की ओर से होता है और उत्तर में वर पक्ष भी कन्या की गोद भरता है।

सगाई के समय गणेश जी, सती दियाड़ी, समस्त देवी देवताओं, पान, सुपारी, माला, तिलक, बना या बरना, ख्याल आदि के गीत गाये जाते हैं। लड़की वालों के यहाँ विवाह के समय बरनी या लाड़ी गायी जाती है। लड़के वालों के यहाँ बरने गाये जाते हैं। इन गीतों में विशेष रूप से सगाई का वर्णन है।

विवाह संस्कार और वैवाहिक गीतों में विभिन्न प्रकार की सांस्कृतिक व सामाजिक परंपराएँ देखने को मिलती हैं।

लग्न पत्रिका उकीरा–

विवाह के गीतों का प्रारंभ लग्न पत्रिका भेजने के दिन से प्रारंभ होता है। करौली क्षेत्र में लग्न पत्रिका को 'उकीरा' कहा जाता है। कन्या पक्ष वाले इस अवसर पर पाणिग्रहण का समय निश्चित करते हैं। पण्डित द्वारा पत्रिका लिखा कर वर पक्ष के पास भेजते हैं। वर पक्ष इसे लोगों की उपस्थिति में विधिवत स्वीकार करता है। इसे उकीरा झेलना कहते हैं। लग्न पत्रिका के साथ रुपये, नारियल, वस्त्र, आभूषण, मेवे, मिठाई, फल इत्यादि आते हैं। इस दिन से दोनों पक्षों में हर्ष, उल्लास, व्यस्तता आदि का संचार हो जाता है। इस दिन गाये जाने वाला लग्न पत्रिका का गीत वर वधू दोनों पक्षों के यहाँ भिन्न–भिन्न प्रकार का है।

वधू पक्ष के यहाँ–

गीत में बन्नी अपने दादा बाबा से लग्न लिखवाने का आग्रह कर ही है –

"बाबा जी म्हारो लगन मड़ाओ
म्हें भल जावेगा सासरे सर जीवज्यो
दादा जी म्हारा रूप्या खरचो
बीरा जी म्हारा असर्याँ सा सारो

नाना मामा जी म्हारो मायरो सजाओ
जीजा फूफा जी कुतरा ताड़ो उँठ उठाओ
म्हें भल जावेगाँ सासरे सर जीव ज्यो''[4]

वर पक्ष के यहाँ–

वर पक्ष के यहाँ लग्न में आने वाली सामग्री का वर्णन इस प्रकार है–

थाँका सासरा सूं, जी बना जी पतर्याँ आई राज
थाँका सासरा सूं जी बना जी चीरा आया राज
कागज बाच्यों क्यूं न लाडला, कांई हट लाग्या जी
म्हारी सांकड़ी को तोड़ो राइबर बिन्दी को रे मकोड़ो
म्हारा बाजूबन्द की लूम, लाडला कांई हट लाग्या जी

बंद्याक–

लग्न पत्रिका के पश्चात कोई भी शुभ दिन देखकर गाँव या शहर के प्रसिद्ध गणेश जी के यहाँ जाकर विधिवत उनकी पूजा की जाती है। यहाँ से पाँच कंकड़े लाये जाते हैं। उन्हें गणेश जी के रूप में पाटे पर स्थापित कर दिया जाता है। करौली क्षेत्र में गणेश स्थापना को बंद्याक बैठना कहते हैं। जन साधारण में 'बंद्याक' बैठना क्रिया से जो भाव ग्रहण किया जाता है। उसमें गणेश स्थापना के बाद वर या वधू के साथ एक ऐसे बालक को बंद्याक कहकर जोड़ दिया जाता है जो उसके साथ निमंत्रण पर भोजन करने जाता है। इस दिन से संबंधी और व्यवहार वाले वर या वधू को अपने अपने घरों पर भोजन कराना आरंभ कर देते हैं। इसके पीछे यह सामाजिक चेतना है कि भावी वर और वधू को अच्छा खाना खिलाकर हृष्ट–पुष्ट बनाया जावे ताकि भावी गृहस्थ जीवन में वे शारीरिक रूप से सबल रहें।

इस दिन बड़े गणेश जी का गीत भी गाया जाता है। गणेश जी से अपने कुल की मंगल कामना की जाती है और प्रार्थना की जाती है कि विवाह में मांगलिक कार्य के समय आप अवश्य पधारे यहाँ आपका स्वागत वंदनीय है। आप हमारी विपत्तियों का निवारण करें और समस्त विवाह कार्य में कभी भी

किसी प्रकार की कमी और विघ्न नहीं आने दें। करौली प्रदेश में रणथम्भौर के गणेश जी की मान्यता सबसे पुरातन और प्रसिद्ध है। गीत में उनसे प्रार्थना की गयी है।

"गढ़ रणत भँवर सूं आओ जी बंद्‌ायक
करो न अणचीती बरधड़ी
ओरां को बड़द जण जाओ जी बन्द्‌ायक
लखन लाल (नाम) जी की बड़द उतावळी
फैलो तो बासो बासो जी कांकड़
कांकड़ कलश बधाइयाँ"[5]

बारात और बराती–

बारात में आने वाले लोगों की चारित्रिक विशेषताएँ भी गीत में परिलक्षित है। बरने से निवेदन है कि बरात में सज्जन, विनम्र और व्यवहार कुशल व्यक्तियों को लाना ताकि मांगलिक कार्य में किसी भी प्रकार की बाधा न आने पाये–

भल भल लाज्यों जी बराती म्हांके बारणे

बारात में विशिष्ट और प्रसिद्ध स्थानों की वस्तुएँ जैसे कजली वन के हाथी, मेवाड़ के घोड़े, हाथी दांत का चूड़ला और जयपुर का पड़ला लाने का अनुनय किया गया है। इसके पीछे यह भाव है कि वर पक्ष का वैभव और सम्पन्नता का प्रभाव अन्य संबंधियों पर परिलक्षित है।

"हसती तो लाज्यो कजली देस का, जी म्हारा बाळक बना,
घुड़ला तो लाज्यो मेवाड़ का जी, म्हारा बाळक बना,
चुड़लो तो लाज्यो हाथी दाँत को, म्हारा बाळक बना,
पड़लो तो लाज्यो जयपुर सेर को जी, म्हारा बाळक बना।"[6]

वैभव का वर्णन–

गीत में बरनी के घर का वैभव वर्णित हैं। उसके घर का दरवाजा पूर्णामुखी है हाथी और घोड़े दरवाजे पर बंधे रहते हैं–

हाँ ये राइबर सूरज सामी छे पोळ,
हाथीड़ा हीन्दे छे म्हांके बारणे,
घुड़ला घूमे छे म्हा़ंके बारणे।

अन्य गीत में बाग में घर स्थित होने का प्रसंग है जहाँ सभी मग्न हो जाते हैं। मेरा घर अंगूर व वृक्षों के पास है–

अगन बाग में मगन बगीची में,
दाख तळे घर म्हारो छे।

पिता को शीघ्र विवाह करने हेतु उपालक्ष्य देना–

पुत्री को माता पिता से अत्यधिक लगाव होता है। वह अपनी शादी के समय कहती है कि पिताजी आपने मेरे हाथ पीले करने में शीघ्रता की है। यहाँ हाथ पीले करने से आशय लड़की का विवाह करना है। गीत इस प्रकार है–

कां है मैं जनम दियो रे, सुण बाबुल म्हारा,
हळदी का मोया, बेगा समोया,
कां है ने जल्दी करी रे, सुण बाबुल म्हारा।

लड़की वालों की प्रबंध क्षमता–

करौली क्षेत्र में विस्तृत बरात आती है फिर भी लड़की वाले इसका प्रबंध कुशलता पूर्वक करके अपनी प्रबंध क्षमता का परिचय देते हैं बरात में–

हाथीड़ा हजार आया, घुड़ला पचास जी,
कोई जनेत्यां को आर न पार।

तेल–

पाणिग्रहण से पाँच या सात दिन तेल चढ़ाने की क्रिया का आरंभ किया जाता है। कितने दिन के तेल है इसका निर्णय शास्त्रोक्त ढंग से किया जाता है। यदि पाँच दिन के तेल आये हो तो चार दिन तेल चढाये जाते हैं। मंडप छाने वाले दिन तेल चढ़ाने की क्रिया को भूलने का अभिनय किया जाता है। क्योंकि मंडप के दिन अत्यधिक क्रिया कलाप सम्पादित होते हैं। प्रथम दिनों में तेल चढ़ाये जाते हैं जबकि पाणिग्रहण के दिन तेल चढ़ाकर उतारे भी जाते हैं।

तेल चढ़ाना–

वर या वधू को पाटे पर पालथी मार कर बिठाया जाता है। चार स्त्रियाँ इनमें प्रायः भाभियाँ व बहिनें होती हैं। तेल चढ़ाने का कार्य करती है। इन्हें तेलणे कहा जाता है। यह सौभाग्यवती स्त्रियाँ ही होती हैं। यह उबटन और तेल चढ़ाने की क्रिया करती हैं। इस क्रिया में दोनों हाथों से लकड़ी के बने जूड़े, मूसल, कटार आदि को पकड़कर उबटन और तेल में अंगुलियाँ करके सर्वप्रथम सिलबट्टे का स्पर्श करती है सिलबट्टे को शिव पार्वती का प्रतीक माना जाता है फिर मंगल कलश स्पर्श करके वर या वधू के घुटने कंधे और अंत में सिर को छूकर उपर हाथ करके मंडप को छुआ जाता है। तेल चढ़ाने की क्रिया इसी क्रम से पाँच या सात बार तेल आने पर तेलों के अनुसार की जाती है। तेल चढ़ने के बाद से वर या वधू का घर से बाहर आना जाना निषेध कर दिया जाता है नंगे पाँव रखा जाता है। इनमें देवता का निवास माना जाता है। उनके पास सदैव एक कटार रखी जाती है। इस प्रकार वर–वधू की स्कीन को स्निग्ध और कांतिमय बनाया जाता है

तेल उतारना–

पाणिग्रहण के दिन तेल उतारे जाते हैं। इस प्रक्रिया में तेल चढ़ाने से विपरीत क्रिया की जाती है। इस समय तेलों के गीत गाये जाते हैं। गीतों में तेल, हल्दी और छाड़–छड़ीला स्वयं वर और वधू के अंग चढ़ने को लालयित है–

"तेल बोल्यो छे तेली के, हळदी बोली छे बाण्यां के,
छाड़ छड़ीलो बोल्यो पंसारी के,
कब चढ़सी म्हारी लाड–लडी के सीस,
सेळी बधावणों।"

बहिन की महत्त्वाकांक्षा–

गीतों में बहिन का लालच और महत्ती इच्छा भी देखी जाती है। भाई गरीब है लेकिन फिर भी वह अपनी बहिन का इंतजार करता है कि वह उसे

निमंत्रण देने आये। बहिन अपने सगे भाई से पूर्व अमीर चाचा, बाबा और ममेरे भाइयों के यहाँ बतीसी लेकर जाती है। उसे आशा है कि इन अमीर भाईयों के यहाँ से उसे अच्छा भात प्राप्त होगा परन्तु सभी कुछ न कुछ बहाना बनाकर टाल देते हैं। इस तरह वह भात के खंर्चों से बच जाते हैं। गीत इस प्रकार है–

बाबा जी का प्यारा बेटा बतीसी तो झेल
बाई घर परणे छे भाणजी
म्हारे तो बणा जनमी छे गाय
काका जी को बेटो झेलसी
काका जी का प्यारा बेटा बतीसी तो झेल। बाई घर..
म्हारे घर बणा जी जनमियो छे पूत
भुआ जी को बेटो झेलसी
भुआ जी का बेटा बतीसी तो झेल। बाई घर....
म्हारे तो बणा छे खल्याणा को काम
जामण को जायो झेलसी
लखन लाल (नाम) बीरो झेलसी
लखन लाल बीरा बतीसी तो झेल। बाई घर...

इन बीतों से शिक्षा मिलती है कि अपनें तो अपने ही होते हैं। रक्त संबन्ध शाश्वत है इस संबंध में कहावत है– ''बैठना तो भाईयों का चाहे बैर ही हो।''

ननद–भाभी का रुचिकर संबंध–

बीरा गीतों में ननद और भाभी का रुचिकर सम्बंध विभिन्न प्रकार से व्यक्त है। भाभी का ननद के प्रति असीम प्रेम और अनुराग गीतों में वर्णित है। यह ननद को बजाजी के यहाँ ले जाकर वृन्दावन की प्रसिद्ध चून्दड़ी और सर्राफ और मालिन के यहाँ ले जाकर जेवर और फूलों से बने हार दिलवाने की इच्छा प्रकट कर रही है। इनके साथ ही पंसारी, मोची और गंधी से संबंधित वस्तुएँ भी भात में दिलाने को उत्सुक है–

''चालो जी नणद बाई आपण बजाजी के चालां,
थांने आछी–आछी चूंदड़ मुलावां म्हारा बाई सा,
मुलावां बनराबन की चूँदड़ी।''[7]

बरात प्रस्थान के गीत–

बरात प्रस्थान के समय सभी महिलाएँ आनंद और उल्लास के साथ गीत गाती हैं। इन गीतों में महिलाएँ पुरुषों के साथ स्वयं भी बरात में जाना चाहती हैं, यह अभिव्यक्त करती है। निम्नलिखित गीत में बरने की दादी, भाभी, काकी आदि बरने से निवेदन कर रही है कि जिस विधि–विधान से तुम्हारी पूर्व की पीढ़ियों बाबा, दादा, काका आदि ने विवाह किया है, उसी प्रकार तुम भी विवाह करना। गीत में सांस्कृतिक परंपरा का निर्वाह करने का आग्रह है–

''बना थाँकौ बाबा जी परण्यां ज्यूं ही परणज्यो
बना थाँकौ दादा जी परण्या ज्यूं ही परणज्यो
बना जी थाँकी चढ़ी छे बरात
बना जी थाँका बाबा जी हरकण लाग्या
बना थाँकी भाबू मायड़ नरखण लागी।''[8]

अन्य गीत में महिलाएँ स्वयं भी बरात में चलने का आग्रह कर रही हैं।

बना थाँकी बरातां में सज्या छे बराती
बाबा जी तो थाँका भला सणगार्या
थाँकी भाबू न जान में बराबर राखो जी

करौली क्षेत्र में विशाल बरात आने की परम्परा रही है। बरात हाथी, घोड़ो और बैलगाडियों में आती थी, क्योंकि पहले मुख्य साधन यही थे। पशुधन लोगों की सम्पन्नता का सूचक है।

तोरण–

तोरण का अर्थ किसी घर या नगर के बाहरी फाटक से है। वधू के घर के मुख्य द्वार पर तोरण बनवाकर लटकाया जाता है। तोरण को तलवार या कटार से वर के द्वारा स्पर्श कराया जाता है। इसके बाद ही वह पाणिग्रहण के

लिए घर में प्रवेश कर पाता है। यह क्रिया विजय की प्रतीक है। वीर वेश में सुसज्जित वर तलवार से प्रहार करके विजय प्राप्त करता है। यह विवाह से पहले युद्ध होने का परिचायक है जो अब मात्र रूढ़ि बन कर रह गया है।

तोरण के विषय में एक बहुप्रचलित कथा है। एक बार एक पिता ने परिहास में अपनी पुत्री से कहा कि तेरा विवाह तो मैं चिड़े से करुँगा। तू दिनभर चक–चक, चक–चक, रहती है। यह बात पुत्री को लग गई और उसने प्रण कर लिया कि यदि वह विवाह करेगी तो चिड़े से ही करेगी। जब वह विवाह योग्य हुई तो उसके पिता ने योग्य वर की तलाश आरंभ कर दी, इस पर कन्या ने अपने पिता का चिड़े से ब्याह करने की पिता द्वारा कही बात और स्वयं द्वारा की गयी प्रतिज्ञा का स्मरण कराया। पिता पुत्री की प्रतिज्ञा से असमंजस में पड़ गये और पुत्री से कहा कि लोक समाज में ऐसा होना असंभव है। इस पर पुत्री ने कहा कि यदि कोई व्यक्ति उस चिड़े से अधिक शक्तिशाली हो तो वह चिड़े से युद्ध करके विजयी बने और मुझे ब्याह कर ले जाये। ब्याह के बाद मैं कम बोलूंगी। इसीलिए प्रतीक के रूप में आज भी तोरण पर पाँच चिड़े या आकार के अनुसार चाहे एक ही चिड़ा बनाया जाये पर बनाया अवश्य जाता है। वर से पहले इन चिड़ों से युद्ध के रूप में तलवार का स्पर्श कराया जाता है इसके बाद ही वह पाणिग्रहण के लिए घर में प्रवेश करता है। इस प्रकार लड़कियों को ब्याह के बाद कम बोलने की चेतना दी जाती है–

> ''नाप तोल के बोल चिड़कली सासरियें,
> सबद तीर पाछा न आय,
> सासू नणदां नै बोल न सुहायें''
> नाड़ नमां कै हाँ कैह दीजै
> कड्डुवां बोल कळेजे पीजै''

अगवाणी एवं प्रमुख रूप से कामण और गालियां गाई जाती है। लड़की के यहाँ सुहाग भी गाये जाते हैं।

फेरे–

इसमे वर और वधू का गठजोड़ा बांधकर सात बार अग्नि की प्रदक्षिणा की जाती है। शास्त्रोक्त विधि से वह कार्य सम्पन्न किया जाता है। छः फेरों में कन्या आगे रहती है। सातवें फेरे में वर आगे हो जाता। छः फेरों तक कन्या पर पीहर पक्ष के लोगों का अधिकार होता है। सातवें फेरे के साथ ही पति का अधिकार हो जाता है। गीत इस प्रकार है–

''लाड़ी आगनों फेरो ये बाबा दादा जी की,
लाड़ी दूजो फेरो ये काका मामा जी की,
लाड़ी सतवों फेरों ये लाड़ी लाड़ा की।''[9]

पुनर्जन्म और कर्मवाद में विश्वास–

मनुष्य अपने कर्मों के अनुसार फल पाता है। अच्छे कार्यों से पुण्य तथा बुरे कार्यों से पाप मिलता है। ब्यावला गीत इस बात की पुष्टि करता है कि प्राणी द्वारा किये शुभ या अशुभ कर्मों का फल अवश्य ही उसे भोगना पड़ता है। यह कर्म चाहे पूर्व जन्म में किये गये हों या इस जन्म में। जीव को चौरासी लाख यौनियों में भ्रमण करने वाला माना गया है। वह एक जन्म से दूसरा जन्म लेता हुआ कभी सुख भोगता है तो कभी दुःख। कर्म की विचित्र गतियों के कारण समस्त जगत जीव का संचरण क्षेत्र रहता है। इन विभिन्न परिस्थितियों में अनेक प्रकार का अनुभव मनुष्य को सुकर्म की ओर अग्रसर करता है। यह मनुष्य में प्रेम, सहिष्णुता, दया, समन्वय और उच्चादर्श की प्रेरणा भर देता है। अतः कर्मवाद और पुनर्जन्म में विश्वास भारतीय संस्कृति की अद्वितीय विशेषता है। गीत में यह भाव इस प्रकार अभिव्यक्त है–

पूजा जस्या पा लिया जी म्हांने वर जोड़ी भरतार,
कर्‌या जसा भोगस्यां जी जीवन में करतार।

कन्यादान–

कन्या के दान को समस्त दानों में सर्वश्रेष्ठ माना जाता है–

हसत्यां चढ़ता आओ वासुदेव जी का जाया,

लो ने कन्या को दान जी, गउ को दान तो सब कोई देसी,
कन्या को दान दोहेलो जी।

यहाँ की संस्कृति में कन्यादान करके पिता उऋण हो जाता है।

दहेज प्रथा–

विवाह के समय अपार दहेज देने की प्रथा भी पाई जाती है। दहेज में पशुधन, धातु, खेती, नगर, ग्राम आदि देने का वर्णन है।

सात फेरां की सत लख गायां, हाथी घोड़ा अपरम्पार जी,
चाँदी दीनी, सूनों दीनो, काँसी की अपरम्पार जी,
सात योजन गाँव दीना, हीरां मोत्यां की खान जी।

परन्तु दहेज स्वेच्छा और अपनी श्रद्धा के अनुसार दिया जाता है। प्रत्येक परिवार अपनी सामर्थ्य के अनुसार प्रसन्न होकर दहेज देता है। वर्तमान में दहेज प्रथा ने विकराल और कुत्सित रुप धारण कर दिया है।

जन्म से लेकर मृत्यु तक के सभी संस्कारों में विवाह तथा मृतक संस्कार ही प्रधान है। वैसे पुत्र–जन्म पर भी आनन्दोत्सव होते हैं। विवाह फेरों द्वारा पुरोहित ही कराते हैं। पर नाते की प्रथा भी प्रचलित है। अधिकतर मीणे अपने समाज में ही विवाह करते हैं, पर अन्य जाति की स्त्रियां भी रख ली जाती हैं, जिनसे उत्पन्न संतान आज–कल मीणा समाज से पृथक ही रखी जाती है। अनेक विद्वान कई गोत्र के मीणों की उत्पत्ति भी राजपूत पुरुषों तथा मीणा स्त्रियों के संगम से मानते हैं, पर मीणे अपने आपको राजपूत वंशों से प्रकट होना मानते हैं। इस विषय में विस्तार से चर्चा की जा चुकी है।

मीणा जाति में प्रायःछोटी अवस्था में ही शादियां हो जाती है। कई बार तो गोद में बच्चे–बच्चियों को भी वैवाहिक बंधन में बांध दिया जाता है।''[10] पुराने समय में राजनीतिक तथा सामाजिक कारणों से ऐसा किया जाता था, पर आज उस परम्परा का पालन अशिक्षा का परिणाम ही है। मेव, मेर आदि के रूप में मुसलमान बने हुये मीणा भी फेरों के माध्यम से पुरोहितों द्वारा विवाह सम्पन्न करवाते थे, पर अब वे निकाह आदि अपनाने लगे हैं। पौराणिक मान्यताओं के

अनुसार बताया जाता है कि मुसलमान तथा हिन्दू मीणों में भी आपसी विवाह होते थे। मुसलमान मीणे की लड़की हिन्दू घर में जाने पर मृत्यु के बाद जलाई जाती थी। जब हिन्दू मीणी मुसलमान मीणे की पत्नी बनने पर दफनाई जाती थी। इस प्रकार धर्म का प्रतिबंध वैवाहिक संबंधों में बाधक नहीं हो पाता था। टोडरमल मेव के पुत्र दरियाखां तथा बादाराव मीणे की पुत्री शाशिवदनी का वैवाहिक संबंध ऐसे रिश्तों में अंतिम कहा जाता है। पर इसके कोई पुष्ट प्रमाण नहीं है। चौहान, राजपूतों से बदलकर क्या मखानी बने मुसलमानों के संबंध राजपूतों में नहीं होते थे, पर मीणों में ऐसे संबंध प्रायः होते थे।''[11]

हण्डूकड़ी प्रथा–

तलाक की प्रथा भी प्रचलित थी। पुरुष अपने दुपट्टे का टुकड़ा फाड़कर स्त्री को दे देता, जिसे लेकर तथा जल भरे दो घड़े लेकर वह मन चाही दिषा में चली जाती। जो उसके घड़े उतार लेता वही उसका पति बन जाता। 'हण्डूकड़ी' नामक एक ऐसी ही प्रथा सवाई–माधोपुर जिले के मीणों में बताई जाती थी, जिसमें जल भरे घड़े लेकर जाती हुई कुमारी के पीछे दौड़कर घड़ा उतार लेने वालों में सर्वप्रथम के साथ उसका विवाह कर दिया जाता था। यह स्वयंवर के समान ही एक प्रथा है, जो अवश्य ही आदिवासी जातियों की रीति से मिलती है–

''हण्डूकड़ी की माथणी माधोपुर उतरी रे
फेटो फाड़ टूकड़ें सूप्यो, गंडकड़ा नै आजूं
माथै पे सूं घड़ो उतार्यों, ऊं मेरो सरताजूं
हण्डूकड़ी की माथणी बरवाड़े उतरी रे,
बरवाड़े उतरी रे, टटवारे उतरी रे।''

नाते के समय स्त्री पूर्व पति तथा पीहर वालों को कुछ रुपया देने की प्रथा भी है, जिन्हें क्रमशः खत या कागजी तथा मायस कहा जाता है।

दहेज प्रथा की समस्या–

दहेज का अर्थ है जो सम्पत्ति, विवाह के समय वधू के परिवार की तरफ से वर को दी जाती है। दहेज को उर्दू में 'जहेज' कहते हैं। यूरोप, एशिया, अफ्रीका और दुनिया के अन्य भागों में दहेज प्रथा का लंबा इतिहास है। भारत में इसे **दहेज, हुंड** या **वर दक्षिणा** के नाम से भी जाना है तथा वधू के परिवार द्वारा नकद या वस्तुओं के रूप में यह वर के परिवार को वधू के साथ दिया जाता है। संभवतः इस प्रथा को उन समाजों में महत्त्व प्राप्त हुआ होगा, जहाँ छोटी उम्र में विवाह प्रचलित रहे होंगे।

दहेज का उद्देश्य–

दहेज का उद्देश्य नवविवाहित पुरुष को गृहस्थी जमाने में मदद करना था, जो अन्य आर्थिक संसाधनों के अभाव में शायद वह स्वयं नहीं कर सकता था। कुछ समाजों में दहेज का एक अन्य उद्देश्य भी था, पति की अकस्मात् मुत्यु होने पर पत्नी को जीवन निभाई में सहायता देना। दहेज के पीछे एक अवधारणा यह भी रही होगी कि पति, विवाह के साथ आई जिम्मेदारी का निर्वाह ठीक तरह से कर सके। वर्तमान युग में भी दहेज नवविाहितों के जीवन–निर्वाह में मदद के उद्देश्य से ही दिया जाता है।

वधू मूल्य–

एक प्रतिरोधी प्रथा है 'वधू–मूल्य', वधू के परिवार द्वारा उसके बदले बहुमूल्य नकद या वस्तुओं की प्राप्ति। अतः वधू–मूल्य एक प्रकार का विनियम है। दहेज और वधू–मूल्य के बारे में एक विशिष्ट तथ्य यह है कि दहेज ऊँची जतियों में प्रचलित है, जबकि वधू–मूल्य प्रधानतः निम्न जातियों और जनजातियों (आदिवासियों) में प्रचलित है। वधू–मूल्य के बारे में यह तर्क है कि जाति व्यवस्था में निम्न जातियाँ (वैश्य और शूद्र) अधिकांश शारीरिक एवं तुच्छ समझे जाने वाले कार्य करती हैं। परिवार में आने वाली एक वधू का अर्थ है, आय एवं कार्य के लिए अतिरिक्त श्रम, जबकि दुल्हन के परिवार में एक कमाने

वाले सदस्य की कमी हो जाती है। इसलिए वधू–मूल्य द्वारा इसकी क्षतिपूर्ति की जाती है।

दहेज के सामाजिक प्रभाव–

दहेज प्रथा के अनेक सामाजिक–आर्थिक प्रभाव हैं तथा इसके कई सुनिश्चित विपरीत परिणाम हैं। यद्यपि दहेज प्रथा दुनिया के अनेक देशों में प्रचलित है, परंतु भारत में इसने संकटपूर्ण स्थितियाँ निर्मित कर दी है। ढिंढोरा पीटा जाता है कि दहेज लेना या देना सामाजित अपराध है और कानून द्वारा इसे प्रतिबंधित भी किया गया हैं, लेकिन यह बुराई जारी है। समाज के पढ़े–लिखे वर्ग में भी विवाह तय करते समय इसे चर्चा का आवश्यक अंग बनाया जाता है। विवाह के समय दहेज की वस्तुओं को सामाजिक हैसियत के रूप में प्रदर्शित किया जाता है। वर–वधू के परिवारों के बीच कई बार दहेज को लेकर सहमति न होने पर रिश्ते टूट जाते हैं।

दहेज से हानि–

दहेज प्रथा के वीभत्स प्रमाण हैं, प्रताड़नाओं की घटनाएँ, जो अंततः नवविवाहित वधुओं की 'दहेज हत्या' के रूप में परिणत होती हैं। लड़कियों के साथ बुरे बर्ताव, भेदभाव तथा कन्या भ्रूण और कन्या शिशुओं की हत्या जैसे जघन्य कृत्यों के रूप में सामने आने वाले इसके दुष्परिणाम दहेज प्रथा की उस क्रूरता को प्रदर्शित करते हैं, जिसका सामना अब भी करना पड़ रहा है।

संवैधानिक अधिकारों में भिन्न कानूनों के द्वारा नारियों को पुरुषों के समान अधिकार मिलने से उनके स्थिति में परिवर्तन हुआ। नारियों के विवाह विच्छेद होने पर परिवार की सम्पत्ति में पुरुषों के समान अधिकार दिये गये। दहेज का कानूनी प्रतिबंध लगा तथा उन व्यक्तियों के लिये कठोर दण्ड की व्यवस्था की गई, जो दहेज की मांग को लेकर नारियों का उत्पीड़न करते हैं। अब सरकार लिविंग रिलेशन पर विचार कर रही हैं। संयुक्त परिवारों के विघटन होने से जैसे–जैसे एकाकी परिवार की संख्या बढ़ी इनमें न केवल

नारियों को सम्मानित स्थान मिलने लगा, बल्कि लड़कियों की शिक्षा को भी एक प्रमुख आवश्यकता के रूप में देखा जाने लगा।

मीणा जनजाति में दहेज प्रथा वर्तमान समय में एक समस्या बन गई है। करौली जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले बहुत से मीणा परिवार जिनकी आर्थिक स्थिति कमजोर है उनके लिए दहेज प्रथा एक समस्या है। आज भी बहुत से मीणा परिवार कृषि एवं मजदूरी पर निर्भर हैं जिस कारण से शादी करते समय उन्हें बहुत सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है जो उनके लिए एक प्रकार अभिशाप है। दहेज प्रथा वास्तव में हमारे समाज के लिए एक बीमारी है जिसने बहुत से परिवारों को नष्ट कर दिया है।

कम शिक्षित –

यदि हमे हमारे समाज का विकास करना है तो नारियों का उत्थान करना होगा, नारियों का विकास होने पर समाज का विकास स्वतः हो जावेगा। जवाहरलाल नेहरू ने कहा है कि– ''नारियों को शिक्षा देने तथा सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिए जो सुधार अंदोलन प्रारंभ हुआ, उससे समाज में एक नई जागरुकता उत्पन्न हुई है। बाल विवाह, भ्रूण हत्या पर सरकार द्वारा रोक लगाने का अथक प्रयास हुआ है। शैक्षणिक गतिशीलता से पारिवारिक जीवन में परिवर्तन हुआ है।'' गाँधी जी ने कहा था कि– ''एक लड़के की शिक्षा की अपेक्षा एक लड़की की शिक्षा अधिक महत्पूर्ण है, क्योंकि लड़के को शिक्षित करने पर वह अकेला शिक्षित होता है, किन्तु एक लड़की शिक्षा से पूरा परिवार शिक्षित हो जाता है।'' शिक्षा एक वह कुंजी हैं, जो जीवन के बाह्य सभी द्वार खोल देती हैं, जो कि आवश्यक रूप से सामाजिक हैं। शिक्षित नारियों को राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय होने में बहुत मदद मिली। महिलाएँ अपनी स्थिति व अपने अधिकारों के विषय में सचेत होने लगीं। शिक्षा ने उन्हें आर्थिक, राजनीतिक व सामाजिक न्याय पुरुष के साथ समानता के अधिकारों को समान करने में प्रेरित किया।

महिला शिक्षा समाज का आधार है पर समाज द्वारा पुरुष को शिक्षित करने का लाभ केवल मात्र पुरुष को होता है, जबकि महिला शिक्षा का स्पष्ट लाभ परिवार, समाज एवं सम्पूर्ण राष्ट्र को होता है। महिला ही माता के रूप में बच्चे की प्रथम अध्यापक बनती है। महिला शिक्षा एवं संस्कृति को सभी क्षेत्रों में पर्याप्त समर्थन मिला। यद्यपि कुछ समय तक महिला शिक्षा के समर्थक कम, किन्तु आज समय एवं परिस्थितियों ने महिला शिक्षा कों अनिवार्य बना दिया है।

राजस्थान की साक्षरता प्रतिशत कुल साक्षर 61.10 प्रतिशत एवं देश में 26वाँ स्थान महिला साक्षरता कुल 52.1 प्रतिशत है। करौली जिले के मीणा जनजाति के कई परिवारों में शिक्षा का अभाव होने के कारण बहुत सी महिलाएँ अंधविश्वास को मानती हैं, शिक्षा जीवन के विकास को रोकती है बिना शिक्षा के जीवन अपूर्ण माना जाता है।''[12]

यह एक विड़म्बना है कि भारत की आजादी के इतने वर्ष बाद भी भारत के आदिवासियों को राजनीतिक क्षेत्रों में गंभीरता से नहीं लिया जाता है। उनको राष्ट्र के बड़े पदों यथाः राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, राजदूत, कुलपति, आयोग की अध्यक्षता आदि पदों में स्थान नहीं दिया जाता है, जो एक गम्भीर चिन्ता का विषय है। सभी राजनीतिक दलों को इस पर गंभीरता से विचार करना होगा। आदिवासियों की लगातार अनदेखी राष्ट्र में गम्भीर समस्या पैदा कर सकती है तथा कथित माओवादी आंदोलन से कुछ सीख लेनी चाहिए।

भारत में 10 करोड़ आदिवासी निवास करते हैं, लेकिन भारत के संविधान में आदिवासी शब्द को कहीं भी स्थान नहीं दिया गया है। जनजाति शब्द 'आदिवासी' शब्द के लिए सार्थक नहीं हैं इस विषय में उचित संशोधन किया जाना चाहिए।

अंधविश्वास–

अन्य ग्रामीणों की तरह मीणों में भी कई घर अंधविश्वास से घिरे हुए हैं। जादू–टोना, भूत–प्रेत, जंतर–मंतर आदि के प्रति इनकी श्रद्धा है। प्राचीन मीणों

में शगुन के प्रति काफी श्रद्धा थी। बिना शगुन के ये लोग कहीं भी प्रवास नहीं करते थे–

''म्हारा फरकै दायां अंग,
शगुन उळां होय रिया
पाड़ौसण छींक दियो
शगुन उळां होय गिया
गेल काटी रे काळी बल्ली
शगुन उळां होय गिया
मारी भाईल्यां नै मूंठ
शगुन बुरा होय गिया
मुख देखण रो टूट्यो काँच
शगुन उळां होय गिया
मीणा हार गिया सिरदार
मालवै भाज गिया।''

प्रायः इतिहासकारों तथा कवियों ने मीणाओं के शगुनों की बात जोर देकर कही है। प्राचीनकाल में दौड़ करने वाले को अदृश्य को जानने की इच्छा स्वाभाविक रूप से होनी चाहिए थी। शगुनों का समाज में उन दिनों भी बड़ा आदर होता था और आज भी है। हमारा प्राचीन कृषि–शास्त्र शगुनों की मान्यताओं पर बहुत कुछ आधारित था। शगुन वास्तव में लंबे अनुभव के निचोड़ रूप में पीढ़ियों से आज में परम्परागत रूप से चले आते रहे हैं तथा भारतीय ज्योतिष का यह एक विशिष्ट अंग ही बन गया है।

मीणाओं के अंधविश्वासों के कुछ और दिलचस्प उदाहरण बताये जाते हैं। मीणा समाज में एक कहावत प्रचलित है–''मीणा मालवै जासी, कछावा हल बासी।'' कछवाहों द्वारा सत्ता हथिया लेने पर प्राचीनकाल में मालवा के पठारों की तरफ चले जाने वाले मीणाओं की स्मृति की सूचक यह कहावत अशिक्षित समाज में अंधविश्वास बन गई है और लोग इसे भविष्यवाणी मान कर चलते

हैं।''[13] ऐसे ही एक अन्ध मान्यता यह है कि कछवाहा जयसिंह द्वारा मीणाओं की बुद्धि होम दी गई थी, इसलिये मीणाओं में कोई बुद्धिमान नहीं हो सकता। कहते हैं कि महाराज जयसिंह ने जब यज्ञ किया तो उस समय मीणाओं का पुतला बनाकर जलाया गया था। इन मान्यताओं में कितना तथ्य है, कहा नहीं जा सकता, पर रियासती समय में मीणाओं को उच्च शिक्षा की सुविधा नहीं थी।

पानी भरने की विकट समस्या–

विवाहेत्तर समस्याओं में गाँवों में पानी भरने की समस्या सबसे भंयकर है। कुएं और बावड़ियों से जल भरकर प्रतिदिन लाना नारी के लिए दुर्लभ कार्य है। कई लोग तो अपनी बेटियों को ऐसे गाँवों में ब्याहते भी नहीं हैं। यदि विवाह हो जाए तो पानी प्रकरण में उसे सास कसाई के समान लगती है–

''पनघट ते पनियां भराई रे
हाय मेरी सासू कसाई रे
सिर पर घड़ा, घड़े पर गागर
गागर पै चरी उचवाई रे
हाय मेरी सासू कसाई रे''

इसके बाद स्नान व सारे घर के कपड़े प्रतिदिन धोने के लिए सागर या तालाब में जाना पड़ता है। साथ में जिठानी भी जाती है। गाँव की नारियों को कार्य जीवन भर प्रतिदिन करना पड़ता है–

''सागर ते कपड़े धुलाई रे
हाय जिठानी कसाई रे
माथै धरा पोटला भारी
कांधै चादरें लटकाई रे
हाय जिठानी कसाई रे''

इसके विपरीत ऐसे घर–परिवार भी है, नवविवाहिता का ध्यान प्यार से रखा जाता है। परिवार में इस समस्या का समाधान कैसे किया लोकगीत में देखिए ससुर ने सोने की चरी मंगवा दी। नववधू खुशी से पानी भरने जाने लगी––

''नाजुक नरम कलाई रे,
हाय पनियां कैया जाऊँ रे
म्हूँ ससुर री लाड़ली रे
सूनां री चरियां मंगाई रे
हाय पनियां अेसां जाऊँ रे''

जेठजी ने रेशम की रस्सी मंगवा दी–

''नाजुक नरम कलाई रे,
हाय पनियां कैया जाऊँ रे
म्हूँ जेठजी री लाड़ली
रेशम री नेज़ मंगाई रे
हाय पनियां अेसां जाऊँ रे''

लाड़ले देवर ने मखमल की ईड़ौळी मंगवा दी–

''नाजुक नरम कलाई रे,
हाय पनियां कैया जाऊँ रे
म्हूँ देवर री लाड़ली रे
मखमल री ईड़ौळी मंगाई रे
हाय पनियां अेसां जाऊँ रे''

राजस्थान जनगणना 2011 (संशोधित आंकड़े) मई, 2013

साक्षरता दर अनु.जाति, जनजाति कार्यशील जनसंख्या, (0.6) आयु समूह की जनसंख्या, शिशु लिंगानुपात।

क्रं. सं. जिला	राज्य की साक्षरता दर.			अनु.जाति जनसंख्या	अनु. जनजाति जनसंख्या	कार्यशील जनसंख्या जिले में.	0.6 आयु समूह की	
करौली	कुल	पु.	महिला	3,54,465	3,24,960	43.1	जनसंख्या	लिंगानुपात
	66.2	81.4	48.6				2,41,357	852

करौली जिले का लिंगानुपात – 861 प्रति 1 हजार

राजस्थान साक्षरताः जनगणना 2011 के आँकड़ों के अनुसार–

साक्षरता से तात्पर्य यहाँ 7 वर्ष आयु या इससे अधिक आयु के व्यक्तियों को अक्षरों का ज्ञान एवं समक्ष हो, साक्षर समझे जाते हैं।

कुल साक्षर – 61.10%

देश मे राज्य – 26वां

पुरुष साक्षरता – 79.2%.

महिला साक्षरता – 52.1%.

करौली की कुल साक्षरता – 66.2%

राजस्थान में स्थान – 14वां

करौली जिला पुरुष साक्षरता – 81.4%

राजस्थान में स्थान – 10वां

करौली जिला की महिला साक्षरता – 48.6%

राजस्थान मे स्थान – 16वां

पुरुष – साक्षरता दर राजस्थान	
पुरुष साक्षरता दर	महिला साक्षरता दर
जनगणना 2011	जनगणना 2011
राजस्थान – 79.2	राजस्थान – 52.1
ग्रामीण – 76.2	ग्रामीण – 45.8
नगरीय – 87.9	नगरीय – 70.7

अनु. जाति एवं जनजाति राजस्थान एवं भारत जनसंख्या –

राजस्थान 2011	**भारत 2011**
राजस्थान में अनु.जनजाति जनसंख्या – 92.38 लाख।	भारत में अनु.जनजाति जनसंख्या – 10.42 करोड़।

देश की कुल अनु. जनजाति – 8.86%	देश की जनसंख्या में अनु. जनजाति = 8.61%
राजस्थान में अनुजाति का % 13.5%	–––
सर्वाधिक अनु. जनजाति जनसंख्या वाला जिला – उदयपुर 15.25 लाख।	देश में सर्वाधिक अनु. जनजाति जनसंख्या वाला राज्य –1.53 करोड़ (म.प्र.)
न्यूनतम अनु. जनजाति जनसंख्या वाला जिला – बीकानेर 7.7 हजार	देश में सर्वाधिक अनु. जनजाति प्रतिशत वाला राज्य लक्ष्यद्वीप – 94.8% मिजोरम – 93.89%
सर्वाधिक अनु. जनजाति प्रतिशत वाला जिला –बांसवाडा 76.38%	देश में न्यूनतम अनु.जनजाति वाला राज्य – पंजाब, हरियाणा (नगण्य).
न्यूनतम अनु. जनजाति प्रतिशत वाला जिला –नागौर (0.31%)	––––
राज्य में. अनु. जनजाति लिंगानुपात – 948।	देश में अनु. जनजाति लिंगानुपात – 990।
राज्य में ग्रामीण अनु. जनजाति का लिंगानुपात – 951।	देश में ग्रामीण अनु. जनजाति में लिंगानुपात – 991।
राज्य में नगरीय अनुजाति का लिंगानुपात – 893।	देश में नगरीय लिंगानुपात – 980।
सर्वाधिक लिंगानुपात वाला जिला – डुंगरपुर 1000।	सर्वाधिक लिंगानुपात वाला राज्य – 1046 गोवा
न्यूनतम लिंगानुपात वाला जिला – धौलपुर 842।	न्यूनतम लिंगानुपात वाला राज्य – जम्मू–कष्मीर 924।

<u>संदर्भित आँकड़े–</u>

1. राजस्थान सामान्य अध्ययन – एच.डी. सिंह प्रकाशन राज पेनोरमा, लाल कोठी, जयपुर क्रांतिजैन, महावीर जैन।

2. सामान्य ज्ञान 'लक्ष्य' मनुप्रकाशन, प्रा, लि. जयपुर।

मीणा मूल रूप से विभिन्न प्रकार की धार्मिक लोककथा एवं लोकगीतों में विश्वास करते हैं। इसका कारण धर्म और अंधविश्वास लोकसाहित्य से जुड़ा हुआ है। धीरे–धीरे मीणा जनजाति का समाज शिक्षित हो रहा है उस कारण से पुरानी परम्पराएँ एवं मान्यताएँ भी खत्म होती जा रही है।

मीणा मूलरूप से शैव तथा शाक्त हैं। महादेव इनके इष्टदेव हैं। मीणाओं के द्वारा बनवाये हुए अनेक शिव मंदिर इनके प्राचीन स्थानों में देखने को मिलते हैं। आज भी प्रायः मीणा लोग शिव की आराधना करते हैं। टोड़ा–बीलोत, मैगी–कूदा, क्यारा, राजोर, खोह, आमेर, मांची, नई आदि प्राचीन स्थानों पर मीणों के बनवाये शिव मंदिर विद्यमान हैं। इनमें से कुछ ध्वस्त हो गये हैं और कुछ में अन्य मूर्तियों की प्रतिष्ठा भी की गई है। अन्य हिन्दू देवताओं के प्रति भी इनकी आस्था है। हनुमान, भैरव, शीतला आदि को भी ये लोग मानते हैं। राम–कृष्ण के अवतारों की पूजा भी करते हैं।

हर मीणा गोत्र की एक अधिष्ठात्री देवी है। इनकी देवियों के पृथक–पृथक नाम हैं जैसे– कैलादेवी, बांकी, ध्याण, दांत, पपलाद, आसावरी, जीण, कालिका, चौथ, बड़जारी, घटवासण, पाली, विजासणी आदि। मीणों में धार्मिक कट्टरता नहीं पाई जाती।''[14] धर्म के लिए किए गए युद्धों की बात इनके इतिहास में नहीं देखी गई। जब शपथ ग्रहण कर लेते हैं तो प्राण देकर भी उसका निर्वाह करते हैं। खैराड़ के मीणे 'महादेव' की शपथ को सर्वोपरि मानते हैं। देवी के नवरात्र में भैंसों तथा बकरों की बलि भी दी जाती है।

नारी से महती अपेक्षाएँ–

भारत में स्वतंत्रता के पष्चात् स्त्रियों में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। यद्यपि स्वतंत्रता के पूर्व विभिन्न समाज सुधारकों एवं सुशिक्षित लोगों ने धार्मिक सामाजिक आंदोलनों द्वारा स्त्रियों की स्थिति को सुधारने का प्रयास किया। फलस्वरूप बालविवाह, अषिक्षा, वैवाहिक कुरीतियों एवं जाति प्रथा का निषेध किया गया और विवाह तथा अंतर्जातीय विवाह का समर्थन कर समाज में

स्त्रियों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में व्यापक परिवर्तन हुआ है। डॉ. श्रीनिवास ने पश्चिमीकरण लौकिकीकरण और जातीय गतिषीलता को इन परिवर्तनों का प्रमुख कारण माना है।

परिवार की अपेक्षाएँ–

मनुष्य को मनुष्य से जोड़ने वाली एक व्यापक इकाई का नाम संबंध है। आज मनुष्य का जो वर्तमान स्वरूप है वह संबंधों के द्वारा ही विकसित हुआ है। हमारे भारतीय समाज में प्राचीन मनीषियों ने नर–नारी संबंधों की अर्द्धनारीश्वर के रूप में सुंदर एवं रमणीय कल्पना की है। इस रूप में यह भाव प्रदर्शित किया गया है कि स्त्री एवं पुरुष एक–दूसरे के पूरक हैं।

संबंधों के विविध रूप परिवार नामक संस्था में देखने को मिलते हैं, जिसका केन्द्र बिन्दु नारी है। नारी के पारिवारिक रूप को ही संबंधों के धरातल पर सर्वाधिक महत्त्व प्रदान किया गया है, जिसका कारण वही पुरानी मान्यता है कि नारी अपना स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रख सकती। इस मान्यता के विपरीत लोकगीतकारों ने नारी के कन्या, पत्नी, माँ, बहन, सास, बहू, विधवा रूप के अतिरिक्त मित्र, प्रेमिका और सहयोगी रूप का भी चित्रण किया है। लोकगीतकारों के गातों की नारी पारिवारिक संबंधों के अतिरिक्त अपना एक अलग व्यक्तित्व रखती है। वह भी पुरुष के समान सम्मान और अधिकार चाहती है। आज परिवार की अतंत माँगों को वह अपने अस्तित्त्व को मिटा कर पूरा करना नहीं चाहती है। संयुक्त परिवार में नारी का व्यक्तित्व खंडित हो जाता था, इसलिए उसे संयुक्त परिवार से अरुचि हो गई है। पारिवारिक मर्यादा के प्रति भी नारी के रुख में अवमूल्यन हुआ है। आत्मकेन्द्रित हो जाने के कारण नारी का अकेलापन बढ़ा है।

आजादी के बाद बदलते परिवेश और नारी को मिलने वाले विभिन्न अधिकारों से नारी स्वातंत्र्य को बल मिला। समय के साथ–साथ नारी में पुरुष की तुलना में जो हीनता की ग्रंथि थी, वह समाप्त होने लगी और नारी पुरुष की अपेक्षा स्वयं को कहीं अधिक प्रगतिशील एवं शक्ति संपन्न समझने लगी।

अब नारी पुरुष के समक्ष स्वयं को पराजित होते नारी ससुराल के सभी सदस्यों एवं पति के समक्ष अपने स्वाभिमान एवं स्वतंत्र अस्तित्व को बनाये रखने की चेष्टा कर रही है।

वैज्ञानिक साधनों के प्रचार–प्रसार के कारण आज नारी की चेतना जागृत हुई है, जिसके कारण उसके धार्मिक विष्वास क्षीण हुए हैं तथा सामाजिक नैतिक मूल्यों में विघटन आया है। जिसके कारण स्त्री–पुरुष संबंधों में बदलाव आ गया है। अब नारी–पुरुष पर अंधविश्वास नहीं रखती है। इन संबंधों की जटिलताओं को गीतकारों ने व्यापक धरातल पर चित्रित किया है। समाज ने पुरुषों के स्वतंत्र भोग पर कोई रोक नहीं लगायी है। पुरुष स्त्री पर आसक्ति प्रकट कर सकता है, लेकिन स्त्री पर पुरुष संबंध नहीं रख सकती। इसलिए नारी इस दोहरे मानदंड के प्रति विरोध प्रदर्शित करती है। प्रेम की नैतिकता के प्रति समाज स्त्री पुरुष के लिए अलग–अलग मानदण्ड रखता है, जिसका लोक गीतकार विरोध करते हैं।

आदिम सामाजिक व्यवस्था से ही स्त्री को सारे वे कार्य करने के लिये दिये जाने लगे, जिन्हें करने में पुरुष हीनता का अनुभव करता था।''[15] उसका कार्य क्षेत्र चूल्हा–चौका तक सीमित रह गया है–

''चूल्हा चौका चाकी में
बीत गई जिंदगाणी
धूंधाड़ा में नैण फूटग्या
टप–टप टपकै पाणी
रूंम–रूंम दरदां सूं फाटै
वां ही कथा पुराणी
ऊं ही पणघट पाणी
ढोर ढंगर री साणी
खेती अरू किसाणी
ईंण पै भी बालम यूं केवै
तू म्हारै घर री राणी''

पुरुष ने जब देखा कि धीरे–धीरे स्त्री उसके अधीन होने लगी है, तब वह पतिव्रत्य, सती तथा अनेक विधानों के द्वारा उसे अपने अधीन करने लगा। अपना कोई आर्थिक आधार न होने के कारण स्त्री के पास अधीनता की स्वीकृति के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं था।

आर्थिक निर्भरता के लिए सबसे बड़ा अभिशाप है। स्त्री के सामाजिक पतन का मूल कारण आर्थिक ही है, जो परिवार आर्थिक रूप से समृद्ध होते हैं वहाँ भी अधिकांशतः स्त्रियों का कार्य परिवार के सदस्यों की देख–रेख और पति को प्रसन्न करना होता है। वे बेबस होती हैं, कुछ कह या कर नहीं पाती है। उन्हें लाचारी में समझौता करना पड़ता हैं।

भारतीय समाज में व्यवस्था के स्तर पर प्राथमिकता समूह की रहती है वस्तुतः जब संयुक्त परिवार की रक्षा एक मूल्य के रूप में की जाती है तो उसके पीछे भी यही दृष्टि रहती है। उसमें भी सोपान व्यवस्था निहित है जो व्यक्ति की समानता और स्वतंत्रता के मूल–अधिकार का विरोधी है।

अब बदलते परिवेश के कारण नारी के अन्दर चेतना की लहर आई है और उसके कार्य क्षेत्र का भी काफी विस्तार हो चुका है। उसे अपनी आत्माभिव्यक्ति तथा अस्तित्व के स्वतंत्र निर्माण के लिए संयुक्त परिवार की व्यवस्था अनुकूल नहीं लगती इसलिए संयुक्त पारिवारिक व्यवस्था का विघटन हो रहा है।

महिलाएँ मध्ययुगीन सीमा को तोड़कर बाहर आ चुकी है। वे हर दृष्टि से स्वतंत्रता चाहती है। वह स्वयं को परिवार में स्थापित करना चाहती है। अपनी एक अलग स्वतंत्र पहचान बनाना चाहती है। व्यवस्था द्वारा अपने शोषण को पहचानते हुए वे उसका मुखर विरोध कर रही है।

समाज की अपेक्षाएँ–

स्वातंत्र्योत्तर कालमें भारतीय नारियों ने जितनी प्रगति की है, अपने राजनीतिक व सामाजिक अधिकारों के लिए जो महान संघर्ष किया है वह मानवीय इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है। मध्यम वर्ग की स्त्रियों ने शिक्षा

प्राप्त कर आर्थिक क्षेत्रों की ओर बढ़ना आरम्भ कर दिया। आज शिक्षा, स्वास्थ्य चिकित्सा, समाज कल्याण, मनोरंजन उद्योगों और विभिन्न कार्यालयों में स्त्री कर्मचारियों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हुई है और आर्थिक स्वतंत्रता मिल जाने के परिणामस्वरूप उनके आत्मविश्वास, कार्यक्षमता और बौद्धिक स्तर में भी वृद्धि हुई है। इस काल में स्त्रियों की पारिवारिक स्थिति में भी सुधार आया है और बौद्धिक स्तर में भी वृद्धि हुई है। इस काल मे स्त्रियों की पारिवारिक स्थिति में भी सुधार आया है और स्त्रियों की स्थिति पुरुषों की स्थिति से ऊपर उठाकर उनकी सहयोगी बन गई है। स्त्रियों में सामाजिक जागरूकता की भावना में निरंतर वृद्धि हुई है। जिन रूढ़ियों को स्त्रियों ने अपनी अज्ञानता के कारण अपने जीवन का आदर्श बना रखा था, उन रूढ़ियों के प्रति अधिकांश स्त्रियों की उदासीनता बढ़ती जा रही है।

21वीं शताब्दी में नारी के अनेक रूप सामने आए शिशु के डगमगाते कदमों के साथ गृहस्थी की डगमगाती नौंका को संभालने वाली नारी या अपने कदमों से पहाड़ों की ऊँचाइयों तथा समुद्र की गहराइयों को नाप लेने वाली नारी या परिवार, समाज व राष्ट्र को समान कुशलता से परिचालित करने वाली नारी या शिक्षा के क्षेत्र में विलक्षण प्रतिभा का परिचय देने वाली नारी या फिर सामाजिक घुटन, विखंडन एवं भौतिकता तथा आर्थिक विषमता से जन्मी मानसिक उत्पीड़न झेलती हुई नारी।

समाज में अनेक संबंधों का केन्द्र होने के कारण भारतीय नारी विशेषतः नवीन पीढ़ी की नारी में जो अस्थिरता उत्पन्न हुई, उसने अतीत से चली आई अनेक मान्यताओं को खंडित कर दिया है और अनेक समस्याओं को जन्म दिया है। यह समस्यायएँ जीवन के अनेक क्षेत्रों से संबंध रखने पर उत्तम दृष्टि से एक है।

आधुनिक नारी के पिछले दशकों में जो संस्कार और अनुभव प्राप्त किए हैं, उन्हीं की आधारशिला पर उनके भविष्य का निर्माण होगा। युगों से दलित, पीड़ित रहने के कारण जो हीनता के संस्कार बन गये थे, उन्हें आधुनिक नारी

ने अपने रक्त से इस प्रकार धो दिया है कि आगामी युग की नारी को उस पर कोई रंग नहीं चढ़ाना पड़ेगा।

21वीं सदी की नारी यदि वैदिककालीन नारी की भाँति पुरुष के समान स्वतंत्र एवं सम्मानित नहीं है तो 18वीं एवं 19वीं शताब्दी की नारी की भाँति बंधनों में जकड़ी हुई भी नहीं है, परन्तु गंभीरता से विचार करने पर निश्चय ही आधुनिक तथा तथाकथित स्वतंत्र नारी भी बंधंनों में परिलक्षित होती है। मीणा समाज में नारी स्थिति का विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट हो जाता है एक तरफ तो समाज में अत्यन्त ही उच्च स्थान प्राप्त था एक तरफ से शक्तिरूपा देवी, करुणा की मूर्ति माना जाता रहा है वहीं दूसरी तरफ उसका शोषण भी खूब हुआ है, पुरुषों द्वारा स्त्रियों को मात्र भोग्य या वस्तु माना गया है और उसकी अस्मिता तथा व्यक्तित्व को दरकिनार करने की प्रवृत्तियाँ भी चलती रहीं।

मीणा समाज के द्वारा स्त्री का शोषण एवं दमन कई स्तरों पर किया गया है। दया, ममता, स्नेह, त्याग, सहनशीलता, नैतिकता आदि स्त्रियोचित गुण पुरुष सत्ता द्वारा निर्धारित प्रतिमान हैं। जिन प्रतिमानों द्वारा स्त्री हमेशा शोषित हुई है उन प्रतिमानों को वर्तमान में बदलना पड़ रहा है। आज के युग में नारी से कई प्रकार की समाज अपेक्षाएँ रखता है इन अपेक्षाओं में संस्कृति को स्वच्छ बनाना एवं उसके साथ–साथ विभिन्न प्रकार के उत्तरदायित्वों को निभाना।

लोकतंत्र की छाया में पतनशीलता की प्रवृत्तियाँ एक साथ पल–बढ़ रही हैं। समाज में दिन–प्रतिदिन बढ़ने वाली घटनाओं के माध्यम से इसे आसानी से समझा जा सकता है। आज मीणा जनजाति के परिवार की महिलाएँ सामाजिक उत्थान के लिए कई विभागों में कार्य कर रही हैं, अर्थात् समाज से उनको अपेक्षाएँ हैं।

बहुत सी महिलाएँ साहित्यकार, लोकगीतकार, लोकगीत–कलाकार, लोकवार्ताकार एवं लोक नाटकों से जुड़ी हुई हैं अर्थात् आज समाज में उनको सम्मान और आदर की दृष्टि से देखा जा सकता है।

यदि हिन्दू कोड बिल पर हुई बहस पर नजर डालें तो पता चलता है कि स्त्रियों के लिए बेहतर अधिकारों के सवाल पर बिल को बहुत अधिक विरोध का सामना करना पड़ा। यह विरोध मूलरूप से इस बात पर केन्द्रित था कि हिन्दू पारिवारिक कानून में सुधार करके स्त्रियों के अधिकारों को बेहतर करने में हिन्दू परिवार के टूटने का खतरा पैदा होगा। सारा विरोध परिवार के ढाँचे में बदलाव से उत्पन्न खतरों से था। ये खतरे परिवार में स्थापित पुरुष सत्ता को भी होने वाले थे। इसीलिए सारा दबाव इस प्रकार के परिवर्तन को रोकने के लिए रहा।

हिन्दू कोड बिल के पास होने से हिन्दू नारियों की परिवार, विवाह तथा सम्पत्ति के क्षेत्र में स्थिति बेहतर हुई लेकिन यह सभी कानून भी अपर्याप्त थे। धीरे–धीरे नारियों के अधिकारों के सवाल पर राजनीतिक नेतृत्व की सामाजिक सोच राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान उभरे मूल्यों, आदर्शों और भाषाओं से दूर होता गया।

स्त्री उत्पीड़न के विरुद्ध स्त्रियों में अस्वीकार अथवा विरोध की भावना जागृत हुई। वर्तमान सन्दर्भ में नारी अपनी दयनीय दशा को मौन स्वीकृति न प्रदान करके समाज की इस उत्पीड़ित व्यवस्था का प्रतिकार करती है। स्त्री के इस अस्वीकार से कथा साहित्य प्रभावित हुआ है। उपन्यास साहित्य में स्त्रियों द्वारा सामाजिक विद्रोह का वर भी मुखरित हुआ है जिन सामन्तवादी परम्पराओं, आस्थाओं विश्वासों, मूल्यों एवं आदर्शों के आधार पर युग–युग से नारी जाति का उत्पीड़न किया जाता रहा है उन्हीं आदर्शों के विरुद्ध नारी पात्रों ने विद्रोह किया है।

स्त्रीमुक्ति चेतना का मुख्य उद्‌देश्य पितृ–सत्तात्मक व्यवस्था से मुक्ति है।''[16] यह सत्य है कि परम्परा के खिलाफ उद्‌दण्ड होने के बजाय विनम्र होना

चाहिए, परन्तु विनम्रता का यह अर्थ नहीं है कि जिस परम्परा ने स्त्री का दोहन किया है उसका ही महिमा मण्डन किया जाए और ब्राह्मणी संस्कृति के आधार पर निर्मित स्त्री अतीतोन्मुखी नहीं है। यह अतीत का विरोध करती है।

आज की नारी स्वयं को किसी भी स्थिति में पुरुष से हीन मानने के लिए तैयार नहीं है। आज की नारी ने मातृत्व का नवीन रूप समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है। प्रेम, पति, परिवार सबको अपने दृष्टि को आघात पहुँचाया है। स्पष्ट है कि नारी को मुक्ति के लिए अपनी स्वभावगत दुर्बलता पर विजय पानी होगी। जब वह अपनी कमजोरियों से, अपने कामिनी रूप से, अपनी अभ्यर्थिनी वृत्ति से और अन्य के प्रति ईर्ष्या से मुक्ति पाने में सफल होगी तो उसके सम्पूर्ण बंधन स्वतः ही समाप्त हो जाएंगे। नारी मुक्ति एक स्थिति है, कोई नारा नहीं और इस स्थिति को धीरे–धीरे प्रयंत्न से आचरण और आदर्श से आत्म विश्लेषण और सुधार–परिष्कार से साधना एवं त्याग से ही लाया जा सकता है।

देश की अपेक्षाएँ–

विभिन्न प्रतिकूल परिस्थितियों के सम्मिश्रण से गरीबी के लैंगिक दृष्टिकोण का उदय होता है। निर्धनता का विस्तार अनेक घटनाओं पर आधारित होता है जैसे पर्यावरणीय क्षय, युद्ध, प्राकृतिक आपदा अन्यायपूर्ण (असमतापूर्ण) वृहत् अर्थशास्त्रीय नीतियाँ साथ ही प्रत्येक समाज के नियम, मानदण्ड, अधिकार एवं पद्धतियों के संस्थागत ढाँचों आदि का भी योगदान होता है। नोबल पुरस्कार विजेता बांग्लादेश के प्रोफेसर मोहम्मद युनूस के विचारों की रूपरेखा पर आधारित स्वयं सेवा का उपागम ही ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन की दिशा में एक सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण उपागम हैं स्वयं सेवा की अवधारणा आजकल न केवल भारत वरन पूरे विश्व की ग्रामीण नारियों के आर्थिक सशक्तिकरण में अलग–अलग रूपों में प्रकट हो रही है। यह उपागम नारियों के मध्य गरीबी के उन्मूलन में भी पूरी तरह योगदान दे रहा है। स्वयं सेवा का विचार नारियों के बीच सहयोग की भावना पैदा करता है तथा साथ

ही सामूहिक नेतृत्व का विकास भी करता है। इससे नारियों में भागीदारी, नियन्त्रण एवं व्यक्तिगत मामलों से संबंधित अधिकारों का प्रभावी पोषण होता है। यह बचत की भावना और अपनी स्वयं की बैंकिंग व्यवस्था को बढ़ावा देता है। नारियों को एक शीर्ष संगठन से सम्बन्द्ध करने से उनमें आपसी एकात्मकता की वृद्धि होती है और उनका सशक्तिकरण समृद्ध होता है।

स्वतन्त्रता के बाद से ही भारत में नारियों के उत्थान के लिए अनेक योजनाओं की शुरुआत की गई। भारत सरकार ने संस्थागत ऋण व्यवस्था तथा विकास कार्यक्रमों को पुष्ट करने के लिए कई उपक्रम किये है। किन्तु, औपचारिक क्षेत्र ऋण संस्थाओं का जनसंख्या के अधिकाधिक भाग तक पहुँचना कठिन होता है।

स्वयं सेवा समूहों द्वारा मीणा नारियों को सशक्त करने के प्रयास द्वारा न केवल मीणा महिला स्वयं और महिला समूह लाभान्वित होते हैं वरन् विकास के सामूहिक प्रयासों द्वारा परिवार एवं समुदाय भी लाभान्वित होते हैं। इन समूहों में सामूहिक प्रयासों के लिए आवश्यकता तथा प्रेरणा का सामान्य दृष्टिकोण पाया जाता है।

समाजशास्त्रीय अध्ययनों में महिला सशक्तिकरण के मुद्दे को अधिकांशतः राजनीतिक तथा सामाजिक क्षेत्र में अध्ययन का एक पहलू माना गया है। किन्तु यह देखा गया है, कि यदि नारियों को विशेष तौर पर मीणा समाज की नारियों को आर्थिक रूप से सशक्त किया जाए तो न केवल समाज एवं घर में उनकी स्थिति में अप्रत्याशित सुधार आता है वरन् उनकी राजनीतिक चेतना और सामाजिक भागीदारी में भी अभिवृद्धि होती है। इसलिए यह आवश्यक है कि यदि मीणा महिला को सही मायने में सशक्त करना है तो उनका आर्थिक उत्थान व इस उत्थान के लिये स्वयं सेवा समूहों द्वारा उनका दिशा निर्देशन उनके आर्थिक जीवन को सशक्त कर सकता है।

सशक्तिकरण, इस प्रकार आर्थिक स्वतन्त्रता से घनिष्टता से जुड़ा हुआ आयाम है। मीणा नारियों की स्थिति में स्वयं सेवा समूहों से अधिक कोई और

आर्थिक उत्थान की योजना सफल नहीं हो सकती। यदि यह प्रयास सरकारी या गैर सरकारी अभिकरणों द्वारा समर्थित हो तो इसका परिणाम अत्यन्त प्रभावशाली हो जाता है। स्वयं सेवा समूहों को पुष्ट करने के लिये सरकारी एवं गैर सरकारी अभिकरण दोनों की सम्बंधता की आवश्यकता होती है। राजस्थान में मीणा नारियों ने न केवल अपने आपको स्वयं सेवा समूहों के माध्यम से आर्थिक रूप से सशक्त किया है। वरन् उनमें नेतृत्व, भाईचारे, आपसी सहयोग और सौहार्द की भावना भी सुदृढ़ हुई है। स्वयं सेवा समूह बचत, सामूहिक वितरण, व्यक्तिगत उद्यम जैसी आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा देने के साथ–साथ मीणा नारियों को समाज की मुख्य धारा से जोड़ने का भी कार्य करते हैं। इस प्रक्रिया में नेतृत्व की क्षमता बढ़ती है अनुशासन जीवन का पर्याय बनता है तथा सही मायनों में लोकतन्त्र स्थापित होता है। इससे नारियों द्वारा परिवार और समुदाय के लिए किये गए कार्यों के मूल्य में वृद्धि होती है। आज मीणा समाज में वैवाहिकता का विवेकीकरण आवश्यक है अतः विवाहेत्तर सामाजिक चेतना के लिए निम्न बिंदुओ को ध्यान में रखना चाहिए–

विवाह में अभिभावकों की दबाव की राजनीति का अन्त–'मेरा घर है, यहाँ मेरी चलेगी'। दम्भी माता–पिता की यह सोच वैवाहिकता को विवशता बना देती है। विवाह वे तय करते हैं, पसन्द उनकी होती है, जीवन भर भोगना दम्पति को पड़ता है। अनमेल, बेमेल, अनिच्छा का विवाह मानसिक धरातल पर दम्पत्ति को एक नहीं होने देता। देह संवाद उनकी विवशता होती है, किन्तु मानसिक क्षितिज पर इनका एक साथ बसेरा नहीं होता है। इसके लिए आवश्यक है–

स्वावलम्बी युवक ही विवाह अनुमति योग्य– केवल स्वावलम्बी व्यक्ति, जबकि वह परिवार पोषण के लिए आत्म–निर्भर हो, तब ही उसको विवाह की अर्हता/योग्यता प्रमाण–पत्र देकर अनुमति दी जानी चाहिए, जो भी ऐसे विवाह हों, जहाँ युवक पराश्रयी हो और जिसकी कोई निश्चित आय न हो, व्यवसाय न हो, उसका विवाह उसकी होने वाली पत्नी को दुःखी करना है।

कुछ विवाह तो दहेज के लालच में किये जाते हैं, ताकि दहेज में प्राप्त धन से युवक कोई व्यवसाय कर सके, या फिर अपने ससुर की कृपा पर वह जिये या फिर अपने माता–पिता व बांधवगण के ताने सुने। जब पराश्रयी बेरोजगार युवक से विवाह होता है, तो ऐसा पति एक बोझ होता है, उसकी पत्नी के आत्म–समान को ससुराल व पीहर दोनों ही स्थानों में ठेस लगती है। बहुत से माता–पिता अपनी पुत्रियों की इस आशा में विवाह कर देते हैं कि घर अच्छा है, कुल अच्छा है, लड़का पढ़ता है या प्रशिक्षित भी; कभी नौकरी तो पा ही लेगा, गुजारा हो जायेगा। किन्तु जब प्रशिक्षित या शिक्षित युवक बरोजगारों की लम्बी कतार की शोभा बढ़ाता है, तो घर में दासी भाव से तो उसकी पत्नी को ही जीना पड़ता है और ऐसी स्थिति में जब जल्दी संतान का मुँह देख लेते हैं, तो ऐसे दम्पत्ति परिवार पर बोझ बनकर उपेक्षित जीवन जीते हैं, जो एक नवयुवती के सपनों के सुमन का मुर्झाकर बिखरने जैसा है।

शासन हस्तक्षेप आवश्यक– विवाह सीमित अधिकार हो, जिसके लिए आवश्यक है–

विवाहपूर्व शारीरिक क्षमता प्रमाण पत्र– विवाह पूर्व शारीरिक परीक्षण अनिवार्य होना चाहिये। मानसिक व शारीरिक क्षमता का परीक्षण आवश्यक हैं रक्त, मूत्र व अन्य एक्स–रे टेस्ट करके यह पता लगाना आवश्यक है कि कहीं वर या वधू किसी आसाध्य रोग या संक्रामक रोग से पीड़ित तो नहीं है। कहीं एच.आई.वी. वाइरस या एड्स के भयंकर रोग से पीड़ित तो नहीं है। कहीं वह मिर्गी आदि बीमारी या मानसिक विक्षिप्ता से ग्रसित तो नहीं है ? शारीरिक व मानसिक रूप से पूर्ण स्वस्थ युवा युवतियों को ही विवाह करने के लिये प्रमाण पत्र देना चाहिये, जिससे कि केवल स्वस्थजन ही विवाह कर अपना जीवन सुचारु रूप से चला सकें और दाम्पत्य जीवन सुख से बीते। रुग्ण व दुर्बल व निर्बल युवक व युवतियाँ जब विवाह के लिए योग्य घोषित कर दी जायें, तभी विवाह किया जाये। केवल मात्र जन्मपत्री व गृह दिशा को ही आधार

न माना जाये, न कुल प्रतिष्ठा या धन व पद ही केवल मात्र विचारणीय बिन्दु नहीं होना चाहिये।

इसका प्रभाव यह होगा कि माता–पिता दोनों ही पुत्र व पुत्रियों के लालन–पालन–पोषण पर समान रूप से ध्यान देंगे और युवक व युवतियों में भी आत्मानुशासन आयेगा और वे अपने को स्वनियन्त्रित रखेंगे। ऐसे दम्पत्तियों की संतान भी स्वस्थ होगी। चरित्रवान रहना उनकी विवशता होगी। नैतिक फिसलन व पतन पर अंकुश लग सकता है।

चरित्र प्रमाण पत्र– आपराधिक प्रवृत्ति या नशे या जुएँ की लत वाले युवकों व युवतियों को विवाह योग्य नहीं माना जाना चाहिये। पुलिस/समाज कल्याण अधिकारियों से ऐसे प्रमाण पत्र प्राप्त किये जाने चाहिये। हर अपराधी की माँ होती है, तो उसका कोई न कोई बाप भी होता है। शराबी पति कभी भी अच्छा पति व पिता नहीं बनता। इसी प्रकार आपराधिक परिवेश सामान्यतया अपनी प्रवृत्ति के बालकों को ही पैदा करता है। सामाजिक स्वच्छता तभी आ सकती है, जबकि समाज केवल सुपात्र को ही विवाह की स्वीकृति दे, ताकि अपराधी प्रवृत्ति के माता–पिता की संतान उपेक्षित रहकर विचलित व्यवहार न सीखे और न करें। गरीबी का कारण है अक्षम पिता। जो परिवार को नहीं पाल सकता, इसी परिवार बनाने की आवश्यकता क्यों ? गरीबी कितनी बुराइयों की जड़ है, तो गरीबी को आपराधिकता पालने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिये? अक्षम, अशक्त को विवाह की अनुमति नहीं दी जा सकती ? कोढ़ी पिता अपनी संतान को क्या देगा ? भिखारी पिता अपनी पत्नी व संतान को क्या देगा ? शराब, गरीबी, अपराध ये सब टूटे परिवार के कारण हैं। इन कारणों के कारकों को विवाह कर परिवार बनाने की शासकीय अनुमति नहीं होनी चाहिये। यह गरीबी भी रोकेगी, जनसंख्या को भी, गंदी बस्तियों की सड़ाँध को भी। जन्म पर पाबन्दी तभी लगेगी, जबकि चरित्र को प्रोत्साहन मिलेगा।

पंजीकरण व प्रमाण पत्र आवश्यक– विवाह के पूर्व अनुमति व विवाह पश्चात् सक्षम अधिकारी जिसे राज्य सरकार एतदर्थ नियुक्त करके कार्यालय में

पंजीकरण आवश्यक किया जाये, ताकि विवाह पश्चात् उठने वाले विवादों का शीघ्र निराकरण उपलब्ध सूचनाओं के आधार पर अतिशीघ्र सम्भव हो सके और दुरुह विधिक प्रक्रियाओं से बचा जा सके।

गृहयोग के स्थान पर गृहस्थ योग– 'घर' सदा चार दीवारों से बनता है। इस चतुष्कोणीय जीवन गृह निर्माण में दो हाथ पुरुष के होते हैं और दो नारी के। ये दीवारें प्रतीकात्मक है, उस नारी व पुरुष सृहदयात्मक सम्मिलन की, जहाँ दानों एक–दूसरे के हाथों को सप्रीत थाम कर एक 'गृह' का निर्माण करते हैं, जहाँ वे प्रीतिपूर्ण, मधुरमय, अरुणमय सम्बन्धों में, विहित होकर जीवन जीने का संकल्प लेकर अपने भविष्य के स्वप्नों को साकार करने के लिए जीवन मधुनिशा की कमनीयता के साथ प्रारम्भ करते हैं। ऐसे प्रणय सूत्र बंधन के लिए वे योग व सुयोग देखना व परीक्षित करना आवश्यक है, जो गृहस्थ जीवन को राम व सीता मिलन की मन भावन पुष्प वाटिका बनाने या राधा व कृष्ण का निकुंज बनाने में सहायक हों।

गृह योग तो उस समय देखा जाता था, जबकि वैज्ञानिक परीक्षण के कोई उपाय नहीं थे। आज भी ग्रह योग देखना चाहिये, किन्तु इसके पूर्व वे कारक अवश्य देखने चाहिएँ, जो कि सुगृहस्थ योग व क्षेममय जीवन के लिए आज का जीवन आवश्यक आवश्यकताओं, आकांक्षाओं व इच्छाओं के संदर्भ में सुखी जीवन जीने के लिए आवश्यक हों।

तलाक का मानवीकरण – हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 की धारा 5 (i) में एक पति व एक पत्नी की एक समय साथ विहित होना अनिवार्य है। बहुपत्नीक व बहुपतिक दोनों ही अवधारणाओं को हिन्दू विवाह अधिनियम में मान्यता नहीं दी गई। दूसरी ओर तलाक के जो आधार वर्णित किये गये हैं, वे भी उनमें भी विवाह विच्छेद के जो आधार दिये गये हैं, उनके होते तो विवाह का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता। क्लीव/नपुंसक/विक्षिप्त से विवाह निषेध है, यदि कर दिया जाये, तो विवाह शून्य घोषित किया जा सकता है–

''म्हूँ छोड़ आई पैली ही रात
बलम मेरो झल्लम झल्ला रैं''
सास जिठाणी तानां दैवय,
रोज़ निपूती कैहती,
नत–नत नुई गाळ्यां दैती
जनम बांझड़ी कैहती,
मैंने कर दी, ललुवां की
पोल खुल्लम खुल्ला रैं।''

किन्तु पारस्परिक प्रतिद्वन्द्वता व असामंजस्य को विवाह विच्छेद तलाक को आधार नहीं माना है, जिनको सिद्ध करने में वर्षों लग सकते हैं। जैसी कि वर्तमान न्यायिक व्यवस्था है और युवावस्था तथाकथित न्याय यज्ञशाला में 'स्वाहा' हो सकती है। विवाह इच्छा व सहमति पर निर्भर होना चाहिये। हिन्दुत्व इसको नहीं मानता। हिन्दुत्व की तो मान्यता यह है कि विवाह विधि हाथ है, स्वर्ग में विवाह तय होता है और मृत्युलोक अर्थात् इस जगत में इसका क्रियान्वयन होता है। यह तो प्रारब्ध इच्छा क्षेत्र है और कुछ भी नहीं। विवाह अनिवार्यता भी है और विवशता भी है। एक के साथ निर्वाह करो। चाहे जैसे भी हो। ग्रामीण क्षेत्र में तो यह कहावत प्रचलित है–'बिंध गये सो मोती' अर्थात् एक बार मोती में छेद हो गया और वह विवाह रूपी माला में पिरो दिया तो फिर यह स्थायी सम्बन्ध बन गया।

वस्तुतः हिन्दुत्व की प्राचीन गौरव कथा में दृष्टिपात करें, तो सहज ही ज्ञात होगा कि उच्च वर्ग में बहुपत्नी विवाह प्रत्यय प्रचलित था। इस्लामिक नैतिकता के आधार पर बहुपत्नी विवाह का प्रावधान है। इस्लाम बहुपत्नी विवाह में विश्वास रखता है। जिसकी संख्या चार तक है, किन्तु शर्त है कि वह चारों का पालन करने में सक्षम हो, चारों को एक दृष्टि से देखे, कोई भेदभाव न करे, जो संभव नहीं।

किन्तु ईसाइयत एक बार में एक ही पत्नी को आधार मानती है, जो यह है कि एक बार में एक ही पत्नी पुरुष के साथ रहेगी, एक से अधिक नहीं। ऐसा स्पष्ट होता है कि ब्रिटिश सरकार ने जो विधि संरचना की, उसमें ईसाई धर्म के प्रत्यय को हिन्दुत्व के ऊपर आरोपित किया। आततायी अंग्रेज यह भूल गये कि एक पत्नी एक समय का नैतिक आधार तो है, किन्तु जहाँ ईसाइयत में साथ ही विवाह विच्छेद की शर्तें बहुत ही सरल व शिथिल कर दीं, वहाँ हिन्दुत्व में विवाह को संस्कार रूप मानकर नहीं की गई। इसी कारण हिन्दु अधिनियम 1955 की धारा 5 के बिन्दु (1) एक समय में एक पति की पत्नी और एक पत्नी व एक पति की शर्त लागू कर दी, जो कि प्राचीन भारतीय संहिता विधि संदर्भ के अनुरूप प्रतीत नहीं होती है।

हिन्दू विवाह विड़म्बना यह बना दी कि विवाह विच्छेद के आधार कठोर रखे, ताकि असामंजस्यता की स्थिति में वे कुण्ठित होकर घुट–घुट कर मरते रहें और अलगाव में महाद्वीप बनकर अपना जीवन जीते रहें। अंग्रेज चले गये, किन्तु उनकी कलुषित वैवाहिक भावना थी, वह और भी स्वतन्त्र भारत में कठोर वास्तविकता के रूप में हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 की धारा 5 (2) में विधिक रूप ले बैठी। फलतः परिवार न्यायालयों में भरण–पोषण व विवाह विच्छेद के प्रकरणों का अम्बार लग गया है। विवाह को जीवन उद्दात्त भावना का कोरा कागज है, जिस पर अरुणमय अक्षरों से आनन्द की भाषा लिखनी होती है। किन्तु आज के इस महत्वाकांक्षी स्वेच्छा प्रधान समानतावाद के युग में यह कागज भविष्य के तिमिर के काले व लाल अक्षरों में वर्णन का हेतु बन जाता है। इस कागज में जो अक्षर उभर कर आते हैं, वे अक्षर दुर्भाग्य को आहूत करते हैं।

यह प्रावधान अश्लीलता के संदर्भ में अति महत्त्वपूर्ण है। जब घर की चारदीवारी के बीच संतुष्टि न मिले, भूख बढ़ती रहे, तो कामुकता का दानव अश्लील व्यवहार की ओर खींच कर ले जाता है। कई बार भूखी कामुकता व्यभिचार का कारण बनती है और अवैध सम्बन्धों का भी हेतु बनती है। परिवार

में किसी सदस्य की मृत्यु होने पर विधवा कंटक जाल बन जाती है। परिवार जन ही, यदि वह रूपसी हुई, तो अवैध सम्बधों में लिप्त हो जाते हैं और भविष्य के परिणाम विस्फोटक होते हैं। कहीं कोठे, चकले व व्यभिचार अड्डे भी आबाद होते हैं। चादर डालने की प्रथा भी है। देवर दूसरा वर माना जाता है।

शील तो मर्यादा पोषक है। अश्लीलता तो मर्यादाहीन ही होती है। यहाँ यह स्पष्ट करना उचित होगा कि अपनी मानसिकता ही अश्लील व शील के बीच महत्त्वपूर्ण है। कभी योगी भोगी होता है, कब योगी भोगी हो जाये, इस प्रकार अश्लीलता का ''एक पत्नी सदा ब्रह्मचारी'' का जो व्रत है, वह भी मुख्य व महत्त्वपूर्ण कारणों में से एक है।

समाजिक व्यवस्था विवेकपूर्ण मर्यादा की व्यक्ति से अपेक्षा तो करती है, किन्तु विधिक व्यवहार में विवेक का आधार कम व भावनाओं का आधार अधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है। संस्कारगत नैतिक वैवाहिक पवित्रता इस युग में कितनी प्रभावशाली है और मान्य है– इस आधार पर विधि–विधान में परिवर्तन करते रहना चाहिये, किन्तु विवशता मानसिकता की है, वह कैसे समझौता करे उसमें विधि कैसे समझौता करके रहे, इस युग में यह महत्त्वपूर्ण बिन्दु है, जहाँ अब उपयोगितावाद, उभोक्तावाद तथा सुख सुविधावाद का बोल बाला है। अब कोयल की जगह मेंढक की आवाद पसन्द की जाती है, कव्वे को हँस से अधिक महत्त्व दिया जाता है, जिस युग में पानी को क्षीर में मिलाकर पिया जाता है, इस वैज्ञानिक उड़ान में मनुष्य धरती की ओर कम और आकाश की ओर अधिक देखता है।

यदि हिन्दुत्व 'एक पत्नीत्व एक पति' एक समय के प्रावधान को लागू करना चाहता है, तो विवाह विच्छेद प्रकरणों में शिथिलता लानी आवश्यक है। कठोरता व विवशता दोनों एक साथ नहीं चल सकते, हिन्दू समाज को इस पर गहन चिन्तन करने की आवश्यकता है, ताकि अनावश्यक तनाव, कुण्ठा से सहज में त्राण मिल सके। जहाँ मन न मिले, हृदय न मिले– वहाँ सहज जीवन

जीना संभव नहीं। देह का बोझ साथ ढोकर जीना कैसे संभव होगा ? यही अश्लीलता के संदर्भ में महत्त्वपूर्ण विधिक प्रश्न भी है।

सामाजिक समस्याएँ– शहरी एवं सभ्य समाज के सम्पर्क के कारण जनजातियाँ अनेक सामाजिक समस्याओं से ग्रसित हो गई हैं। कुछ सामाजिक समस्याएँ निम्नलिखित हैं–

बाल–विवाह– प्रायः जनजातियों में युवावस्था में विवाह होते थे किन्तु अब उनमें बाल–विवाह होने लगे हैं, जो हिन्दुओं के सम्पर्क का परिणाम है। जनजातियों के लिए यह एक बड़ी समाजिक समस्या बन गई है।

कन्या–मूल्य– पहिले जनजातियों में कन्या–मूल्य वस्तुओं के रूप में दिया जाता था, किन्तु वर्तमान समय में अब इसे रुपये के रूप में माँगा जाने लगा है और इसकी मात्रा में भी अब इतनी वृद्धि होने लगी है कि सामान्य आदि व्यक्ति इसे कठिनाई से दे पाता है। इसके परिणामस्वरूप जनजातियों में कन्या–हरण की समस्या भी बढ़ रही है।

युवाग्रहों का पतन– जनजातियों में मनोरंजन के साधन के रूप में पहले युवागृहों का प्रचलन था, जहाँ जाकर युवा लड़के–लड़कियाँ न केवल मनोरंजन व आमोद–प्रमोद में सम्मिलित होते थे, अपितु वहाँ उन्हें सामाजिक, सांस्कृतिक एवं उनके कर्त्तव्यों के विषय में भी शिक्षा मिलती थी। यह एक महत्त्वपूर्ण संस्था थी। अब ये लोग युवागृहों को हेय दृष्टि से देखने लगे हैं। इससे जनजातियों के जीवन में अनेक हानियाँ हुई हैं।

वेश्यावृत्ति की समस्या– इन जनजातियों की एक समस्या अनुचित यौन–सम्बन्ध की भी है। एक ओर ठेकेदार व साहूकार इनका भरपूर शोषण करते हैं और उनकी स्त्रियों के साथ अनुचित सम्बन्ध स्थापित करते हैं और दूसरी ओर पुरुष खानों व श्रमिक उद्योगों में कार्य करते हैं व घर से दूर रहते हैं, वे वेश्यावृत्ति जैसे प्रलोभनों में फँस जाते हैं। अब तो विवाह–विच्छेद की समस्या भी इन लोगों में होने लगी है। इस प्रकार अनेक प्रथायें, परम्पराएँ,

रूढ़ियाँ आदि भी अब टूट रही हैं, जो अपने आप में एक सामाजिक समस्या कही जा सकती हैं।

वृद्धावस्था की सबसे बड़ी समस्या–

वृद्धावस्था जीवन की सबसे बड़ी समस्या है। अतिथि देवों भव की परम्परा वाले भारत देश में वृद्धाश्रम होना संस्कृति के मस्तक पर कोढ़ के समान है। लोकगीत म्हांनै लागै बुढ़ापो दौरो में पराश्रित होने पर व्यक्ति जो कभी परिवार का मुखिया था उसकी स्थिति हाशिए पर चली जाती है। जो घर के मुख्य भाग में निवास करता था। आज उसने अपने पूरे नौहरे को भुला दिया है। उत्तम शयन कक्ष, में नौकर–चाकर हवा करते थे। आज वह टूटी खाट पर पड़ा है। कभी वह सिल्क के नरम गदेले पर सोता था। आज बुढ़ापै में परिजनों ने उसके लिए टाट का खुरदरा बोरा बिछा दिया है। कभी मैं गरमा–गरम भोजन खाता था आज मेरे सामने ठंड़ा भोजन लाकर पटक दिया जाता है। इन गीतों के माध्यम से यह सामाजिक चेतना दी जाती है कि समाज में जो लोग अपने वृद्ध माता के साथ ऐसा व्यवहार करते हैं, उनका अंतर्मन जागृत हो–

"म्हांनै लागै बुढ़ापो दौरो
कदैई तो पोढ़ता महल–माळियां,
अब तो भुळाय दियो नौरो,
म्हांनै लागै बुढ़ापो दौरो।
कदैई तो पोढ़ता हिंगळू ढोलियै,
अब टूट्योड़ो माचो, म्हांनै लागै...
कदैअ तो पोढ़ता गुदरा–सिलक रां,
अब बिछाय दियो बोरो, म्हांनै लागै...
कदैई तो जीमता गरम रे भोजन,
अब पटकै, ठंडों ठेरो, म्हांनै लागै..."

वृद्धा को उसकी बड़ी बहूँ उपालंभ देती है कि सासू तूंने थूंक–थूंक कर पूरा घर भर दिया है। छोटी बहूँ कहती है कि सासू तूने शौच कर–कर के पूरा

घर भर दिया है। पोते–पोती भी अच्छा व्यवहार नहीं करते वे पूछते हैं– दादी तुम ओबरे को क्यूं नहीं छोड़ती अर्थात् मर क्यूं नहीं जाती? बचपन में हमनें खूब खूला खाया, युवावस्था में मौज की। अब बुढ़ापा आ गया हैं। जो रिश्तों के वास्तविक अवमूल्यन का है। अब तो चिड़िया खेत चुग गई है–

''बडोड़ी बहू तो कैवण लागी,
सासू थूक–थूक भर दियो नौरो,
म्हांनै लागै.....
छोटोड़ी बहू तो कैवण लागी सासू हंग–हंग भर दियो नौरो,
म्हांनै लागै.....
पोता–पोती अबड़ा बोलै, दादी छोड़ै क्यू नहीं ओबरो,
म्हांनै लागै.....
बलपणै में खेल्या खाया,
भरी जवानी मौज घणेरी,
अब तो आयो बुढापो,
म्हांनै लागै बुढ़ापो दौरो
रिश्तां रा सगपण तुल्या तराजूं,
चिड़्या चुग'गी खेत,
म्हांनै लागै बुढ़ापो दौरो''

इन सभी परिस्थियों को देखते हुए सरकार ने सामाजिक उत्थान के लिए सुझाव देकर निम्न कार्य किए हैं–

सामाजिक समस्याओं से सम्बन्धित सुझाव– सामाजिक समस्याओं के निराकरण हेतु सबसे प्रमुख कार्य–बाल–विवाह की प्रथा को समाप्त करना है, युवा–गृहों का पुनरुत्थान किया जाए,जो उन्हें शिक्षा देने की भी व्यवस्था करें, कन्या–मूल्य की प्रथा का जनमत के द्वारा निराकरण किया जाए, जनजातियों की आर्थिक स्थिति में सुधार किया जाए, जिससे वेश्यावृत्ति जैसी बुराई को समाप्त किया जा सके।

सांस्कृतिक समस्याओं से सम्बन्धित सुझाव— सांस्कृतिक समस्याओं के समाधान हेतु सबसे पहला—प्रमुख कार्य यह किया जा सकता है कि सभी सांस्कृतिक आयोजन उन्हीं की भाषा एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के अनुसार किए जाएँ, एलविन के मतानुसार ऐसे विश्वविद्यालयों की स्थापना की जाए, जो आदिम ललित कलाओं की रक्षा कर सकें, शिक्षा के द्वारा उन्हें वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रदान किया जाए जिससे वे धार्मिक अन्धविश्वासों को हटा सकें।

शैक्षिक समस्याओं से सम्बन्धित सुझाव—श्शैक्षिक समस्याओं को हल करने के लिए—जनजातियों को शिक्षा उनकी अपनी भाषा में दी जाए, शिक्षा के साथ—साथ नृत्य, संगीत, खेल आदि मनारंजनों का ध्यान रखा जाए, विद्यालयों के साथ—साथ व्यावसायिक प्रशिक्षण सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाएँ; कृषि, पशुपालन, मुर्गी—पालन, मत्स्य—पालन, जैसी व्यावसायिक—शिक्षा उन्हें उपलब्ध कराई जाए जिससे वे बेकारी का सामना कर सकें।

स्वास्थ्य की समस्याओं से सम्बन्धित सुझाव— स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं के हल के लिए—आदिवासी क्षेत्रों में चिकित्सालय, चिकित्सक व आधुनिक औषधियों की व्यवस्था की जाए, जनजातीय बालकों के लिए पोष्टिक आहार तथा विटामिन की गोलियाँ आदि उपलब्ध कराई जाएँ, चेचक, हैजा व अन्य बीमारियों के टीकों की व्यवस्था की जाए तथा जनजातियों को स्वास्थ्य के सामान्य नियमों से अवगत कराया जाए, चलते—फिरते अस्पतालों की व्यवस्था की जाए, तथा स्कूलों, पंचायत गृहों व युवागृहों में दवाओं आदि का प्रबन्ध किया जाए।

इस प्रकार यदि उपर्युक्त सुझावों को कार्यरूप दिया जा सके तो इन जनजातियों की समस्याएँ कम अवश्य की जा सकेंगी।

अनुसूचित जनजातियों की समस्याओं का निराकरण—

जनजातियों की विभिन्न समस्याओं का निराकरण करने के लिए सरकारी, गैर—सरकारी तथा अन्य संगठनों ने समय—समय पर अनेक प्रयास किए हैं, जो अग्रलिखित हैं—

सरकारी प्रयास– स्वतन्त्रता–प्राप्ति से पहले अंग्रेजी सरकार ने जनजातियों की समस्याओं के समाधान के लिए बहुत कम प्रसास किये थे। स्वतन्त्रता–प्राप्ति के बाद भारत सरकार द्वारा इनकी समस्याओं के समाधान के लिए किए गए प्रयास निम्नांकित हैं–

संवैधानिक प्रयास–भारत सरकार ने स्वतन्त्रता–प्राप्ति के बाद निर्मित संविधान में अनुसूचित जनजातियों के लिए अनेक प्रावधान घोषित किए हैं, जो निम्नलिखित हैं–

लोक सभा तथा विधान सभाओं में जनजातियों के लिए क्रमशः 40 तथा 303 स्थान सुरक्षित रखे गये हैं जो 25 जनवरी, 1990 के लिए थे। इसकी अवधि तथा निश्चित प्रतिशत के अनुसार सुरक्षित स्थान और बढ़ा दिये गये हैं।

महिलाओ का सामाजिक चेतना के प्रयास– इस हेतु जिला स्तर पर समितियाँ गठित की गई। जो सामाजिक क्षेत्र में उन्नयन का कार्य कर रही हैं–

"जिला कलेक्टर –अध्यक्ष
पुलिस अधीक्षक –सदस्य
मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट/ न्यायाधीश
पारिवारिक न्यायालय
(जिस जिले में स्थापित हो) –सदस्य
संयुक्त निदेशक,
समाज कल्याण विभाग –सदस्य
कानूनी सलाहकार–2
(अध्यक्ष द्वारा मनोनीत) –सदस्य
प्रतिष्ठित स्वयं सेवी संस्था के प्रतिनिधि
(अध्यक्ष द्वारा मनोनीत) –सदस्य
परियोजना निदेशक,
जिला महिला विकास अभिकरण –सदस्य सचिव।"[17]

राज्य महिला आयोगः—भारतीय संविधान में प्रदत्त अधिकारों के अन्तर्गत लिंगीय भेदभाव को समाप्त कर महिलाओं के हितों को संरक्षित एवं समुन्नत करने की दृष्टि से राज्य में महिला आयोग का गठन 15 मई, 1999 को किया गया है। आयोग में एक अध्यक्ष व 3 सदस्यों का प्रावधान है। आयोग का मुख्य कार्य महिलाओं के साथ होने वाले किसी भी अनुचित व्यवहार की जांच करना, उस पर निर्णय लेना तथा उस मामलें में की जाने वाली कार्यवाही में सरकार को सिफारिश करना है। आयोग का कार्यक्षेत्र काफी व्यापक है और आयोग महिलाओं के हितों को संरक्षित रखने की दृष्टि से निरन्तर कार्य कर रहा है।

"**सामूहिक विवाह अनुदान योजनाः**— समाज में विवाहों पर व्यय की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही हैं। सामूहिक विवाहों के आयोजन से ही इसे नियंत्रित किया जा सकता है। सामाजिक विकास की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने तथा विवाहों पर होने वाले व्यय को रोकने के लिए कम से कम 10 जोड़ों के ऐसे सामूहिक विवाह के आयोजन पर, जिसमें कम से कम 25 जोड़े सम्मिलित हों, प्रति जोड़ा 1000/—रुपये की दर से अनुदान राशि दिए जाने की घोषणा मुख्यमंत्री महोदय द्वारा वर्ष 1996—97 के बजट भाषण में की गई थी। इसके अनुक्रम में विभाग द्वारा नियम बनाए गये हैं। पुनः इस में संशोधन कर जोड़े की न्यूनतम संख्या 10 कर दी गई हैं। अनुदान राशि आयोजनकर्त्ता को दी जायेगी। प्रत्येक आयोजन पर अनुदान की अधिकतम राशि रुपये 50,000/— होगी। अनुदान हेतु आयोजनकर्त्ता द्वारा आवेदन सम्बन्धित जिला कलेक्टर को आयोजन के 15 दिन पूर्व प्रस्तुत किये जायेंगे। परियोजना निदेशक, जिला महिला विकास अभिकरण द्वारा इन प्रस्तावों का सत्यापन एवं अनुशंसा की जाएगी। यह अनुदान केवल पंजीकृत संस्थाओं को ही देय होगा, जो राजस्थान संस्था रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1958 (राजस्थान अधिनियम संख्या 28, 1958) के अन्तर्गत पंजीकृत हों। विकसित जोड़ों में लड़की की उम्र 18 वर्ष एवं लड़के की उम्र 21 वर्ष होना अनिवार्य होगा। इस कार्य हेतु वर्ष 1999—2000 में रुपये

10.00 लाख की राशि आवंटित की गई, का प्रावधान रखा गया हैं जबकि 2003–04 में इसे बढ़ाकर 5,000 रुपये की अधिकतम सीमा को बढ़ाकर 1.00 लाख रुपये करना सुनिश्चित कर दिया गया है। 25 प्रतिशत राशि आयोजकों को देना तथा 75 प्रतिशत राशि दुल्हन के नाम पर पोस्ट ऑफिस अथवा राष्ट्रीयकृत बैंक में कम से कम 3 वर्ष की सावधि जमा के रूप में जमा करना है।''[18]

''**बालिका समृद्धि योजनाः**– लड़कियों के प्रति समुदाय में दृष्टिकोण में परिवर्तन विशेष लक्ष्य से 2 अक्टूबर, 1997 में यह योजना शुरू की गई। योजना का जून, 1999 में संशोधन किया गया और अब इसके अन्तर्गत प्रावधान है कि बालिका के जन्म होने के समय इसके नाम से जमा कराए गए रुपये 500/– के बदले उसे स्कूल में दाखिला लेने के बाद वार्षिक छात्रवृत्ति दी जायेगी। इस योजना को महिला कल्याण विभाग क्रियान्वित कर रहा है।''[19]

''**स्वयंसिद्ध योजनाः**– प्रदेश की महिलाओं में आर्थिक स्वायत्तों एवं उनके विकास के लिये अन्तरवर्गीय सेवाओं एवं संस्थानों में समन्वयन एवं जागरुकता के उद्देश्य से राज्य में 1995 में केन्द्र सरकार के सहयोग से इन्दिरा महिला योजना प्रारम्भ की गई थी। यह योजना 9 जिलों की 10 पंचायत समितियों में क्रियान्वित की जा रही है। इसे अब स्वयं सिद्धा के नाम से राजस्थान के 27 जिलों के 30 ब्लॉक्स में संचालित किया जा रहा है। यह योजना पिछड़े इलाकों, जनजाति क्षेत्रों, गरीब परिवार की महिलाओं, जो कि बी. पी.एल. परिवार से चयनित भी हैं, एक समूह बनाकर एक साथ काम करना चाहती है, उनके सर्वांगीण विकास एवं आर्थिक सशक्तिकरण हेतु प्रारम्भ की गई है। अभी तक इस परियोजना के तहत आवंटित किये गये 650 खंडों में 52,106 स्वयं सहायता समूह बनाये जा चुके हैं।''[20]

''**महिलाओं की आयवृद्धि एवं रोजगार की योजना (नौराड)**ः– इस योजना के अन्तर्गत रोजगार सुनिश्चित करने के उद्देश्य से पारम्परिक तथा गैर पारम्परिक व्यवसाय/पेशे यथा–इलेक्ट्रोनिक्स, घड़ी मरम्मत, कम्प्यूटर प्रशिक्षण,

रेडीमेड वस्त्र, कशीदाकारी आदि में प्रशिक्षण देने के लिए महिलाओं को वित्तीय सहायता उपलब्ध करायी जाती है।''

महिला शक्ति अवार्ड:– महिला सशक्तिकरण के प्रयासों को प्रोत्साहित एवं प्रशंसित करने हेतु वर्ष 1996 से अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर प्रत्येक वर्ष 8 मार्च को राज्य स्तरीय महिला शक्ति अवार्ड दिये जाने का निर्णय लिया गया। इस पुरस्कार हेतु आवेदन के लिए आवश्यक है कि आवेदनकर्त्ता को महिला विकास के क्षेत्र में कार्य करने का कम से कम दस वर्ष का अनुभव हो एवं वह राजस्थान राज्य का सद्भावी नागरिक हो। चयन समिति द्वारा महिला विकास/सशक्तिकरण के निम्नलिखित क्षेत्रों में योगदान के आधार पर समग्र मूल्यांकन के पश्चात् पुरस्कार हेतु योग्य व्यक्ति का चयन किया जायेगा :–

साक्षात्कार एवं शिक्षा

स्वास्थ्य एवं पोषाहार

सामाजिक भेदभाव एवं हिंसा में सुरक्षा

रोजगारोत्पादक कार्य

किशोर बालिकाओं के जीवन की गुणवत्ता को उन्नत करने हेतु प्रयास

समाज में महिलाओं में स्तर को उन्नत करना।

पुरस्कार के अन्तर्गत 11,000/– रुपये नकद, एक दुशाला एवं प्रशस्ति पत्र दिया जायेगा। पुरस्कार प्राप्तकर्त्ता एवं अधिकतम तीन पारिवारिक सदस्यों/परिचारकों हेतु राजकीय नियमों के अनुसार यात्रा भत्ता एवं दैनिक भत्ता देय होगा।''[21]

''**स्व–शक्ति परियोजना**:– पूर्व में ग्रामीण महिला विकास एवं सशक्तिकरण परियोजना के नाम से ज्ञात इस परियोजना को 186 करोड़ रुपये की लागत के साथ पांच वर्ष की अवधि के लिए बिहार, छत्तीसगढ़, गुजरात, हरियाणा, झारखंड, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, उत्तरांचल और उत्तर प्रदेश राज्यों में कार्यान्वित करने के लिए केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजना के रूप में अक्टूबर

1998 में स्वीकृति प्रदान की गई। 5 करोड़ रुपये की एक अतिरिक्त राशि लाभग्राही समूहों को मुख्यतः उनके निर्माण के चरणों के दौरान ब्याज–युक्त ऋण देने के लिए आवर्ती निधियों की स्थापना में सहायता देने के लिए इस परियोजना में उपलब्ध करवाई है। इस परियोजना का उद्देश्य है, कड़ी मेहनत और समय को कम करने वाले साधनों, स्वास्थ्य, साक्षरता का उपयोग करके तथा विश्वास में वृद्धि करने और आय उत्पादक गतिविधियों हेतु दक्षताएं प्रदान करके बेहतर जीवन–स्तर के संसाधनों तक महिलाओं की पहुँच बढ़ाना। अभी तक इस परियोजना के तहत 16000 स्वयं सहायता समूहों के लक्ष्य की तुलना में 17.647 स्वयं सहायता समूह गठित किए जा चुके हैं। यह परियोजना संयुक्त रूप से विश्व बैंक तथा कृषि विकास हेतु अंतराष्ट्रीय निधि (आईएफडी) से सहायता प्राप्त है।

राष्ट्रीय महिला कोष (आरएमके) :– महिलाओं के लिए राष्ट्रीय ऋण निधि के रूप में जाने वाले इस कोष की स्थापना, डेयरी, कृषि दुकानदारी, फेरी तथा हस्तशिल्प जैसी आय उत्पादक गतिविधियाँ शुरू करने के लिए गरीब महिलाओं को ऋण सहायता तथा लघु–वित्त की सहायता प्रदान करने की दृष्टि से सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 के तहत एक पंजीकृत संस्था के रूप में 30 मार्च, 1993 को की गई। 2003–04 में, राष्ट्रीय महिला कोष के माध्यम से 32,765 महिलाओं को लाभान्वित करते हुए 25 करोड़ रुपये की राशि स्वीकृत की गई। इसके अलावा केन्द्र सरकार द्वारा विकास की निम्नलिखित योजनाएँ भी समय–समय पर चलाई जाती रहीं हैं, जो किसी न किसी रूप में महिलाओं से ही संबंधित है।

''महिलाओं के प्रशिक्षण एवं रोजगार कार्यक्रम हेतु सहायता (स्टेप):– इस योजना के अन्तर्गत अल्प आय वर्ग की महिलाओं को रोजगार से जोड़ने हेतु भारत सरकार द्वारा अनुदान स्वीकृत किया जाता है। राजस्थान को–ऑपरेटिव डेयरी फैडरेशन, जयपुर को इस योजना से अब तक 7.26 करोड़ का अनुदान स्वीकृत किया गया, जिसके अन्तर्गत उनके द्वारा राज्य के 10

जिलों अजमेर, बीकानेर, भरतपुर, पाली, जोधपुर, बांसवाड़ा, चूरू, उदयपुर में महिला डेयरी संघ संचालित है। इस कार्यक्रम में न केवल दुग्ध उत्पादन एवं विपणन के माध्यम से पशुओं का सामाजिक एवं आर्थिक विकास किया जाता है, अपितु इन जिलों की ग्रामीण महिलाओं में साक्षरता, ग्रामीण स्वास्थ्य एवं सफाई, स्वरोजगार कार्यक्रम एवं जागरुकता कार्यक्रम चलाकर उनका सर्वांगीण विकास भी किया जाता है। 2003–04 के दौरान 11 वीं परियोजनाएँ स्वीकृत की गई थीं, जिसमें 16350 महिलाओं के लाभान्वित होने के अनुमान है।

स्वावलम्बनः– इस योजना का उद्देश्य महिलाओं को स्थायी आधार पर रोजगार अथवा स्व–रोजगार प्राप्त करने में सहायता देने की दृष्टि से उन्हें प्रशिक्षण और कौशल उपलब्ध करवाना है, कुछ व्यवसाय जिनमें प्रशिक्षण दिये गये हैं, कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग, मेडिकल ट्रांसक्रिप्शन, इलैक्ट्रोनिक एवं असैमबलिंग, उपभोक्ता इलेक्ट्रोनिक मरम्मत, रेडियो एवं टीवी मरम्मत, वस्त्र निर्माण, हथकरघा बुनाई, हस्तशिल्प, सेक्रेटिरियल प्रौस्टिस, सामुदायिक स्वास्थ्य कार्य एवं कसीदाकारी। 2003–04 के दौरान 71240 महिलाओं को लाभान्वित करने वाले 463 प्रस्ताव अनुमोदित किये गए।

कामकाजी एवं बीमार महिलाओं के बच्चों के लिए शिशु सदन/में देख–रेख केन्द्र– इस योजना का उद्देश्य उन माता–पिता के बच्चों (0.5 वर्ष) को दिन में देख–रेख सुविधाएँ उपलब्ध करवाना है, जिनकी मासिक आय 1800 रुपये से अधिक नहीं है। इस योजना के अन्तर्गत बच्चों को उपलब्ध करवाई गई सुविधाओं में शयन एवं दिन में देख–रेख सेवाएं पूरक–आहार, टीकाकरण, दवाई और मनोरंजन शामिल है। यह योजना केन्द्रिय समाज कल्याण बोर्ड और दो अन्य राष्ट्रीय स्तर के स्वैच्छिक संगठनों अर्थात् भारतीय बाल कल्याण परिषद् तथा भारतीय आदिम जाति सेवक संघ के माध्यम से सीमान्त देश में क्रियान्वित की जा रही है। 2003–04 के दौरान इस योजना के अन्तर्गत लगभग 33.11 लाख रुपये लाभान्वित हुए।

कामकाजी महिलाओं के लिए छात्रावासः– कामकाजी महिलाओं के लिए देख–रेख केन्द्रों सहित छात्रावास भवनों के निर्माण और विस्तार के लिए सहायता की योजना 1972 से क्रियान्वित की जा रही है। इस योजना के अन्तर्गत गैर–सरकारी संगठनों, सरकारी निकायों और महिला समाज कल्याण तथा महिला शिक्षा के कार्यों में लगी अन्य एजेन्सियों, सरकारी उपक्रमों, महिला विकास निगमों स्थानीय निकायों, विश्वविद्यालयों तथा राज्य सरकारों को कामकाजी महिला छात्रावासों के भवनों का निर्माण करने के लिए वित्तीय सहायता उपलब्ध करवायी जाती है। यह योजना कामकाजी महिलाओं (अकेली कामकाजी महिलाएँ, अपने गृह नगरों से दूर के स्थानों पर काम कर रही महिलाएँ, कामकाजी महिलाएँ, जिनके पति शहर से बाहर गए हैं आदि) रोजगार के लिए प्रशिक्षण प्राप्त कर रही महिलाओं तथा विद्यालयोत्तर व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के अध्ययन कर ही छात्राओं के सुरक्षित एवं आवास के प्रावधानों को ध्यान में रखकर बनाई गई है। 2003–04 के दौरान, इस योजना के तहत, 1888 महिलाओं को लाभान्वित करते हुये 13 नये छात्रावास स्वीकृत किए गये।

स्वाधार– इस योजना की कठिन परिस्थितियों में पड़ी महिलाओं, जैसे अपने परिवार द्वारा वृन्दावन तथा काशी जैसे धार्मिक स्थानों को छोड़ दी गई, असहाय विधवाओं जेल से मुक्त की गई और पारिवारिक समर्थन से विहीन महिला कैदी, प्राकृतिक आपदाओं से सुरक्षित बच गई महिलाएँ, जो बेघर हो गई हों और जिनके पास सामाजिक व आर्थिक सहारा न हों, अवैध व्यापार से बेची गई महिलाएँ, लड़कियों अथवा वैश्यालयों तथा अन्य स्थानों से आयी हुई अथवा यौन अपराधों की शिकार महिलाएँ, जिनको उनके परिवार ने त्याग दिया है अथवा जो विभिन्न कारणों से अपने परिवारों में वापस नहीं जाना चाहती, को समग्र एवं एकीकृत सेवाएं उपलब्ध करवाने के लिए केन्द्रीय क्षेत्र की एक योजना के रूप में 2001–2002 में शुरू किया गया था। इस योजना के अन्तर्गत उपलब्ध करवाई जा रही सेवाओं के पैकेज में भोजन, कपड़ा, आश्रय, स्वास्थ्य देखभाल, परामर्श तथा कानूनी सहायता, शिक्षा के माध्यम से सामाजिक

तथा आर्थिक पुनर्वास, जागरुकता उत्पन्न करना, कौशल–उन्नयन और व्यवहारजन्य प्रशिक्षण का प्रावधान शामिल है। इस योजना में असहाय महिलाओं के लिए एक हैल्पलाइन भी चलाई जा रही है। वर्तमान में इस योजना के तहत 31 परियोजनाओं को धन उपलब्ध करवाया जा रहा है।

महिलाओं तथा लड़कियों के लिए अल्पावास गृह– महिलाओं तथा लड़कियों के लिए संचालित अल्पावास गृहयोजना का उद्देश्य पारिवारिक समस्याओं, मानसिक तनाव, सामाजिक बहिष्कार, शोषण तथा अन्य कारणों से नैतिक खतरों से ग्रस्त महिलाओं तथा लड़कियों को स्थाई आवास तथा पुनर्वास उपलब्ध कराना हैं। इन गृहों में उपचार, व्यावसायिक उपचार, शैक्षणिक तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण सुविधाएँ आदि शामिल हैं।

ऐसी महिलाओं और लड़कियों को अस्थायी आवास और सहायता उपलब्ध करायी जाती है, जिनके पास कोई सामाजिक सहायता प्रणाली उपलब्ध नहीं है। महिलाओं और लड़कियों को प्रशिक्षण और परामर्श प्रदान किया जाता है। इसमें 15–35 वर्ष के बीच के आयु वर्ग की महिलाओं को प्राथमिकता दी जाती है। माताओं के साथ आने वाले बच्चे तथा संस्थान में जन्में बच्चे केवल 7 वर्ष की आयु तक गृहों में रह सकते हैं, इसके बाद उन्हें बच्चों की संस्थाओं में स्थानान्तरित कर दिया जाता है तथा पालन–पोषण की सुविधाएँ उपलब्ध करायी जाती हैं।

शिशु गृह– केन्द्रीय समाज बोर्ड निम्न आयु वर्ग की कामकाजी और बीमार माताओं के बच्चों के लिए शिशु गृहों की स्थापना हेतु संगठनों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराता है। इस योजना के अन्तर्गत 0–5 वर्ष के आयु वर्ग के बच्चों को रखा जाता है। प्रत्येक गृह में 25 बच्चे होने चाहिए। सोने, स्वास्थ्य देखभाल, पूरक पोषण तत्व, प्रतिरक्षण सुविधाएँ उपलब्ध करायी जाती है। 25 बच्चों के व्यय हेतु 18480 रु0 प्रति वर्ष गैर आवृत्तिक मदों के लिए 4000 रुपये प्रति वर्ष दिये जाते हैं।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम–

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम को एक प्रमुख गरीबी–उन्मूलन कार्यक्रम के रूप में 2 अक्टूबर, 1980 में संपूर्ण देश में लागू किया गया। सामुदायिक क्षेत्र विकास कार्यक्रम, सूखा उन्मुख क्षेत्र कार्यक्रम, लघु किसान विकास एजेंसी एवं सीमांत किसान एवं कृषि श्रमिक एजेंसी कार्यक्रमों को मिलाकर समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम लागू किया गया। इस कार्यक्रम का मुख्य लक्ष्य ग्रामीण गरीब परिवारों को गरीबी–रेखा पार करने के लिए समर्थ बनाना है। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए लक्षित समूहों को उत्पाद परिसम्पत्तियां प्रदान करके स्वयं रोजगार उपलब्ध कराया जाता है। यह परिसम्पत्तिया वित्तीय मदद के माध्यम से उपलब्ध कराई जाती है। यह वित्तीय मदद सरकार द्वारा दी गई सब्सिडी तथा वित्तीय संस्थाओं द्वारा दिए गए सावधि ऋणों के रूप में होती है। यह कार्यक्रम केन्द्र तथा राज्यों द्वारा 50 : 50 के अनुपात में वित्त पोषित है। इस योजना के अन्तर्गत केन्द्र द्वारा प्रदान की जाने वाली वित्तीय मदद जिला ग्रामीण विकास एजेंसी को उपलब्ध कराई जाती है। इस कार्यक्रम के तहत लाभान्वित होने वाले परिवारों में कम से कम 40 प्रतिशत महिलाएँ तथा 3 प्रतिशत शारीरिक रूप से विकलांग लोग होने चाहिए। लक्षित समूह में वे परिवार आते हैं, जिनकी वार्षिक आय 11,000/– रुपये से कम है।

राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना :– गरीबी रेखा से नीचे जीवन–यापन कर रहे परिवारों की महिलाओं को प्रसूति के समय आर्थिक सहायता उपलब्ध कराने के उद्देश्य से समाज कल्याण विभाग द्वारा यह योजना चलाई जा रही है।

इन्दिरा महिला योजना :–महिलाओं को आत्मनिर्भर, स्वावलंबी बनाने तथा समुचित शिक्षा एवं संचार माध्यमों से उनकी मानसिकता में परिवर्तन लाने के उद्देश्य से महिला कल्याण विभाग द्वारा इस योजना को क्रियान्वित किया गया है। यह योजना 20 अगस्त, 1995 से चलाई जा रही है।

बालिका समृद्धि योजना :–समाज में लड़कियों को उचित स्थान दिलाने और उन्हें शिक्षा की व्यवस्था सुनिश्चित करने हेतु महिला कल्याण एवं बाल विकास विभाग द्वारा इस योजना को चलाया जा रहा है। यह योजना 2 अक्टूबर ,1997 को प्रारंभ की गई थी।

किशोरी बालिका योजना :–गरीबी की रेखा से नीचे गुजर–बसर कर रहे परिवारों की 11–18 वर्ष आयु वर्ग की बालिकाओं को स्वास्थ्य एवं शिक्षा की समुचित व्यवस्था तथा उन्हें आंगनबाड़ी केन्द्र का संचालन करने संबंधी व्यावहारिक ज्ञान एवं दक्षता उपलब्ध कराने के उद्देश्य से महिला कल्याण एवं बाल विकास विभाग द्वारा इस योजना को क्रियान्वयन किया गया है।

न्यू मॉडल चर्खा योजना :– ग्रामीण महिलाओं को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराकर उन्हें आर्थिक रूप से स्वावलंभी बनाने के उद्देश्य से खादी एवं ग्रामोद्योग विभाग द्वारा इस योजना को संचालित किया गया है।

महिला डेयरी परियोजना :– ग्रागीण महिलाओं को पशुपालन, दुग्ध व्यवसाय तथा चारा विकास के संबंध में समुचित प्रशिक्षण प्रदान कर दुग्ध व्यवसाय से उनकी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने के उद्देश्य से इस योजना को दुग्ध विकास विभाग द्वारा क्रियान्वित किया गया है।

ग्रामीण समृद्धि योजना :–अप्रैल 1999 से जवाहर रोजगार योजना का नाम बदलकर 'ग्रामीण समृद्धि' योजना कर दिया गया है। बेरोजगारों और अल्पसंख्यकों को रोजगार प्रदान करना तथा ग्रामीण क्षेत्रों में परिसम्पत्तियों का सृजन इस योजना के प्रमुख उद्देश्य हैं।

सुनिश्चित रोजगार योजना :–ग्रामीण गरीबों को गैर कृषि के महीनों व वर्ष में कम से कम सौ दिन सुनिश्चित रोजगार उपलब्ध कराने के उद्देश्य से इस योजना को लागू किया गया है।

रोजगार छतरी योजना :–ग्रामीण विकास में लगे विभिन्न 16 विभागों की योजनाओं को समन्वित करते हुये इस योजना को बेरोजगारों के लिए सुविधाजनक बनाते हुए चलाया जा रहा है।

प्रधानमंत्री रोजगार योजना :—18—35 वर्ष आयु वर्ग को शिक्षित बेरोजगार नवयुवकों को उद्योग सेवा व्यवसाय से सम्बन्धित परियोजनाएं बनाने हेतु आर्थिक सहायता प्रदान करते हुये उन्हें आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बनाने के उद्देश्य से इस योजना को कार्यान्वित किया गया है। अप्रैल, 1994 से इसे सम्पूर्ण देश में लागू कर दिया गया है।

उधमिता विकास कार्यक्रम :—18—35 वर्ष आयु वर्ग के शिक्षित बेरोजगारों को लघु औधोगिक इकाइयों की स्थापना हेतु ऋण, कच्चा माल औद्योगिक सहायता तथा विद्युत कनेक्शन आदि की व्यवस्था प्राथमिकता के आधार पर कराकर उन्हें स्वरोजगार उपलब्ध कराने के उद्देश्य से इस योजना को प्रारम्भ किया गया।

अम्बेडकर विशेष रोजगार योजना :—ग्रामीण अंचलों के बेरोजगारों को आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर करने तथा ग्रामीण अंचलों से शहरी क्षेत्रों की और उनके पलायन को रोकने के उद्देश्य से ग्राम्य विकास द्वारा इस योजना को क्रियान्वयन किया गया।

इन्दिरा आवास योजना :—ग्रामीण क्षेत्रों के अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति व मुक्त बन्धुआ मजदूरों और गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों को निःशुल्क मकान उपलब्ध कराने के उद्देश्य से ग्राम्य विकास द्वारा इस योजना को संचालित किया जा रहा है।

राष्ट्रीय बायोगैस कार्यक्रम :—ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों के लिए खाना पकाने और रोशनी हेतु गैस, खेतों के लिए खाद पेड़ो की बरबादी पर रोक महिलाओं की स्वास्थ्य रक्षा और पर्यावरण स्वच्छ रखने हेतु ग्राम्य विकास विभाग द्वारा यह योजना चलाई जा रही है।

ग्रामीण पेयजल योजना :—विशेष रूप से अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों को स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराने के उद्देश्य से मैदानी क्षेत्रों में हैण्डपम्प तथा पहाड़ी क्षेत्रों में डिग्गियों का निर्माण कार्य ग्राम्य विकास विभाग द्वारा किया जाता है।

स्वजल योजना :–स्वच्छ पेयजल की आपूर्ति एवं पर्यावरण में स्वच्छता, स्थायी स्वास्थ्य एवं आरोग्य उपलब्ध कराने के उद्देश्य से मांग आधारित व्यवस्था के आधार पर ग्राम्य विकास विभाग द्वारा इस योजना को संचालित किया जा रहा है।

स्वच्छ शौचालय निर्माण योजना :–ग्रामीण क्षेत्रों में गन्दे पानी एवं गंदगी से फैलने वाले रोगों से सुरक्षा प्रदान करने तथा विशेष रूप से महिलाओं की कठिनाइयों को दृष्टिकोण रखते हुए उनकी गरिमा बनाए रखने के उद्देश्य से पंचायती राज विभाग द्वारा इस योजना को क्रियान्वित किया गया है।

दीनदयाल उपाध्याय ग्रामीण सम्पर्क मार्ग योजना :–प्रदेश के छोटे–छोटे गाँवों को सभी मौसमों में कार्यरत रहने वाली पक्की सड़कों द्वारा मुख्य मार्गों से जोड़ने तथा गाँवों के बेरोजगार युवकों को रोजगार प्रदान करने जैसे उद्देश्य को पूरा करने हेतु न्यूनतम लागत में सम्पर्क मार्गों के निर्माण हेतु लोक निर्माण विभाग द्वारा यह योजना चलाई जा रही है।

स्वर्ण जयन्ति ग्राम विकास योजना :–देश की स्वतन्त्रता की 50 वीं वर्षगांठ के उपलक्ष में प्रत्येक विकास खण्ड में से एक गाँव, स्वर्ण जयन्ति ग्राम के रूप में चयनित कर इसे पूर्ण विकसित करने के उद्देश्य से ग्राम्य द्वारा इस योजना को संचालित किया जा रहा है।

अम्बेडकर ग्राम्य विकास योजना :– अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के बाहुल्यता वाले गाँव के सर्वागीण विकास के लिए अहम उद्देश्य को लेकर वहाँ सभी मूलभूत सुविधाओं को उपलब्ध कराने के उद्देश्य से ग्राम्य विकास विभाग द्वारा इस योजना को चलाया जा रहा है।

आश्रय आवासीय योजना :–निर्धन व्यक्तियों को प्रतिदिन की मामूली सी किश्त पर मकान उपलब्ध कराने के उद्देश्य से प्रदेश के आवास विभाग द्वारा इस योजना को प्रारम्भ किया गया है।

राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना :–60 वर्ष से अधिक की आयु वाले गरीब व्यक्तियों के लिए नगद पेंशन द्वारा आर्थिक सहायता उपलब्ध कराने के

उद्देश्य से इस योजना को समाज कल्याण विभाग द्वारा संचालित किया जा रहा है।

राष्ट्रीय पारिवारिक लाभ योजना :– गरीबी रेखा से नीचे जीवन–यापन कर रहे परिवारों के कमाऊ व्यस्क की अचानक मृत्यु हो जाने पर उसके आश्रितों को तत्कालिन सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से समाज कल्याण विभाग द्वारा संचालित की जा रही है।

राष्ट्रीय टीकाकरण कार्यक्रम :–इस कार्यक्रम में 5 वर्ष तक की आयु के बच्चों तथा गर्भवती महिलाओं को आवश्यक नियमित टीकाकरण करने के उद्देश्य से प्रदेश के चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग द्वारा इस योजना को संचालित किया जा रहा है।

स्वास्थ्य सखी योजना :–ग्रामीण क्षेत्रों में प्रजनन योग्य महिलाओं के स्वास्थ्य एवं भोजन तथा पर्यावरण सम्बन्धी कार्यक्रमों के प्रति जागरुकता पैदा करने एवं सुरक्षित उपलब्ध कराने के उद्देश्य से चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग द्वारा इस योजना को प्रारम्भ किया गया है।

अन्नपूर्णा योजना :–निराश्रित वृद्धों को सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से उन्हें प्रतिमाह 10 किलों गेहूँ अथवा चावल निःशुल्क उपलब्ध कराने के उद्देश्य से इस योजना को संचालित किया गया है।

अनौपचारिक शिक्षा योजना :–6–11 वर्ष आयु वर्ग के अशिक्षित अथवा विद्यालय छोड़ चुके बच्चों को 2 वर्षीय संक्षिप्त प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराकर उन्हें छठी कक्षा में आवश्यक रूप से प्रवेश दिलाने के उद्देश्य से इस योजना को शिक्षा विभाग द्वारा क्रियान्वित किया गया है।

प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम :–15–35 आयु वर्ग के सभी प्रौढ़ लोगों को साक्षर बनाने तथा उन्हें स्वास्थ्य, पर्यावरण एवं व्यावहारिक जानकारी उपलब्ध कराने के उद्देश्य से प्रौढ़ शिक्षा विभाग द्वारा इस योजना को संचालित किया गया है।

दम्पत्ति शैक्षिक योजना :–प्रदेश के दूर–दराज, दुर्गम एवं कठिन क्षेत्रों में शिक्षा की उपलब्धता सुनिश्चित करने तथा समाज की सहभागिता बढ़ाने के उद्देश्य से बेसिक शिक्षा विभाग द्वारा इस योजना को क्रियान्वित किया गया है।

शिक्षा गांरटी योजना :–विद्यालयों में शिक्षकों की कमी को पूरा करने के उद्देश्य से ग्राम पंचायतों की देखरेख में न्यूनतम इण्टरमीडिएट शिक्षा प्राप्त बेरोजगार को 1450 रु0 के नियत मानदेय पर शिक्षा मित्र के रूप में चयनित कर शिक्षण कार्य रूप सुचारू रूप से कराने के उद्देश्य से इस योजना को लागू किया गया है।

किसान मित्र :–गाँवों में किसानों को खेती के आधुनिक तौर–तरीके तथा उन्नत कृषि तकनीकों की आधुनिक जानकारी उपलब्ध कराने के उद्देश्य से प्रत्येक गाँव में एक कृषि स्नातक या प्रगतिशील किसान को नियत मासिक मानदेय पर तैनात करने के उद्देश्य से यह योजना कृषि विभाग द्वारा संचालित की गई है।

सघन मिनी डेयरी योजना :–ग्रामीण क्षेत्रों में दुग्ध व्यवसाय को अपना कर लोगों की आय बढ़ाने तथा रोजगार के साधनों में वृद्धि करने के उद्देश्य से दुग्ध विकास विभाग द्वारा इस योजना को चरणबद्ध तरीके से प्रारम्भ किया गया है।

सरकार द्वारा 2 अक्टूबर, 1997 से शुरू की गई 'बालिका समृद्धि योजना' के तहत पहली दो बालिकाओं के जन्म पर सरकार द्वारा गरीबी की रेखा से नीचे रहने वाले दंपत्तियों को 500 रुपये की आर्थिक सहायता दी जाती है। इसके बाद इन कन्याओं के स्कूल जाने पर उन्हें विशेष छात्रवृत्ति भी दी जाती है। यह छात्रवृत्ति पहली कक्षा के लिए 300 रुपये और दसवीं कक्षा के लिए 1000 रुपये है। प्रत्येक साल लगभग 12 लाख कन्याओं को बालिका समृद्धि योजना का लाभ मिलता है।

महिलाओं को आय के साधन उपलब्ध करवाने और उन्हें जागरुक करने के लिए केन्द्र सरकार द्वारा ''इन्दिरा महिला योजना'' भी चलाई जा रही है, जो

गरीब महिलाओं को आर्थिक रूप से सबल बनाने का काम बखूबी कर रही है। यह योजना महिलाओं से संबंधित विभिन्न योजनाओं के बीच समन्वय स्थापित करने का काम भी करती है, ताकि उपलब्ध कोष का महिलाओं के विकास हेतु समुचित उपयोग हो सके। इन्दिरा महिला योजना के तहत गाँवों और शहरी–झुग्गी–बस्तियों में महिला–समूह गठित किए जाते हैं, जो आंगनबाड़ी स्तर पर स्थापित इन्दिरा महिला केन्द्रों के सहयोग से काम करते हैं।

हाल ही में सरकार द्वारा 'किशोरी शक्ति योजना' शुरू की गई है, जिसके तहत किशोरियों के लिए स्वास्थ्य, पोषण, शिक्षा ओर प्रशिक्षण की व्यवस्था सुनिश्चित की जाती है। यह योजना ऐसे परिवार की बालिकाओं के लिए है, जिनकी सालाना आमदनी 6,400 रुपये से कम है। इस योजना को दो भागों में बांट कर चलाया जा रहा है। पहली योजना *''गर्ल टू अप्रोच''* तथा दूसरी योजना ''बालिका मंडल योजना'' के नाम से चलाई जा रही है। इस योजना में 15 से 18 वर्ष की आयु वर्ग की किशोरियों को सरकार की ओर से मुफ्त व्यावसायिक प्रशिक्षण देने की भी व्यवस्था है।

ऐसी ही एक और योजना है 'महिला स्वयंसिद्ध योजना' इस योजना में महिलाओं द्वारा ही संचालित ''स्वयं सहायता समूह'' गठित किए जाते हैं, जो विभिन्न सामाजिक स्तरों पर महिला विकास हेतु कार्य करते हैं।

केन्द्र सरकार के अलावा विभिन्न राज्य सरकारें भी महिला–विकास हेतु कार्य कर रही हैं, लेकिन धन की कमी के कारण ये योजनाएँ बहुत ज्यादा सफल नहीं हो पा रही हैं। कुछ प्रमुख योजनाएँ निम्नलिखित है–

''राष्ट्रीय सरकार द्वारा चलाए जा रहे महिलाओं से संबंधित विभिन्न कार्यक्रम –

पंचधारा योजना :–मध्य प्रदेश सरकार द्वारा 1 नवम्बर, 1991 से विशेषतः ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्र की महिलाओं के कल्याण एवं विकास हेतु पंचधारा योजना प्रारम्भ की गई, इस पंचधारा कार्यक्रम के तहत पांच योजनाएँ सन्निहित हैं, जिनके नाम एवं उद्देश्य निम्नलिखित हैं :–

वात्सल्य योजना :–प्रसवकाल में महिलाओं को बुनियादी स्वास्थ्य सुविधाएं प्रदान करना।

ग्राम्य योजना :–ग्रामीण महिलाओं को लघु व्यवसाय आरम्भ करने हेतु कार्यशील पूंजी प्रदान करना।

आयुष्मती योजना :–अति निर्धन महिलाओं के रुग्ण होने पर इलाज व पौष्टिक आहार का समुचित प्रबन्ध करने में सरकारी सहायता देना। इस प्रकार देश एवं राज्य की सरकारें मीणा जनजाति के लोगों में सामाजिक चेतना लाकर प्रत्येक स्तर पर विकासोन्मुख कार्य कर रही हैं।''[22]

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. मीणा इतिहास : रावत सारस्वत।
2. ब्रज लोक साहित्य– डॉ. उप्रेती– पृ.75।
3. वही पृ. 76।
4. हाड़ौती लोकगीतों में संस्कृति–डॉ. लीला मोदी, पृ.71।
5. वही पृ.72।
6. वही पृ. 76।
7. वही पृ. 86।
8. वही पृ. 97।
9. वही पृ.101।
10. भील जनजाति का सांस्कृतिक एवं आर्थिक जीवन– डॉ. जगदीश मीणा।
11. उदयपुर राज्य का इतिहास –डॉ. ओझा, जि.2, पृ. 543।
12. राजस्थान सामान्य अध्ययन– एच.डी. सिंह प्रकाषन राज पेनोरमा, लाल कोठी, जयपुर क्रांतिजैन, महावीर जैन।
13. उदयपुर राज्य का इतिहास– डॉ. ओझा, जि.2, पृ. 575।
14. मीणा इतिहास– रावत सारस्वत पृ. 159।
15. ट्राइब, जनजाति शोध पत्रिका (त्रैमासिक), माणिक्य लाल वर्मा जनजाति शोध एवं प्रशिक्षण संस्थान, उदयपुर।
16. शोध पत्रिका, उदयपुर।
17. उजास महिला कल्याणकारी योजनाएं, महिला एवं बाल विकास विभाग राजस्थान जयपुर 2003–2004, पृ. 13
18. वही– पृ. 16–17
19. वही– पृ. 12
20. वही– पृ. 18
21. प्रशासनिक प्रतिवेदन एवं विवरण, महिला बाल विकास– पृ. 32–33।
22. स्वप्निल सारस्वत, महिला विकास एक परिदृश्य– पृ. 164–170।

अध्याय–छठा

मीणा जनजाति में जन्म व मृत्यु के बाद सामाजिक चेतना–

6.1 मृत्यु संस्कार और गीत।

6.2 मीणा जनजाति के अतः रुदन की करुण गाथा।

6.3 दार्शनिक दृष्टिकोण, शरीर की नश्वरता और कर्मफल।

6.4 विश्वमंगल मनोकामना।

अध्याय–छठा

मीणा जनजाति में जन्म व मृत्यु के बाद सामाजिक चेतना–

मृत्यु संस्कार–

मृत्यु मानव जीवन का अन्तिम संस्कार है। सभी देशों और समाजों में किसी न किसी रूप में यह संस्कार सम्पन्न किया जाता है। भारत में हर संस्कार के गीत हैं, मृत्यु संस्कार के भी। अन्य संस्कारों पर लोकगीतों में जहाँ अपार अह्लाद होता है, वहीं इस संस्कार के लोकगीतों में दुःख और विषाद का सागर उमड़ता दिखाई देता है। ये गीत दो प्रकार के होते हैं एक में मृत व्यक्ति के गुणों का वर्णन और दूसरे में पैदा हुये कष्टों का। यदि छोटा बच्चा काल के गाल में चला गया तो उसके सौन्दर्य, भोलेपन और सरलता का वर्णन होता है। कमाने वाले व्यक्ति के मर जाने पर आर्थिक दुर्दशा का वर्णन भी लोकगीतों में पाया जाता है। इनमें कुछ गीत तत्काल उभर आते हैं, आह से। मेरी दृष्टि में इसे गीतात्मक रुदन कहना चाहिए जो नारियों के कंठ से आँखो के आँसू में भींगकर सामने आते हैं। ऋग्वेद से लेकर कालिदास तक के साहित्य में मृत्युगीत मिलते हैं। डांग के मृत्यु गीतों मे लय होती है। डांग के इस गीत में गोदान का भी उल्लेख है–

'काहे के कारन जौ बोंए,
काहे के हरे हरे बाँस
हरि रे किसन कैसे तिराओ।
लाल धरम के कारन जौ बोंए
मरन के काजे हरे हरे बाँस।।

राजस्थान प्रदेष में किसी पुरुष के मर जाने पर घर की स्त्रियाँ विशेष रूप से उसकी स्त्री अपने पति के गुणों की सराहना करती हुई विलाप करती हैं मृत्यु को प्राप्त व्यक्ति के अभाव में भावी दुःखों का वर्णन करती है। रोती हुई गाती जाती है, स्वर में आगत दुःख की पीड़ा होती है।

स्त्रियों के क्षुब्ध तथा संतप्त हृदय में जो भाव आते जाते हैं उनका प्रकाशन वे करती जाती हैं वे किसी पूरे गीत को नहीं गाती। बल्कि प्रत्येक बार कुछ न कुछ बात

कहकर अपना दुःख प्रकट करती है। ये गीत बड़े ही मार्मिक और हृदय विदारक होते हैं।

''हंसा उड़ गयो खोह छोड़कर, फिर नहीं आणा रे,
हंसा उड़ गयो रे...
जीव–जनावर, खेती–बाड़ी भरि्या पड़्यां खलाळा रे,
हंसा उड़ गयो रे...
महल–अटारी, रूपां–सोना यहीं पै रह जाणा रे,
हंसा उड़ गयो रे...
मुठ्ठी बाँध के आयो रे हंसा, **रीता हाथा जाणा रे,**
हंसा उड़ गयो.....''

संसार का एक मात्र अटल सत्य 'मृत्यु' है जिसका जन्म हुआ है उसकी मृत्यु निश्चित है। गीत में 'रीता हाथा जाणा रे,' अर्थात् सभी को यहाँ से खाली हाथ जाना है। इस एक पंक्ति के जीवन सत्य को अपने जीवन का लक्ष्य बना ले तो धरती के सभी विवाद–फसाद समाप्त हो जाये। यही एक सूक्ति वाक्य मृत्यु गीत की सामाजिक चेतना का ब्रह्मास्त्र सिद्ध हो सकता है।

मृत्यु संस्कार के गीत–

जीवन की अटल सच्चाई वृद्धजनों की मृत्यु पर भी गीत गाये जाते हैं। बारह दिन तक भजन कीर्तन होता है। इन शोकगीतों व भजनों में संसार की क्षणभंगुरता जीवन की नश्वरता के उपदेश होते हैं। मृत्यु पर 'हर का हिंडौला' गाया जाता है–

''हर हर करता वड़ेरा थे उठ हालिया,
कोई तुलछा री माळा थारै हाथ,
बेटां जी देवै थारै परिक्रमा,
कोई पोताजी करै डंडोत,
जी ओ बड़भागी थारै हर रो हिंडोलो,
सदा संग रै हालै।''[1]

भारत का लोक मन करुणा का अगाध सागर है। यहाँ दूसरों का भी दुख देखकर व सुनकर करुणा आँखो में अश्रु बनकर छलकने लगती है। इस रुदन में एक स्वर होता है। वह रुदन स्वर गीतों की तरह लयबद्ध होता है। ललनाओं का रुदन स्वर उनके कण्ठ से जब प्रस्फुटित होता है तो उसी स्वर लहरी में अपनी अन्तर्वेदना को लयबद्ध गीत के रुप में प्रस्तुत करने लगती है। उनके अंतर की वेदना काव्य का रुप धारण कर लेती है। आदि कवि महर्षि बाल्मीकि के अंतस्तल में क्रौंच जनित पीड़ा जैसे काव्य रूप में जन्म लेकर कविता का एक इतिहास रखती है। ठीक इसी तरह ललनाओं की करुण कविता के रुप में जन्म लेती आ रही है। इन बाल्मीकियों पर किसी की दृष्टि नहीं जाती। समसामयिक परिस्थिति को पाकर इन रुदन करुणा से अभिप्रेरित होकर एक बार में बाहर निकल पड़ता है। मीणा समाज में इस रुदन के कई रुप होते हैं– किसी प्रिय के विछोह पर, शादी या गोना में विदाई के समय, किसी प्रिय के एकाएक कहीं मिल जाने पर जैसे किसी तीर्थ स्थान में अथवा मेले आदि में भाई का बहन के यहाँ आने पर, पिता की बेटी के यहाँ जाने पर, वृद्ध पुरुष के निधन पर, वृद्ध महिला के निधन पर, एक युवक के निधन पर, एक बच्चे के निधन पर, यह रुदन निकल पडता है। इनके गीतों में सूक्ष्म अंतर होता है।

यह रुदन गीत करुणा का लहराता सागर होता है। किसी के निधन पर यह रुदन और मर्म तक पहुँच जाता है। यह प्रखर वेदना अन्तस्तल को विदीर्ण कर देती है। छोटा बच्चा घर से यदि दिवंगत हो जाता है तो उसका रुदन अवध के गीत में देखें उसकी बालजनित अठखेलियां अन्तर्मन को विदीर्ण करके ही छोड़ती है यथा –

''अरे मोरे रुगना....
कउनी रे गलिया लुकाने रे सुगना।
छोडि के पिंजड़वा पराने रे सुगना।
अरे मोरे ललवा
उठि के बइठि बतराते रे ललवा।
अरे मोरे रमवाँ तें निकरि न अउते।
अरे मोर करेजवा..
छतिया में अगिया लगाये रे करेजवा।
कउने ललनवाँ बोलउबै रे सुगना।''[2]

इस प्रकार अनेक ढंग से बच्चे की जो जो स्मृति तत्काल आ जाती है, उसी को आधार लेकर पीड़ा का अक्षुण्ण सागर लहराने लगता है।

परिवार में वृद्ध हमारे समाज में वटवृक्ष की छाया के रूप में होते हैं। पूरा परिवार उनकी मृत्यु होने से तिलमिला उठता है। उनके निधन से जो भारी भार सिर पर आ जाता है यह कल्पना से भी भारी पड़ता है। भारत में खासकर करौली क्षेत्र में हर जन्म लेने वाला राम होता है। मरने वाला भी राम होता है। हर माँ कौशल्या और हर पिता दशरथ हुआ करते हैं–

''अरे मोरे बपई, अरे मोरे रमवाँ
हमका तू छोडि के ज भाग्या मोरे बपई।
कउनी गलियवा लुकान्या हो बपई।
कवन बपइया बोलउबै हो रमवाँ।''

है। रुदन सुनने पर अंतर स्पष्ट हो गया है। वह रुदन अवध क्षेत्र के करुणाकलित अंतराल का ही द्योतक है।

कुछ ललनाएँ जिसके देर तक बच्चे नहीं होते थे, वे देवी देवताओं और मंदिर में दर्शन पूजन वंदन की अनेक मनौतियां भी मान देती हैं। कभी–कभी बच्चे के अस्वस्थ होने पर भी मनौतियां मानी जाती है। कभी–कभी गंगा जी की मनौती भी मानी जाती है। विलम्ब से बच्चे होने पर मनौती की परंपरा बहुत पुरानी है। एक उदाहरण देखे –

''गंग जुमन जल रेत तेवइया एक तप करै,
गंगा अपनी लहरि हमै देतउ मैं मझधार डुबलिउँ।''

करौली क्षेत्र में गंगा स्नान के समय बच्चे को ले जाकर गंगा माँ को समर्पित कर देती हैं फिर निकाल कर लेकर चली आती हैं। कभी–कभी कुछ बच्चे हाथ नहीं आते धारा में चले जाते हैं। ऐसी स्थिति में वे मानती है कि पुनः मेरे पेट से गंगा माई देंगी। रुदन करती ललन को अंध ललनाएँ उस समय पर समझाती हैं।

हमारे करौली क्षेत्र में लड़की के शादी के उपरांत विदाई के समय कुहराम सा मच जाता है। इस समय बेटी माँ के लिए, माँ बेटी के लिए, भाई बहन के लिए, बहन

भाई के लिए, समस्त परिजनों का रुदन रूप दिखाई देता है। इस तीव्र करुणा स्वर में रुदन को कारण करके रोने की संज्ञा दी जाती है। बेटी का माँ के लिए रुदन देखते ही बनता है–

अरे मोरी माई........

जहाँ पर बेटी का रुदन देखा गया वहीं पर अन्य।''[3]

संबंधी का भी रुदन देखे। पुरुष वर्ग मात्र हिचकी भर–भर के रोते हैं। बच्चे बेतुका स्वर से रोते हैं। माँ का रुदन देखें। माँ बेटी को हृदय से चिपका कर बेटी के लिए अत्यंत व्याकुल हो जाती है। बेटी के प्रति असह्य व्यामोह कण्ठ से निकल कर एक स्वर का रुप धारण कर लेता है। विदाई के समय का यह दृश्य अवध की तरह ही भारत के हर क्षेत्र में देखा जा सकता है यथा –

''अरे मोरी बिटिया....
भितरा में अगिया लगाये करेजवा।
कवनि बिटियवा बोलअवे देदईया।।

करौली क्षेत्र में वृद्ध कहते हैं कि उसकी बन गई। फिर भी उसका स्वभाव परिवार को खुलने वाला हो ही जाता है। रुदन में बारीक अंतर होता है। वास्तव में जब बूढ़े आदमी दरवाजे पर रहते हैं तो समझा जाता है कि दरवाजे पर पहरेदार हैं। बूढ़ो को दरवाजे की टाटी कहा जाता है। उनके मरने का रुदन देखें।

''अरे मोरी माई....
हमका तु छोडि के न भागिउ मोरी मइया।
अब के उठि रहिया देखाये रे दइया।
भौरवे नित उठिकै जगाये रे मइया।
लडकिन के रहिया के देखाये रे मइया।
किसक कहनियां सुनये रे मइया।
छोड़ि के बजरिया तु भाग्यू रे मइया।
किहू कनी मुहवाँ त ताक्य रे मइया।
टटिया दुअरवा कै उजारिउ रे मइया।''

इसी स्थान पर यदि पुत्र वधू रोयेगी तो उसमें सूक्ष्म अंतर आभासित हो जाता है। बेटी मईया, मयरिया, माई शब्दों का संबोधन करती है। वहीं पर पुत्रवधू मम्मा, मम्मी, शब्दों के संबोधन से सूक्ष्म अंतर पर रुदन प्रस्तुत करती है यथा –

''अरे मोरी मैया...
कौनी गलिया निकरि रे मैया।
छोड़ि के बजरिया पलानू रे मैया।
सून बिहू धरवा द्वार मोर मैया।

किसी वृद्ध पुरुष के मरने पर प्रायः यही भाव रहते हुए भी सूक्ष्म अंतर दृष्टिगोचर होता है। इसमें बपई, ददई आदि संबोधन लागू होते हैं –

''अरे मोरे बपई....
कउन गलियवा लुकान्या तु बपई।
लागिनि नजरिया तु छोड्या रे बपई।
सुना किया भरा तू दुबार मोर बपई।''

कभी–कभी दुर्घटना से युवा पुत्र मर जाता है। परिवार का रीढ़ जो होता है चला जाता है। माँ, पुत्री सभी रो–रोकर बुरी स्थिति को प्राप्त हो जाते हैं। यह घटना माँ को अंतस्तल को विदीर्ण कर देती है। जब भी परिवार में कोई उत्सव आदि आता है तो माँ का हृदय पुत्र के होने की कल्पना करके गेय स्वर में रुदन आरंभ कर देती हैं। आये दिन कलेजे को दबा–दबा कर अपना समय बिताने लगती है। वेदना भारी पड़ने पर रुदन उभर कर सामने आ ही जाता है यथा–

''अरे मोरे बचवा
कौनी तै गलिया लुकाने मोरे ललवा।
अरे मोरे बचवा तै निकरि न अउते।
सजि के बरतिया तैं जाते मोरे ललवा।
मधुरि बचनियाँ सुनउते रे ललवा।
हमरै तैं जियरा जुडवउते रे मुनुवाँ।''

करौली क्षेत्र में भी सामाजिक स्तर पर जब दिवंगत आत्मा को प्रतिदिन उसके परिजन एकत्रित होकर स्नान कर तिलांजलि देते हैं। अंत में सभी पुरुष एक स्थान पर बैठकर दिवंगत के गुणों की चर्चा करते हैं। औरतें भी स्नान कर तिलांजलि देकर एक साथ बैठ कर रोती हैं उसी रुदन में उसके गुणों की चर्चा सस्वर रुदन गायन करती हैं यथा–

"अरे मोरी अम्मा
केकई हो पँयड़िया निहरबै रे अम्मा।
भूली रहिया अब के बताये मोरी अम्मा।
गनुनवाँ सगुनवाँ के देखाये मोरी अम्मा।
के उठि भोरबै जगाये मोरी अम्मा।
भरवा सकल भुडवा ठेलिउ मोरी अम्मा।"

जिस परिवार में निधन की घटना घटी रहती है उस परिवार में स्त्री पुरुष दोनों तीया चोथ बैठने आते हैं। यह चहकारी का क्रम रविवार, मंगलवार छोड़ कर त्रयोदस तक लोग आते हैं। आने पर घर की मालकिन बाहर आकर या दहलीज के अंदर से रुदन करती है। इस रुदन पर घटना का पूरा चित्रण करती है। स्त्री के आने पर आबद्ध रुदन करती है। शुद्ध तक यह क्रम चलता रहता है। इसके बाद वार्षिक, संस्कार एक वर्ष के बाद करते हैं। इस दिन के रुदन में याद करते हैं। जिस तिथि को निधन हुआ रहता है हर वर्ष उस तिथि को ब्राह्मणों को भोज कराया जाता है। इस पुण्यतिथि को हर वर्ष मनाया जाता है। उस आत्मा की शांति के लिए हर वर्ष भोज दान व उसके नाम से कोई कार्य करते है।

करौली क्षेत्र में अनेक देवी–देवताओं के मंदिर और धार्मिक स्थल है जहँ दर्शनार्थ पूजापाठ एवं कराही चढ़ाने के लिए भ्रमण करने के लिए, पूर्व नियोजित कार्यक्रम के अनुसार अथवा यकायक संयोगवश जब दो संबंधी औरतों से भेंट हो जाती है तो एक दूसरे के गले चिपकर रोने लगती हैं। यह रुदन भी लयबद्ध गीत का सरीखा ही होता है। इस रुदन में बारी–बारी दोनों अपने सुख–दुख का वर्णन करती हैं। उनका रुदन प्रश्नोत्तर में होता है। यह रुदन इतना प्रभावकारी होता है कि वहाँ

अगल–बगल की ललनाएँ स्वभावतः उधर आकर्षित होकर अपने अश्रुधार को पोंछती नजर आने लगती हैं। ननद भाभी की भेंट होने पर ननद सम्पूर्ण आपसी तथ्यों को भुलाकर हृदय खोलकर रख देती है यथा–

ओ भाई .... तेने बहोत
लाड़ली राखी ....
ओ मोरे वीरा,
तो बिन में अकेली रहेगी
मोकू कोण धीर बंधायगो
ओ मोरे वीरा ......''

भारतीय ललना का जीवन करुणा का लहराता सागर होता है। उसके समक्ष दारुनि सासू का व्यवहार, उत्पीड़न ननद का सुर्ख स्वर अन्य परिजनों का व्यंग्य बाण उसके सहन के बाहर हो जाता है।

चाचा, भाई के आ जाने पर उन्हें घर में भेट करने के लिए बुलाया जाता है। वह अपनी सम्पूर्ण करुण कहानी रुदन के माध्यम से बताने में नहीं चूकती। पिता, भाई, चाचा जो उपस्थित रहते हैं वे भी अपनी अश्रु धार को पोंछ नहीं पाते। एक भाई बहन का समाचार लेने जाता है। गरीबी के कारण व पर्याप्त मीठा, साड़ी, फल आदि नहीं ले जाता। बहन की सासू नाराजगी के कारण उसका मान सम्मान नहीं करती। पिता भी शादी में अगुवा के झांसे में पड़कर कर दिया। अन्त में और कुछ आना समझा था सभी गलत साबित हुआ। भाई भेंट करने गया बहन ने रोकर अपनी गाथा समझाना आरंभ कर दिया–

''अरे मोरे बिरना....
आजु तू खबरिया जा लिह्या मोरे बिरना।
मुड़वा ला बोझवा जा बपई फेकेनि मोरे बिरना।
लवहि का हमका न तौ ताकेनि मोरे बिरना।
सानी पानी कुटना औ पिसना रे बिरना।
कमवाँ और कजवा चुकै न मोरे बिरना।

बिन दाम मिला वा चकरवा रे बिरना।
कमवाँ और कजवा भुलानी रे बिरना।
इही महै देहियाँ विलानी रे बिरना।
लोहवा जरै जेस लोहरा दुकनियाँ रे बिरना।
वइसे वाहिनी जरा थै ससुररिया रे बिरना।
बपई के पगडी कै लजिया बचाए रे बिरना।
तरबा इनरवा न थहाये मोरे बिरना।''

कभी–कभी अनावृष्टि या अकाल पड़ जाने पर वर्षा न होने से चारों ओर त्राहि–त्राहि मच जाती है। ऐसे में एक टोटका करके रो–रोकर इन्द्र देव से पानी बरसाने का निवेदन किया जाता है। बच्चे हर घर के सामने पानी गिराकर उसी में लौटने लगते हैं। वे इन्द्र देव से पानी भी मांगते रहते हैं। सभी मिलकर गाते हैं–

''काले मेघा पानी दे।
छूछी हौदी बैल पियासे।
बरसी राम बिरानी है।
काले मेघा पानी दे।
पानी दे गुड धानी दे।
बरसो आनि पिसानी दे।
काले मेघा पानी दे।''[4]

गाँव के बाहर सभी बच्चे, बड़े, बूढ़ों के सहयोग से वाणी धोखा बनाकर बाल भोग कराते हैं। ऐसे देखा जाता है कि 24 घंटे के अंदर वर्षा हो जाती है। एक अन्य कृत्य भी होता है। औरतें रात में हल लेकर खेत में जुताई करती है। वे हल जोतती और रो रोकर कर इन्द्रदेव से वर्षा करने की याचना करती हैं। ऐसा करने पर पानी बरसते देखा जाता है। एक और कृत्य औरतें बाँस की कोठ में मेंढ़क को पकड़कर बांध देती हैं उसके उपर पानी डालकर बुलवाने का प्रयास करने लगती है। वहाँ ऐसा सब रुदन करती हैं–

''कहवाँ पँइड़िया भुलान्या भइया बरखू।
बाँसवा की कोठिया लुकान्या भइया बरखू।
आहूकँ तु सबका जुड़ावा भइया बरखू।
भुइयाँ कै प्यसिया बुझावा भइया बरखू।
पेटवा कै भुखिया मिटवा भइया बरखू।''

करौली क्षेत्र में ऐसे अनेक गीत प्रचलित हैं जिसे सुन–सुन कर लोग रोने लगते हैं। ऐसे गीतों में निरवाही गीत, जात के कुछ गीत, इस्लाम समाज में दाहा निकलने पर भी रुदन करते पाये जाते हैं– उनके धार्मिक शहीदों को याद कर रुदन करते गाये जाते हैं। इनमें करुणा का सागर, लहरें भरता दिखता है।

इस प्रकार करौली क्षेत्र में प्रचलित रीति–रिवाज स्थान, पर भिन्न–भिन्न होते हैं। उपर्युक्त ढंग से समाज में प्रचलित हर रुदन संगीत का सहज विश्लेषण करते हैं। पुराने समय के हर क्रिया कलापों में अब अंतर आता जा रहा है। पहले गाँव–गाँव में कालबलौटी बच्चे खेलने लगते थे। अब कहीं कहीं ऐसा देखने को मिलता है। लोग नलकूप नहर आदि पर भी निर्भर हो गये परन्तु इन्द्र देवता से पुकार सुनाने में वे विश्वास नहीं करते। जैसे–जैसे लोग अपने को शिक्षित मानते जा रहे हैं वैसे–वैसे उपर्युक्त क्रियाकलापों से विश्वास उठता जा रहा है। पच्चीस–तीस वर्ष पूर्व कुछ और बात थी, आज कुछ ओर हो गयी है।

मीणा जनजाति के अतः रुदन की करुण गाथा–

मीणा जनजाति का सामाजिक व राजनीतिक स्वरूप बहुत ही पेंचीदा रहा है। यह जनजाति प्राचीन समय से ही अपने अधिकारों के प्रति अपेक्षित रही है। इसने अनेक कुरीतियों, आडम्बरों व अत्याचारों को सहन किया है जो जाति कभी राष्ट्रीय महत्त्व का एक प्रबल संगठन थी। वह किस प्रकार अध–पतन को प्राप्त हो गई है। जो कभी भूमि का निर्वाह स्वामित्व भोगते थे उन्हें किस प्रकार पद्दलित कर चोर–डाकू बनने पर विवश कर दिया गया है। शिक्षा और संस्कारों से दूर रखकर जिस जाति को कुत्सित दृष्टि से देखा जाए, जिसकी प्रगति के सारे मार्ग राज और समाज के निर्दयी हाथों द्वारा अवरूद्ध कर दिये जाएं उसे जीवित रहने के लिए यदि

कुकृत्य भी करने पड़े हों तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। सामाजिक दृष्टि से शून्य राज्यतंत्रीय और सामंती शासकों ने उलटी दिशा में ही विचार और कार्य चालू रखा। भारत भूमि को ग्रसित करने के लिए उतारू विदेशी शासकों ने भी उसी दुष्कर्म को प्रोत्साहन दिया और स्वयं आगे होकर ऐसे काले कानूनों की रचना की, जिससे समूची जाति के निरीह प्राणियों का जीवन दूभर हो उठा। 'अपराधी जाति अधिनियम 1871" वही काला कानून था। इस कानून को अंग्रेजों तथा उनके अधीनस्थ देशी राज्यों ने समय–समय पर सख्त से सख्त बनाकर अपने मार्ग के कण्टकों को साफ करना चाहा। सन् 1897, 1911 तथा 1923 में इसके संशोधन किये एक। सन् 1923 का संशेधित स्वरूप 1924 में उन सभी राज्यों में लागू हुआ, जिसमें तथाकथित अपराधी जाति पाई जाती थी। मीणा जाति का नाम इस सूची में उल्लेखनीय है।"[5] सन् 1950 की गणना के अनुसार इस सूची में बावरियों की 31767 संख्या के बाद मीणों की 20525 संख्या ही दूसरे स्थान पर थी। उक्त अधिनियम की कठोरता का आभास उन प्रावधानों से हो सकेगा, जिसमें इन तथाकथित अपराधियों का सुख–चैन से रहना तो दूर, पेट भरना तक दूभर हो गया था। इस कानून के अधीन अपराधी घोषित जाति के सभी व्यक्तियों का पंजीकरण अनिवार्य था। उनकी पहचान व अंगुलियों की छापे पुलिस द्वारा ली जाती। उन्हें निश्चित स्थानों पर ही रहना होता निर्धारित समयों पर उपस्थिति दर्ज करानी होती बाहर जाने के लिये अनुज्ञा पत्र लेना होता तथा जहाँ जाते वहाँ के पंच तथा अन्य निर्दिष्ट अधिकारी द्वारा आने–जाने के समय आदि का विवरण अंकित करवाना होता। इन बातों का उल्लघंन करने पर एक से तीन वर्ष तक की सजा और 500 रूपये जुर्माना देना होता। पुलिस के उच्च्च अधिकारी बिना किसी कारण के किसी को तीन से 6 माह तक सजा दे देते थे, जिसकी कोई अपील नहीं थी।

सन् 1871 से 1911 तक यह अधिनियम कठोर होता गया। 1919 के बाद कुछ ढ़ीलाई प्रतीत हुई तथा 1924 में इनकों सुधारने के लिए बस्तियां बसाने, शिक्षा देने तथा आर्थिक सहायता करने के प्रावधान भी रखे गये, पर यह सब दिखावटी लीपापोती मात्र थी, ताकि समाज–सुधारकों को यह बताया जा सके कि यह कानून

सुधार की दृष्टि से ही बनाया गया है। इस प्रावधान के अनुसार शिक्षा देने का एक हास्यास्पद उदाहरण सन् 1949–50 में प्रकाशित आयंगर रिर्पोट में दिया है। जिसके अनुसार पुलिस के एक सिपाही को ही दस रुपये मासिक का भत्ता इसलिए दिया जाता था कि वह मीणों पर अत्याचारपूर्ण नियंत्रण रखने साथ–साथ उन्हें शिक्षित भी करें। समाज सुधार के लिए भी तत्कालीन शासन पुलिस के अलावा किसी का विश्वास नहीं करता था।

अपराधशील जनजाति अधिनियम जांच समिति ने बहुत बाद में सन् 1948 में यह ठीक ही कहा था कि, यदि वे राज्य जहाँ अपराधी जातियां बसती थीं, उनकी भलाई के लिये अच्छे उपाय काम में लेते तो अब तक समस्या का समाधान हो चुका होता। बिना सुधार कार्य के अधिनियम को चालू रखने का परिणाम यही होगा कि ये लोग अपने प्रति किये जाने वाले अन्याय को अधिकाधिक महसूस करेंगे और समाज तथा राज्य के पक्के शत्रु बन जाएंगे।

अबोध शिशुओं के प्रति सिसकता नासूर–

कितने आश्चर्य की बात है कि अधिनियम उन अबोध शिशुओं को भी अपराधी मान लेता था, जिन्होंने इस जाति में जन्म लेने का दुर्भाग्य प्राप्त किया था। डॉ. के. एन. काटजू ने इस पर टिप्पणी करते हुए कहा था कि ''अपराधी जातियों के अबोध बालकों को भी अपराधी मान लेना परमात्मा का अनादर करना है।''[6]

अधिनियम का सहारा लेकर किस प्रकार पुलिस इन्हें तंग करती थी। इनसे बेगार लेती, पुलिस थानों के पास ही इन्हें रहने के लिए मजबूर करती, यह भुग्तभोगी ही जान सकते हैं। रात को ग्यारह बजे तथा दिन के तीन बजे इन्हें हाजिरी देने के लिए कहा जाता, जिससे रात की नींद और दिन का काम हराम हो जाता और भूखे पेट रहकर जीवन की यातना सहनी पड़ती। ऐसी स्थिति में पुलिस से सांठ–गांठ कर चोरियों से कुशलता प्राप्त करने का ही मार्ग उनके लिए खुला था। इसी अपवित्र गंठबंधन का प्रमाण शाहजहाँपुर, नीमकाथाना आदि प्रसिद्ध स्थानों ही समृद्धि हैं, जो इस अधिनियम से प्रभावित जाति के लोगों में हैं।

सामान्यतः इस अधिनियम की तथा विशेषतः धारा 23 के दानवी प्रावधान की कटु आलोचनाएँ सभी राजनीतिज्ञों तथा समाज सुधारकों ने की थी। श्री एम.एस. अणे ने कहा था कि यहाँ धारा केवल अपराध–वृत्ति की बढ़ाने में ही सहायक हुई है। सन् 1939 में अखिल भारतीय आदिमजाति सेवक संघ के उपाध्यक्ष श्री ए.वी. ठक्कर ने कहा था कि पुलिस वाले अपराधी जाति के लोगों को राक्षसों के समान समझते हैं और इसलिए मामूली अपराधों के लिए कठोर से कठोर दण्ड देते हैं।''[7] उस समय कांग्रेस के नेता मंत्रिमण्डलों में थे। अतः उनसे भी अपील की गई कि वे इस अधिनियम की कठोरता को मिटायेंगे तथा समाज के इस पीड़ित और अपेक्षित वर्ग की उन्नति के लिए आवश्यक कदम उठाएंगे।

श्री नेहरू ने भी सन् 1936 में आंध्र के नैलोर नामक स्थान पर अधिनियम की निंदा की और यह मांग की कि इस अधिनियम को कानून के पृष्टों से फाड़ कर फेंका जाए। समूची जाति को अपराधी घोषित करने के सिद्धांत को उन्होंने असभ्य और न्याय–व्यवस्था के मान्य सिद्धांतों के प्रतिकूल बताया।

इस प्रकार देश चिंतकों द्वारा इतनी कटु आलोचना होने पर भी सन् 1947 तक इसके सुधार में कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई। स्वतंत्रता–प्राप्ति के बाद सन् 1949 में इस अधिनियम की जाँच के लिए एक समिति गठित की गई, जिसने अपने प्रतिवेदन में इसे भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों के विपरीत बताकर समाप्त कर दिये जाने की सिफारिश की। इस अधिनियम के रद्द होने के कारण ही इन अपराधी जातियों को विमुक्त जाति की संज्ञान दी गई।

अधिनियम की कठोरता की ओर मीणा समाज के प्रबुद्ध लोगों का ध्यान नहीं गया हो ऐसी बात नहीं है। सन् 1924 में जब इसे लागू किया गया तो उसके तुरंत बाद ही समाज के पढ़े–लिखे और सेवा भावी लोगों को इसकी निरंकुशता खटकने लगी। जिन दिनों राज्य के विरोध में एक शब्द भी निकालना बहुत बड़े साहस की अपेक्षा रखता था तथा जिसके परिणाम अत्यंत घातक हो सकते हैं, उन दिनों भी (सन् 1924) श्री छोटूराम झरवाल, महादेव राम पावड़ी, व जवाहर राम माणेताल आदि जयपुर के कुछ मीणों से साहस करके मीणा जाति–सुधार कमेटी के नाम से एक

संस्था का निर्माण किया और आस–पास के क्षेत्रों में संगठन बनाने की दृष्टि से दौरे भी किये। सन् 1928 में प्रकाशित एक पुस्तिका में मीणा सुधार आंदोलन की गतिविधियों की जानकारी मिलती है। इस संस्था के सदस्यों ने विशेष कर ढूंढाड़ क्षेत्र के गाँवों में घूमकर सामाजिक कुरीतियों को हटाने तथा शिक्षा का प्रसार करने की दिशा में जनमत जागृत किया। शराब पीना, अश्लील गीत गाना, असांस्कृतिक नृत्य करना आदि कुरीतियों को इन्होंने अपना लक्ष्य बनाया तथा पाठशालाएं खोलने के प्रयत्न भी किये। अपराधी जाति अधिनियम की दिशा में इनकी कोई विशेष उपलब्धि नहीं रही।''[8]

रुदन के बीच राहत के छींटे–

उधर राजकीय स्तर पर भी सद्भावनापूर्ण उच्चाधिकारियों के प्रयत्नों से मीणों को कुछ राहत मिलने लगी थी। इनमें विदेशी अधिकारी ही प्रशंसनीय कहे जा सकते हैं। श्री एफ.सी.क्वेन्टरी नामक पुलिस अध्यक्ष ने मीणों के सुधार में दिलचस्पी ली। इनके बाद श्री गोलपालदास नामक एक उपमहाधीक्षक पंजाब से आए जिन्होंने जून 1930 से बाकायदा हाजरी की प्रथा चालू कराई और सुधार के स्थान पर और कड़ाई बरती। पर शीघ्र ही प्रसिद्ध पुलिस–अध्यक्ष श्री यंग ने इनके सुधार में रुचि ली और भजन मंडलियां बनाकर गाँवों में सुधार का प्रचार प्रारंभ किया। उन्होंने पुलिस तथा निजी सेवा में रखकर मीणों के प्रोत्साहित किया और उनकी योग्यता का शांति तथा व्यवस्था स्थापित करने में उपयोग किया। सेना में भी मीणों को भर्ती करवाया गया।

सन् 1942 में 'अखिल भारतीय मीणा क्षत्रिय महासभा" नामक संस्था का एक अधिवेशन श्री सूरजभान बैरवा के प्रयत्नों से दिल्ली में आयोजित किया गया जिसमें सारे देष के लगभग बीस हजार मीणे एकत्रित हुए। जयपुर क्षेत्र से इस सम्मेलन में भाग लेने के लिए सर्व श्री भंवरलाल छांडवाल, बिरधीचन्द खोड़ा तथा झूंथालाल नांढ़ला प्रतिनिधि बन कर गए। इस सम्मेलन में भी अन्यान्य सामाजिक समस्याओं के साथ–साथ अपराधी जाति अधिनियम की कठोरता पर विचार किया गया और उसकी भर्त्सना की गई।

सन् 1944–45 में ही एक और सम्मेलन 'जयपुर राज्य मीणा क्षत्रिय महासभा' के तत्वावधान में हुआ जिसकी अध्यक्षता श्री रामवृक्ष ने की। इस सम्मेलन में भी मीणों की सामाजिक कुरीतियों पर ही अधिक बल दिया गया। प्रजामंडल के नेताओं का सहायोग प्राप्त होने के कारण मीणों को थोड़ा साहस बंधने लगा था और उन्होंने अपराधी जाति संबंधी काले कानून का विरोध भी धीरे–धीरे चालू कर दिया था।

ढूंढ़ाड़ क्षेत्र में तो यह लहर प्रवाहित होने लगी थी पर मेरवाड़ा, खैराड़, मेवाड़, आदि क्षेत्रों के मीणों में कोई जागृति के प्रयत्न नहीं हुए थे। मुनि मगनसागर का ध्यान इस ओर गया और उन्होंने जून सन् 1944 में पड़िहार मीणों का एक सम्मेलन अपनी अध्यक्षता में आयोजित किया। इस सम्मेलन में मीणों की समस्याओं पर चर्चा करने के अतिरिक्त उनमें व्याप्त वर्गभेद को समाप्त करने संबंधी निर्णय भी लिये गए। स्मरण रहे पड़िहार मीणे अन्य मीणों के साथ बेटी–व्यवहार नहीं करते थे।

इसी प्रकार सन् 1946 में श्री लक्ष्मीणारायण झरवाल की अध्यक्षता में पुष्कर तीर्थ पर मेरवाड़ा के रावत मीणों का एक सम्मेलन हुआ जिसमें भी वर्गभेद–समाप्ति के निर्णय लिए गए। इस सम्मेलन के अवसर पर पुष्कर में 'मत्स्यावतार' की मूर्ति स्थापति की गई। सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रमुख व्यक्तियों में स्वामी कर्णपुरी, अरिसालसिंह छापोला तथा कानसिंह रावत के नाम उल्लेखनीय हैं।

इन सारे प्रयत्नों के पीछे 'जयपुर राज्य मीणा सुधार समिति' नामक एक संस्था की सेवा उल्लेखनीय रही। इसी समिति की चेष्टा से सर्वश्री हरिभाऊ उपाध्याय, ज्वाला प्रसाद शर्मा, हीरालाल शास्त्री, जयनारायण व्यास तथा रामकरण जोशी प्रभृति वरिष्ठ तथा कर्मठ नेताओं का सहयोग भी मिल पाया। उक्त सुधार समिति के अथक परिश्रम के फलस्वरूप निम्न परिणाम सामने आये–

1. 1 जून 1946 के गजट संख्या 5547 पृष्ठ 51 कॉलम 4728 एम.बी. के अनुसार दादरसी का कानून समाप्त किया गया।''[9]
2. बालिग होने पर सजा याफ्ता किसी व्यक्ति को अपराधियों के रजिस्टर में पंजीबद्ध नहीं किये जाने तथा स्त्रियों को हाजिरी देने के लिए नहीं बुलाये जाने के निर्णय किये गए।

इन्हीं दिनों सन् 1946 में सुधार समिति के तत्कालीन मंत्री व अध्यक्ष ने एक संयुक्त वक्तव्य प्रसारित किया जिसके फलस्वरूप तत्कालीन जयपुर राज्य के गृहमंत्री श्री अमरसिंह ने उन्हें बुलाकर सुधार सम्बन्धी वार्ता की। इसी वार्ता के अनुसार 10 अगस्त, सन् 1946 के असाधारण गजट में कुछ सुधारों की घोषणा की गई। यह घोषणा 15 अगस्त 1946 के 'जयपुर न्यूज लेटर जि.4, संख्या 17' में प्रकाशित हुई। इस घोषणा की स्पष्ट भाषा से सहमत न होने के कारण सुधार समिति के लोगों ने पूर्ण नागरिक अधिकारों की मांग की। 06 जून, 1947 को जौहरी बाजार में अपराधी जाति कानून का पुतला जलाया गया और सामूहिक रूप से सभी मीणों ने हाजरी देना बंद किया। पुलिस ने करीब 150 लोगों को पकड़ कर सजा दिलवाई पर वह हाजरी का नियम लागू कराने में असफल रही।''[10]

फलतः सुधार समिति का सहयोग लेकर राज्य सरकार ने मीणों को सुधारने के लिऐ जगह–जगह पुलिस–सम्मेलन किये जिनमें मीणा–सुधार समिति के कार्यकर्ताओं ने भी भाग लिया। मीणों की भलाई के लिए तीन लाख रुपयों की एक योजना बनाई गई और गृह उद्योग, खेती, शिक्षा, समाज–सुधार आदि के कार्यक्रम रखे गये।

ठीक इसके बाद भारतीय स्वतंत्रता–प्राप्ति की घोषणा हो गई और वह योजनायें धरी रह गई। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि जिन लोगों से चोरियाँ छुड़वाई गई थी और जिन्हें जमीनें देने का आश्वासन दिया गया था वह पूरा नहीं हुआ और वे लाचार होकर पुनः चोरी करने लग गये। चौकीदारी के बदले में भी जो जमीनें मीणों को दी हई थी उनमें काश्त करने देने तथा वाजिब लगान लेने की शर्त न मानकर उनकी जमीनें जब्त कर ली गई, जिससे असन्तोष फैलने लग गया।

स्वतन्त्रता–प्राप्ति के बाद रियासतों का विलीनीकरण होने के कारण 'जयपुर राज्य मीणा–सुधार समिति' का क्षेत्र व्यापक बनाया गया और उसका नाम 'राजस्थान मीणा–सुधार समिति' रख दिया गया। इससे पूर्व भी नाभा और पटियाला रियासतों की सीमाओं पर इस समिति के तत्वावधान में सम्मेलन हुए थे। समिति के प्रमुख कार्यों में रजिस्ट्ररों में नाम दर्ज होना बंद करवाना, औरतों की हाजरी बंद करवानी, सवारी व

हथियार रखने का प्रतिबंध हटवाना, चौकीदारी छुड़वाना, शराबखोरी के खिलाफ प्रचार करना, चोरी की आदत छुड़वाना, बच्चों की शिक्षा का प्रचार हैं।

संस्थाओं के अतिरिक्त कई पत्र–पत्रिकाओं ने भी मीणों में जागृति उत्पन्न करने के प्रयत्न किये। मत्स्य समाचार पत्रिका (गंगापुर–सवाई माधोपुर से सन् 1956 में प्रकाशित), मीणा वीर (सर्व भारतीय मारण क्षत्रिय समाज, छत्तारी–बुलंदशहर उ.प्र. सन् 1938), स्वतन्त्र मीणा (अखिल भारतीय मीणा जातीय महासभा, दिल्ली), के अतिरिक्त मेरवाड़ा के रावत मीणों का एक पत्र भी अजमेर से प्रकाशित हुआ है। मीणा सुधार समिति, जयपुर की ओर से भी 'मुक्त मानव' नामक एक बुलेटिन प्रकाशित हुआ।''[11]

पुत्र मृत्यु के उपरांत हृदय विदारक सोहर–

मृत्यु के उपरांत भी लोकगीत मीणा जनजाति में जन्म और मृत्यु के बाद सामाजिक चेतना की उत्पत्ति हुई पुत्र के जन्म के समय सोहर गीत गाये जाते हैं तथा मृत्यु के उपरांत भी लोकगीत गाये जाते हैं। ये गीत बड़े हृदय विदारक होते हैं। इनमें दुःख और कष्ट होता है सोहर– शब्द की व्युत्पति ''षोभन'' शब्द से हुई है। यही शोभन शब्द शोभिलो, सोहिलो, सोहद से होता हुआ अब सोहर के रूप में प्रचलित है। इस शब्द की उत्पत्ति ''सुघर'' शब्द से मानी जाती है जिसका अभिप्राय 'सुन्दर" होता है। पुत्र जन्म के गीतों को सोहिली भी कहते हैं। सोहर गीत गाने वाली स्त्रियों को मिठाई पान आदि खिलाया जाता है। वे खा पीकर परस्पर चुहल करती हैं और गीत गाती हैं–

बारहवें दिन बारहवीं होती है। इस अवसर पर खुशियों की चहल–पहल रहती है, स्वादिष्ट भोजन कराये जाते हैं। नाई, धोबी, खातिन, कुम्हारिन एवं दाई अपना नेग मांगती है, हठ करती है, उन्हें मनाया जाता है। भोजपुरी एवं राजस्थानी क्षेत्र में पंवरिया नाचते हैं। राजस्थान के पूर्वी भाग में हिजड़े नाच कर मुँह मांगा नेग पाये बिना द्वार और आँचल नहीं छोड़ते। बारह दिन तक सोहर गाये जाते हैं। सम्पन्न और विपन्न सबके यहाँ उल्लास रहता है। डॉ. कृष्ण देव उपाध्याय के अनुसार कि पुत्र जन्म भारतीय ललनाओं की ललित कामनाओं की चरम परिणति मानी गई मनौतियों का मनोरम परिणाम है। इस अवसर पर पास पड़ोस की स्त्रियां विशेषतः लोकगीत की

पंडिता वृद्धाएं एकत्र होकर नवप्रसूता स्त्री के सूतिका गृह के द्वार पर बैठकर मनोरंजक सोहरों को सुनाकर उस घर में अमृत की वर्षा करती हैं।

मरने के बाद भेदभाव–

मीणा जनजाति में मृत्यु के उपरांत नारियों के साथ भेदभाव किया जाता है। कर्मकांड की सम्पूर्ण क्रिया कलाप लड़कों के द्वारा किये जाते हैं। जिन नारियों की मृत्यु पति के सामने हो जाती है। उनके सम्बन्ध में समाज की सोच अच्छे और शुभ माने जाते हैं। अर्थात् सुहागिन स्त्री समाज की नजरों में पूज्यनीय होती है। वैधव्य जीवन अशुभकारी होता है अर्थात् मरने के पश्चात मीणा जनजाति में उसको उतना सम्मान नहीं दिया जाता है। सुहागिन स्त्रियों की मृत्यु के उपरांत ग्यारवीं, बारहवीं एवं तेरहवीं काफी खरचीली और मंहगी होती है। अर्थात् हिन्दू पद्धति से कर्मकाण्ड किये जाते हैं। जिससे उसको मोक्ष मिल सके। सुहागिन और वैधव्य अतिश्योक्ति पूर्ण है उसका कारण जन सामान्य की सोच अलग–अलग है।

अस्थि विसर्जन में भेदभाव–

मीणा जनजाति में नारियों का दाह संस्कार करने के पश्चात उनके अस्थियों के साथ भेद–भाव किया जाता है। करौली क्षेत्र के मीणा परिवार अस्थियों को लेकर सोंरोजी, इलाहाबाद या पुष्कर ले कर जाते हैं। कुछ परिवार आर्थिक तंगी के कारण अस्थियों को लाल रंग के कपड़े में बाँधकर गाँव के बाहर पीपल से बाँध देते हैं।

अस्थि विसर्जन में भेद–भाव के कुछ अन्य कारण भी हैं जैसे–समय का अभाव, भौतिकवादी विचारधारायें, पुरानी परंपराओं से दूर हटना एवं आधुनिक विचारधारा। इन सभी कारणों से अस्थि–विसर्जन में भेद–भाव किया जाता है पुरुष की अस्थियों को कई परिवारों में अधिक महत्त्व दिया जाता है धार्मिक एवं अध्यात्मिक दृष्टि से, परन्तु नारियों की अस्थियों को इतना महत्त्व नहीं दिया जाता है कहीं न कहीं यह पक्षपातपूर्ण व्यवहार है।

स्त्री और मुक्ति आज भी नदी के दो किनारों की तरह हैं जो कभी मिल नहीं पाती। सतही तौर पर देखा जाए तो लगता है कि भारत ही नहीं विश्व पटल पर अपनी पहचान बनाती हुई स्त्रियों ने अपनी पुरानी मान्यताएँ बदल दी हैं। आज की

स्त्री की अस्मिता का प्रश्न मुखर होता जा रहा है। अपने अस्तित्व को बचाए रखने के लिए संघर्ष करती हुईं स्त्रियों ने लम्बा रास्ता तय कर लिया है, परन्तु आज भी एक बड़ा हिस्सा सदियों से सामाजिक अन्याय का शिकार हुआ हैं। जब–जब स्त्री अपनी उपस्थिति दर्ज करना चाहती है तब–तब न जाने कितने रीति–रिवाजों, परम्पराओं, पौराणिक अख्यानों, की दुहाई देकर उसे गुमनाम जीवन जीने पर विवश कर दिया जाता है।

वस्तुतः 21वीं सदी महिला की सदी है। वर्ष 2001 महिला सशक्तिकरण वर्ष के रूप में मनाया गया, इसमें नारियों की क्षमताओं और कौशल का विकास करके उन्हें अधिक शक्तिशाली बनाने तथा समग्र समाज को नारियों की स्थिति और भूमिका के संबंध में जागरुक बनाने के प्रयास किये गए। महिला सशक्तिकरण हेतु वर्ष 2001 में प्रथम बार राष्ट्रीय महिला उत्थान नीति बनाई गई, जिससे देश में नारियों के लिए विभिन्न क्षेत्रों में उत्थान और समुचित विकास की आधारभूत विशेषताएं निर्धारित किया जाना संभव हो सकें।

जबाव हमारे अंदर ही है पर उनको समाने लाने में घबराते भी दिखते हैं। स्त्री को एक देह से अलग एक स्त्री के रूप में देखने की आदत को डालना होगा। स्त्री के कपड़ों के भीतर से लग्नता को खींचकर बाहर लाने की परम्परा से निजात पानी होगी। कोड ऑफ कन्डेक्ट किसी भी समाज में व्यवस्था के संचालन में तो सहयोगी हो सकते हैं, किन्तु इसके अपरिहार्य रूप से किसी भी व्यक्ति पर लागू किये जाने से इसके विरोध की संभावना उतनी ही प्रबल हो जाती है, जितने की इसको लागू करवाने की। नारी क्या बिकाऊ है ? और किसे बिकना है ? जब इसका निर्धारण स्वंय बाजार करता है तो हम किसी को देखने और किसी को जोर–जबरदस्ती से बिकने के बीच में आकर खड़ा होना है। किसी की मजबूरी किसी के लिए व्यवसाय न बने यह समाज को ध्यान देना होगा।

नग्नता और शालीनता के मध्य की बारीक रेखा समाज स्वयं बनाता है और स्वयं बिगाड़ता है। एक नजर में इसका निर्धारक पुरुष होता है। तो दूसरी निगाह उसका निर्धारक स्त्री को मानती है। उचित व अनुचित न्याय और अन्याय विवेक पूर्ण

और अविवेकपूर्ण स्वाधीनता और उच्छृंखलता और दायित्व हीनता, अश्लीलता और अश्लीलता के मध्य के धुंधल को साफ करना होगा। समाज में सरोकारों का रहना भी उतना ही आवश्यक है जितना की किसी स्त्री–पुरुष का सामाजिकता के निर्वाहन में स्त्री–पुरुष में समान रूप से सहभागी बनना होगा। इसके लिए स्त्री पुरुष को अपना प्रतिद्वंदी नहीं समझे और पुरुष भी स्त्री को एक देह नहीं समझे। स्त्री रूप में एक इंसान स्वीकार करे। स्त्री की आजादी और खुले आकाश में उड़ान की शर्त में उसकी भूमिका हो। स्त्री की असली आजादी तभी होगी, जब उसके दिमाग की स्वीकार्यता हो न कि उसकी देह की।

वर्तमान समय में भारतीय सरकार द्वारा नारियों के उत्पादन के अनेक कार्यक्रम एवं योजनाओं का संचालन तो किया जा रहा है, लेकिन इन योजनाओं का क्रियान्वयन निचले स्तर पर उचित ढंग से नहीं पहुँच सकने के कारण स्त्रियों को अपेक्षित लाभ नहीं मिल पा रहा है। यह सत्य है कि वर्तमान समय में स्त्रियों की स्थिति में काफी बदलाव आये हैं, लेकिन फिर भी वह अनेक स्थानों पर पुरुष प्रधान मानसिकता से पीड़ित हो रही है। इस संदर्भ में युग नायक एवं राष्ट्र निर्माता स्वामी विवेकानन्द का यह कथन उल्लेखनीय है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति का सर्वोच्चतम् थर्मामीटर है, वहाँ की नारियों की स्थिति को हमें ऐसी स्थिति में पहुँचा देना चाहिए जहाँ वे अपनी समस्याओं को अपने ढंग से स्वयं सुलझा सके। हमें नारी शक्ति के उद्धारक नहीं वरन् उसके सेवक के रूप में आना चाहिए। भारतीय नारियाँ संसार की अन्य किन्हीं भी नारियों की भाँति अपनी समस्याओं को सुलझाने की क्षमता रखती हैं। आवश्यता है, उन्हें उपयुक्त अवसर देने की, इसी आधार पर भारत के उज्ज्वल भविष्य की संभावनाएं संनिहित है।

आज नारी जीवन के हर क्षेत्र में कदम बढ़ा रही है। आज की नारी अपने कर्तव्यों को गृहकार्यों की इतिश्री ही नहीं समझती है, अपितु अपने सामाजिक दायित्वों के प्रति भी सजग है। वह अब स्वयं के प्रति सचेत होते हुए अपने अधिकारों के प्रति आवाज उठाने का साहस रखती है। कोई सिर्फ यह कहकर उनके आत्मविष्वास को तनिक भी नहीं हिला सकता कि वह एक 'नारी' है। शिक्षा के चलते नारी जागरुक

हुई और इस जागरुकता ने नारी के कार्यक्षेत्र की सीमा को घर की चारदीवारी से बाहर की दुनिया तक फैला दिया। शिक्षा के बढ़ते प्रभाव के चलते आज नारी भी अपने कैरियर के प्रति संजीदा है। इससे जहाँ नारी अपने पैरों पर खड़ी हो सकी, वहीं आर्थिक आत्मनिर्भरता ने उसे रचनात्मक कार्यों हेतु भी प्रेरित किया। अब जागरुक नारी की समाज को अवहेलना करना आसान नहीं रहा। आज एक महिला घर में अकेले जितना कार्य करती है, उसका मोल कोई नहीं समझता। पुरुष इसे महिला का कर्त्तव्य मानकर निश्चिन्त हो जाता है। यह उस स्थिति में भी है जबकि महिला भी कमा रही होती है। आज जरूरत इस बात की भी है कि जी.डी.पी. में नारियों के कार्य की गणना हो और घरेलू कार्यो को हवा में न उड़ाया जाय। इस अवधारणा को बदलने की जरूरत है कि बच्चों का लालन–पोषण और गृहस्थी चलाना सिर्फ नारी का काम है। यह एक पारस्परिक जिम्मेदारी है, जिसे पति–पत्नी दोनों को उठाना चाहिए। इस बदलाव का कारण नारियों में आई जागरुकता है। जिसके चलते महिलाएँ अपने को दोयम नहीं मानती और कैरियर के साथ–साथ परिवारिक–सामाजिक परम्पराओं के क्षेत्र में भी बराबरी का हक चाहती हैं। एक तरफ लड़कियाँ हाईस्कूल व इंटर की परीक्षाओं में बाजी मार रही हैं, वही तमाम प्रतियोगी परीक्षाओं के साथ देश की सर्वाधिक प्रतिष्ठित सिविल सेवाओं में भी उनका नाम हर साल बखूबी जगमगा रहा हैं।

वक्त के साथ नारी का स्वभाव और चरित्र भी बदला है एवं अपने अधिकारों के प्रति वह बखूबी जागरुक हुई हैं। राजनीति, प्रशासन, सामाजिक, उद्योग, व्यवसाय, विज्ञान–प्रौद्योगिकी, फिल्म, संगीत, साहित्य, मीडिया, चिकित्सा, इंजीनियरिंग, वकालत, कला–संस्कृति, शिक्षा, आई.टी., खेल कूद, सैन्य से लेकर अंतरिक्ष तक नारी ने छलांग लगाई है। नारी की नाजुक शारीरिक संरचना के कारण यह माना जाता रहा है कि वे सुरक्षा जैसे कार्य का निर्वहन नहीं कर सकतीं, पर बदलते वक्त के साथ यह मिथक टूटा है। महिलाएँ आज पुलिस, सेना, और अर्धसैनिक बलों में बेहतरीन तैनाती पा रही हैं। यही नहीं शमशान में जाकर आग देने से लेकर महिलाएँ वैदिक मंत्रोच्चारण के बीच पुरोहिती का कार्य करती हैं और विवाह के साथ–साथ

शांति यज्ञ, गृह प्रवेश, मुण्डन, नामकरण और यज्ञोपवीत भी करा रही हैं। वस्तुतः समाज की यह पारंपरिक सोच कि नारियों के जीवन का अधिकांश हिस्सा घर–परिवार के मध्य व्यतीत हो जाता है और बाहरी जीवन से संतुलन बनाने में उन्हें समस्या आएगी, बेहद दकियानूसी लगती है। रूढ़ियों को धता बताकर महिलाएँ जमीन से लेकर अंतरिक्ष तक हर क्षेत्र में नित्य नई नजीर स्थापित कर रही हैं। कल्पना चावला व सुनीता विलियम्स ने तो अंतरिक्ष तक की सैर की। पंचायतों में मिले आरक्षण का उपयोग करते हुए नारी जहाँ नए आयाम रच रही है, वहीं विधायिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका में भी नारियों का प्रतिनिधित्व बढ़ा है। आज देश की राष्ट्रपति, लोकसभा की अध्यक्ष, विपक्ष की नेता, सत्ताधारी कांग्रेस की अध्यक्ष, सर्वाधिक शक्तिशाली राष्ट्र अमेरिका में भारत की राजदूत से लेकर तीन राज्यों की मुख्यमंत्री रूप में महिला पदासीन हैं तो यह नारी सशक्तीकरण का ही यौन उत्पीड़न के विरूद्ध नारी आगे आ रही हैं। और दहेज लोभियों को बैरंग लौटाने और शराब के ठेकों को बंद कराने जैसी कदमों को प्रोत्साहित कर रही है। ये सभी घटनाएँ अधिकारों से वंचित नारी की उद्विग्नता को प्रतिबिंबित कर रही है। आज वह स्वयं को सामाजिक पटल पर दृढ़ता से स्थापित करने को व्याकुल है। शर्मायी–सकुचायी सी खड़ी महिला अब रूढ़िवादिता के बंधनों को तोड़कर अपने अस्तित्व का आभास कराना चहाती है। वर्तमान समय में नारी अपनी सम्पूर्णता को पाने की राह पर निंरतर बढ़ रही है, ताकि समाज के नारी विषयक अधूरे ज्ञान को अपने आत्मविश्वास की लौ से प्रकाशित कर सके।

दार्शनिक दृष्टिकोण–

मृत्यु संस्कार पर गाये जाने वाले भक्ति के समस्त भजनों में जीवन दर्शन का विराट कैनवास है। शरीर रूपी कोठे में चौसठ नाड़ियाँ हैं और उसके अंदर है जीव अर्थात् हृदय जो धड़कता रहता है। विरोधाभास यह है वह जगत में विचरण करता रहता है। मृत्यु का पल आ गया है, लेकिन मोह पाश में बँधा व्यक्ति अपने सगे संबंधियों की और निहारता रहता है–

''भीतर कोठा, चौसठ नाड़ी,
जीवड़ो फिरै हट्ड़ी–हट्ड़ी रे
राम केवै छोड़ो नगरी रे।''[12]

पुत्र को अपनी माता बहुत ही प्यारी है। माता भी अपने पुत्र को कितना प्यार करती है। उसे जन्म देते समय प्रसव वेदना में वह प्राणों की बाजी लगा देती है। उसका लालन पालन करने में अपने सभी सुखों का त्याग कर देती है। वही पुत्र मृत्यु के बाद उसकी अर्थी को शीघ्र बाँधने के लिए कह रहा है। मृतक शरीर को अधिक समय तक घर में नहीं रखा जाता यही लोक समाज की रीति–नीति है–

''बेटा नै माता घणी पियारी, व्है भी केवै बेगा–बेगा
संदेथी (अर्थी) बाँधो रे...
छोड़ो नगरी काया सुधरी, पकड़ो डगरी रे, राम केवै...''

लोकगीत में आगे वर्णित है कि बहुँओं को अपनी सास से बड़ा स्नेह रहता, क्योंकि वह वैवाहिक जीवन के प्रारम्भ से जीवन निर्वाह में उनका मार्ग दर्शन करती रहती है। लोक–समाज के नीति–नियम एवं संस्कृति का हस्तांतरण करती हैं। वे भी मृत्यु के बाद उसकी अर्थी को शीघ्र बाँधने के लिए कह रहा हैं–

''बहुआँ ने सासू घणी पियारी, व्है भी केवै बेगा–बेगा रे,
रथी ने (अर्थी) बाँधो रे...
छोड़ो नगरी काया सुधरी, पकड़ो डगरी रे, राम केवै...
जीवड़ो फिरै हट्ड़ी–हट्ड़ी रे, राम केवै छोड़ो नगरी रे।
छोड़ो नगरी काया सुधरी, पकड़ो डगरी रे, राम कैवे...

माँ और बेटियों का संबध सबसे गहरा होता है। बेटी की विदाई पर माँ का कलेजा फट पड़ता है। बेटी की आँख से निकला हर आँसू माँ के लिए ह्रदय विदारक होता है। जीवन भर उनका स्नेहाशीष उनके सिर पर बना रहा है। बेटियाँ भी अपने समस्त दुख–सुख माँ के सामने खोलकर रख देती हैं, लेकिन उसी ममतामयी की मृत्यु के बाद उसकी अर्थी को शीघ्र बाँधने के लिए कह रही हैं–

''बेट्या नै माता घणी रे पियारी, व्है भी केवै बेगा–बेगा रे,
मायड़ री रथी ने (अर्थी) बाँधो रे...
छोड़ो नगरी काया सुधरी, पकड़ो डगरी रे, राम केवै...''
राम केवै छोड़ो नगरी रे, छोड़ो नगरी पकड़ो डगरी, राम कैवै...

पोते–पोतियाँ, दोहिते–दाहितों एवं समस्त सगे संबधियों को मृतक नारी से अपने अभिष्ट संबंधों के कारण अपार स्नेह है। वे सभी नाते–रिश्तेदार मृत्यु के बाद उसकी अर्थी को शीघ्र बाँधने के लिए कह रहा है। पर्यावरण की दृष्टि से भी मृतक शरीर को अधिक समय तक घर में नहीं रखा जाता यह भी लोक समाज की रीति–नीति एवं सामाजिक चेतना का अंग है–

पोतां–पोत्यां नै दादी घणी पियारी रे,
दोहिता–दोहिती नै नानी घणी पियारी रे,
सगळा संग्यां नै कोराणी घणी पियारी रे,
व्है भी केवै बेगा–बेगा रे, संदेथी (अर्थी) बाँधो रे...
छोड़ो नगरी काया सुधरी, पकड़ो डगरी रे, राम केवै...।''[13]

रिश्ते तो जीवात्मा से होते हैं। आत्मा ब्रह्म में लीन होने पर रह जाता है नश्वर शरीर जिसका कोई मोल नहीं। उसे सुपुर्दे आग, राख और खाक कर दिया जाता है। आत्मा को हंस, हंसा आदि के नाम से भी परिभाषित किया गया है। रिश्ते तो जीवात्मा से होते हैं। आत्मा ब्रह्म में लीन होने पर रह जाता है नश्वर शरीर जिसका कोई मोल नहीं। उसे सुपुर्दे आग, राख और खाक कर दिया जाता है।

शरीर की नश्वरता–

आत्मा को हंस, हंसा आदि के नाम से भी परिभाषित किया गया है। लोकगीत में वर्णित है कि अस नश्वर काया और खोल को छोड़कर आत्मा अर्थात् हंसा उड़ गया है। अब उसे इस संसार में पुनः नहीं आना है–

''हंसा उड़ गयो काया छोड़कर, फिर नहीं आणा रे,
हंसा उड़ गयो खोऴ छोड़कर, फिर नहीं आणा रे,''
हंसा उड़ गयो रे... हंसा उड़ गयो रे... हंसा उड़ गयो रे...।''[14]

सभी सगे संबंधियों ने फूल और पत्तों से उसे सजा दिया है। परिजनों ने उसें चारों ओर परिक्रमा लगाकर नमन कर श्रद्धा सुमन अर्पित कर दिए है। चार लोगों ने उसे धीरे से उठा लिया है। अस्सी जने उसके आगे–पीछे चल रहे हैं। अब अर्थी को जंगल

में शमशान स्थल पर रख लिया है। आज मृत काया का निवास चाहे वह छोटा हो या बड़ा छूट गया है। उसके अपने संगी साथी भी छूट गए हैं–

''अरथी छाई पानां–फूलां, दे लिया घेरा रे,
हंसा उड़ गयो रे...
च्यार जणां रे कांधै चढग्या, अधर उठाणा रे,
हंसा उड़ गयो रे...
असी जणा रै आगै पाछै, जाय जंगळ में डारा रे,
हंसा उड़ गयो रे...
मेड़ी महल चौबारा छूट्या छूट्या सगळा साथी रे,
हंसा उड़ गयो रे...''

मानव की अंतिम परिणति लोगों ने मिलकर लेड़ियों की चिता बनाई। उस पर अगरबत्ती, चंदन की लकड़ियाँ लगाकर होली के जैसे अग्नि प्रज्वलित कर दी। माटी की पंच तत्त्व में विलीन हो गई–

''अगर चनण री चिता बणाई, होळी ज्यूं मंगळाणा रे,
हंसा उड़ गयो रे...
हंसा उड़ गयो खोह़ छोड़कर, फिर नहीं आणा रे,
हंसा उड़ गयो रे...''

मानव जिन भौतिक साधनों को जुटाने में रिश्तों की बलि चढ़ा देता है वह सब पीछे छूट जाते हैं। जीव–जनावर, खेती–बाड़ी भरे हुए खेत, खलियान, महल, अटारी, रूपया–सोना कुछ भी तो साथ नहीं जाता। जब व्यक्ति जन्म लेता है मुठ्ठी बाँध के आता है। जब मृत्यु हो जाती हैं, तो खाली हाथ संसार से विदा हो जाता है–

''जीव–जनावर, खेती–बाड़ी भरि्या पड़्यां खलाळा रे,
हंसा उड़ गयो रे...
महल–अटारी, रूपया–सोना यांहीं पै रह जाणा रे,
हंसा उड़ गयो रे...
मुठ्ठी बाँध के आयो रे हंसा, **रीता हाथा जाणा रे,**
हंसा उड़ गयो.....''[15]

गीत में विराट सामाजिक चेतना का दर्शन है। अगर इस चेतना को ही मानव अपने जीवन में आत्मसात कर ले तो समतावादी मानवतावादी भावना की अमृत वृष्टि होने लगे।

पालकी–

मृत्यु संस्कार में पालकी (बियाणा) भी गाया जाता है। गीत का वर्ण्य–विषय है कि हे बड़े भाग्य के धनी तेरी पालकी कहाँ से आई है। हे सद्कर्मों वाले भाग्यशाली पुरुष तुझे गो लोक में ले जाने के लिए श्री भगवान का हलकारा स्वयं आया है। लोकमानस में ऐसी मान्यता है कि दुरात्मा को लेने काल के साप भैंसे पर बैठकर यमराज है। सद्आत्मा को लेने ब्याण (विमान) में बैठकर श्री भगवान (विराट स्वरूप) का हरकारा स्वयं आता है–

''कठै सूं आई बड़ेरां थारी पालकी, कठै सूं आयो रे बियाण,
ओ बड़भागी आयो हलकारो जी श्री राम रो''

लोकमान्यता के अनुसार पालकी स्वर्ग से आती है या दरगाह से बियाण आता है जिसे जन्नत में आदर से निवास दिया जाता है। आगे प्रश्न है कि तेरी पालकी या बियाण को किसने बनवाया है। उत्तर भी साथ है कि बेटे ने पालकी बनवाई है और पोते ने बियाण बनवाया है–

सुरगां सूं आई बड़ेरां थारी पालकी, दरगां सूं आयो रे बियाण,
ओ बड़भागी आयो हलकारो जी श्री राम रो''
कुण घड़ाई थारी पालकी, कुण घड़ायो रे बियाण,
बेटा घड़ाई थारी पालकी, पोता घड़ायो रे बियाण,
ओ बड़भागी आयो हलकारो जी श्री राम रो''

अब सद्आत्मा को बेटे स्नान करायेंगे यदि पुरुष है तो, और यदि स्त्री है तो बहुएँ स्नान करवायेंगी। स्नान भी गंगाजल के पवित्र जल से करवाया जायेगा। इस अवसर पर पुरुष की हाटड़ी खुलवाई जाती है। सुहागन स्त्रियों का श्रृंगार किया जाता है–

कुण बहुँआ बड़ेरा न्हवायसी, लाय गंगाजळ नीर,
कुण खुलाई बड़ेरा थारी हाटड़ी, कुण कियो रै सिणगार।

भरा–पूरा परिवार है बेटे–पोते सगे सम्बन्धी सभी हिलमिल कर शमशान पहुँचाएंगे। पूरे राह हर–हर, राम नाम सत् है की झंकार ध्वनि से अपने कंधों पर ले जा रहे हैं। पोते डंडोत कर रहे हैं। इस प्रकार आगे पीढ़ी अपने पूर्वजों का मृत्यु भी पश्चात् भी आदर कर रही है–

बेटा–पोता थारै मोकळा थांनै रळमळ मंजिल पूगाय,
हर–हर करता थांनै लै गिया, झालर री झणकार
बेटा रे कांधे बढ़ेरा थारी पालकी, पोता करै रे डंडोत।

दाह संस्कार हेतु वन की लकड़ियाँ काँपने लगी कि इस सद्पुरुष के शरीर को मुझे जलाना होगा–

''ले ज्याय उतारी बड़ेरा थांनै भोम का,
थरहर काँपै बनराय
थै क्यूं कर काँपी बन री लाकड़ी...''

इस अवसर पर भोजदान, पिण्डदान, वस्त्रदान, करके सभी परिजनों को भोजन करवाया जाता है और आँसू पुछवाई की रस्म में बहन–बेटियों को वस्त्र दिये जाते हैं। मृतक जीवात्मा के चित्र या मूर्ति को चंदन चौकी पर स्थापित कर तुलसी की माला पहना कर देव प्रतिमा के रूप में स्थापित किया जाता है–

कृष्ण से उद्धार की याचना–

मृत्यु संस्कार पर गाया जाने वाला प्रमुख भजन– कृष्णा आव रे में सामाजिक चेतना आकंठ भरी है। लोग कृष्ण भगवान से निवेदन किया जा रहा है कि आप इस घोर कलयुग में दीन दुखी लोगों को अनर्थों से बचाने के लिए धरती पर आ जाओ भक्तों भीड़ आपको बुला रही है–

''कृष्णा आव रे
आव आव भगतां रा भीरी
तनै भगत बुलावै रे, कृष्णा आव रे''[16]

आगे ईश्वर को अपने दुष्कर्मों के बारे में बताते हुए अवगत करा रहें हैं कि इस संसार में पहला अनर्थ है– गाय माता दुख पा रही है। कृष्ण गौपालक है। ऐसा भी माना जाता है कि पृथ्वी गाय के सिंगों पर टिकी हुई है। आज कोई भी बूढ़ी गायों की सेवा नहीं कर रहे हैं। अब तो गाय को को कसाईखानों में काटने के लिए भेजा जा रहा है। जबकि गाय को हम गौमाता मानते हैं। वह तो अपने बछड़े के हिस्से का दूध भी हमें दे देती है। प्रथम रोटी गाय को ही देते हैं। गाय को करवट बदलवाते हैं। आज उसकी दुर्दशा हो रही है। इस घोर पाप को पृथ्वी पर जन्म लेकर नष्ट करो–

''पहलो अनरथ भयो जग मांही,
गऊ माता दुःख पावै रे
बूढ़ी गऊ री सार नहीं जाणै,
कसाईखानैं पूगाणे रे, कृष्णा आव रे
आव आव भगतां रा भीरी तनै भगत बुलावै रे, कृष्णा आव रे''

दूसरी घोर अनर्थ आज कन्या को बेच कर माता पिता और परिजन रोटी खा रहे हैं। इस पाप के कारण उन्हें नरक में स्थान मिल रहा है। यह कलयुग है इसमें इस पाप रूपी अनर्थ के कारण धरती माँ बोझ से कराह रही है–

''दूजो अनरथ भयो जग मांही,
कन्या बेच'र खावै रे
आं पापा रै कारणै, नरका में, जावै रे,
धरती बोझ कराह्वै रे
आव आव भगतां रा भीरी तनै भगत बुलावै रे, कृष्णा आव रे''

तीसरा कारण है कि माता पिता गरीबी एवं दहेज के कारण अपनी कम आयु की बेटियों का विवाह वृद्धों से कर रहें हैं। वृद्ध के सिर पर सेहरा बाँध समय लोग हँस रहे हैं। जग में हँसाई हो रही है। नारियों की आबरू लूटी जा रही है। आज के युगीन परिस्थिति में कोई दिन ऐसा नहीं होगा जब ऐसी शर्मसार कर देनी वाली घटना नहीं होती हो। कृष्ण महाभारत काल में द्रोपती की आबरू बचाई थी। अतः उन्हें स्मृण किया जा रहा है–

''अगणो अनरथ भयो जग मांही,
बूड़ै ने परणावै रे,
बूढ़ै देख सेवरो, जग हँसावै रे,
नारी री आबरू लूटै रे
आव आव भगतां रा भीरी तनै भगत बुलावै रे, कृष्णा आव रे''

चौथो अनर्थ संसार में माता–पिता अपने ही बहू–बेटों को सताते हैं। कुछ बेटे बहू ऐसे भी हैं जो अपने माता–पिता को बुढ़ापे में रोटी और पानी को भी तरसा रहें हैं। यह स्थिति आज हर दूसरे घर में देखी जा सकती है। गीत के द्वारा सामाज को चेताया जा रहा है–

''चौथो अनरथ भयो जग मांही, बहू बेटा सतावै रे
बूढ़ापे में माय बाप कूं रोट्यां–पाणी नै तरसावै रे
आव आव भगतां रा भीरी तनै भगत बुलावै रे, कृष्णा आव रे''

पाचवां अनर्थ है मानव परोपकारी वृक्षों को काट कर उन्हें जला रही है, जो प्राण वायु के संवाहक हैं। इन्हीं पेड़ों की लकड़ियों से इसकी मृत्यु के बाद चिता बनेगी। अर्थात् वृक्ष मानव के जीवन भर तो काम आते ही हैं। मरने के बाद भी काम आते हैं। अपने को बुद्धिमान समझने वाला मानव कितना मूर्ख है। वह वृक्षों नहीं बचा रहा है–

''पाँचवों अनरथ भयो जग मांही,
रूंख नै काट जळावै रे
रूंख लाकड़्यां चिता सजैगी,
मूरख कौनी बचावै रे
आव आव भगतां रा भीरी तनै भगत बुलावै रे, कृष्णा आव रे''

संसार में छठा अनर्थ जल संबधित सामाजिक चेतना का है। गंगा जैसी पावनी नदी भी आज मानव के कुकृत्यों से प्रदूषित हो गई है। जल जीवन का आधार है। आदमी उसे भी गंदा कर रहा है। समूची सृष्टि पर जल संकट खड़ा हो गया है। हर वर्ष अकाल और सूखे का सामना करना पड़ रहा है। राजस्थान में तो भीषण जल

संकट है। गंगा नदी को भी भारतीय संस्कृति में माँ माना गया है। गंगा में मरने के बाद अस्थियों का विसर्जन करके मानव मोक्ष की कल्पना करता है। आप इस पाप कर्म का उद्धार करौ–

''छठवों अनरथ भयो जग मांही,
गंगा में मैलो बहावै रे
जळ जीवन आधार मूरख,
गंगा मर्‌या मोक्ष दिलावै रे
आव आव भगतां रा भीरी तनै भगत बुलावै रे, कृष्णा आव रे''

सातवां अनर्थ इस संसार में यह है कि व्यक्ति को न जाने कितने सद्‌कर्मों के फलस्वरूप मानव का जन्म मिलता है, लेकिन वह परोपकार जैसे उदात्त भावों को भूलकर अंहकार व छल जैसे कुत्सित भावों से भरा रहता है। रावण ने स्वर्णमृग बनकर सीता को छला था। उसे यह भी अंहकार था कि उसकी नाभी में तो अमृत कुंड है अर्थात् मैं अजर अमर हूँ। मेरे बराबर संसार में कोई नहीं है, लेकिन उसकी भूल की सजा पूरा परिवार उसके सामने ही मर गया। दशहरा पर्व प्रति वर्ष इस अधर्म पर धर्म की विजय की याद दिलाता है। रावण की दुर्गति से शिक्षा लेने को आह्‌वान करता है, मनुष्य बुद्धिमान है फिर भी उसे सूझता नहीं है। लोकगीतो में मानव के लिए कितनी वृहत मिथकीय चेतना है–

''सतवों अनरथ भयो जग मांही,
छल दंभ मनख मन बसावै रे
दूसरा मिनख्यां नै जिनावर जाणै,
रावण री गत न सुझावै रे
आव आव भगतां रा भीरी तनै भगत बुलावै रे, कृष्णा आव रे''

भजन के अंत में भक्त का निवेदन है कि हे सावरे आप निश्चिंत होकर सो रहे हो आप के अलाव इस संसार में मेरा कोई नहीं है। आप मेरा और इस जगत का उद्धार करने तुरंत आइये। मैं और तेरे भक्तों की भारी भीड़ तुझे पुकार रही है–

''आप सांवरो सोवै नचीतो,
कुण सुणै म्हारी रे, कृष्णा आव रे
आव आव भगतां रा भीरी,
तनै भगत बुलावै रे, कृष्णा आव रे।''[17]

एकादशी व्रत का महत्त्व–

भारतीय समाज व संस्कृति में एकादशी के व्रत का सर्वाधिक महत्त्व है। मोक्ष या तेरवीं के दिन मृतक आत्मा की मोक्ष कामना के लिए ग्यारस देने की प्रथा है। इस प्रकार जो व्यक्ति कभी ग्यारस का व्रत नहीं करता उसे भी यह व्रत करना पड़ता है और अप्रत्यक्ष रूप में लाभ उसी को मिल जाता है। ग्यारस देना पूर्वजों के प्रति श्रद्धा का प्रतीक है। ग्यारस लोकगीत में सामाजिक चेतना इस प्रकार वर्णित है–

हे मानव एकादशी का व्रत करो। ईश्वर भजन (मन्दिर) के बिना संसार से मुक्ति मिलना असंभव है। जो मनुष्य ग्यारस के दिन उपवास नहीं करता उसे बारस के दिन तिल चबाने पड़ते हैं। तिल चबाना गुलामी करने का प्रतीकार्थ है–

''बरत करो रे एकादशी, हरी भजन बिना मुकती किसी
ग्यारस रै दिन ग्यारस न करसी, बारस नैं बो तिल चाबसी''

इस कार्य के द्वारा उसे अगले जन्म में कौवा बनना होगा जो कुवां–कुवां (कड़वे–बोल) बोलना होगा। गीत में आगे नारियों को शिक्षा दी गई हैं कि जो काना फूसी करती हैं या छिपकर दीवार पर कान लगाकर सुनती हैं दूसरों की बातें दीवार पर कान लगाकर सुनती है। वह इस कुकृत्य के फलस्वरूप छिपकली बनती हैं। अर्थात् उसे कीड़े–मकौड़े खाने को मिलते हैं। वह दीवार पर ही चिपकी फिरती रहती है–

''जिन करणी में होसी कागलो, कुरां–कुरां करतो फिरसी
ओले–छाने बांता करसी, छाने बांता जो सुणसी
ईं करणी सूं होय चिपकली, भींता रे चिपकी वां फिरसी
बरत करो रे एकादशी ...''[18]

गीत में सास के लिए भी चेतना का स्वर है– जो सास बहुँओं के आगे ताले लगाकर रखती है। छुप–छुप कर सामान रखती हैं। वह इस कुकर्म के फलस्वरूप बिल्ली बनकर म्याऊं–म्याऊं करती रहती है। उसे बिल्ली जीवन रूप में छिपकर चोरी से दूध पीना व खाना पड़ता है–

जी जुग में वा होय मीनखणी
म्याऊं–म्याऊं करती वा फिरसी

यदि कोई पुरुष आपस में झगड़ा करता है। वह परस्पर घर परिवार या समाज में आपसी लड़ाई झगड़ा या वैमनस्यता पैदा कराता है तो वह अपने इस दुष्कर्म के कारण कुत्ता (गंडकड़ा) बनता है। वह जीवन भर भौं–भौं करता रहता है। अंत में कुत्ते की मौत मर जाता है–

''सगळां सूं जो झगड़ो करतो,
राड़ करातो जो फिरसी,
ई करणी सूं होय गंड़कड़ो,
भौं–भौं करतो वो फिरसो''

जो पुरुष दूसरे के खेत की बाड़ सरकाता है और अपने पैर फैलाता है अर्थात् दूसरे की भूमी पर अतिक्रमण करता है। उसका किसी भी प्रकार का धर्म नहीं लगता चाहे वह कितने ही पुण्य कर्म करे। इस दुष्कर्म के कारण उसे रेगिस्तान में भतुळिया (चक्रवात) बनना पड़ता है। उसे भीषण गर्मी में लू के थपेड़ों में झुलसना पड़ता है–

कांकड़ काट पायतण बावै,
वां नै धरम किया होसी
ई करणी सूं होय भतुऴियो,
भंटका उड़ातो वो फिरसो''

ऐसे पुरुष जो पनघट की पाल पर बैठता है और पनिहारियों को बुरी दृष्टि से देखता है। वह अपने इस घृणित और कुत्सित कार्य के लिए वह कोढ़ी बनता है। वह सम्पूर्ण जीवन कोढ़ खुजाते हुए ही मर जाता है–

''पिनघट जासी पाळ बैठसी,
पिणहारियां तकतो–फिरतो
ई करणी सूं होय कोढ़ियो,
कोढ़ खुजातो वो फिरसो''

आगे सामाजिक चेतना का सबसे बड़ा बिन्दु उजागर किया गया है कि व्यक्ति चाहे कितना ही जप–तप–तीरथ कर ले और अपने बड़े–बूढ़ों की सेवा न करे उसका जीवन निरर्थक ही जाता है। उसका किसी भी प्रकार का धर्म–कर्म व पुण्य नहीं लगता। इस प्रकार घर परिवार व समाज के हर नर–नारी को सामाजिक चेतना का आह्वान किया गया है–

''बूढै बडैरां री सेवा नीं करसी, तीरथ जाता वै फिरसी
सुण लो बात यां कान खोल कै, बांनै धरम किया होसी।''[19]

कर्मफल का महत्त्व–

लोकसमाज में मान्यता है कि चौरासी लाख योनियों में जन्म लेने के बाद पुण्य कर्मो के फलस्वरूप मानव का जन्म मिलता है। यह कर्मों की रेखा का प्रताप है। लोकगीत के वर्ण्य–विषय में कर्मों के अनुसार जीवन भर प्राप्त फलों को इस प्रकार भोगने की चेतना उजागर की है। सांवरे तू अपनी जननी (माँ) को दोष मत देना। तुझे जैसा भी जन्म के बाद कर्मफल मिला है वो तेरी पूर्वजन्म के किये सद्कर्मों व दुष्कर्मों का ही फल है। उदाहरण स्वरूप कहा है कि एक गाय ने चार बछड़ों को जन्म दिया है उनकी कर्मगति इस प्रकार है। पहला बछड़ा सांड है, जो सूर्य देवता के रथ को हांकता है। वह सृष्टि को उजाले से भर कर प्रकाशवान बनाता है। धरती को उष्मा देने, जल का वाष्पोत्सर्जन करके वर्षा करने, वृक्षों से प्राणवायु संचरित करने, दिन और रात का कारक, ऋतु परिवर्तन, दिशा–दिग्दर्शन में सहायक है। जब मानव सूर्य को जल अर्पित करते हैं तो इसे भी वह अर्ध्य चढ़ता है। अर्थात् सूर्य के इस सारथीं को सर्वश्रेष्ठ कर्मो का फल प्राप्त हुआ है। लोकगीत में चेतना यही है कि हम भी इसी प्रकार सृष्टि के विकास के सौपानों में सहायक बनें। ताकि समाज में आदरणीय बने।

दूसरा बछड़ा शिव जी का नंदी (नांडियो) बना। यह धरती के दीन–दुखियों की पुकार व आर्तनाद अपने कान में सुनकर महादेव तक पहुँचाता है। यह धरती और कैलाश के बीच सूचना–वाहक (मैसेंजर) की महत्ती भूमिका निभाता है। लोक चेतना में यह परोपकारी भाव का विराट दिग्दर्शन है। पशु भी मानव पीड़ा को ईश्वर तक पहुँचाकर उसके कष्ट निवारण की याचना करता है, फिर हम तो मानव है। उसकी पीड़ा को दूर करने में सहायक बनना चाहिए।

तीसरा बछड़ा कृषक का हल में जुतने वाली बैल है जो खेत के हल में जुतता है। वह अन्न उपजाने में सहायक है। वह पशु–पक्षियों एवं जीव–जगत के पेट की भूख को मिटाने में सहायक है। इसमें भी वृहत लोक चेतना है कि जिस प्रकार बैल अपने कंधों पर भार–वहन कर सृष्टि की सुधानल को मिटाता है, हमें भी उसी प्रकार भूखे व अतृप्त लोगों की भूख मिटाने का भार मानव होने के नाते अपने कंधों पर लेना चाहिए। उपर्युक्त तीनों पशु स्वतंत्रता के प्रतीक हैं। सूर्य का सांड दिन में कार्यरत है। रात में उसे आराम मिल जाता है। शिव का नंदी मंदिर में भक्त गण आते हैं तब प्रातः से सायंकाल तक उनकी मनोकामनाएं सुनता है। रात में मंदिर के कपाट बंद होते ही उसे आराम मिल जाता है। किसान भी खेत में दिन में ही हल जोतता है। अतः रात में यह भी आराम करता है।

चौथे बैल की भाग्य की विड़म्बना देखिए। उसे तेली के यहाँ तेल की घाणी में जोता जाता है। उसकी आँखों पर पट्टी बाँधी जाती है। अर्थात् आँखें होते हुए भी अंधे जैसा जीवन यापन करना पड़ता है। उसे एक ही परिक्रमा में दिन–रात कठोर परिश्रम करना पड़ता है। बैल की गति अगर थोड़ा सुस्त हो जाय तो उसकी कोड़े से पिटाई होने लगती है। उसे जीवन में कभी आराम नहीं मिलता है। वह गुलामी का प्रतीक है। ऐसा जीवन उसे अपने किसी दुष्कर्म के फलस्वरूप ही भोगना पड़ता है। अतः मानव जीवन में सद्कर्म करने की शिक्षा दी गई है। यह लोक चेतना तो सजीव गो–माता के बछड़ों की है–

"सांवरा, मत दे मायड नै दोष, करमां री रेखा न्यारी–न्यारी
सांवरा, एकगऊ रै बछड़ा चार, चारूं की करणी न्यारी–न्यारी

सांवरा, पैलो सूरजजी रो सांड, दूजो शिवजी रो नांदियो
सांवरा, अगलो हळ रै हेटै, चौथो तेला घाणी जुत्यो
सांवरा, मत दे गऊंतरी नै दोष, करमां री रेखा न्यारी–न्यारी''[20]

अब निर्जीव माटी से बने बरतनों के माध्यम से भी लोकचेतना को अभिव्यक्त किया है। एक मिट्टी से चार बर्तन बने हैं एक बरतन में दूध गर्म किया जाता है। दूसरे में दही जमाया जाता है। तीसरे बड़े भाँडे (मटके) में मक्खन निकाला जाता है। यदि इस तीसरे मटके से श्री कृष्ण ने माखन निकाल कर खाया हो तो उसे परमात्मा का स्पर्श कितना पावन बना देगा। चौथा घड़ा अपशगुन का प्रतीक है जो अपने स्वजनों की जलती चिता के चारों और परिक्रमा के बाद फोड़ा जाता है। अर्थात् ऐसे मिट्टी के अशुभ पात्र कही भी उपयोग में नहीं लाये जा सकते।

लोक में सामाजिक चेतना भी यही है। मानव समाजोपयोगी बने। उन्हीं तीन पात्रों की तरह जिसके दूध, दही, नवनीत है वही मानव जीवन श्रेष्ठ व सार्थक है। चौथा पात्र अनुपयोगी है। जब मिट्टी के पात्र भी अशुभ हैं तो मानव तो समाज का अभिन्न अंग है। हमें ऐसा नहीं बनना अन्यथा घर, परिवार समाज व राष्ट्र उसे महत्त्वहीन समझेगा। वह महत्त्वहीनता का दंश सहता हुआ स्वयं ही समाप्त हो जायेगा। इसका दोष–कुंभकार (कुम्हार) को या प्रजापति ब्रह्मा को भी नहीं देना चाहिए क्योंकि यह व्यक्ति के स्वयं कर्मों का प्रतिफलन है–

सांवरा, एक माटी का बरतन चार, चारूं की करणी न्यारी–न्यारी
सांवरा, पैलै में दूध तपाय, दूजै में जसोदा दही रै जमावती
सांवरा, अगलै सूं माखन खावे कन्हैया, चौथो फूटे मसाण,
सांवरा, मत दे कुंभारी नै दोष, करमां री रेखा न्यारी–न्यारी

आगे मानव का उदाहरण है–एक माता ने चार पुत्रों को जन्म दिया। चारों को अपने कर्मों का फल इस प्रकार मिला। पहले पुत्र के चार पुत्र हुए। दूसरे पुत्र के एक पुत्री का जन्म हुआ। तीसरे पुत्र की पत्नी मर जाने से उसे विधुर का जीवन जीना पड़ा। चौथा अविवाहित ही रह गया। उसके वंश का नाश हो गया। इसमें उसकी माता का दोष नहीं है। यह उनके कर्मों का ही फल है।–

सांवरा, एक माता रै पूत चार, चारूं की करणी न्यारी–न्यारी
सांवरा, पैलै नै जन्म्यां पूत चार, दूजै नै जनमी धीवड़ी,
सांवरा, तीजै री मरगी धीवड़ी, चौथैड़ा रोवै पूत बिना
सांवरा, मत दे माता नै दोष, चारूं की करणी न्यारी–न्यारी

कपास से वस्त्र बनते हैं। एक ही कपास के वृक्ष से चार कपड़े बने पहला वस्त्र तिरंगा। यह राष्ट्रीय ध्वज जग में सम्मान की आन–बान और शान का प्रतीक है। हर स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस पर इसे फहराया जाता है। शहीदों को इसी को ओढ़ा कर सम्मानित किया जाता है। दूसरा–वस्त्र शहीद की वर्दी के बनाने में काम आता है, जिसे युगों–युगों तक संग्रहालय में संरक्षित रखते हैं। तीसरा–ईश्वर के वस्त्र जिनसे देव प्रतिमाएँ सुशोभित होती है। चौथा–वेश्या का चादर जो कीमती होने पर भी अमर्यादित, दागदार, कुत्सित और हेय दृष्टि से देखा जाता है। लोकचेतना मानव के व्यक्तित्व को उज्ज्वल चरित्र बनाने को सावचेत करती है। हेय व दागदार नहीं–

सांवरा, एक कपास कपड़ा चार, चारूं की करणी न्यारी–न्यारी
सांवरा, पैलै रे तिरंगो फहराय, दूजी शहीदां री वर्दी,
सांवरा, अगलो देवां रो चीर, चौथैड़ों वेश्या रो चादर
सांवरा, मत दे रूंखड़ा नै दोष, चारूं की करणी न्यारी–न्यारी"[21]

आत्मा का संवाद–

मृत्यु संस्कार में बारह दिन जीवात्मा घर में ही रहती है। मोक्ष अर्थात् तैरवीं के दिन मंदिर जाने का कार्यक्रम होता है। उससे पूर्व आत्मा का संवाद भी लोकगीतों में वर्णित है–हंसा अपने देश के, घर के हाल–चाल जानना चाहता है। सबसे पहले वह पूछता है। मेरे बेटे क्या करते हैं राम। उत्तर मिलता है कि वह बैठे–बैठे मूँछे मुंडवा रहे हैं और नंगे पाव काम कर रहे है–

"पूछै हंसा देसड़लां री बात, बेटा म्हारा के करै, हरे राम,
बैठ्या–बैठ्या मूंछ मुंडाय, पगां उभाणा वै फिरै, हरे राम।

आत्मा आगे पूछती है मेरी बहुएँ क्या कर रही हैं। इसका उत्तर मिलता है कि वह दरी बिछाकर कुछ पीस रही है उन्होंने गज भर का घूंघट निकाल रखा है। जीवात्मा आगे प्रश्न करती है मेरे पोते–पड़पोते क्या करते है। उसे उत्तर मिलता है कि उन्होंने सिर मुंडवा लिए हैं। उन्होंने आधी सफेद धोती पहन रखी है। आगे उसे बेटियों व पोतियों का ध्यान आता है तो पूछती है वह अपने–अपने ससुराल से रोती हुई आ रही है–

पूछै हंसा देसड़लां री बात, बहुँवां म्हारी के करै, हरे राम,
बैठी–बैठी खरड बिछाय, गज को तीखो काढ्यो घूंघटो, हरे राम,
पूछै हंसा देसड़लां री बात, पोता पड़पोता म्हारा के करै, हरे राम,
लियो–लियो माथो मुंडाय, धोळा तो बांध्या पोतिया, हरे राम,
पूछै हंसा देसड़लां री बात, बेट्यां –पोत्यां के करै, हरे राम,
बैठी–बैठी सासरिया रै माय, खेड़ो जगावती आयसी, हरे राम,

अंत में जब आत्मा पूछती है कि मेरा कुटुम्ब कबीला क्या करता है। तो जवाब मिलता है कि वह सब तेरा शोक मना रहे हैं। आने वालों को आदर देकर भोज–वास करां रहे हैं। आगे जीवात्मा पूछती है हे ईश्वर मेरे सगे–सम्बन्धी क्या कर रहे है तो ईश्वर जवाब देता है तेरे मोक्ष की मनोकामना कर रहे है। तू मोह बंधन छोड़, इस पर जीवात्मा कहती है कि तुम मेरे परिजनों को धीरज बंधा। लोकगीत में मृत्यु के बाद भी पारिवारिक व सामाजिक मंगल चेतना के विश्व बंधुत्व भाव का बिंबाकन है–

पूछै हंसा देसड़लां री बात, कुटम्ब–कबीलो के करै, हरे राम,
बैठ्यो थारा शोक मनाय, आयोड़ां नैं आदर देसी, हरे राम,
पूछै हंसा देसड़लां री बात, सगाा संबंधी के करै, हरे राम,
आवै थारी काण–मौकाण, बेटा–बहुँआं नैं धीरज बधावै, हरे राम,
पूछै हंसो देसड़लां री बात, बेटा म्हारा के करै, हरे राम''

निर्वेद से विश्वमंगल मनोकामना–

मृत्यु के तेरह दिनों में मानव का आत्मबोध जागृत हो जाता है। वह समझा जाता है कि मरने के बाद कुछ भी साथ नहीं जायेगा। उजली से जीव का मोक्ष माना

जाता है। इन लोकगीतों में मंगलकामना की भावना की प्रधान विशेषता है। 'ग्रामीण लोकगीतकार संसार का कल्याण चाहता है।' विश्व के मंगल की इच्छा करता है। उसकी यही उत्कर्ष अभिलाषा रहती है कि घर, परिवार और संसार में सर्वत्र शान्ति का साम्राज्य स्थापित हो। लोकगीतों में–

''सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, माँ कश्चित् दुःख भाग्भवेत्।''

परम्परागत तैरवें से मांगलिक कार्यक्रमों के लोकगीत राजस्थान के अलग–अलग क्षेत्रों में अलग–अलग तरीके से गाये जाते हैं।

गंगा घाट का वर्णन–

अस्थि विसर्जन पर परिवार के सभी लोग गंगा घाट पर जाते हैं। गीत में सभी के कार्यों का वर्णन इस प्रकार है। गंगा जी के घाट पर गुलाब के फूल हैं। महिलाएँ पूछती हैं कि इनका क्या बनेगा। पुरुष बताते हैं कि इनकी माला बनेगी जो ईश्वर पर चढ़ाई जायेगी–

''गंगाजी के घाट पे एक फूल गुलाबी हो राम।
फूल गुलाबी गुलाब को याको का बणेगो हो राम।
मेरी याको का बणेगो हो राम।
तू तो रे सीता बाबड़ी याकी माळा बनेगी हो राम।
माळा बणेगी मौज की सीधी हरी पे चढ़ेगी हो राम।
मेरी सीधी हर पे चढ़ेगी हो राम''

गीत में आगे फिर पूछा जाता है कि हरि की आरती कौन करेगा। शंख कौन बजायेगा। आरती का शुभारंभ परिवार के बड़े भाई अर्थात् जेठ जी आरती करेंगे। ओर छोटे भाई अर्थात् देवर शंख बजायेंगे।

''कौन करेगो हरि की आरती
कौन शंख बजायेगो हो राम।
मेरी कौन शंख बजायेगो हो राम।
जेठ करेगो हरि की आरती
देवर शंख बजायेगो हो राम।
मेरो देवर शंख बजायेगो हो राम।''

परिवार से एक व्यक्ति के जाने के बाद परिवार का महत्त्व समझ में आता है। अतः सब हिलमिल कर मृत्यु संस्कार पर सदभावना से कार्य कर रहे हैं। इन तेरवीं या मोक्ष के पारम्परिक मांगलिक लोकगीतों में उपवास और त्योहारों के गीत, संस्कारों के गीत, विवाहों के गीत, जन्म के गीत, तथा विभिन्न प्रकार की राजस्थानी धमालें। तेरवीं के मांगलिक लोकगीतों का सम्बन्ध विभिन्न प्रकार के शुभ अवसरों पर गाकर किसी देवी–देवता का आह्वान किया जाता है। मांगलिक लोकगीतों में उस क्षेत्र की लोकसंस्कृति, लोकसाहित्य, लोकगाथा, लोकनाट्य, लोककथा, लोकभाषा, लोकवार्ता और लोकविज्ञान स्पष्ट दिखाई पड़ता है।

पिंडदान–

गीतो में पिंडदान करने का वर्णन इस प्रकार पाया जाता है। मृत्यु संस्कार में बौद्धगया में पुत्र या पोता अपने दादा–दादी का पिंडदान करने के बाद ही जीवात्मा की मोक्ष कामना मानी जाती है–

''बहूँ बिना हाथ,
गऊँ बिना साथ
जौ बिना झारी
तिल बिना तर्पण
पुतर बिना गया पिंड
कुण करै जी
पिंडदान सूं मोक्ष होय जी
घी बेसंदर होम सी जी''

इस प्रकार मृत्यु संस्कार में विराट सामाजिक चेतना को जागृत किया जाता है। इस संस्कार पर व्यक्ति में आत्मग्लानि भी उत्पन्न होती है कि हमनें अपने माता–पिता के प्रति कर्तव्य पालन ठीक से नहीं किया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. अवधी लोक रुदन– डॉ. आधा प्रसाद सिंह (प्रदीप) मढ़ई 2015, पृ.100।
2. वही पृ. 99।
3. वही पृ. 101।
4. वही पृ. 103।
5. नई दिशा– राष्ट्रीय मीणा महासभा, पृ. 35।
6. काटजू का मत वही पृ.35।
7. ए. वी. ठक्कर वही पृ. 45।
8. वही. पृ. 48।
9. 1 जून 1946 के गजट संख्या 5547 पृ. 51 कॉलम 4728 एम.बी. के अनुसार।
10. 15 अगस्त 1946 के 'जयपुर न्यूज लेटर जि.4, संख्या 17' में प्रकाशित।
11. मीणा सुधार समिति, जयपुर की ओर से भी 'मुक्त मानव' नामक एक बुलेटिन प्रकाशित हुआ।
12. राजस्थानी लोक साहित्य– नाथूराम संस्कर्ता, पृ. 56।
13. लाखीणा लोकगीत– पुष्पादेवी सैनी, पृ. 310।
14. वही.
15. हाड़ौती लोकगीत– डॉ. लीला मोदी पृ. 211–213।
16. वही.
17. वही.
18. वही.
19. लाखीणा लोकगीत– पुष्पादेवी सैनी, पृ. 302।
20. वही.
21. हाड़ौती लोकगीत– डॉ. लीला मोदी पृ. 226 ।

अध्याय– सातवाँ

वर्तमान राजस्थानी ''मीणा जनजाति में नारी की दशा व दिशा''–

7.1 नारी की दुर्दशा के कारण।

7.2 नारी की दशा सुधारने हेतु किये गए प्रयास।

7.3 जनजातियों को दिशा देने हेतु सुझाव।

7.4 जनजातियों की समस्याओं का निराकरण राज्य व राष्ट्रीय स्तर पर।

अध्याय– सातवाँ

वर्तमान राजस्थानी मीणा जनजाति में नारी की दशा व दिशा–

नारी समाज में कराह रही है। अपनी दुर्दशा पर घुट–घुट कर दिन गुजार रही है। वह यंत्र चालित मशीन की तरह घर परिवार और समाज का बोझा ढो रही है–

''गऊ गोरणी जीं खूंटे भी
बांधोगा बंध जाऊँगी''

गीत की पंक्तियों से चिंतन किया जा सकता है कि नारी की दशा क्या थी ! एक अन्य गीत में–

''बण कहार म्हूँ,
दोय कुळां को
कांधै बोझो ढोऊँगी''

एक अन्य गीत की पंक्तियों में एक बालिका का विवाह वृद्ध से करने पर मार्मिक व्यंग्य–

''बाबुल बाळपणै परणा दी रे..
अधबूढ़ा ईंण ढोर कै काहे शरणा दी रे...''

एक अन्य गीत की पंक्तियों में एक मारवाड़ में विवाह करने पर बंड़्ड़ा (छोटा) लंहगा पहनने पर पीड़ा मुखरित होती है। पर नारी ससुराल रूपी सागर में गंगा बन कर समाहित रही। सामंजस्य करती रही, सहती रही–

''बाबुल मारवाड़ में दे दी रे...
बांड़ो फैरूं घाघरो म्हूँ लाजा मरगी रे...

''नारी समाज और संस्कृति का केन्द्र बिंदु है, पूरा पृष्ठ है, परन्तु उसकी दशा सदैव परिधी और हाशिए पर रही है। विश्व जनगणना 2011 के अनुसार विश्व के कुल जनसंख्या लगभग 6.5 बिलियन में से लगभग आधी जनसंख्या नारियों की है।''[1] अर्थात् प्रारम्भ से ही विश्व में महिलाएँ समाज का एक अभिन्न अंग है। अतीतकाल से ही समाज में नारियों का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। किसी

भी स्वस्थ और विकसित समाज के निर्माण एवं विकास में स्त्री तथा पुरुष दोनों की परस्पर सहभागिता व साझेदारी अत्यंत आवश्यक है। स्त्री एवं पुरुष को समाजरूपी गाड़ी के दो पहियों के समान माना जाता है। अतः समाज के विकास एवं निर्माण के लिए स्त्री–पुरुष की सहभागिता अनिवार्य होती है। विकास के साथ–साथ नैसर्गिक सिद्धांत की पालना तथा पर्यावरण संतुलन के लिए नितांत आवश्यक है। नारियों के अधिकारों में कमी मानव सभ्यता के विकास के साथ होती गयी है और समय के साथ–साथ नारियों के प्रति होने वाले अपराधों की संख्या तथा उनकी गंभीरता में भी वृद्धि होती गई। संपूर्ण विश्व में नारियों पर अत्याचार किये जाते रहे हैं। जिसका प्रमुख कारण नारियों का आर्थिक एवं शैक्षिक रूप से पिछड़ापन रहा है। आधुनिक समाज अर्थवाद का दास बन गया है। जहाँ सम्पत्ति संग्रह को आत्मीयता से अधिक महत्त्व दिया जाता है। पूंजीवाद से सत्तावाद तथा सत्तावाद, संपत्ति विलासितावाद, भोगवाद की ओर बढ़ रहा है। वहाँ नैतिक आदर्शात्मक मूल्यों का इस वर्तमान समाज में कोई स्थान नहीं है। इस अर्थयुगीन समाज में नारी अस्तित्त्व की एक विड़म्बना युगों से रही है आतंकित होने के लिए स्त्री एक कमजोर प्राणी का नाम है। महिलाओं के अधिकारों के हनन् के विभिन्न तरीके हैं। जिसमें नारियों के साथ–साथ मासूम और अबोध बालिकाएँ भी सदियों से पुरुषों द्वारा यौन उत्पीड़न की शिकार है। इसके अलावा नारियों के अधिकारों और उनकी इस दशा के हनन के निम्नलिखित कारण प्रकार सामने आते हैं–

''नारियों के खिलाफ हिंसात्मक अपराध– नारियों के अधिकारों के हनन का एक महत्त्वपूर्ण एवं प्रचलित तरीका नारियों के खिलाफ हिंसात्मक कृत्य हैं। जिनके अन्तर्गत परिवार में पति द्वारा, समाज में उच्च वर्ग द्वारा एवं कार्यकारी स्थान पर नियोक्ता द्वारा नारियों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता रहता है।

भ्रूण हत्या– भ्रूण हत्या के माध्यम से नारियों को जन्म लेने के अधिकार से ही वंचित कर दिया जाता है। अर्थात् नारियों को जन्म लेने से पूर्व ही भ्रूण में ही

खत्म कर दिया जाता है। भ्रूण हत्या के परिणामस्वरूप ही आज विश्व के सभी देशों में नारियों का प्रतिशत दिनरोज घटता जा रहा है।

बलात्कार और यौन–उत्पीड़न– भ्रूण हत्या के बचने के बाद जो बालिकायें जन्म ले लेती हैं। उनके साथ बाल अवस्था में ही बलात्कार और यौन–उत्पीड़न के मामले दिन–रात सामने आते रहते हैं। बलात्कार एवं यौन–उत्पीड़न के मामलों में वृद्धि का प्रमुख कारण वर्तमान चलचित्रों एवं सिनेमा टी.वी. आदि की प्रमुख भूमिका रही है।

दहेज उत्पीड़न– नारियों के अधिकारों के हनन का वर्तमान में प्रमुख कारण दहेज के लिए पति या उसके परिवार द्वारा विभिन्न तरीकों से परेशान करना है। दहेज उत्पीड़न कभी–कभी तो महिला मृत्यु का कारण भी बन जाता है।

सतीप्रथा का प्रचलन– नारियों के अधिकार हनन के एक परम्परागत तरीका सतीप्रथा का प्रचलन है। जिसके अन्तर्गत समाज ऐसी नारियों को जिनके पति की मृत्यु हो गई होती है उसकी चिता के साथ जिन्दा जलने के लिए मजबूर किया जाता है।

महिला कार्मिकों को कम वेतन दिया जाना– महिला अधिकारों के हनन का एक तरीका समान कार्य के लिए नारियों को पुरुषों की अपेक्षा कम वेतन दिया जाना है। इस रूप को गाँव एवं अशिक्षित नारियों के मध्य अधिक देखा जा सकता है क्योंकि अशिक्षा एवं पुरानी मान्यता कि महिलाएँ शारीरिक रूप से पुरुषों से कमजोर होती है, और इसलिए ही उन्हें कम मजदूरी दी जाती है।''[2]

''महिलाओं की इस दशा और अधिकारों के हनन के उपर्युक्त तरीकों के अतिरिक्त नारियों से संबंधित अन्य समस्याएँ निम्नलिखित हैं–

- नारियों पर जनसंख्या नियंत्रण नीति लागू करना।
- नारियों के विरुद्ध अत्याचार।
- औद्योगिक स्वास्थ्य खतरा एवं महिलाएँ।
- पर्यटन एवं वैश्यावृति।
- नारियों को यौनसुख प्रतीक से ऊपर उठाना।

- महिला और ग्रामीण तकनीक व व्यावसायिक प्रशिक्षण।
- प्रवासी घरेलू सहायक एवं प्रवासी महिला कामगार।
- अल्पसंख्यक नारियों की समस्याएँ–श्शाहबानो फैसला।''[3]

नारी की दशा सुधारने हेतु किये गए प्रयास–

''स्त्रियों की स्थिति में सुधार के लिए जो प्रयास 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ से लेकर आज तक किए गए उनके क्रान्तिकारी परिणाम सामने आए हैं। सिद्धान्त रूप में उन्हें पुरुषों के समान अनेक व्यक्तिगत, पारिवारिक, वैवाहिक और राजनीतिक अधिकार कानून द्वारा दिए गए हैं, उनसे स्त्रियों की स्थिति के व्यावहारिक रूप में काफी सुधार देखने को मिलता है।''[4] स्त्रियों की स्थिति के सुधार के अनेक औपचारिक और अनौपचारिक, प्रत्यक्ष, और अप्रत्यक्ष, लघु और वृहद् प्रयास किए गए हैं उनमें से कुछ प्रमुख एवं उल्लेखनीय निम्नलिखित हैं

''**उन्नीसवीं शताब्दी में नारियों की दशा सुधारने हेतु आन्दोलन–** 19वीं शताब्दी तक हिन्दू स्त्री की स्थिति बहुत दयनीय, अमानुषिक और अत्याचारपूर्ण हो गई थी। इसी शताब्दी के प्रारम्भ में स्त्रियों की स्थिति को सुधारने के लिए प्रयासों की शुरुआत हुई। सर्वप्रथम 1813 में ब्रिटिश पार्लियामेन्ट ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी को आदेश दिया कि वे सभी वर्गों में शिक्षा का प्रसार करें। ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। अनेक भारतवासियों ने स्त्रियों की दयनीय स्थिति को देखकर उसे सुधारने के प्रयास किए। इनमें उल्लेखनीय सुधारक राजा राममोहन राय, दयानन्द सरस्वती, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, कर्वे, महात्मा गाँधी आदि हैं।

भारतवर्ष में स्त्री–सुधार आन्दोलन को प्रारम्भ करने का श्रेय राजा राममोहन राय (1772–1883) को जाता है। आपने सन् 1828 में ब्रह्म समाज की स्थापना स्त्रियों की स्थिति को सुधारने के लिए की थी। आपने सती–प्रथा के विरुद्ध आवाज उठाई और आन्दोलन किया। इन्हीं के प्रयासों के फलस्वरूप अँग्रेजी सरकार ने सन् 1829 में सती–प्रथा को कानून बना कर प्रतिबन्धित ही नहीं कर दिया बल्कि वास्तविक में इसके विरुद्ध सरकारी कदम उठाए और इसे

समाप्त कर दिया। इस कुरीति को बन्द करवाने का श्रेय राजा राममोहन राय को जाता है। आपने तथा ब्रह्म समाज ने स्त्रियों में शिक्षा का प्रसार करने के लिए कार्य किया। स्त्रियों को सम्पत्ति में अधिकार दिलवाने और बाल–विवाह को समाप्त करने के लिए भी महत्त्वपूर्ण कार्य किए।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने हिन्दू समाज तथा स्त्रियों के सुधार के लिए अनेक कार्य किए। आप स्मृतियों के कटु आलोचक थे। रूढ़िवादी हिन्दू धर्म के कट्टर विरोधी थे। आप वैदिक आदर्शों के परम समर्थक तथा प्रचारक थे। आपने हिन्दू समाज की कुरीतियों को समाप्त करने तथा सुधार के कार्यों को करने के लिए सन् 1875 में आर्य समाज की स्थापना बम्बई में की थी। आपने उत्तर–भारत में स्त्री–शिक्षा के प्रसार के लिए काफी काम किया। आर्य समाज के द्वारा बाल–विवाह और पर्दाप्रथा के विरुद्ध सराहनीय कार्य किए गए। आपने विधवा–विवाह के पक्ष में भी आवाज उठाई।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर भी एक बड़े समाज सुधारक हुए हैं। आपने व्यक्तिगत रूप से बिना किसी संघ की स्थापना के स्त्रियों के सुधार के लिए अनेक कार्य किए थे। उससे स्त्रियों की स्थिति में सुधार भी हुए थे। आपने स्त्री–शिक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता तथा सर्वाधिक महत्त्व दिया था। आपने सन् 1855 से 1858 के बीच 40 कन्या विद्यालय खोले। आपका मानना था कि जब तक स्त्रियाँ शिक्षित नहीं होंगी तब तक इनका विकास नहीं हो सकता। स्त्रियों की स्थिति को सुधारने के लिए विधवा–विवाह पुनः प्रारम्भ करने के लिए आन्दोलन किया। इसी के परिणामस्वरूप सन् 1856 में आप विधवा–विवाह कानून पास करवाने में सफल हुए। आपने अपने पुत्र का विवाह एक विधवा स्त्री से किया था। आपने बहु–पत्नी–विवाह का घोर विरोध किया। कुलीन विवाह के विरुद्ध भी आपने स्वस्थ जनमत तैयार करने के लिए प्रयास किए।

कर्वे ने पूना में स्त्रियों के सुधार के लिए उल्लेखनीय कार्य किए। आपने अनेक विधवा–आश्रम खोले। इनमें विधवाओं के रहने की व्यवस्था की गई। इन आश्रमों में स्त्रियों को शिक्षा देने का कार्य प्रारम्भ किया। 19वीं शताब्दी में

दुर्गाबाई देशमुख, रमाबाई और रुखमाबाई जैसी प्रगतिशील नारियों ने भी सुधार के लिए प्रयास किए। आप लोगों ने पुरानी रूढ़ियों को त्यागने की वकालत की थी। स्त्रियों को उनके अधिकार माँगने के लिए प्रोत्साहित किया। उनका मानना था कि स्त्रियों का समाज में सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत करना चाहिए।

II. बीसवीं शताब्दी में नारियों की दशा सुधारने हेतु आन्दोलन— 20वीं शताब्दी के वे सुधार आन्दोलन जो भारत के स्वतंत्र होने से पूर्व हुए थे तथा बाद में कुछ अधिनियम बनले थे उनको निम्नलिखित तीन भागों में बाँटा जा सकता है—

1. महात्मा गाँधी द्वारा सुधार आन्दोलन,
2. स्त्री संगठनों द्वारा सुधार कार्य, तथा
3. संवैधानिक व्यवस्थाएँ।

महात्मा गाँधी द्वारा सुधार आन्दोलन— महात्मा गाँधी ने स्त्रियों की समस्याओं को समझा। उन्नीसवीं शताब्दी के समाज सुधारकों का आपने समर्थन किया। गाँधी ने स्त्रियों की स्थिति को सुधारने के कार्यक्रम को स्वतंत्रता के राष्ट्रीय आन्दोलन का एक अंग बना लिया। महात्मा गाँधी प्रतिवर्ष राष्ट्रीय काँग्रेस के माध्यम से ब्रिटिश सरकार को स्त्रियों की स्थिति को सुधारने के सम्बन्ध में प्रस्ताव भिजवाया करते थे। इन प्रस्तावों में स्त्रियों की समस्याओं— स्त्री—शिक्षा के प्रसार, कुलीन विवाह और दहेज—प्रथा पर नियंत्रण, बाल—विवाह समाप्ति, अन्तर्जातीय विवाह के प्रसार आदि का उल्लेख किया जाता था तथा सरकार का समर्थन माँगा जाता था। आपने नारियों को राष्ट्रीय स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया। आपके प्रयासों के फलस्वरूप लाखों महिलाएँ घरों से बाहर निकली तथा उन्होंने स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया। आपने विधवा—पुनर्विवाह तथा अन्तर्जातीय— विवाह की वकालत की तथा बाल—विवाह तथा कुलीन—विवाह का विरोध किया।

स्त्री संगठनों द्वारा सुधार कार्यक्रम—स्त्रियों की स्थिति को सुधारने के लिए स्वयं स्त्रियों द्वारा अनेक स्त्री–संगठनों की स्थापना की गई। वैसे तो ऐसा प्रथम संगठन 'भारतीय महिला राष्ट्रीय परिषद्' सन् 1875 में स्थापित हुआ। लेकिन इनके प्रभावशाली कार्यक्रम 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ में सामने आए। भारत में स्त्री आन्दोलन को प्रभावशाली बनाने में मारग्रेट नोबल, ऐनी बीसेण्ट तथा मारग्रेट कुशनस् का विशेष योगदान रहा। भारतीय महिला समिति, 1917 में मद्रास में स्थापित की गई। सन् 1927 में 'अखिल भारतीय महिला सम्मेलन' पूना में हुआ जिसमें स्त्री–शिक्षा के प्रसार के लिए विशेष प्रयास किए गए। इस संगठन ने स्त्री–शिक्षा के लिए लेडी इरविन कॉलेज 1932 में दिल्ली में स्थापित किया। इसने स्त्रियों के लिए सम्पत्ति में अधिकार तथा मताधिकार के लिए प्रयास किए। संगठन ने बहुपत्नी–विवाह, बाल–विवाह, दहेज–प्रथा आदि के विरोध में आन्दोलन किए। संगठन ने बहुपत्नी–विवाह, बाल–विवाह, दहेज–प्रथा आदि के विरोध में आन्दोलन किए। उपर्युक्त संगठनों के अतिरिक्त 'विश्वविद्यालय महिला संघ', 'भारतीय ईसाई महिला मण्डल', अखिल भारतीय स्त्री–शिक्षा संस्था' और 'कस्तूरबा गाँधी राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्ट' ने भी भारत में स्त्रियों की स्थिति में सुधार के लिए उल्लेखनीय कार्य किए हैं।

संवैधानिक व्यवस्थाएँ—सरकार पर समय–समय पर अनेक दबाव समाज सुधारकों, महिला संगठनों आदि के पड़ने का परिणाम यह हुआ कि सरकार ने स्त्रियों की स्थिति को सुधारने के लिए अनेक महत्त्वपूर्ण कदम उठाए तथा संवैधानिक व्यवस्थाएँ की। सन् 1848 में 'हिन्दू कोड बिल' सरकार के सामने पारित करने के लिए प्रस्तुत किया गया। परन्तु रूढ़िवादियों ने इसे पारित नहीं होने दिया। सन् 1950 में भारतीय गणतंत्र के संविधान में स्त्री–पुरुषों को समानता के अधिकार घोषित किए गए। सन् 1950 और 1952 में 'हिन्दू कोड बिल' को पारित नहीं किया गया। इस 'हिन्दू कोड बिल' को अनेक खण्डों में और विभाजित करके अलग–अलग सरकार से पास करवाया गया। 'हिन्दू विवाह अधिनियम' 1955 में पारित हुआ। इसमें हिन्दू स्त्री को विवाह से

सम्बन्धित अनेक अधिकार पुरुषों के समान प्राप्त हो गए। एक–विवाह का नियम बन गया। विवाह–विच्छेद का प्रावधान हो गया। न्यायिक पृथक्करण और विवाह–विच्छेद का अधिकार निश्चित कारणों के आधार पर स्त्री–पुरुषों दोनों को प्राप्त हो गया। अन्तर्जातीय विवाह को कानूनी मान्यता प्रदान कर दी गई। समय–समय पर विवाह की आयु निश्चित करके बाल–विवाह पर रोक लगाई गई। आजकल विवाह की आयु वर की 21 वर्ष तथा वधू की 18 वर्ष है। इससे कम उम्र में विवाह करना कानूनी अपराध है। 'हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956', 'विशेष विवाह अधिनियम, 1954', 'दहेज–निरोधक अधिनियम, 1961', पारित किए गए। सरकार समय–समय पर अनेक अधिनियम पारित करती रही है। स्त्रियों की स्थिति को सुधारने के लिए और भी अनेक अधिनियम, जैसे–'हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम', 1956' 'स्त्रियों और कन्याओं का अनैतिक व्यापार निरोधक अधिनियम', 1956, 'हिन्दू नाबालिग और संरक्षकर्ता अधिनियम' 1956, मातृत्त्व लाभ अधिनियम, 1961, अपराधी संशोधन अधिनियम, 1983 आदि पारित किए गए। जहाँ तक सैद्धान्तिक और कानूनी प्रावधानों की बात है उसके अनुसार तो भारत में हिन्दू स्त्री की सामाजिक और राजनीतिक स्थिति सुदृढ़ हो गई है। परन्तु व्यावहारिक पक्ष इसका अभी काफी ढीला है।

महिला कल्याण कार्यक्रम– भारत में नारियों की स्थिति के अध्ययन समय–समय पर गैर–सरकारी संगठनों द्वारा होते रहे हैं। सरकार ने 1971 में इसी काम के लिए 'कमेटी ऑफ स्टेस ऑफ वीमन इन इण्डिया' गठित की थी। इस कमेटी ने अपने सुझाव 1975 में दिए। सरकार ने अनेक अधिनियम इस कमेटी के सुझाव के आधार पर बनाए है। पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा भी अनेक महिला–कल्याण के कार्य किए गए हैं।''[5]

नारियों के उत्थान के लिए कानूनी व्यवस्थाएँ–

''शिशु–गृह कानून– शिशु–गृहों की व्यवस्था सम्बन्धी कानून सन् 1976 में बनाया गया, इसके अनुसार 30 स्त्री–श्रमिकों वाले कारखाने में शिशु–गृह का होना आवश्यक है।

समान वेतन अधिनियम– इसके तहत सन् 1976 में पारित किया गया। इस अधिनियम के द्वारा स्त्री और पुरुष के लिए समान वेतन की व्यवस्था की गई है। लिंग–भेद के आधार पर नौकरी तथा अन्य मामलों में स्त्री–पुरुषों के साथ किसी तरह का भेदभाव नहीं किया जाएगा।

हिन्दू विवाह अधिनियम– इस अधिनियम के अनुसार 1955 तथा संशोधन सन् 1976 में किया गया जिसके अनुसार पत्नी शोषण की स्थिति में पति को तलाक दे सकती है।

दहेज निरोधक अधिनियम– इसके अनुसार 1961 में संशोधन सन् 1986 में करके इसे अधिक प्रभावी तथा कठोर बना दिया गया है।

बाल–विवाह निरोधक अधिनियम में संशोधन– सन् 1978 में किया गया जिसके अनुसार अब लड़की की विवाह की आयु 18 वर्ष तथा लड़के की विवाह की आयु 21 वर्ष कर दी गई है।''[6]

''**विशेष विवाह अधिनियम**– इसके अनुसार 1954 में संशोधन करके स्त्री को यह अधिकार दे दिया गया है कि अगर उसका विवाह 18 वर्ष से कम आयु में हुआ है तो वह चाहे तो विवाह को रद्द घोषित कर सकती है।

सती निरोधक अधिनियम– 1929 में पारित किया गया था। यह कुप्रथा मानवाधिकार के विरुद्ध थी।

अन्तर्विभागीय समन्वय समितियाँ– इनका का गठन केन्द्र तथा राज्य सरकारों के स्तर पर विभिन्न विभागों तथा मंत्रालयों में तालमेल स्थापित करने के लिए किया गया है। ये समितियाँ यह देखती हैं कि नारियों के कल्याण के लिए बनाए गए अधिनियमों का पालन ठीक से हो रहा है अथवा नहीं।''[7]

राष्ट्रीय महिला आयोग– इसका का गठन 1990 में किया था।

वीमेन्स डवलपमेण्ट कॉरपोरेशन– इसके तहत वीमेन्स डवलपमेण्ट कॉरपोरेशन स्थापित किए गए हैं। इनका कार्य नारियों को प्रशिक्षण, ऋण और बाजार की सुविधाएँ दिलवाना है। इसका उद्देश्य कानूनों की पुनरीक्षा, कार्यस्थल पर नारियों के प्रति अत्याचारों एवं सामाजिक उत्पीड़न की विशिष्ट व्यक्तिगत

शिकायतों में हस्तक्षेप और इसकी सुधारात्मक कार्यवाई का सुझाव देकर नारियों के अधिकारों एवं हितों की रक्षा करना है।

प्रौढ़ नारियों के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा संक्षिप्त पाठ्यक्रम–केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड द्वारा सन् 1958 में प्रौढ़ नारियों के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण और शिक्षा में संक्षिप्त पाठ्यक्रम की योजना चलाई गई। इस योजना का उद्देश्य जरूरत मन्द नारियों को नौकरी की सुविधाएँ उपलब्ध कराना है और सुयोग्य प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं को तैयार करना है। यह योजना 18 से 30 वर्ष की आयु की स्त्रियों– अध्यापिका, बाल सेविका, स्वास्थ्य–निरीक्षिका, नर्स, दाई आदि का काम कर सके (जो कुछ स्कूली शिक्षा प्राप्त हों) को माध्यमिक, हाई स्कूल अथवा इसके समकक्ष परीक्षा दिलवाने के लिए तैयार कराता है। अब यह योजना उनके लिए भी है जिनके पति सेना में मारे गए अथवा युद्ध में अपंग हो गए।

प्रौढ़ नारियों के लिए प्रकार्यात्मक साक्षरता– यह कार्यक्रम सन् 1975–76 में प्रारम्भ किया गया था। इस कार्यक्रम का उद्देश्य 15 से 45 वर्ष के आयु समूह की नारियों को स्वच्छता और स्वास्थ्य, भोजन और पोषक तत्त्वों, गृह–प्रबन्ध और शिशु देख–रेख, पाठशाला और व्यावसायिक योग्यता के बारे में अनौपचारिक शिक्षा देना है।

सीमावर्ती क्षेत्र कल्याण केन्द्र– भारत में सीमावर्ती क्षेत्र कल्याण सेवाओं को बढ़ाने के उद्देश्य से 86 कल्याण केन्द्र प्रारम्भ किए गए हैं। इन केन्द्रों में मातृत्त्व सेवाएँ, शिशु देखभाल, दस्तकारी प्रशिक्षण और सामाजिक शिक्षा प्रदान की जाती है। ये केन्द्र अरुणाचल प्रदेश; जम्मू और कश्मीर में लेह; उत्तर प्रदेश में चमोली; गुजरात में कच्छ और बनासकोठा; राजस्थान में करणपुर और जैसलमेर तथा हिमाचल प्रदेश में लाहौल तथा किन्नौट आदि में खोले गए हैं।

पोषण कार्यक्रम–गरीबों, पिछड़े वर्गों, जन–जातीय क्षेत्रों, गन्दी बस्तियों में बच्चों तथा स्त्रियों में कुपोषण की समस्या है। इसे दूर करने के लिए वर्ष 1970–71 में इन क्षेत्रों में कुपोषण को दूर करने के लिए कार्यक्रम प्रारम्भ किए

गए। 'विश्व खाद्य योजना' भारत के दस राज्यों में 1976 से चल रही है जिसके द्वारा बच्चों, गर्भवती नारियों तथा बच्चों को दूध पिलाने वाली माताओं को पूरक पोषण दिया जाता है।

अन्य कल्याण कार्यक्रम–समाज कल्याण विभाग नगरों में कामकाजी नारियों के लिए कार्यशील महिला छात्रावास बनवाता है। ग्रामीण क्षेत्र में महिला मण्डल नारी विकास के लिए कार्य करते हैं। महिला कल्याण के लिए सम्मेलन और बैठकें आयोजित की जाती हैं। सन् 1958 से समाज कल्याण बोर्ड अपंग और अनाथ स्त्रियों की मदद करता है, उन्हें कार्य दिलवाता है। भारत में पत्र–पत्रिकाओं द्वारा भी नारियों में जागृति लाने का प्रयास किया जा रहा है।

नारियों के कल्याण के लिए हाल ही में सरकार द्वारा उठाए गए बड़े नीति सम्बन्धी उपायों में अन्यों के साथ–साथ इंदिरा महिला योजना (आईएमवाई), बालिका समृद्धि योजना (बीएसवाई), ग्रामीण महिला विकास एवं अधिकारिता परियोजना (आरडब्ल्यूडीईपी), आयोग (एनसीसी), राष्ट्रीय क्रैच निधि (एनसीएफ) की स्थापना, राष्ट्रीय पोषण नीति (एनएनपी) ओर राष्ट्रीय महिला कोष (आरएमके) को अपनाना शामिल है।

''अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस (8–3–1997) तथा भारत की स्वतंत्रता का 10 वाँ वर्ष नारियों को शक्ति सम्पन्न बनाने की ओर'' शीर्षक के अन्तर्गत, महिला एवं बाल विकास विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा भारत में नारियों की समस्याओं के समाधान के लिए किए गए प्रयासों का निम्न लेखा–जोखा प्रस्तुत किया गया है–

नारियों को समान अधिकार दिलाने और उन्हें शक्ति सम्पन्न बनाने के लिए भारत ने विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय कन्वेशनों और मानवाधिकार कार्यक्रमों की अभिपुष्टि की है। इनमें प्रमुख हैं–नारियों के साथ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेशन (सी.ई.डी.ए.डब्ल्यू.–1979) की 1993 में की गयी पुष्टि। भारत पहला ऐसा देश था जिसने बीजिंग घोषणा और सितम्बर, 1995 में चतुर्थ विश्व महिला सम्मेलन के कार्यवाही मंच की पुष्टि की।

नारियों के विकास, उन्नति और शक्ति सम्पन्नता के लिए प्रारूप– राष्ट्रव्यापी परामर्श बैठकों के आधार पर ''नारियों की शक्ति सम्पन्नता हेतु राष्ट्रीय नीति का प्रारूप तैयार किया गया है। यह लक्ष्य सामाजिक रवैये में परिवर्तन करके और नारियों के साथ होने वाले सभी प्रकार के भेदभाव समाप्त करके, जीवन के सभी क्षेत्रों में नारियों की सक्रिय भागीदारी द्वारा महिला परिप्रेक्ष्यों को शामिल करके नारियों की सैद्धान्तिक समानता को वास्तविक समानता में बदलकर और जहाँ आवश्यक हो सकारात्मक, कार्यवाही करके प्राप्त किया जा सकता है।''[8]

नारियों के रोजगार और प्रशिक्षण पर विशेष बल–

नारियों के लिए प्रशिक्षण और रोजगार कार्यक्रमों हेतु सहायता (स्टेप) का उद्देश्य निर्धन और परिसम्पत्तिविहीन नारियों के कौशल का विकास करना, उन्हें सचेत बनाना, एकजुट करना तथा व्यावसायिक क्षेत्रों में सतत् आधार पर रोजगार प्रदान करना है। इस कार्यक्रम के प्रारम्भ से लगभग 2.60 लाख नारियों को लाभ प्राप्त हुआ है।

रोजगार–सह–आयोत्पादन एककों (नोराड) के अन्तर्गत नारियों को नये कौशलों का प्रशिक्षण दिया जाता है। इस कार्यक्रम के प्रारम्भ से 64,200 नारियों को इस कार्यक्रम के अन्तर्गत लाभ पहुँचाया गया है।

महिला समृद्धि योजना कार्यक्रम से ग्रामीण नारियों में बचत की आदत को बढ़ावा दिया गया है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 225 लाख खाते खोले जा चुके हैं और 235.96 करोड़ रुपये की राशि डाकघरों में जमा करायी जा चुकी है। इन्दिरा महिला योजना जिसका उद्देश्य नारियों को अधिकारिता प्रदान करना है, को 1995–96 के दौरान 200 विकास खंडों में चलाया गया था। योजना आयोग के संयुक्त अध्ययन दल के निष्कर्षों पर आधारित पुनर्गठित आईएमवाई को जागृति एवं प्रशिक्षण घटकों के साथ हाल ही में अनुमोदित कर दिया गया

है ताकि मध्यावधि सुधार के रूप में इसकी विद्यमान कर्मियों को दूर किया जा सके। महिला समृद्धि योजना को आई एम वाई के साथ मिला दिया गया है।

नारियों के आर्थिक विकास हेतु कल्याण और समर्थन सेवाएँ–

नारियों के रोजगार को बढ़ावा देने के लिए विभाग ने कामकाजी नारियों के लिए 787 होस्टलों का निर्माण किया जिससे 54,033 नारियों को और दिवस देखभाल के अन्तर्गत 7,253 बच्चों को लाभ प्राप्त हुआ।

सामाजिक और नैतिक खतरों में रहने वाली नारियों और लड़कियों को अस्थायी शरण और पुनर्वास प्रदान करने वाली अल्पावधि गृह स्कीम 300 अल्पावधि गृहों के माध्यम से लगभग 9,000 नारियों को लाभ प्रदान कर रही है। महिला संचेतना और जागृति विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत अनेक दूरदर्शन और रेडियो कार्यक्रम और जागृति विकास शिविर चलाये गये।

''नारियों के साथ होने वाले अत्याचारों की रोकथाम के लिए शिक्षात्मक कार्य, कार्यक्रम, स्वैच्छिक संगठनों के माध्यम से जारी रखा गया। घरेलू स्तर पर झगड़ों को निपटाने और आपसी समझबूझ बढ़ाने के लिए गैर–सकरारी संगठनों के माध्यम से व्यावसायिक परिवार परामर्श सेवाएँ प्रदान करने का प्रयास किया गया। समर्थन सेवाओं के एक भाग के रूप में बाल देखभाल सेवाओं को सर्वसुलभ बना दिया गया है।''[9] ''पूरे देश में जिसमें 5,291 सामुदायिक विकास खण्ड और 310 प्रमुख शहरी गन्दी बस्तियाँ शामिल हैं, आई.सी.डी.एस. परियोजनाएँ स्वीकृत की गयी हैं। यह स्कीम लगभग 4,000 ब्लाकों में चलायी जा रही है, जिससे करीब 186 लाख बच्चे और लगभग 38 लाख गभवती और शिशुवती माताएँ लाभ प्राप्त कर रही है। 7,98,000 आँगनवाड़ियाँ, 3,24,000 नारियों के लिए कौशल प्रशिक्षण केन्द्र 2,25,00,000 महिला समृद्धि योजना खाते खोले जा चुके हैं। स्थानीय निकायों में 33 प्रतिशत महिला सदस्य की व्यवस्था की गई है।

केन्द्र प्रायोजित परियोजना के रूप में 186.21 करोड़ रुपये की अनुमानित लागत से अक्टूबर, 1998 में स्वीकृत ग्रामीण महिला विकास एवं अधिकारिता

परियोजना का उद्देश्य 6 राज्यों अर्थात् बिहार, हरियाणा, कर्नाटक, गुजरात, मध्य प्रदेश और उतर प्रदेश में नारियों की अधिकारिता के लिए एक वातावरण उत्पन्न करना है। इसके अलावा लाभार्थी वर्गों को ब्याज पर ऋण देने के लिए ''रिवाल्विंग फंड'' की स्थापना सुकर बनाने के लिए परियोजना परिव्यय के बाहर परियोजना अवधि में 5 करोड़ रुपये की धनराशि प्रदान की जाएगी।

एकीकृत बाल विकास सेवा स्कीम (आईसीडीएस) का उद्देश्य 6 वर्ष तक की आयु के बच्चों, गर्भवती नारियों और स्तनपान कराने वाली नारियों को स्वास्थ्य, पोषण एवं शैक्षणिक सेवाओं का एकीकृत पैकेज प्रदान करना है। इस समय इसके अन्तर्गत 4200 ब्लॉक और बृहत् शहरी झुग्गी झोपड़ियाँ शामिल हैं जिससे 5.1 मिलियन गर्भवती एवं दूध पिलाने वाली महिलाएँ और 6 वर्ष तक की आयु के 25.8 मिलियन बच्चे लाभ प्राप्त कर रहे हैं। आंगनबाड़ी भवनों एवं सीडीपीओ कार्यालय एवं गोदामों के निर्माण जैसे अतिरिक्त घटकों के लिए विश्व बैंक आईसीडीएस परियोजनाओं को ऋण प्रदान करता है। आईसीडीएस के प्रभाव को सुदृढ़ करने के लिए हाल ही के वर्षों में अनेक नए कदम उठाए गए हैं। इसके अन्तर्गत 11–18 वर्ष की आयु वर्ग की किशोर बालिकाओं के लिए सेवाएँ, गैर–सरकारी संगठनों की प्रभावशाली भागीदारी और निगरानी कार्य को सृदृढ़ करना शामिल है।

नारियों एवं बच्चों की विभिन्न कल्याणकारी स्कीमों के कार्यान्वयन के लिए वर्ष 1998–99 (संशोधित अनुमान) में 1134 करोड़ रुपये की तुलना में 1999–2000 (बजट अनुमान) में 1320 करोड़ रुपये का केन्द्रीय प्रावधान किया गया है। ''[10]

नारियों के विकास एवं अधिकारों की प्रतिबद्धताएँ–

महिला अधिकारों के लिए आयुक्त कार्यालय की स्थापना। नारियों के लिए राष्ट्रीय संसाधन केन्द्र की स्थापना। नारियों और पुरुषों की समान भागीदारी तथा सामाजिक विकास सुनिश्चित करने के लिए सामाजिक रवैये में परिवर्तन सुनिश्चित करना। नारियों की प्रगति के लिए अनुकूल वातावरण

बनाना। नारियों की शक्ति सम्पन्नता के लिए राष्ट्रीय नीति के लक्ष्यों की प्राप्ति। राष्ट्रीय और जिला स्तरों पर नारियों की स्थैतिक रूपरेखाएँ और जैण्डर विकास संसूचकांक तैयार करना। अक्षमताओं को दूर करने के लिए जैण्डर विकास संसूचकों के प्रयोग द्वारा नारियों की प्रगति की ओर अधिक ध्यान देना।

नारियों की दशा में परिवर्तन–

स्त्रियों की स्थिति में सुधार के लिए जो प्रयास 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ से लेकर आज तक किए गए उनके क्रान्तिकारी परिणाम सामने आए हैं। सिद्धान्त रूप में उन्हें पुरुषों के समान अनेक व्यक्तिगत, पारिवारिक, वैवाहिक ओर राजनीतिक आधिकार कानून द्वारा दिए गए हैं, उनसे स्त्रियों की स्थिति के सुधार के अनेक औपचारिक और अनौपचारिक, प्रत्यक्ष ओर अप्रत्यक्ष, लघु और वृहद प्रयास किए गए हैं। एम. एन. श्रीनिवास के अनुसार पश्चिमीकरण, लौकिकीकरण ओर जातीय गतिशीलता ने स्त्रियों की सामाजिक, आर्थिक स्थिति को उन्नत करने में काफी योग दिया है। स्त्री–शिक्षा का काफी प्रसार और प्रचार हुआ है। व्यवसाय के अनेक अवसरों की वृद्धि हुई है। स्वतंत्रता–प्राप्ति के बाद अनेक अधिनियमों तथा संवैधानिक प्रावधानों ने स्त्रियों के अनेक परम्परागत प्रतिबन्धों को समाप्त कर दिया है। स्त्रियों को पुरुषों के समान जीवन व्यतीत करने का अवसर प्रदान किया है तथा स्त्रियाँ इसका पूर्ण लाभ भी उठा रही हैं। स्त्रियों की स्थिति से सम्बन्धित अनेक परिवर्तन हो रहे हैं जिनमें से महत्त्वपूर्ण परिवर्तन निम्नलिखित हैं।

सुधार आन्दोलन–स्त्रियों की समस्याओं के समाधान के लिए 19वीं शताब्दी में अनेक समाज सुधारकों ने प्रयास किए। ''1828 में राजा राममोहन राय के प्रयासों से स्त्री सुधार के लिए ब्रह्म समाज की स्थापना की गई थी। उनके प्रयासों से 1829 में सती–प्रथा निरोधक अधिनियम बना। लोगों को बालविवाह तथा विधवा की हानियाँ बताईं। इसके प्रभाव से 1856 में विधवा – पुनर्विवाह अधिनियम बना। इसके बनवाने में ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के प्रयास उल्लेखनीय हैं। स्त्री–शिक्षा के लिए स्वामी दयानन्द सरस्वती और महर्षि, कर्वे

के प्रयास सराहनीय हैं। इन समाज सुधारकों ने बाल–विवाह, पर्दा–प्रथा, बहुपत्नी–विवाह आदि का भी विरोध किया था। 1872 में 'विशेष विवाह अधिनियम' केशवचन्द्र सेन के प्रयासों से बना जिसमें स्त्रियों को विधवा–पुनर्विवाह तथा अन्तर्जातीय विवाह के अधिकार दिए गए।''[11]

स्त्रियों की स्थिति को सुधारने में महिला संगठनों तथा स्वयं नारियों ने भी अनेक प्रयास किए हैं, जैसे–'भारतीय महिला समिति', 'अखिल भारतीय महिला सम्मेलन', 'विश्वविद्यालय महिला संघ', 'कस्तूरबा गाँधी स्मारक ट्रस्ट', 'अखिल भारतीय शिक्षा संघ' आदि। रमा बाई रानाडे, मेडम कामा, मारग्रेट नोबल, ऐनी बीसेण्ट आदि नारियों ने महिला विकास के लिए उल्लेखनीय कार्य किए हैं। महात्मा गाँधी ने स्त्रियों को राष्ट्रीय आन्दोलन में शामिल किया तथा स्त्रियों को पुरुषों के समान लाने के लिए प्रयास किए। इन प्रयासों से स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई।

''**संवैधानिक प्रावधान**– स्त्रियों की स्थिति को सुधारने के लिए महत्वपूर्ण अधिनियम बने हैं। हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के द्वारा बाल–विवाह समाप्त किया गया। एक–विवाह, विवाह–विच्छेद, विधवा–पुनर्विवाह तथा स्त्रियों को न्यायिक पृथक्करण आदि के अधिकार दिए गए हैं। हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956; स्त्रियों और कन्याओं का अनैतिक व्यापार निरोधक अधिनियम, 1956; दहेज निरोधक अधिनियम, 1961 तथा इसके संशोधन का अधिनियम, 1968; मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961; समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976; अपराधी संशोधन अधिनियम, 1983 आदि स्त्रियों की दशा सुधारने के लिए पारित किए गए हैं।''[12]

''**स्त्री–शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति**– शिक्षा के दृष्टिकोण से भारतीय महिला पिछड़ी रही थी। इसे पढ़ने के अवसर बहुत कम उपलब्ध थे। सन् 1961 में महिला साक्षरता 0.08 प्रतिशत थी। सन् 1991 में यह बढ़कर 39.29 प्रतिशत हो गई है। 2001 में महिला साक्षरता दर में पर्याप्त वृद्धि हुई है और यह 54.28 प्रतिशत हो गई है। सन् 1882 में शिक्षित नारियों की कुल संख्या 2,045 थी जो

बढ़कर सन् 1981 में सात करोड़ 91.5 लाख से अधिक हो गई है।''[13] स्वतंत्रता –प्राप्ति के बाद स्त्रियाँ अनुसन्धान, औद्योगिक संस्थाओं तथा तकनीकी शिक्षा प्राप्त करने लगी हैं। विज्ञान और गणित के विषयों में लड़कियों ने अच्छे अंक प्राप्त करके यह सिद्ध कर दिया है कि वे लड़कों से कम नहीं हैं। स्त्रियाँ अपना विकास करने के अवसरों का उपयोग कर रही हैं। लड़कियाँ, कला, विज्ञान, गृह विज्ञान, शिल्पकला, हस्तकला, संगीत आदि विषयों को पढ़ने लगी हैं। ग्रामों की तुलना में नगरों में स्त्रियों का शैक्षिक जगत में विकास अधिक हुआ है।

आर्थिक क्षेत्र में प्रगति– 20वीं शताब्दी ने नारियों के लिए व्यवसाय के अनेक अवसर प्रदान किए हैं। अब वे भारतीय विदेश सेवा, भारतीय प्रशासन सेवा तथा दूसरी केन्द्रीय सेवाओं में कार्यरत हैं। पहिले मध्यम वर्ग और उच्च वर्ग की महिलाएँ घर के बाहर काम नहीं करती थीं। लेकिन अब वे काम करने लगी हैं। ग्रामों में 80 प्रतिशत महिलाएँ काम करती हैं। आधुनिक शिक्षा, औद्योगिकीकरण, आधुनिकीकरण आदि ने स्त्रियों को काम करने के नए–नए अवसर प्रदान करके उन्हें आत्मनिर्भर बनने के लिए प्रेरित किया है। अणु शक्ति विभाग में स्त्रियों की संख्या उल्लेखनीय है। शिक्षा, समाज कल्याण, पर्यटन आदि विभागों में स्त्रियाँ खूब काम करने लगीं हैं। टेलीफोन, टंकण लिपिक, स्वास्थ्य विभाग, शिक्षा, समाज–कल्याण, बैंक आदि में नारियों की संख्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इसके अनेक कारण हैं, जैसे– वस्तुओं की कीमतों का बढ़ना, उच्च शिक्षा प्राप्त करना, मौलिक वस्तुओं को प्राप्त करने का आकर्षण आदि ।

राजनीतिक चेतना में विकास– स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्त्रियों में राजनीतिक चेतना में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ है। ''सन् 1937 में केवल 10 नारियों ने चुनाव लड़ा तथा जबकि 41 स्थान नारियों के लिए सुरक्षित रखे गए थे। स्वतंत्र भारत के संविधान, 1950 में स्त्रियों और पुरुषों को समान नागरिक अधिकार प्रदान किए गए। सन् 1952 के चुनाव में लोकसभा में 23 तथा राज्य सभा में 19 महिलाएँ गईं अथवा मनोनीत की गई थीं। इसी वर्ष राज्यों की

विधान सभाओं में स्त्रियों की कुल संख्या 58 थी। सन् 1957 के विधानसभाओं के चुनावों में 342 महिलाएँ खड़ी हुईं उनमें से 195 निर्वाचित हुईं। सन् 1971, 1977, 1980, 1985, 1989, 1991 और 1996 के चुनावों से सिद्ध होता है कि स्त्रियों में अपने मत के अधिकार के प्रति जागरुकता दिनों दिन बढ़ती जा रही है। ग्राम पंचायतों से लेकर प्रधानमंत्री पद के पदों पर स्त्रियों ने सफलतापूर्वक कार्य कर दिखाया है। भारतवर्ष में नारियों ने अनेक पदों, जैसे–मंत्री, मुख्यमंत्री, राज्यपाल आदि पर काम करके स्पष्ट कर दिया है कि उनमें राजनीतिक चेतना काफी बढ़ी है। अब वे घर की चारदीवारी के बाहर निकलने लगी हैं। इनकी स्थिति में काफी सुधार हुआ है। सन् 2001 को सरकार द्वारा महिला अधिकारिता वर्ष के रूप में घोषित किया गया है।''[14]

सामाजिक जागरुकता में विकास– निम्नलिखित तथ्यों से स्पष्ट होता है कि स्त्रियों में सामाजिक जागरुकता में पिछले वर्षों में काफी विकास हुआ है। स्त्रियाँ शिक्षा ग्रहण करने लगी हैं। मतदान देती हैं। नौकरियाँ करती हैं। राजनीतिक क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण पदों पर कार्य कर रही हैं। इससे पर्दा–प्रथा के समाप्त होने पर प्रभाव पड़ा है। स्त्रियाँ घर की चारदीवारी से बाहर निकलने लगी हैं। बाल–विवाह, बेमेल विवाह, दहेज आदि का विरोध करने लगी हैं। अन्तर्जातीय विवाह, प्रेम विवाह और विलम्ब विवाह को अच्छा समझने लगी हैं तथा अनुकूल परिस्थितियों में ऐसे विवाह करने लगी हैं। विवाह विच्छेद होने लगे हैं। स्त्रियाँ अब पुरुष की दासी नहीं हैं। वे अनेक सामाजिक संगठनों और महिला क्लबों की सदस्या हैं। नौकरी करती हैं। चुनावों में खड़ी होती हैं। रूढ़ियों का विरोध करती हैं। इनके धार्मिक और सामाजिक दृष्टिकोणों में परिवर्तन आया है। जाति–प्रथा के प्रतिबन्धों तथा रूढ़ियों के प्रति इनका रुख बदल रहा है। विधवा–पुनर्विवाह को अच्छा मानने लगी हैं।

पारिवारिक क्षेत्र में अधिकारों की प्राप्ति– परिवार में स्त्रियों की स्थिति में आश्चर्यजनक परिवर्तन हो रहे हैं। संयुक्त परिवार से एकाकी परिवारों में परिवर्तन हो रहा है। इससे छोटे परिवार में पति–पत्नी की प्रस्थिति समान

या बराबर हो गई है। बच्चों के पालन–पोषण, परिवार की आय, बजट, बच्चों की शिक्षा, आय का उपयोग आदि पति–पत्नी मिलकर करते हैं। स्त्रियाँ नौकरी करके आय की वृद्धि में सहयोग देने लगी हैं। विवाह धार्मिक संस्कार नहीं है। वह कानून के आधार पर एक समझौता है। पुरुष के क्रूर, अत्याचारी, व्यभिचारी होने पर पत्नी तलाक ले लेती है। स्त्रियाँ अपने अधिकारों को समझने लगी हैं। वे शिक्षित हैं। तर्क करना तथा अधिकारों की माँग करना जानती हैं। विलम्ब विवाह होने लगे हैं। बर्गेस के कथनानुसार पत्नी एकाकी परिवार में पति की मित्र और सहयोगी है। स्त्रियाँ भी पारिवारिक निर्णयों में अपना मत रखती हैं तथा निर्णयों को प्रभावित करने लगी हैं। निकट भविष्य में स्त्रियाँ परिवार में पुरुष के समान पद और भूमिका प्राप्त कर लेंगी।

विगत वर्षों में भारत में स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन की प्रक्रिया में तेजी आई है। नगरों और महानगरों में इनकी स्थिति में काफी सुधार हुआ है। ग्रामों में परिवर्तन की प्रक्रिया की गति धीमी है। स्त्रियों की स्थिति को दो भागों में बाँट कर देखा जाए तो एक पक्ष में तो आश्चर्यजनक परिवर्तन हो चुके हैं। यह पक्ष है सैद्धान्तिक पक्ष। स्त्री को एक व्यक्तित्त्व के रूप में भी सभी अधिकार सिद्धान्त रूप में प्रदान कर दिए गए हैं। व्यावहारिक पक्ष में परिवर्तन में विलम्ब दृष्टिगोचर होता है। इसमें परिवर्तन की गति धीमी है फिर भी पिछली शताब्दियों की तुलना में काफी सुधार हुआ है।

उपर्युक्त तथ्यों, प्रावधानों तथा उपलब्धियों से स्पष्ट हो जाता है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से हिन्दू स्त्रियों की व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और राजनीतिक स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। अनेक सुविधाएँ कानून तथा अन्य गैर–सरकारी संगठनों ने देने के प्रयत्न किये हैं। उनकी स्थिति में काफी सुधार हुआ है। परन्तु यह कुल जनसंख्या का लगभग एक चौथाई मात्र में ही तो हुआ है। वास्तव में अभी भी नारी पर अनेक अत्याचार हो रहे हैं, शोषण हो रहे हैं, उनका समाधान होना शेष है। जनसंख्या को देखते हुए परिवर्तन काफी कम है। परन्तु समाज की प्रथाओं, रूढ़ियों

परम्पराओं, धार्मिक मूल्यों, अन्धविश्वास आदि के सन्दर्भ में सुधार जो कुछ अब तक हुआ है वह प्रशंसनीय तथा उत्साहवर्धक है। उपर्युक्त प्रगति के आधार पर आशा की जा सकती है कि भविष्य में स्त्रियों की स्थिति में आशातीत परिवर्तन और सुधार हो जाएगा।

राजस्थान में नारियों के विकास को नवीन दिशा देने के लिए राजस्थान सरकार विभिन्न कार्यक्रमों को क्रियान्वित कर रही है।

राजस्थान में महिला विकास कार्यक्रम–

''राजस्थान में महिला विकास कार्यक्रम वर्ष 1984 में 6 जिलों में प्रारम्भ किया था कार्यक्रम के आकलन से प्राप्त परिणामों से प्रोत्साहित होकर राज्य सरकार समस्त 33 जिलों में इस कार्यक्रम को क्रियान्वित कर रही है।''[15]

महिला विकास कार्यक्रम का वृहत लक्ष्य जानकारी, शिक्षा व प्रशिक्षण के माध्यम से नारियों का आर्थिक एवं सामाजिक सशक्तिकरण करना तथा उन्हें विकास की मूलधारा से जोड़ना है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए समस्त विकास कार्यों की जानकारी उन तक पहुँचा कर उन्हें विकास की कड़ी बनाकर अधिक से अधिक आय अर्जित कराने का प्रयास किया जाता है। विभिन्न विभागों की अनेक योजनाएँ हैं, जिनका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्षतः उद्देश्य नारियों की स्थिति में सुधार लाना है। महिला विकास कार्यक्रम इन सभी योजनाओं में नारियों की भागीदारी सुनिश्चित करता है तथा इनके प्रभावशाली क्रियान्वयन से नारियों को वास्तविक रूप में विकसित करने में प्रयासरत है। शिक्षा, प्रशिक्षण, स्वास्थ्य, पोषण, परिवार कल्याण, रोजगार तथा आर्थिक विकास कार्यक्रम के प्रमुख क्षेत्र रहे हैं। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत नारियों को विकास की प्रक्रिया में केवल लाभार्थी के रूप में नहीं देखा जाकर, एक आवश्यक भागीदारी के रूप में समझा जाता है, ताकि एक समेकित मानवीय दृष्टिकोण का विचार पनप सके। इसी श्रृंखला में नारियों का आरक्षण भी किया गया एवं उनकी समस्यों के समाधान के लिए उन्हें मौका प्रदान कर राजनीतिक स्तर पर भी आगे लाया

गया। इन समस्त प्रयासों में नारियों की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति में सुधार आया है।

राजस्थान सरकार द्वारा संचालित कार्यक्रम–

''राजस्थान सरकार द्वारा राज्य में महिला विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत निम्नलिखित योजनाएं प्रारम्भ की गई हैं–

1. **इरादा योजना–** महिला विकास कार्यक्रम में स्वयंसेवी संस्थाओं की सक्रिय भागीदारी रहती है। राज्य तथा जिलेवार स्तर पर 'इन्फोरमेशन डेवलपमेंट एण्ड रिसोर्स एजेंसी' के रूप में किसी प्रतिष्ठित स्वयंसेवी संस्था का इरादा के रूप में चयन किया जाता है। इरादा की स्थापना ऐसी स्वैच्छिक संस्थाओं के अन्तर्गत की गई है, जिनका अनुभव ग्रामीण विकास एवं महिला व बाल विकास के क्षेत्र में रहा है। इसकी स्थापना का उद्देश्य महिला विकास कार्यक्रम में तकनीकी, अकादमिक एवं संदर्भ सहायता के लिए एक सक्रिय इकाई का विकास करना है। इरादा का दायित्व मुख्यतः संदर्भ सामग्री (दृश्य–श्रव्य) उपलब्ध कराना, महिला विकास कर्मियों के प्रशिक्षण। पुनः प्रशिक्षण की व्यवस्था, सान्दर्भिक विषयों पर कार्यशालाओं, सेमिनार का आयोजन, कार्यों का दस्तावेजीकरण इत्यादि हैं। जिलों में इरादा के रूप में स्वयंसेवी संस्थान 13 जिलों में हैं। शेष में जिला महिला विकास अभिकरण द्वारा जिला इरादा का का कार्य किया जा रहा है।''[16]

2. **''इन्दिरा महिला योजना–** प्रदेश की नारियों में आर्थिक स्वायत्तता लाने तथा उनके विकास के लिए अन्तर्विभागीय सेवाओं में समन्वय एवं जागरुकता के उद्देश्य से राज्य में इंदिरा महिला योजना 20 अगस्त, 1995 में केन्द्र सरकार के सहयोग से आरम्भ की गई है।

वर्तमान में यह योजना राज्य के 9 जिलों की निम्न 10 पंचायत समितियों में क्रियान्वित की जा रही हैं –

1. गढ़ (बांसवाड़ा)	2. अरनोद (चितौड़गढ़)
3. सागवाड़ा (डूंगरपुर)	4. बाप (जोधपुर)
5. फलौदी (जोधपुर)	6. जैसलमेर (जैसलमेर)
7. **नादौती (करौली)**	8. बौंली (सवाई माधोपुर)
9. मालपुरा (टोंक) एवं	10. झाड़ोल (उदयपुर)

योजना का उद्देश्य नारियों में विभिन्न सरकारी तथा गैर–सरकारी योजनाओं के प्रति जाग्रति पैदा करना, उनका लाभ उठाने हेतु उन्हें शिक्षित करना तथा आय उपार्जित करने की विभिन्न गतिविधियों का प्रोत्साहन कर शिक्षा तथा जागरुकता के लिए एक अनवरत प्रक्रिया का विकास करना है। इस उद्देश्य से गाँवों में आँगनबाड़ी स्तर पर महिला चेतना केन्दों की स्थापना की गई है, जिन्हें खण्ड स्तर पर महिला चेतना ब्लॉक मार्गदर्शन प्रदान करेंगे। प्रत्येक महिला चेतना केन्द्र के उपयोग हेतु 5000रु. की राशि सुनिश्चित की गई है। साथ ही महिलाएँ स्वयं भी मासिक सहयोग के माध्यम से अंशदान प्रदान कर रही हैं। उन्हें नाबार्ड और राष्ट्रीय महिला कोष से ऋण दिलवायें जाने की भी व्यवस्था की जा रही है। खण्ड स्तर पर कार्यरत स्वैच्छिक संस्था को चिह्नित कर उसे 10,000 रू. का अनुदान देने का प्रावधान है, ताकि वह समूह सरलीकरण की प्रक्रिया को दिशा प्रदान कर सके। योजनान्तर्गत फरवरी, 2000 तक 1,149 समूह गठित किये गये हैं एवं इंदिरा महिला ब्लॉक सोसायटी को 6.10 लाख रूपये की राशि हस्तान्तरित की जा चुकी है।''[17]

3. **''किशोर बालिका योजना 'लाडली'**– सामाजिक एवं जनविकास के अन्य पहलुओं में इस बात पर विचार किया गया कि किशोर आयु में प्रवेश करने वाली बालिकाओं में सामान्य व्यावहारिक ज्ञान, साक्षरता की ओर ध्यान देने से बहुत सी समस्याओं का निदान हो सकता है। घरेलू उत्पादों में सुधार, बाल एवं मृत्यु दर में कमी, टीकाकरण आदि में पर्याप्त सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। सक्षम तथा जागरुक बालिकाएँ ही समाज के विकास में योगदान दे सकती हैं। इस

सोच को मूर्त रूप देने हेतु महिला विकास अभिकरणों के माध्यम से किशोर बालिकाओं के लिए एक विशिष्ट किशोर बालिका योजना का क्रियान्वयन राज्य के समस्त जिलों में 1998–99 में प्रारम्भ किया गया। इस कायक्रम का मुख्य उद्देश्य है कि किशोरियों का सामाजिक विकास उनकी आवश्यकताओं एवं कुशलताओं के अनुरूप हो सके एवं बालिकाएँ अपने हितों का भविष्य में स्वयं निर्धारण कर सकें।

योजना के तहत दो आयु समूहों 11–14वर्ष एवं 15–18वर्ष का लिया गया है। प्रारम्भ में पृथक–पृथक प्रशिक्षण के उपरान्त उन्हें एक बालिका मण्डल में संयुक्त कर दिया जाता है। प्रत्येक गाँव में जन–जागृति अभियान, समुदाय एवं संरक्षण में गहन सम्पर्क एवं संवाद स्थापित करने हेतु कार्य किया जाता है। बालिका शिविर एवं मेले आयोजित किये जाते हैं। बालिकाओं के संगठित होने के पश्चात् अनौपचारिक बालिका मण्डलों का गठन किया जाता है। बालिकाओं को व्यावहारिक एवं आर्थिक स्वावलम्बन हेतु एक छः माह का प्रशिक्षण दिया जाता है। इस प्रशिक्षण के अन्तर्गत बालिकाओं को सिलाई, कढ़ाई, बुनाई, जैसे परम्परागत कार्यों के साथ–साथ कुछ अभिनव क्षेत्रों यथा कृषि में नवीन प्रयोग बागवानी, हैण्डपम्प ठीक करना, प्राथमिक चिकित्सा इत्यादि की प्रारम्भिक जानकारी दी जाती है। वर्ष 2000–01 में योजना हेतु 37.42 लाख रुपये का प्रावधान रखा गया है। इसके अन्तर्गत करौली जिले में योजना का क्रियान्वयन एवं शेष 13 जिलों में योजना के फॉलोअप हेतु है। वर्ष 1999–2000 में योजनान्तर्गत 18,600 बालिकाओं को लाभान्वित किया गया है। सभी जिलों में सर्वे कार्य एवं बालिका मण्डल का गठन कर लिया गया हैं। 6 जिलों के अतिरिक्त अन्य में बालिकाओं का किट वितरित कर दिये गये हैं। मुख्य आठ जिलों में योजना पूर्ण हो गई है।

4. महिला रोजगार योजना– महिला रोजगार योजना राजस्थान राज्य में महिला एवं बाल विकास विभाग, ग्रामीण विकास विभाग एवं पंचायत राज विभाग तथा यूनिसेफ के संयुक्त प्रयासों से राज्य के 10 जिलों में वर्ष 1996–97

में क्रियान्वित की गई। वर्ष 1997–98 में राज्य सरकार द्वारा महिला विकास अभिकरणों के माध्यम से महिला रोजगार योजना राज्य के 20 जिलों यथा– उदयपुर, अजमेर, सवाई माधोपुर, अलवर, भीलवाड़ा, जोधपुर, जयपुर, सीकर, दौसा, कोटा, टोंक, पाली, राजसमंद, बूंदी, झुन्झुनूं, डूंगरपुर, चुरू, जालौर एवं चित्तौड़गढ में आरम्भ की गई एवं इसका क्रियान्वयन जारी है। योजना का उद्देश्य नारियों को गैर–परम्परागत कार्यों से जोड़कर, जिन कार्यों में परुषों का एकाधिपत्य है, उनमें नारियों का प्रवेश कराना है। अपारम्परिक आय सृजन के स्रोतों को महिला विकास का अभिन्न अंग बनाया जा सके, साथ ही नारियों के माध्यम से स्वच्छता के संदेश को जन समुदाय तक पहँचाने में महिला रोजगार को सेतु के रूप में काम दिया जायेगा। कुल 9 जिलों का गठन हो गया है। 50 समुहों में प्रशिक्षण पूर्ण हो गया है तथा आठ समूहों में प्रशिक्षण चल रहा है।

5. एकीकृत जनसंख्या व विकास परियोजना– यूनिसेफ द्वारा आयोजित एकीकृत जनसंख्या व विकास परियोजना स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग द्वारा संचालित की जा रही हैं। इस हेतु 669.52 लाख रुपये का प्रावधान है। परियोजना का तीन–चौथाई हिस्सा विशेष तौर पर प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य सेवाओं के लिए रखा गया है, जबकि शेष एक चौथाई भाग महिला एवं बाल विकास तथा शिक्षा विभाग के माध्यम से गतिविधियों के संचालन हेतु रखा गया है। इस कार्यक्रम के तहत वातावरण निर्माण के अन्तर्गत बालिकाओं का कार्यक्रम संयुक्त प्रशिक्षण तीन विभागों के कर्मचारी, महिला एवं बाल विकास विभाग, स्वास्थ्य विभाग, शिक्षा विभाग एवं सहायता समूहों के उन्नयन की गतिविधियाँ राज्य के सात जिलों में लागू की जा रही हैं, जो निम्न हैं। (1) अलवर (2) भरतपुर (3) भीलवाड़ा (4) सवाई माधौपुर **(5) करौली** (6) उदयपुर (7) चितौड़गढ़।

प्रत्येक जिले की 3.07 लाख रुपये की राशि नियुक्त की जा चुकी है, जिसके अन्तर्गत 87 संयुक्त प्रशिक्षण सम्पन्न हो चुके हैं तथा शेष प्रशिक्षण प्रगति पर है।

इस कार्यक्रम के तहत एक राजस्थान राज्य लोक प्रशासन संस्थान, जयपुर में ''महिला संदर्भ केन्द्र'' की स्थापना की गई है, जिसमे 10 लाख रुपये का बजट आवंटित है। महिला एवं बाल विकास विभाग के अन्तर्गत गठित सोसायटी फॉर कन्वर्जेंट एक्शन तथा संस्थान के संयुक्त तत्त्वावधान में इनका क्रियान्वयन किया जावेगा।''[18]

6. महिला नीति– समाज में बालिकाओं तथा नारियों के स्तर एवं स्थिति में सुधार करने तथा शोषण एवं शोषणवादी कुरीतियों को समाप्त करने के लिए प्रक्रियाओं, पद्धतियों एवं तन्त्र को गतिशील बनाना व राज्य में नारियों व बालिकाओं के समग्र विकास हेतु सहायक वातावरण तैयार करने के उद्देश्य से राज्य की महिला नीति का निर्माण किया गया है।

महिला एवं बाल विकास विभाग इस नीति के क्रियान्वयन में समन्वय करने व पुनरीक्षण करने में नोडल विभाग होगा। इस नीति की क्रियान्विती का समस्त उत्तरदायित्व समस्त सम्बन्धित विभागों पर होगा। प्रत्येक विभाग राज्य स्तर पर नोडल अधिकारी को चिह्नित करेगा, जो विभागीय योजनाओं के क्रियान्वयन का पुनरीक्षण करेगा। नोडल विभाग समस्त विभागों, सार्वजनिक संगठनों, बैंक व तित्तीय संस्थाओं एवं नारियों समूहों एवं संगठनों के साथ नियमित रूप से समन्वय स्थापित करेगा व उनसे प्राप्त प्रतिवेदन राज्य महिला आयोग के समक्ष प्रस्तुत करेगा। आयोग नीति के क्रियान्वयन के सम्बन्ध में अपनी सिफारिशें राज्य सरकार को प्रेषित करेगा। राज्य सरकार का यह दायित्व होगा कि वह सिफारिशों का क्रियान्वयन करना सुनिश्चित करे। प्रगति पर निगाह रखने के लिए मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में समिति गठित की जायेगी। इसके अतिरिक्त मुख्य सचिव की अध्यक्षता की अध्यक्षता में गठित एक समिति राज्य स्तर पर प्रत्येक 6 माह में क्रियान्वयन का अनुवीक्षण करेगी।

7. स्वयं सहायता समूह– 'एक के लिए सब, सब एक के लिए' के सिद्धान्त पर रची गयी स्वयं सहायता समूह योजना का उद्देश्य गाँवों की गरीब नारियों की आसानी से की गई बचत से उन्हीं की सहायता करना है। प्रजातांत्रितक तरीके से चलने वाली इस योजना में भागीदार बनकर महिलाएँ बचत, सहयोग, स्वावलम्बन की वृत्तियों का विकास करती हैं और बैंक नाबार्ड द्वारा उपलब्ध ऋण सुविधाओं का लाभ उठाकर अपनी वास्तविक जरुरतों को पूरा करने के अवसर प्राप्त करती है। इस योजना से उत्पादन एवं उपभोग दोनों के लिए आकस्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। इस हेतु महिला विकास अभीकरणों के माध्यम से स्वयं सहायता समूहों एवं बचत साख समूहों, का निर्माण किया जा रहा है। 1999–00 में 1000 स्वयं सहायता समूहों के गठन के लक्ष्य को विपरीत शत प्रतिशत से अधिक लक्ष्यों की प्राप्ति की गई है।

8. जिला महिला सहायता समिति– समाज के आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक स्तर में वृद्धि के उपरान्त भी नारियों की स्थिति में अपेक्षित सुधार नहीं हुआ है एवं महिला उत्पीड़न एवं शोषण के प्रकरणों में निरन्तर वृद्धि हुई है। ऐसे शोषित एवं उत्पीड़ित नारियों को अविलम्ब राहत देने उन्हें आवश्यक सहायता एवं उचित मार्गदर्शन प्रदान करने एवं शोषण के प्रकरणों का पुनरीक्षण कर शीघ्र कार्यवाही कराने के उद्देश्य से समस्त जिलों में एक जिला स्तरीय महिला सहायता समिति की स्थापना जिला कलेक्टर की अध्यक्षता में की गई है। समिति का पंजीयन करौली के अलावा अन्य सभी जिलों मे हो गया है एवं इनकी नियमित बैठक हो रही है। ऐसी नारियों को तात्कालिक सहायता उपलब्ध कराने के लिए प्रत्येक जिले में एक सामाजिलक सुरक्षा कोष स्थापिथ किया गया है। कोष के अन्तर्गत दानदाताओं का अधिकाधिक सहयोग प्राप्त करने हेतु 80जी के तहत आयकर छूट का प्रावधान भी किया गया है। पीड़ित नारियों को परामर्श सेवाएँ भी जिला महिला सहायता समिति द्वारा उपलब्ध कराई जाती हैं। राज्य स्तर पर प्राप्त प्रकरणों की समीक्षा हेतु सचिव एवं बाल

विकास विभाग की अध्यक्षता में राज्य स्तरीय सहायता समिति का गठन किया गया है।''[19]

''जनजातियों की दशा सुधारने हेतु सुझाव–

जनजातियों की दशा सुधारने हेतु सुझाव इस प्रकार हैं–

आर्थिक दशा सुधारने हेतु सुझाव– आर्थिक समस्याओं के निराकरण हेतु सबसे प्रमुख कार्य जनजातियों के परिवारों को कृषि के लिए पर्याप्त भूमि उपलब्ध कराई जाए। कृषि के अत्याधुनिक तरीकों से जनजातियों को अवगत कराया जाए। स्थानांतरित कृषि की समाप्ति की जाए। सरकार की ओर से कृषि करने वालों को बीज, बैल व कृषि संबंधी उपकरण खरीदने के लिए आर्थिक सहायता दी जाए। बेगार, दासता व कम वेतन जैसी दुव्यवस्थाओं को कानून द्वारा समाप्त किया जाए। जहाँ अधिक जनजातियों के लोग कार्यरत हों, वहाँ श्रमिक कल्याण कार्य विस्तृत रूप से हो। दस्तकार या गृह–उद्योग जैसे छोटे–छोटे उद्योगों के संबंध में जनजातियों को उचित प्रशिक्षण दिया जाए। इन लोगों के लिए अच्छे मकान, कार्य के उचित घंटे व काम करने की अवस्थाओं आदि पर विशेष ध्यान दिया जाए। सहकारी समितियों का विकास किया जाए और उन्हें रोजगार उपलब्ध करवाए जाए।

सामाजिक दशा सुधारने हेतु सुझाव– सामाजिक समस्याओं के निराकरण हेतु सबसे प्रमुख कार्य बाल–विवाह की प्रथा को समाप्त करना है, युवा–गृहों का पुनरुत्थान किया जाए, जो उन्हें शिक्षा देने की भी व्यवस्था करें, कन्या–मूल्य की प्रथा का जनमत के द्वारा निराकरण किया जाए, जनजातियों की आर्थिक स्थिति में सुधार किया जाए, जिससे वेश्यावृत्ति जैसी बुराई को समाप्त किया जा सके।

सांस्कृतिक दशा सुधारने हेतु सुझाव– सांस्कृतिक समस्याओं के समाधान हेतु सबसे पहला प्रमुख कार्य यह किया जा सकता है कि सभी सांस्कृतिक आयोजन उन्हीं की भाषा एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के अनुसार किए जाएँ, एलविन के मतानुसार ऐसे विश्वविद्यालयों की स्थापना की जाए, जो

आदिम ललित कलाओं की रक्षा कर सकें, शिक्षा के द्वारा उन्हें वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रदान किया जाए जिससे वे धार्मिक अन्धविश्वासों को हटा सकें।

शैक्षणिक दशा सुधारने हेतु सुझाव– शैक्षणिक समस्याओं के समाधान हेतु सबसे पहला प्रमुख कार्य यह किया जा सकता है कि जनजातियों को शिक्षा उनकी अपनी भाषा में दी जाए। शिक्षा के साथ–साथ नृत्य, संगीत, खेल आदि के मनोरंजनों का ध्यान रखा जाए। विद्यालयों के साथ–साथ व्यावसायिक प्रशिक्षण की सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाए। जैसे कृषि, पशुपालन, मुर्गीपालन, मत्स्य पालन, आदि व्यावसायिक शिक्षा उपलब्ध कराई जाए। जिससे वे बेकारी का सामना कर सकें।

स्वास्थ्य की दशा सुधारने हेतु सुझाव– इसमें आदिवासी क्षेत्रों में चिकित्सालय, चिकित्सक व आधुनिक औषधियों की व्यवस्था की जाए। जनजातीय बालकों के लिए पौष्टिक आहार तथा विटामिन की गोलियाँ उपलब्ध कराई जाए। चेचक हैजा व अन्य संक्रामक बीमारियों के टीकें लगाने की जानकारी देकर टीकें लगाए जाय। चल अस्पतालों की व्यवस्था की जाए। स्कूलों, पंचायतगृहों व युवागृहों में दवाओं का प्रबंध किया जाए।''[20]

''जनजातियों की समस्याओं का निराकरण–

जनजातियों की विभिन्न समस्याओं का निराकरण करने के लिए सरकारी, गैर–सरकारी तथा अन्य संगठनों ने समय–समय पर अनेक प्रयास कए हैं, जो अग्रलिखित हैं–

(I) सरकारी प्रयास– स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले अंग्रेजी सरकार ने जनजातियों की समस्याओं के समाधान के लिए बहुत कम प्रयास किये थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार द्वारा इनकी समस्याओं के समाधान के लिए किए गए प्रयास निम्नांकित हैं–

संवैधानिक प्रयास– भारत सरकार न स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद निर्मित नूतन संविधान में अनुसूचित जनजातियों के लिए अनेक प्रावधान घोषित किए हैं, जो निम्नलिखित हैं–

1 लोक सभा तथा विधान सभाओं में जनजातियों के लिए क्रमशः 40 तथा 303 स्थान सुरक्षित रखे गये हैं जो 25 जनवरी, 1990 के लिए थे। इसकी अवधि तथा निश्चित प्रतिशत के अनुसार सुरक्षित स्थान और बढ़ा दिये गये हैं।

2 संविधान की धारा 16 (4) तथा 335 के अनुसार सरकारी नौकरियों में अनुसूचित जनजातियों के लिए 7.5 प्रतिशत स्थान सुरक्षित रखे गये हैं।

3 संविधान की धारा 46 के अनुसार जनजातियों के विकास तथा आर्थिक उन्नति की सुरक्षा की ओर विशेष ध्यान देने का कार्य राज्य सरकारों का कर्त्तव्य घोषित किया गया है।

4 संविधान की धारा 338 के अनुसार राष्ट्रपति को यह अधिकार है कि वह अनुसूचित जनजातियों के लिए एक विशेष आयुक्त नियुक्त करेगा जो जनजातियों की स्थिति को सुधारने के सम्बन्ध में समय–समय पर राष्ट्रपति को सुझाव देगा।

5 संविधान के 10वें भाग और 5वीं तथा 6ठी अनुसूचियों में जनजातीय क्षेत्रों के सम्बन्ध में विशेष व्यवस्थाएँ की गई हैं।

6 संविधान के भाग 6 की धारा 164 में आसाम के अतिरिक्त बिहार, मध्य प्रदेश और उड़ीसा में जनजातीय कल्याण मंत्रालय स्थापित करने का विधान है।

7 धारा 244 (2) के अन्तर्गत आसाम की जनजातियों के लिए जिला ओर प्रादेशिक परिषद् स्थापित करने की व्यवस्था है।

प्रशासनिक व्यवस्था– धारा 244 एवं संविधान की पाँचवी अनुसूची के द्वारा आन्ध्र प्रदेश, बिहार, गुजरात, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा और राजस्थान के कुछ क्षेत्र अनुसूचित किए गए हैं। इन राज्यों के राज्यपाल जिनमें ये क्षेत्र आते हैं के प्रशासन की रिपोर्ट राष्ट्रपति को प्रत्येक वर्ष भेजेंगे। अनुसूचित जनजातियों की विशेष समस्याओं और आवश्यकताओं की ओर ध्यान

देने के लिए अक्टूबर, 1999 में एक पूर्ण जनजातीय कार्य मंत्रालय की स्थापना की गई है।

कल्याणकारी तथा सलाहकार संस्थाएँ— पैंसठवें संविधान संशोधन अधिनियम (1990) के अन्तर्गत अनुच्छेद 338 के तहत नियुक्त किए जाने वाले विशेष अधिकारी के स्थान पर राष्ट्रीय अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति आयोग बनाया गया है। इसमें राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किए जाने वाले अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के साथ पाँच सदस्यों की भी व्यवस्था की गई है। आयोग के ये कर्त्तव्य हैं— (क) अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लोगों की सुरक्षा सम्बन्धी सभी मामलों की जाँच तथा निगरानी, (ख) इनके अधिकारों तथा सुरक्षा के उपायों से वंचित विशिष्ट शिकायतों की जाँच, (ग) इन लोगों के सामाजिक और आर्थिक विकास की योजनाएँ बनाने में सहयोग तथा कार्यान्वयन में हो रही प्रगति का मूल्यांकन, (घ) राष्ट्रपति को वार्षिक रिपोर्ट भेजना, (च) संरक्षण, कल्याण और सामाजिक—आर्थिक विकास के सम्बन्ध में केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा परामर्श देना, और (छ) ऐसे अन्य सभी कार्य करना, जिनकी जिम्मेदारी राष्ट्रपति द्वारा आयोग को सौंपी गई।

राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों में अनुसूचित जातियों, जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के कल्याण की देखरेख के लिए अलग विभाग हैं। अलग—अलग राज्यों में प्रशासनिक ढाँचा अलग—अलग तरह का है। बिहार, मध्यप्रदेश और उड़ीसा में संविधान के अनुच्छेद 164 के तहत जनजातियों के कल्याण के लिए अलग से मंत्रियों की नियुक्ति की गई है। कुछ अन्य राज्यों ने केन्द्र की संसदीय समिति की ही तरह राज्य विधानसभा के सदस्यों की समितियाँ बनाई हैं। तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल समेत अनुसूचित क्षेत्रों वाले सभी राज्यों ने अनुसूचित जनजातियों के कल्याण और उत्थान के बारे में परामर्श के लिए संविधान की पाँचवी अनुसूची के प्रावधानों के तहत जनजातीय सलाहकार परिषदें गठित की हैं।

विधान मण्डलों तथा संसद में प्रतिनिधित्त्व– संविधान की धारा 330 ओर 332 के अन्तर्गत राज्यों की अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या के अनुपात के अनुसार लोकसभा तथा राज्यों की विधान सभाओं में इनके स्थान सुरक्षित रखे गए हैं। लोक सभा में 40 स्थान तथा विधान सभाओं में 303 स्थान सुरक्षित हैं। पंचायती राज के स्तर पर भी इसके लिए स्थान सुरक्षित हैं।

सरकारी नौकरियों में आरक्षण– अखिल भारतीय स्तर पर प्रतियोगी सेवाओं में अनुसूचित जनजातियों के लिए 7.5 प्रतिशत स्थान सुरक्षित रखे गए हैं। स्थानीय नौकरियों में भी उनके लिए निश्चित प्रतिशत में स्थान सुरक्षित हैं। इनको आयु सीमा में छूट, उपयुक्तता मानदण्ड में छूट, पदों के लिए चयन सम्बन्धी अनुपयुक्तता में छूट तथा अन्य छूटें भी दी गई हैं।

1 जनवरी, 1996 तक केन्द्र सरकार की सेवाओं में अनुसूचित जनजातियों का कुल प्रतिनिधित्व सफाई कर्मचारियों सहित 1,88,439 (5.95 प्रतिशत) था।

कल्याण योजनाएँ– केन्द्र तथा राज्य स्तर पर अनेक कल्याणकारी योजनाएँ जनजातियों के लिए चलाई जाती रही हैं।

राज्य सरकार द्वारा प्रथम पंचवर्षीय योजना में इनके कल्याण पर 30.04 करोड़ रुपया व्यय किया गया था। दूसरी योजना में 79.41 करोड़ रुपया, तीसरी योजना में 100.40 करोड़ रुपया, चौथी योजना में 172.70 करोड़ रुपया, पाँचवी योजना में 288.88 करोड़ रुपए खर्च किये गये, छठी योजना में 2030.30 करोड़ रुपया तथा जनजातीय उपयोजनाओं पर अलग से 470 करोड़ रुपया खर्च करने का प्रावधान था।

केन्द्रीय परियोजनाएँ– अनुसूचित जनजातियों तथा जनजातियों को व्यवसाय तथा रोजगार प्राप्त करने में सहायता के उद्देश्य से परीक्षापूर्व प्रशिक्षण केन्द्र और शिक्षण सहित पथ–प्रदर्शन केन्द्र भारत में सात नगरों–इलाहाबाद, दिल्ली, जयपुर, मद्रास, पटियाला, हैदराबाद और शिलांग में खोले गये हैं। चार शिक्षण केन्द्रों सहित पथ–प्रदर्शन केन्द्र भी खोले हैं।

मेडिकल और इंजीनियरी डिग्री पाठ्यक्रमों के लिए अनुसूचित जातियों/जनजातियों के छात्रों को पाठ्यपुस्तकें उपलब्ध कराने के लिए 1991–92 में पुस्तक बैंक कार्यक्रम शुरू किया गया। अब कृषि, पशु चिकित्सा और पोलीटेक्निक पाठ्यक्रमों को भी इसमें शामिल कर लिया गया है। दो–दो विद्यार्थियों के लिए पाठ्यपुस्तकों का एक सैट उपलब्ध कराया जाता है। वर्ष 1998–99 में दिसम्बर, 1998 तक इस कार्यक्रम के लिए 0.25 करोड़ रुपये उपलब्ध कराए गए।

इसके अतिरिक्त उनके लिए मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियाँ, बालिका छात्रावास, विदेशों में पढ़ने के लिए छात्रवृत्तियाँ आदि की भी व्यवस्था की गई है। राज्य सरकारों के स्तर पर मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियाँ, परीक्षा शुल्क में छूट, शिक्षा सम्बन्धी सामग्री की निःशुल्क व्यवस्था, बच्चों को दोपहर में भोजन की व्यवस्था, आश्रम स्कूलों की स्थापना, पाठशाला भवनों तथा छात्रावासों के निर्माण के लिए अनुदान की व्यवस्था भी की गई।

उच्च शिक्षा के लिए राष्ट्रीय विदेशी छात्रवृत्ति तथा यात्रा अनुदान के अन्तर्गत इनको हर साल 30 छात्रवृत्तियाँ दी जाती हैं–अनुसूचित जाति 17, अनुसूचित जनजाति नौ, अनुसूचित जाति, (क्रि.) दो, अभिसूचित यायावर और अर्द्ध–यायावर जनजाति–एक और भूमिहीन खेतिहर मजदूर तथा पुश्तैनी दस्तकार–एक। वर्ष 1954–55 में इस कार्यक्रम को लागू होने के बाद से अब तक कुल 732 विद्यार्थियों को ये छात्रवृत्तियाँ दी जा चुकी हैं। इनमें से वर्ष 1998 तक 532 विद्यार्थियों ने इनका लाभ उठाया।

विकास योजनाएँ– केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकारों द्वारा अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के विकास के लिए अनेक प्रयास किये गये हैं। वर्ष 1999–2000 में इन योजनाओं पर 1400 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा है। इन लोगों के कल्याणार्थ अनेक कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये हैं–

पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में अपनाई गई जनजातीय उपयोजना के दो उद्देश्य हैं– (1) कानूनी और प्रशासनिक सहयोग से जनजातीय लोगों के हितों

का संरक्षण, और (2) उनके जीवनस्तर को उठाने के योजनागत कार्यक्रमों से विकास सम्बन्धी प्रयासों को बढ़ावा। देश में 191 समन्वित जनजातीय विकास परियोजनाएँ चलाई जा रही हैं। छठी योजना से समन्वित जनजातीय विकास कार्यक्रम से बाहर के क्षेत्रों की पहचान की गई। ऐसे इलाके जिनकी 10,000 तक की कुल जनसंख्या में जनजातीय आबादी 50 प्रतिशत से अधिक है, उन्हें 252 एम.ए.डी.ए. क्षेत्रों के अन्तर्गत शामिल कर लिया गया। इसके अलावा 79 ऐसी बस्तियों की भी पहचान की गई है, जिनकी 5,000 की आबादी में अनुसूचित जनजातियों की संख्या 50 प्रतिशत ।

आदिम जनजाति समूहों के लिए योजना– पिचहत्तर ऐसी अनुसूचित जनजातियाँ हैं, जिनकी पहचान करके उन्हें आदिम जनजाति समूहों की सूची में रखा गया है। इन जनजातियों की 15 राज्यों केन्द्रशासित प्रदेशों में पहचान खेतीबाड़ी के आदिम तरीके अपनाने और साक्षरता का अत्यन्त ही न्यूनतम स्तर के आधार पर की गई है। नौवीं पंचवर्षीय योजना में आदिम जनजातियों के लिए एक अलग योजना बनाई गई है और 15 फरवरी, 1999 तक के लिए 2.33 करोड़ रुपये दिए गए हैं।

विशेष केन्द्रीय सहायता– जनजातीय उप–योजना को लागू करने वाले राज्यों/केन्द्रशासित प्रदेशों को विशेष केन्द्रीय सहायता दी जाती है। वर्ष 1998–99 के दौरान 15 फरवरी, 1999 तक 29,308 लाख रुपये जारी किए गए। संविधान के अनुच्छेद 275 (1) के पहले उपबन्ध के अनुसार राज्य सरकारों को अनुसूचित जनजातियों के कल्याण को बढ़ावा देने वाली वित्तीय योजनाओं के लिए धन उपलब्ध कराने तथा जनजातीय इलाकों में प्रशासन के स्तर को राज्य के अन्य क्षेत्रों के प्रशासन के स्तर पर लाने के लिए अनुदान सहायता दी जाती है। वर्ष 1998–99 में इनके लिए 5,385.22 लाख रुपये की धनराशि जारी की गई।

अनुसूचित जनजाति के बालक/बालिकाओं के छात्रावास– बालिकाओं के लिए छात्रावास कार्यक्रम तीसरी पंचवर्षीय योजना में शुरू किया

गया था। इसके अन्तर्गत राज्यों को होस्टलों की निर्माण लागत 50 प्रतिशत और केन्द्रशासित प्रदेशों को शत–प्रतिशत राशि केन्द्रीय सहायता के रूप में दी जाती है। वर्ष 1998–99 के दौरान 46 छात्रावासों के निर्माण के लिए 15 फरवरी, 1999 तक 360.66 लाख रुपये दिए गए। लड़कों के लिए भी वर्ष 1989–90 में छात्रावास योजना प्रारम्भ की गई। वर्ष 1998–99 के दौरान 15 छात्रावासों के निर्माण के लिए 15 फरवरी, 1999 तक 531.44 लाख रुपये की राशि जारी की गई।

आश्रम विद्यालय– केन्द्र द्वारा प्रायोजित यह कार्यक्रम वर्ष 1990–91 में शुरू किया गया। इसके अन्तर्गत आश्रम पद्धति के विद्यालय खोलने के लिए राज्यों को 50 प्रतिशत और केन्द्रशासित प्रदेशों को शत–प्रतिशत सहायता दी जाती है। वर्ष 1998–99 में 27 आश्रम विद्यालयों के निर्माण के लिए बजट में नौ करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया था, जिसमें से 15 फरवरी, 1999 तक 634.64 लाख रुपये दिए गए।

व्यावसायिक प्रशिक्षण– केन्द्रीय क्षेत्र की यह योजना वर्ष 1992–93 में प्रारम्भ की गई। इसका उद्देश्य बेरोजगार जनजातीय युवाओं को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराकर विघटनकारी प्रवृत्ति की रोकथाम करना था। इसके तहत व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्र खोले जाते हैं। वर्ष 1998–99 के दौरान 25 व्यावसायिक केन्द्रों के लिए 15 फरवरी, 1999 तक 321.24 लाख रुपये उपलब्ध कराए गए।

जनजातीय बालिकाओं की शिक्षा– कम साक्षरता वाले इलाकों में जनजातीय बालिकाओं की शिक्षा में दो प्रतिशत से कम महिला साक्षरता वाले आठ राज्यों के 48 चुनें हुए जनजातीय जिलों में महिलाओं की शिक्षा के स्तर में सुधार के लिए वर्ष 1993–94 में ये कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। इसके अन्तर्गत पाँचवीं कक्षा तक की बालिकाओं के लिए आवासीय विद्यालयों की स्थापना की जाती है। यह कार्यक्रम स्वयंसेवी संगठनों द्वारा लागू किया जाता है। वर्ष

1998–99 के बजट में सात करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया था, जबकि 15 फरवरी, 1999–तक 215.43 लाख रुपये जारी किए गए।

जनजातीय अनुसंधान संस्थान– आन्ध्र प्रदेश, असम, बिहार, गुजरात, केरल, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, मणिपुर, और त्रिपुरा ने 14 जनजातीय अनुसन्धान संस्थान स्थापित किए हैं। कुछ संस्थानों में संग्रहालय भी है, जिनमें विभिन्न जनजातीय वस्तुओं को प्रदर्शित किया गया है। इन संस्थानों में केन्द और राज्य सरकारों द्वारा अनुसन्धान, शिक्षा, आँकड़ों के संग्रह, प्रशिक्षण, विचार गोष्ठियों/कार्यशालाओं के आयोजन, जनजातीय उप–योजनाओं के लिए व्यावसायिक निवेश जुटाने, जनजातीय साहित्य के प्रकाशन, जनजातीय परम्परागत कानून को संहिताबद्ध करने आदि का कार्य किया जाता है। वर्ष 1998–99 में संस्थाओं के लिए बजट के 650 लाख रुपये का प्रावधान था, जबकि 17 फरवरी, 1999 तक 109.16 करोड़ रुपये जारी किए गए।

शिक्षण एवं प्रशिक्षण केन्द्र– अनुसूचित जातियों, जनजातियों के कल्याणार्थ एवं उन्हें रोजगार प्राप्त करने में सहायता देने की दुष्टि से दो कार्यक्रम किये गये हैं–परीक्षा पूर्व प्रशिक्षण केन्द्र तथा शिक्षण सहित पथ–प्रदर्शन केन्द्र। पहले कार्यक्रम के अन्तर्गत 7 केन्द्र–इलाहाबाद, दिल्ली (एक निजी प्रशिक्षण केन्द्र माध्यम से), जयपुर, मद्रास, पटियाला, हैदराबाद और शिलांग में हैं, जो संघ लोक सेवा आयोग द्वारा संचालित अखिल भारतीय सेवा परीक्षाओं के लिए प्रशिक्षण देते हैं। उम्मीदवारों को राज्य की सेवाओं के लिए परीक्षा सम्बन्धी प्रशिक्षण देने के उद्देश्य से आन्ध्र प्रदेश, बिहार, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, केरल, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, दिल्ली व पश्चिमी बंगाल में शिक्षण केन्द्र स्थापित किये गये हैं। इलाहाबाद और तिरुचिरापल्ली में इन्जीनियरिंग सेवाओं की परीक्षा के लिए दो अन्य प्रशिक्षण केन्द्र खोले गये है। दिल्ली, कानपुर, जबलपुर और मद्रास में शिक्षण एवं पथ–प्रदर्शन केन्द्र स्थापित किये गये हैं।

छात्रवृत्तियाँ– अनुसूचित जाति और जनजाति के विद्यार्थियों को मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियाँ अनेक संरक्षक की आय–सीमा के आधार पर दी जाती हैं। इन छात्रवृत्तियों की दरों में पूर्व की तुलना में अब काफी वृद्धि कर दी गई है। बुक–बैंक की सुविधा भी उपलब्ध करा दी गई है तथा अन्य भी सुधार किये गये हैं। छात्रवृत्तियों की संख्या में भी वृद्धि की गई है। राजस्थान सरकार द्वारा 1971 से जनजाति स्नातक को 150 और स्नातकोत्तर को 250 रुपये भत्ता दिया जाता था लेकिन योजना से छात्र ठीक तरह से लाभान्वित नहीं हो पा रहे थे इसलिए 12 जून, 1995 से यह भत्ता बन्द कर दिया गया था। इस सरकार द्वारा जनजाति के कक्षा छः से आठ तक छात्रों के 15 रुपये और छात्रा को बीस रुपये तथा कक्षा नौ से दस तक के छात्र को 30 एवं छात्रा को 40 रुपये छात्रवृत्ति दी जाती है। इसी तरह दस जमा दो के छात्र–छात्राओं को 90 रुपये प्रतिमाह शिक्षा विभाग के माध्यम से साल में दो बार छात्रवृत्ति दी जाती है।

राजस्थान के समाज कल्याण मंत्री ने 18 अप्रैल, 2000 को विधानसभा में कहा कि राज्य की वित्तीय स्थिति ठीक होने पर सरकार द्वारा जनजाति के शिक्षित युवकों को रोजगार भत्ता देने पर विचार करेगी। केन्द्रीय बजट 1999–2000 में अनुसूचित जनजाति छात्रों के लिए पोस्ट मैट्रिक छात्रवृत्ति में 67 करोड़ की वृद्धि की गई है।

अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों पर अत्याचारों की रोकथाम– अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति (अत्याचार विवारण) अधिनियम, 1989, 30 जनवरी, 1990 से लागू हुआ। इसमें अत्याचार की श्रेणी में आने वाले अपराधों के उल्लेख के साथ–साथ उनके लिए कड़े दण्ड की भी व्यवस्था की गई है। राज्यों से कहा गया है कि वे इस तरह के अत्याचारों की रोकथाम के उपाय करें और पीड़ितों के आर्थिक तथा सामाजिक पुनर्वास की व्यवस्था करें। अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम और नागालैंड को छोड़कर अन्य सभी राज्यों तथा केन्द्रशासित प्रदेशों में इस तहर के मामलों में इस कानून के तहत मुकदमा चलाने के लिए विशेष अदालतें बनाई गई हैं। अनुसूचित जातियों तथा

जनजातियों के लोगों पर अत्याचारों की रोकथाम के कानून के तहत आन्ध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, गुजरात और कर्नाटक में विशेष अदालतें गठित की जा चुकी हैं। केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजना के अन्तर्गत इस कानून को लागू करने पर आने वाले खर्च को आधा राज्य सरकारें और आधा केन्द्र सरकार वहन करेगी। केन्द्रशासित प्रदेशों को इनके लिए शत–प्रतिशत सहायता दी जाती है।

विशेष केन्द्रीय सहायता– यह केन्द्रीय योजना अनुसूचित जातियों में गरीबी के उन्मूलन की सामाजिक न्याय तथा अधिकार मंत्रालय की सबसे महत्त्वपूर्ण योजना है। विशेष संघटक योजना के अन्तर्गत राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों को उनके इस तरह के कार्यक्रमों के लिए शत–प्रतिशत सहायता दी जाती है। इस योजना का मूल उद्देश्य अनुसूचित जातियों के लोगों के विकास कार्यक्रमों को बढ़ावा देना है। इसके तहत परिवार–आधारित कार्यक्रमों के जरिए सीमित संसाधनों से ही उनकी व्यावसायिक क्षमता, उत्पादकता और आमदनी बढ़ाने के प्रयास किए जाते हैं। विशेष संघटक योजना के माध्यम से आमदनी बढ़ाने के परिवार–आधारित कार्यक्रमों की कमजोरियों और संसाधनों से सम्बन्धित कमियों को दूर करके योजनाओं को अधिक उद्देश्य पूर्ण और कारगर बनाने की कोशिश की जाती है। 1979–80 में जब यह योजना शुरू की गई, तब इसके लिए पाँच करोड़ रुपये की नाममात्र राशि का प्रावधान किया गया था। राज्य सरकारों और केन्द्रशासित प्रदेशों के प्रशासनों से अपेक्षा की जाती है कि ये विभिन्न क्षेत्रों तथा अनुसूचित जातियों के अधिक विकास कार्यक्रमों को लागू करने वाली एजेन्सियों को विशेष केन्द्रीय सहायता का आवंटन करें। वर्ष 1998–99 में इसके लिए 218.63 रुपये दिए गए।

सहकारी समितियाँ– जनजातियों पर होने वाले शोषण व अत्याचार की रोकथाम के लिए सरकार द्वारा सहकारिता आन्दोलन प्रारम्भ किया गया है। वन–श्रम, बहुउद्देश्यीय श्रम–ठेका एव निर्माण तथा क्रय–विक्रय एवं शीर्ष

सहकारी समितियों का संगठन सरकार की सहायता से किया गया है। इन समितियों का मुख्य उद्देश्य जंगल में रहने वाली जनजातियों को ठेकेदारों द्वारा होने वाले शोषण से बचाना तथा जंगल की उपज से होने वाले लाभ को उन तक पहुँचाना है।

जनजातीय कार्य मंत्रालय की स्थापना वर्ष 1999 में की गई जो पूर्ण रूप से देश में जनजातीय जनसंख्या की आवश्यकताओं पर ध्यान दे रहा है। वर्ष 2001–02 में अनुसूचित जनजाति के कल्याण एवं विकास हेतु विभिन्न योजनाओं के लिए 1040 करोड़ रुपये उपलब्ध कराए गए हैं।''[21]

''राज्य क्षेत्र की योजनाएँ–

उपर्युक्त केन्द्र सरकार द्वारा संचालित योजना–कार्यक्रमों के साथ राज्य सरकारें भी जनजातीय कल्याण के लिए विभिन्न योजनाएँ चला रही हैं। इन कार्यक्रमों को तीन समूहों में विभाजित किया जा सकता है। प्रत्येक समूह के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्यक्रम हैं–

शिक्षा– मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियाँ तथा स्थाई फण्ड, ट्यूशन एवं परीक्षा शुल्क में छूट, शिक्षा सम्बन्धी उपकरणों की व्यवस्था, आश्रम–स्कूलों की स्थापना, व विद्यालयों–भवनों और छात्रावासों के निर्माण के लिए अनुदान।

आर्थिक विकास– भूमि तथा सिंचाई की व्यवस्था, बैल, कृषि–उपकरण, खाद्य तथा बीज की आपूर्ति, कुटीर–उद्योगों का विकास, संचार–व्यवस्था का विकास, सहकारिता, स्थान परिवर्तन करते रहने वाले युवकों को बसाना, तथा मुर्गियों, भेड़–बकरियों तथा सूअरों को देने की व्यवस्था करना।

स्वास्थ्य, आवास तथा अन्य योजनाएँ– चिकित्सा–सुविधाएँ, पेय–जल योजनाएँ, मकान तथा मकान बनाने के लिए जमीन की व्यवस्था करना, कानूनी सहायता की व्यवस्था, तथा राज्य स्तर पर कार्यक्रम गैर–सरकारी संस्थाओं को अनुदान।''[22]

उपर्युक्त प्रयासों को देखते हुए यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यद्यपि जनजातीय क्षेत्रों के लिए अनेक योजनाएँ बनाई जा रही हैं व उन्हें

कार्यरूप में परिणत किया जा रहा है, किन्तु जनजातीय विकास के लिए इससे भी अधिक प्रयास अपेक्षित हैं। इसके लिए निष्ठावान, सक्रिय एवं निःस्वार्थी अधिकारियों की आवश्यकता है, जो इनकी भावनाओं को समझकर इनसे सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करें।

निष्कर्ष यह है कि इनकी दशा सुधार कर हर क्षेत्र में दिशा देने के विशेष प्रयास किये गये हैं और किए जा रहे हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

01. भारतीय समाज– डॉ. वीरेन्द्र प्रकाश शर्मा। पृ.419–423

02. हिन्दी महाकाव्य में नारी चित्रण– डॉ. श्याम सुन्दरदास। पृ. 19।

03. स्त्री विमर्श और सामाजिक आन्दोलन डॉ. राजनारायण पृ. 84।

04. आधुनिक हिन्दी काव्य में नारी भावना– शैल कुमारी माथुर। पृ. 33।

05. भारतीय समाज– डॉ. वीरेन्द्र प्रकाश शर्मा। पृ.426

06. मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य में नारी भावना– डॉ. उषा पाण्डेय। पृ. 42।

07. अभिव्यक्ति और माध्यम– माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर। पृ. 56।

08. वही 56।

09. उजास महिला कल्याणकारी योजनाएं, राज. जयपुर 2015–2016, पृ. 10

10. स्वप्निल सारस्वत, महिला विकास एक परिदृश्य– पृ. 36।

11. भारतीय समाज– डॉ. वीरेन्द्र प्रकाश शर्मा। पृ.419–423

12. प्रशासनिक प्रतिवेदन एवं विवरण, महिला बाल विकास– पृ. 13–14।

13. प्रशासनिक प्रतिवेदन एवं विवरण, महिला बाल विकास– पृ. 30

14. प्रशासनिक प्रतिवेदन एवं विवरण, महिला बाल विकास– पृ. 33 ।

15. राजस्थान पत्रिका प्रकाशन, जयपुर।

16. दैनिक पत्रिका प्रकाशन, जयपुर।

17. उजास, महिला कल्याणकारी योजनाएं,राज. जयपुर 2016–2017, पृ. 10

18. वही– पृ. 19–26

19. स्वप्निल सारस्वत, महिला विकास एक परिदृश्य– पृ. 164–170।

20. वही– पृ. 182

21. प्रशासनिक प्रतिवेदन एवं विवरण, महिला बाल विकास– पृ. 35–41।

22. स्वप्निल सारस्वत, महिला विकास एक परिदृश्य– पृ. 170–179।

उपसंहार

1. मीणा जनजाति की नारी के आरक्षण प्रावधान की समस्या।
2. संस्कृति का ह्रास।
3. सामाजिक जीवन में बढ़ते हुए फैशन।
4. मीणा जनजाति के लोकगीतों के आधुनीकीकरण की समस्या।

<u>उपसंहार–</u>

लोक जीवन की सुख दुःखात्मक रागात्मक, हर्ष उद्वेग तथा विभिन्न मनस्थितियों की लय ताल मय अभिव्यक्ति का अकृत्रिम उद्गार का नाम लोक गीत है। लोकगीत लोकानुभूति का ऐसा सरस सरल व ललित उद्गार है जिसकी अनुभूति की सृष्टि में जीवन के प्रथम स्पंदन से अंतिम महाप्रयाण तक की यात्रा का लेखा जोखा समाहित हो जाता है। यहाँ बचपन की किलकारी है, शौर्य की चंचलता है, यौवन की मादकता है और वृद्धत्व का गंभीर है। इनका रचनाकार अज्ञात है और रचना का स्थल अज्ञात है रचना सबके कंठ में है और रचना का दृष्टा न जाने किस लोक में रहता है, कोई नहीं जानता। जंगल में खिलने वाले फूलों की तरह इन लोकगीतों का संरक्षण सूर्य अपने ताप से, चंद्रमा अपनी शीतलता से, हवा अपनी स्वच्छंदता से, धरती अपनी सहिष्णुता से, जंगल अपनी सघनता से, समृद्ध अपनी मर्यादा से और नदियां अपनी गतिशीलता से करती हैं। लोकगीतों में लोकमानस की अभिव्यंजना होती है। रचनाकार के अनुभवों का विराट खजाना और उसके असंख्य हीरे मोती इन लोकगीतों की दुनिया में कदम–कदम पर अपनी आभा विकीर्ण करते प्रतीत होते हैं। लोक साहित्य की समस्त विधाओं में लोकगीतों का अपना महत्त्व है। लोक विश्वास, मान्यताओं, परंपराओं, रीतिरिवाजों, अनुष्ठानों व संस्कारों का विश्वकोश लोकगीत हैं।

लोकगीत का महत्त्व–

लोक हमारे जीवन का समुद्र है। उसमें भूत, भविष्य, वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है। किसी भी राष्ट्र की सांस्कृतिक मौलिकता का रसस्रोत लोकगीत ही होते हैं। भोले भाव मिले रघुराई की तरह इस भोली अलौकिक लोकवाणी में राष्ट्र की स्वायत्त सौंदर्य भावना और जीवन की अकृत्रिम और मिट्टी की सुगंध लिए व्यक्त होती है। एक प्रकार से कहा जाए तो यह लोक गीतात्मक परंपरा दैनिक जीवन की महक को सुरक्षित रखती है। यदि हम किसी की अन्तर्भावना सिद्धांतमूलक जीवन पद्धति का परिचय प्राप्त करना

चाहते हैं तो हमें इस लोक संस्कृति का ज्ञान करना होगा। यह ज्ञान हमें मुख्य रूप से लोकगीतों द्वारा प्राप्त होता है।

वस्तुतः लोकगीतों के रस का अपना अलग ही आनंद होता है। इन लोकगीतों में खाना–पीना, रहन–सहन, चाल–ढाल, व्यक्तिगत पारिवारिक और सामाजिक संबंध जैसे सास–ससुर, ननद–भाभी, देवर–जेठ आदि का पारिवारिक विचार मंथन अनुशासन या अतीत से चले आ रहे प्रेम द्वेष आपसी वैमनस्य या अनुराग नौंक–झौंक, लुका–छिपी, शिकायत, रूठना–मनाना आदि अनेक ऐसे व्यापार हैं जो इन लोकगीतों में गूंजते हैं।

इस लोकगीत धारा में हम प्रकृति के सौंदर्य का भी दर्शन करते हैं। लहलहाते खेत, खलिहान, नदी नाले, बावड़ी पोखर आदि की अपनी छटा होती है जो इन लोकगीतों के माध्यम से मन को प्रफुल्ल कर देती है।

वास्तव में लोकगीत कभी न सूखने वाले रस के स्रोत हैं। वे कण्ठ से गाने के लिए तथा हृदय से आनंद लेने के लिए हैं। इसकी स्वाभाविकता, सरसता, स्वच्छता तथा निबंधता हृदय को आनंदित कर प्रभाव उत्पन्न करती है, जिस तरह लहराता हुआ सागर गंभीर एवं गहन है जिस तरह गंगा की धारा, जिस तरह नीलाकाश में उड़ने वाला पक्षी स्वतंत्र और सरल है उसी प्रकार हमारे लोकगीत एवं सरसता की पीयूष धारा है। किसी जाति के इतिहास में लोकगीत के सांस्कृतिक मानवता के पंख विकसित होते हैं। लोकगीतों की परंपरा अति प्राचीन है। इनकी रचना आदि के साथ साथ की हुई है। इसमे मानव के जातीय संगीत का स्वरूप सुरक्षित है। हिन्दी के अधिकतर लोकगीतों को ग्रामगीतों की संज्ञा दी है। इनकी दृष्टि में ग्रामगीत प्रकृति के उद्‌गार हैं इनमें रस है, छंद नहीं केवल लय है, लालित्य नहीं, माधुर्य है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी ठीक ही कहते हैं कि –

"लोकगीत की एक–एक बहू के चित्रण कर रीतिकाल की सौ मुग्धाएं, खण्डिताएं न्यौछावर की जा सकती है क्योंकि वे निरालंकार होने पर भी

प्राणमयी हैं और वे अलंकारों से लदी होकर भी मिश्रण है।" यूरोपीय विद्वान गेटे ने लोकगीतों की कविता मानते हुए इसे सत्य और वास्तविक कविता कहा है।

भाषा वैज्ञानिक महत्त्व–

अर्थ परिवर्तन को समझने के लिए तथा शब्दों के इतिहास की खोज के लिए लोकसाहित्य सर्वाधिक उपादेय है।

आधुनिक हिन्दी के जन्मदाता गाँव वाले हैं और उनका साहित्य इन भाषा को पढ़ने के लिए टकसाल का काम दे रहा है। संस्कृत के शब्द किस प्रकार साधारण जन के लिए उपयोग सुलभ हुए है यह सब टकसाल का परिणाम है।

लोक साहित्य लोक भाषा की वस्तु होने के कारण भाषा वैज्ञानिकों के लिए बड़ा महत्त्वपूर्ण है। यही वह सतह है जहाँ भाषा तत्वेता भाषायी पर्तों को उघाड़कर उसके मर्म की खोज करते हैं आज के वर्तमान भाषायी संकट एवं भाषा समस्या को हल करने की शक्ति भी लोकसाहित्य को प्राप्त है।

भाषा के अतीतकाल तक जाने के लिए लोक बोलियों में प्रचुर सामग्री मिल जाती है। लोक बोली में प्रयुक्त हजारों अर्थवान अभिव्यक्तियों, क्रियाओं पारिभाषिक शब्दों, कहावतों, मुहावरों आदि से भाषा का भण्डार समृद्ध किया जा सकता है।

भाषा वैज्ञानिक अध्ययन की दृष्टि से जनपदीय अध्ययन का विशेष महत्त्व है। जनपदीय अध्ययन का विधार्थी एक तीर्थ यात्री की भाँति जनपद में चला जाता है और शब्द को अपनी झोली में भरकर लौटता है। लोक साहित्य में प्रयुक्त भाषा की अनेक गुत्थियाँ भी भाषा विज्ञान की सहायता से सुलझायी जा सकती हैं इस प्रकार लोक साहित्य के भाषा वैज्ञानिक अध्ययन से हमारी साहित्यक भाषा भी समृद्ध होती है।

सांस्कृतिक महत्त्व–

किसी देश की संस्कृति की जड़ें अतीत में रहती हैं। उनका स्पष्ट चित्र देखना हो तो उस देश का लोकसाहित्य उसमें अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा

सकता है, क्योंकि संस्कृति विशेष के उत्थान, पतन, उतार, चढ़ावों का जितना सफल चित्रण लोक साहित्य में रहता है उतना अन्यत्र दुर्लभ है। भारतीय शास्त्र की व्याख्या का सर्वोतम क्षेत्र यहाँ लोक जीवन है। आज भी लोक जीवन का वार्षिक सत्र अनेक मंगलात्मक विधानों और आचारों से सम्बद्ध है। लोक से भरे हुए पर्व और उल्लास, लोकनृत्य, लोकगीत, लोककथाएं, व्रतों की अवदान कहानियां, संवत्सर के रूप संवारने वाले अनेक व्रत और उपवास देव यात्राएं और मेलों आदि से भारतीय संस्कृति अपना अमिट स्पंदन प्राप्त कर रही है। यहाँ संस्कृति शब्द पर विचार करना भी उपयोगी होगा क्योंकि संस्कृति शब्द की उत्पत्ति संस्कार से मानी जा सकती है। इसका अर्थ संशोधन, परिष्करण, परिमार्जन एवं संस्मरण है।

मीणा जनजाति की नारी के आरक्षण प्रावधान की समस्या–

मीणा जनजाति की नारी के आरक्षण प्रावधान की समस्या आज समाज में यह चर्चा का विषय है कि सरकारी नौकरियों में आरक्षण जाति के आधार पर होना चाहिए या नहीं। एक वर्ग का कहना है कि सरकारी नौकरियों में आरक्षण जाति के आधार पर नहीं, बल्कि गरीबी के आधार पर होना चाहिए। सारा देश जातिवाद की संकीर्णता में जकड़ा हुआ दिखाई पड़ रहा है। मीणा समाज में जातिवाद की व्यवस्था अति प्राचीन है। उस प्राचीन जाति व्यवस्था का आरक्षण से कोई संबंध नहीं है। मीणा समाज अनेक सांस्कृतिक बंधंनों तथा निष्ठाओं के अटूट रज्जुओं से जुड़ा हुआ है। मीणा समाज में सारे घटकों के सुख–दुःख, राग–द्वेष एवं स्वाभिमानों के प्रायः एक रूप हैं। वर्तमान सुख–दुःख तथा भविष्य–काल की आशा आकांक्षा और ध्येय की दिशा एक हो गयी है। जब सभी के राग द्वेश और सुख–दुःख एक हैं। इसलिए जब किसी एक व्यक्ति या जाति पर आक्रमण या आघात होता है तो सारा समाज क्षुब्ध हो उठता है। यही सामूहिक क्षोभ बताता है कि समाज जीवित है और वह आत्म–संरक्षण कर सकता है। जो समाज आत्मरक्षा की दृष्टि में समर्थ नहीं है वह राष्ट्र को मजबूत नहीं बना सकता है। इस दृष्टि से मैं यह विचार करूंगा कि जाति

व्यवस्था मीणा समाज में कितनी पुरानी है, इसकी रचना किस परिस्थिति में हुई और इसका वर्तमान किस प्रकार विखण्डित हो रहा है।

आरक्षण की अवधारण का सूत्रपात तत्कालीन ब्रिटीश सरकार ने मद्रास प्रेसीडेन्सी में सन् 1854 में Standingh Order (No. 128/2) निकाल कर Collectors को आदेश देकर किया, जिसमें उनको निर्देश दिये *"Subordinate appointments among the principal castes".* इस अवधारणा को 1882 में महाराष्ट्र के प्रसिद्ध सन्त, सुधारक, शिक्षाविद्, महात्मा ज्योतिबाराव फूले ने सबके लिए मुफ्त शिक्षा के साथ–साथ सरकारी नौकरियों में अनुपातिक आरक्षण/प्रतिनिधित्व की मांग कर, 1894 में मैसूर के तत्कालीन राजा ने अपने प्रशासन में आरक्षण लागू कर 1902 में कोल्हापुर रियासत के शासक छत्रपति शाहूजी महाराज ने अपने प्रशासन में ''आरक्षण'' लागू कर तथा अन्त में भारत के संविधान के निर्माता डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने इस व्यवस्था को संविधान में स्थान देकर, सम्पूर्ण भारत में लागू कर दिया। इस व्यवस्था का वास्तविक जनक अंग्रेज ही है। मीणा समाज जनजाति वर्ग शामिल करने का अगुवा श्रद्धेय लक्ष्मीनारायण झरवाल को है।

मीणा समाज का सामाजिक संगठन अत्यन्त ही पुराना है। इस विषय पर समाज–शास्त्रियों ने अत्यन्त ही गंभीरता से विचार किया है। लेकिन हमारे लिए केवल यह जान लेना महत्त्वपूर्ण है कि यहाँ की जाति व्यवस्था अत्यन्त ही पुरानी है।

मीणा समाज में अनेक आगत जातियाँ, वर्गों और समाजों के बीच हिन्दू जाति अपने गुण–दोष को लिए हुए आज भी विराजमान है। वैदिक काल में जिस जाति ने इस भूमि के प्रति अपने अनुराग को व्यक्त किया उसी जाति ने आगे चलकर हिन्दू समाज की संज्ञा प्राप्त की। मीणा समाज में जाति नहीं जातियाँ और समाज नहीं अनेक समाज रहते हैं। इस देश में कोई भी व्यक्ति जातिवाद की बात उठाने वाला किसी न किसी जाति का निश्चय ही होगा। कोई भी व्यक्ति कितना भी तटस्थ रहकर भले ही विचार देना चाहें किन्तु

दूसरों की शंकाकुल दृष्टियों से बच पाना संभव नहीं होता। अर्थ का अनर्थ ऐसी स्थिति में सहज होता है। हो सकता है इस स्थिति में हम लोग भी निरापद नहीं हो सकते है, लेकिन यह हमारी कमजोरी नहीं है, बल्कि विषय की विवषता और सीमा है। इस सीमा के अन्तर्गत हमने संयम का पालन करने का प्रयत्न किया है।

मीणा समाज में जाति व्यवस्था अत्यन्त ही प्राचीन है। आर्य इस देश में बाहर से आये या वे यहीं के रहने वाले थे, यह प्रश्न आज भी विवादग्रस्त है। यहाँ पर उस विवाद से कोई मतलब नहीं है। इतिहासकारों के अनुसार लगभग 5000 वर्ष से पहले जब आर्यों का उदय सुसभ्य समाज के रूप में हुआ था। उस समय मीणा समाज में सैंकड़ों छोटी–छोटी जातियाँ थी। वास्तव में आर्य कोई जाति नहीं थी बल्कि महाभारत में उद्योग पर्व 60–63 को देखने से यह स्पष्ट होगा कि आर्यत्व धन या विद्या पर नहीं चरित्र पर निर्भर है। प्राचीन कथा के अनुसार सुर और असुर दोनों एक वंशीय माने जाते थे। इन्द्र, वरुण, अग्नि आदि को वेदों में असुर कहा गया है। ऐसा वर्णन महाभारत में भी मिलता है। ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य और शूद्र ये चार वर्ण भी ब्रह्मा से ही उत्पन्न माने जाते हैं। गीता में भगवान कृष्ण ने कहा है कि गुण और कर्म के अनुसार चतुर्मुखी व्यवस्था की सृष्टि मेरे द्वारा की गयी थी।

हिन्दू समाज में जाति व्यवस्था धर्म, राष्ट्र और वंष यह तीन समाज संघटक तत्त्व हैं। इन सबके मूल में धर्म की प्रतिष्ठा अनिवार्य है। इसी से भूमि–निष्ठा तथा राष्ट्र–निष्ठा का विकास होता है। मीणा समाज में पहले वर्ण–भेद था और बाद में जाति–भेद उठ खड़ा हुआ। समय और परिस्थिति के अनुसार वर्ग–संघर्ष का स्वरूप भी बदलता गया। यह दुर्भाग्य है कि प्राचीन काल से ही भारत में वर्ग–संघर्ष का स्वरूप भी बदलता गया। इसके परिणाम स्वरूप विदेश से आये हुए लोगों को यहाँ शासन करने का अवसर मिला है कभी भी सभी जातियाँ मिलकर एक साथ नहीं चली है। दूसरी विशेषता यह रही है कि नयी व्यवस्था बनी किन्तु पुरानी व्यवस्था भी चलती रही।

जाति–व्यवस्था में पहले मन्दिर का विशिष्ट स्थान था। मन्दिर केवल पूजा–स्थल नहीं था बल्कि उसके कई प्रयोग थे। एक जमाने में ये मन्दिर प्रशासन के केन्द्र थे। मन्दिर का पुजारी न्यायाधीश का काम करता था और उसका निर्णय उच्चतम न्यायालय की तरह प्रतिष्ठित था। मंदिरों में इष्टदेवता के पास तक पहुँचने का अधिकार प्रारम्भ में ब्राह्मणों तक सीमित था। द्वितीय एवं तृतीय श्रेणी के लोगों को मंदिर में जाने की इजाजत नहीं थी। तात्पर्य यह है कि मंदिर का जो सही प्रयोग था जैसे न्यायालय का वह समाप्त हो गया किन्तु मंदिर और छुआ–छूत की बीमारी आज भी कायम है। आज भी एक हरिजन अगर मंदिर में घुसता है तो इसका प्रायः विरोध होता है।

मीणा जनजाति की नारियों का 30 प्रतिशत आरक्षण सरकारी नौकरियों में है। राजस्थान सरकार के कई विभागों एवं केन्द्र सरकार के कई विभागों में बहुत सी मीणा जनजाति की महिलाएँ अलग–अलग पदों पर कार्यरत हैं। कुछ महिलाएँ प्रशासनिक अधिकारी भी हैं जिन्होंने अपनी योग्यता के अनुसार अपनी जाति एवं परिवार का नाम रोशन किया है।

महात्मा गाँधी ने इन दोनों विचारों में समन्वय स्थापित किया। वे एक तरफ अस्पृश्यता–निवारण के आंदोलन चलाते थे तो दूसरी और देश की स्वाधीनता के लिए भी। गाँधीजी रचनात्मक कार्यक्रमों को चलाते थे जिससे समाज–सुधार का कार्य चलता था। गाँधीजी को कुछ लोग परम्परावादी मानते थे और कुछ लोग क्रांतिकारी परन्तु उनके जीवन में दोनों का समन्वय था। वे दलितों और अछूतों के बड़े हिमायती थे। वे जाति को आधार नहीं बल्कि गुण मानते थे। गुण के आधार पर वर्ग में जाति की पहचान संभव नहीं है व्यक्ति विशेष की पहचान हो सकती है।

वास्तव में जातिवाद का इतिहास अत्यन्त ही प्राचीन है। भारतीय जाति–व्यवस्था के आधार–स्तंभ चार वर्ण थे जो कालान्तर में अनेक जाति एवं उपजातियों में बाँटे गये। इतिहास के क्रम मे भारत पर अनेक आक्रमण हुए। और भारत में जितनी जातीय संस्थाएँ बनी उतनी विश्व के किसी भी देश में

नहीं हैं। विभिन्न युगों में विभिन्न प्रकार की संस्थाएँ बनी। प्रत्येक युग में जाति व्यवस्था थी किन्तु उसका स्वरूप अलग–अलग युगों में परिस्थितियों के अनुसार बदलता रहा है। अन्त में आधुनिक सांस्कृतिक क्रियाओं का युग आया। जातिवाद का इतिहास एक विशाल कड़ाह है जो युगों से खौल रहा हैं। इसमें अनेक प्रकार की संस्थाएँ खौल रही है और गल–गल कर नये आकार ग्रहण कर रही है। इसमें से हम अंधा–धुंध कोई नहीं उठा सकते। वेदों से स्पृश्यता के विषय में कोई प्रकाश नहीं मिलता लेकिन उनमें मीणा–गुर्जर संघर्ष का उल्लेख अवश्य मिलता है। वेदों से पता चलता है कि क्षत्रिय राजा योद्धा भी थे और पुरोहित भी। प्राचीन काल के अन्तर्गत विवाह साधारण बात थी। शूद्र वंश को भी राजपद प्राप्त होता था। शूद्रों को मंत्रीपद मिलता था और उन्हें उच्च सामाजिक मर्यादा एवं वैभव भी प्राप्त होता था। हिन्दू समाज में वैश्य वर्ण के लोग किसी युग में द्विज माने जाते थे परन्तु आगे चलकर वे नीचे गिर गये। प्राचीन काल में चारों प्रजाति के लोग रहा करते थे। परमात्मा ने मानव सृष्टि न कि जातियों की रचना की। प्रारम्भ में सभी लोग ब्राह्मण थे। आगे चलकर अपने–अपने काम के अनुसार वे अनेक जातियों में बाँटे गये। जिन ब्राह्मणों को भोग–विलास प्रिय था, जिनकी प्रकृति हिंसक और ओजस्वी थी, और शरीर रक्त वर्ण का था वे सब क्षत्रिय कहलाए। जो ब्राह्मण पशु पालते थे, खेती करके अपना जीवन–यापन करते थे, जिनका रंग पीला था और जिन्होंने अपने कर्तव्य का पालन छोड़ दिया था वे वैश्य बने। जो, ब्राह्मण झूठ बोलते थे, लालची थे कटुता में लिप्त थे और अपवित्र तथा काले रंग के थे वे शूद्र हुए। इस प्रकार अपने–अपने कर्म के अनुसार ब्राह्मण लोग विभिन्न जातियों में बौंट गये।

इसी तरह से मीणा जनजाति के लोग भी राजस्थान एवं मध्यप्रदेश के कई जिलों में बँट गये। आज इस जनजाति का उद्देश्य आरक्षण के माध्यम से अपने परिवार का विकास करना और नारियों को समाज में उचित स्थान दिलाना है।

स्वतंत्रता–आंदोलन के बाद समाज सुधार प्रायः मृत हो गया और आज लगभग सभी जाति के लोग अपनी–अपनी राजनीति की रोटी सेंक रहे हैं। देश के लिए यह अत्यन्त दुःखद स्थिति है।

2. संस्कृति का ह्रास–

लोकसाहित्य में लोक जीवन की आत्मगाथा अंतर्निहित होती है। समाज की नजर में सामाज के लिए अर्थपूर्ण कहानियों और घटनाओं, यथार्थ या कल्पित का इसमे सुंदर समावेश होता है। इस दृष्टि से घटनाएं कथाएं उस समाज की अभिरुचि, उसके मूल्यों विश्वासो के संबंध में विश्वसनीय साक्ष्य प्रस्तुत है। तात्पर्य यह है कि लोकसाहित्य अतीत की कुंजी मात्र नहीं है न ही इसे मृत अवशेष तक सीमित माना सकता है अपितु इसमें वर्तमान की घटनाओं भावनाओं आदि का भी समुचित समावेश है। साथ ही समाज के पूंजीपतियों, धनाढ्यों, शोषकों और सामंतों के घोर अन्याय और उत्पीड़न को सहा है और इन पीड़ाओं को सहते हुए उनसे जूझते हुए अपने न्यायबोध को बनाये रखा यह जीवन के प्रति गहरे सकारात्मक विचार को बनाउ रखती है।

विद्वानों का एक बड़ा वर्ग लोकसाहित्य को ग्रामीणों की विरासत मानता है। उनके मतानुसार लोकसाहित्य अंधविश्वासों, रूढ़ियों निर्जीव परंपराओं और भूत प्रेतों का अवशेष मात्र है। जबकि वास्तविकता नहीं है। आज लोकसाहित्य का अध्ययन विश्लेषण किया जा रहा है जिससे अनेक सार्वभौमिक सत्यों का उद्घाटन हो रहा है मानव को विकास यात्रा को समझने में सहायता मिल रही है और लोकसाहित्य को समाजशास्त्र इतिहास पुरातत्व शास्त्र, दर्शनशास्त्र, भाषा विज्ञान आदि का अंग स्वीकार किया जा रहा है। अतः लोकसाहित्य व लोकसंस्कृति को संरक्षित करना आज के युग की मांग है।

उत्तर आधुनिकता का दबाव भी लगातार बढ़ता जा रहा है। अधिकांश अपनी सभ्यता संस्कृति भूलकर पाश्चात्य मूल्यों को अपनाने में गर्व महसूस कर रहे हैं। लोकसंस्कृतियां उपेक्षित हो रही हैं। अब लोकसाहित्य और लोक संस्कृति का संरक्षण और अध्ययन आज की महती आवश्यकता हो गयी है।

लोक का मतलब है जड़ से जुड़ना। जड़ से जुड़ेंगे तो जीवित रहेंगे अतः जड़ों की सुरक्षा पहले की जानी चाहिए।

सामाजिक महत्त्व–

किसी समाज में होने वाले सामाजिक कार्यों, व्यवहारों, परंपराओं, प्रचलित प्रथाओं, विश्वासों आदि का बिम्ब प्रतिबिम्ब हमें लोकसाहित्य में आसानी से प्राप्त हो जाता है। ''लोकगीत वस्तुतः किसी समाज विशेष के हृदय और मस्तिष्क की अभिव्यक्ति करते हैं।'' लोकगीतों की अभिव्यक्ति किसी एक व्यक्ति के भावों तक सीमित नहीं होती उसमें समाज के समस्त व्यक्तियों के हृदयगत भाव अभिव्यक्त होते हैं। लोकगीतों के निर्माता लोक भाव मिला देते हैं। कोई भी ऐसा सामाजिक अनुष्ठान नहीं जिसका स्वरूप लोक साहित्य में न हो। सास, बहू, नंनद, भौजाई, पति, पत्नी, देवरानी, जिठानी आदि के रागद्वेष, कौटुम्बिक जीवन का स्वरूप जन्म से लेकर मृत्य तक होने वाले सभी संस्कार लोकगीतों में समाहित है। साथ ही साथ बाल विवाह, विधवा विवाह, वृद्ध विवाह, अनमेल विवाह, बहु विवाह आदि का तथ्यपूर्ण वर्णन भी लोकसाहित्य में मिलता है।

पिछले कुछ वर्षों से राजस्थान के विभिन्न क्षेत्रों के बुद्धिजीवी सांस्कृतिक संकट पर विचार कर रहे हैं। यह अकारण भी नहीं क्योंकि अनेक संकटों के लगातार अस्तित्व में मौजूद रहने और उनके निरन्तर बढ़ते रहने से आज संस्कृति के संकट का अहसास सार्वजनिक हो गया है। आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षणिक और सांस्कृतिक और अन्य कई स्तरों पर तमाम संकटों की पूँजीभूत अभिव्यक्ति बड़े सांस्कृतिक संकट के रूप में सामने आयी है। संस्कृति का सवाल इस तरह ज्वलंत हो उठे तो इस प्राथमिक विवाद को गौण कर देना चाहिए कि मूल ढाँचे के बिना अधिरचना का सवाल नहीं उठाया जा सकता।

मतलब यह है कि, मूल ढाँचा अधिरचना को प्रभावित करता है तो अधिरचना भी मूल ढाँचे को लेकिन वर्तमान समय में विभिन्न विचारकों ने

संस्कृति के पतन पर अलग–अलग विचार दिये हैं। आज पश्चिमी सभ्यता के कारण विभिन्न प्रकार से सामाजिक बदलाव हो रहा है और लोग बड़ी तेजी के साथ बहुत से परिवर्तन भी कर रहे हैं, जिससे हमारे देश और क्षेत्र की संस्कृति का रूप बिगड़ रहा है।

नव धनाढ्य वर्ग ने सबसे अधिक संस्कृति का पतन किया। इनके विचार हमारी भारतीय संस्कृति से कहीं मेल नहीं खाते, अर्थात् यह वर्ग सत्य से बहुत दूर है तथा भोगी विलासी है।

ये कलावाद और आधुनिकता के विविध रूपों में आए संस्कृति की ओट में कोई अंतर नहीं पड़ता। इनके पास सांस्कृतिक विकास के अंतर्राष्ट्रीय तर्क और अधुनातन उपकरण हैं। इनका उद्देश्य उन तमाम आधुनिकताओं और परंपराओं को पैदा करना, जलाएं रखना है जो हमारी जातीय और राष्ट्रीय संस्कृति के स्वस्थ और सच्चे विकास को बाधित कर सकें। वैसे यह विचारों में खुलेपन पर जोर देता है परंतु स्वयं अपनी अभिव्यक्ति में वैचारिक एकाधिकार के ढीठ प्रदर्शन से बाज नहीं आता। तब इसकी निरंकुशता नौकरशाह सी होती है।

करौली क्षेत्र का मीणा समाज सामंती संस्कार से प्रभावित रहा। जिसने लोगों को सांस्कृतिक मानस को रचा है। उस मानस के विरूद्ध इनकी आधुनिकता का तेवर वामपंती लगता है, आकर्षित लगता है तो आश्चर्य नहीं। आश्चर्य इस बात में है कि जरुरत पड़ने पर इन विपरीत लगती धाराओं ने आपसी सम्बन्ध नजर आते हैं। हमारे क्षेत्र में सामंती और पूँजीवादी व्यवस्था ने विभिन्न प्रकार की सांस्कृतिक परम्पराओं को प्रभावित किया तथा सामंती व्यवस्था ने साम्प्रदायिकता के घिनौने रूप को जन्म दिया जिस कारण से मीणा जनजाति की जाति और राष्ट्रीय संस्कृति का स्वरूप प्रभावित हुआ। नये अनुसंधानों के आधार पर विभिन्न प्रकार की संस्कृति पनप रही है आधुनिकता के नाम पर समय के साथ–साथ हमारे प्राचीन मूल्य समाप्ति की ओर आ रहे है।

मेरा ख्याल है जो स्थिति है उसमें आने वाले दिनों में इस आधुनिकता का आयात और बढ़ेगा। पतनशील 'एड्स' के जीवाणु जो कहीं–कहीं या कम दिखाई पड़ते थे सर्वत्र फैल जाएंगे। जो यूरोप, अमेरिका से आने को रह गए हैं– फैलते चले जाएंगे। ये ताकतें तात्कालिकता के निरंतर इस्तेमाल की इतनी अभ्यस्त हो चुकी हैं कि कब, किसका, किस रूप में इस्तेमाल कर लेगी–कोई भरोसा नहीं। जिस सामाजिक संस्कृति विहीनता की मैं चर्चा कर रहा हूँ उसे नापसंद करने, विरोध जताने और शिष्ट समीक्षा करने वालों में इसका भद्रलोक भी शामिल है। ये ताकतें अपने संसाधनों को, अपने ही विरूद्ध इस्तेमाल करने की इजाजत भी देती है आखिर यही भद्रलोक तो संस्कृति का भाग्य–निर्माता है।

राष्ट्रवाद और भारतीयता की अवधारणा ने मीणा जनजाति के लोगों को प्रभावित किया आधुनिकता से परहेज करने वाली जाति, आज स्वयं मूल संस्कृति को पतन की ओर ले जा रही है हर तरह की आधुनिकता से जुड़ना चाहते है शिक्षित और महानगरों में रहने वाले मीणा जनजाति के परिवार कई प्रकार के तर्क करने की क्षमता रखते हैं जैसे नस्लवाद, वर्णवाद, जातिवाद एवं सम्प्रदायवाद।

3. सामाजिक जीवन में बढ़ते हुए फैशन–

करौली क्षेत्र में फैशन का भूत मीणा जनजातियों की ललनाओं में इस कदर बढ़ रहा है कि बाजारों एवं सार्वजनिक स्थलों पर कमर का भाग प्रायः नंगा तथा शरीर के विभिन्न भाग पारदर्शी नाइलोन से बने वस्त्रों को पहनकर बेफिक्र डोलती फिरती नजर आती हैं। ये होंठो पर लिपस्टिक और मुख पर क्रीम तथा पाउडर लपेटकर बाजारों में ही नहीं नाइट क्लबों में भी अर्द्धनग्न अवस्था में सेवागित्व करना अपनी गरिमामय जीवन–शैली समझती हैं। नारियों में दुर्बल होने की अभिवृत्ति विकसित होती जा रही है ताकि वह दर्शक का मन सहज ही अपनी ओर आकर्षित करने में सफल हो सके। जापान में लड़कियों को दुर्बलता के आधार पर सुकुमारता के घनिष्ठ संबंधों से दूर किया जा रहा

है, जबकि मीणा जनजाति लड़कियों की अभिरुचि में दिन–प्रतिदिन वृद्धि होती हो रही है। फैशन शो जैसे कार्यक्रमों द्वारा दुर्बल लड़कियों के लिए पहनने

के वस्त्र निर्मित करना और प्रदर्शन भी आधुनिक भारतीय नवयुवतियों को आकर्षित करने में सफल होने से कालांतर में व्यभिचार में लिप्त होने की संभावनाएँ तीव्र हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में भारतीय सभ्यता स्वयं अपना मुख छिपा लेने के अतिरिक्त कर ही क्या सकती है।

4. मीणा जनजाति के लोकगीतों के आधुनीकीकरण की समस्या–

लोकसाहित्य में लोक के प्रति जागरुकता पाई जाती है। उसमें राष्ट्र के प्रति संवेदना होती है। देश और समाज के प्रति जागरुकता ने ही लोकसाहित्य को जीवन प्रदान किया है। प्रत्येक पग पर राष्ट्रीय चेतना दिखाई देने के कारण ही उसे अमरता मिली है। यह देश विशाल है, इसमें अनेक लोक भाषायें हैं, सभी लोक भाषाओं के पास अपनी लोक भाषा निधि लोक साहित्य के रूप में सुरक्षित है फिर भी इसमें भाषाओं की अनेकता होने पर भी एक महान राष्ट्रीय एकता दिखाई देती है। जो हमारी अतीत कालीन चेतना का प्रतीक है। डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल का अभिमत है भले ही आकाश के खण्ड हो सकें, परन्तु भारतीय स्त्री का हृदय जिन आदर्शों एवं भावनाओं से प्रतिपादित है उनका बँटवारा नहीं हो सकता। भारतीय स्त्री ही अधिकांश लोकगीतों की कवयित्री ऋषिका है। उस मंगल्यानी गवारिन के सुरीले कंठ की अमृत–ध्वनि गीतों के रूप में मूर्त है। इस मंगलमयी गीतकारिणी की भाषा के अनेक रूप हैं। किन्तु उनमें छिपे हुए अर्थों का रूप एक है।

लोक साहित्य में लोक चेतना होती है। राष्ट्र की अभिव्यक्ति होती है नैतिक और भौतिक प्रवृत्तियों की झलक होती है। लोक साहित्य का व्यूह कोरी कल्पना के रजत बालुका पर नहीं टिका है, वास्तविकता के मजबूत धरातल पर अवलम्बित है। लोक गीतकार लोक की अनुभूति संवेदनशील हृदय से करता है। वह अपने देश की माटी से जुड़ा होता है और उसके साहित्य में उस माटी की सुगन्ध मिली होती है। 'आल्हा' जाति विशेष की चीज है, जाति विशेष

द्वारा ही गेय है। लेकिन राष्ट्रीय संदर्भ में देखने पर वह राष्ट्रीय चेतना से परिपूर्ण लगता। पृथ्वीराज रासों की रचना का समय योद्धाओं का समय था, युद्धों का समय था, शौर्य दिखाने का समय था। इनसे राष्ट्र की वीर–शक्ति का ज्ञान होता है। तत्कालीन राष्ट्रीय दर्षन की झलक मिलती है। दूसरी एक बात और उस समय छोटे–छोटे राज्य थे। लोक की दृष्टि में हर राज्य एक देश था और भारत का दूसरा राज्य था। लोकगीतों में यह गीत हमारें ध्यान को आकृष्ट करता है।

मीणा जनजाति के नारी विषयक लोगगीतों को आधुनिकीकरण करने में अनेक समस्याओं का सामना है ग्रामीण वृद्धजनों से वार्तालाप पर यह देखा गया कि अब लोकगीत और आज के लोकगीत बहुत अन्तर है प्राचीन समय में धार्मिक कथाओं और सामाजिक विषय पर ही लोकगीतों का प्रचलन था पर आज की स्थिति में शिक्षा, दहेज, बालविवाह, कन्या हत्या, रोजगारी आदि ऐसे विषय जोड़ दिये गये जो वर्तमान समय में घटित है मीणा समाज इससे रू–ब–रू है मीणाओं में अभी इतनी जाग्रति, चेतना नहीं आई है कि इन लोकगीतों को आधुनिक रूप दिया जा सकें। क्योकि मीणों में शिष्टता, भाईचारी, प्रेम, ममता, अनुशासन, धार्मिकता अभी भी इनके रीति–रीवाज, परम्पराओं में सजीव चित्रण देखने को मिलता है।

करौली क्षेत्र की महिला अब शिक्षा की ओर अग्रसर है वह रीति–रिवाज को भूलती नजर आती है जब पूर्व मे मांगलिक कार्यक्रम व उत्सवों पर जो लोकगीत गाये जाते थे वो उसी कार्यक्रम से संबंधित होते थे। अन्य से नहीं पर आज कोई भी कार्यक्रम हो समाज के लोग डी.जे. बैण्ड बाजा, टेपरिकार्डर का उपयोग करते हैं।

क्योंकि मीणा समाज के द्वारा गाये जाने वाले गीतों का कोई इतिहास अतीत में नहीं है और यदि होगा भी तो वो अभी सामने नहीं आया पूर्व में अशिक्षित होने के कारण, इन गीतों को वृद्धजन लिख नहीं पायें और उनका अस्तित्व धीरे–धीरे कम हो गया। यह वैज्ञानिक तर्क है कि जब किसी वस्तु का

प्रयोग नहीं होता है तो वह स्वतः ही समाप्त हो जाती है। यह सत्य है कि, आज मीणा लोकगीतों में नारी की भूमिका अब कम होती जा रही है। समाज सुधारक व गाँव के पंच–पटेलों के द्वारा भी कुछ लोकगीतों पर अंकुश लगा दिया गया है। लोकगीतों को आधुनिकीकरण करने की मुख्य कारण इस प्रकार है कि–

स्थानीय भाषा–

स्थानीय भाषा का प्रयोग जो कि कुछ क्षेत्र में ही सिमट के रह जाती है उसे राज्यस्तरीय, राष्ट्रीय दर्जा प्राप्ति में समय लग रहा है एवं सभी लोकगीतों में देशज, ग्रामीण शब्दों का प्रयोग किया गया है जो कि आस–पास के लोगों के ही समझ में आता है दूसरों के समझ में न आने के कारण भी आधुनिकता नहीं आ पाई।

रीति–रिवाज–

राजस्थान मे रीति–रिवाज सभी समाजों के एक जैसे हैं पर क्षेत्रानुसार सभी समाजों में अलग–अलग रीति–रिवाज हैं। मीणा जनजाति की नारी का रहन–सहन, उसकी परम्परा अन्य समाज से अलग है मीणों की संख्या जयपुर, दौसा, सवाई–माधोपुर, करौली, अलवर जिलों में ज्यादा है तो यहाँ भी मीणा जनजाति की नारी के अलग–अलग रीति–रिवाज, अलग–अलग संगीत सुनने को मिलते हैं इनको एक करना अपने आप में एक चुनौती है। पर्वों, मेलों, त्यौहारों के अनुसार सभी स्थानों पर अलग–अलग रीति होने से भी आधुनिकीकरण करने में समस्या है।

साक्षरता–आज राजस्थान राज्य की स्थिति नारियों की साक्षरता के बारे खास अच्छी नहीं है। 2011 की जनगणना के अनुसार कुल साक्षरता 61.1% **जिसका देश में 26वां स्थान** है। महिला साक्षरता 52.1% है जबकि करौली जिला में नारियों की साक्षरता 48.6% एवं पुरुष 81.4% है। इस प्रकार मीणा जाति की महिलाओं का राजस्थान में 16वां स्थान हैं। मानक आंकड़ों से महिलाएँ अब साक्षर हो रही हैं वो अब लोकगीतों के साथ हॉलीवुड, बॉलीवुड, इंग्लिश, हिन्दी,

नगमें, गजलों के तरानों को सुनना पसंद करती हैं, उनका उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ है। अपनी संस्कृति के साथ बाहरी संस्कृति का ज्ञान का अहसास करती है तो आज की भौतिक वादी दुनिया ने सभी को अपनी ओर आकर्षित किया है इसका असर मीणा जनजाति की नारी पर भी देखने को मिलता है क्योंकि वो भी एक सामाजिक प्राणी है और जो सर्व समाज में घटित हो रहा है उसका असर तो होना ही है।

मनोरंजन के साधन–

आज हर किसी के पास मनोरंजन के साधन आसानी से मिल जाते हैं, जिसमें कि गीत–संगीत के संग्रहण की क्षमता असीमित है। तकनीक के कारण ये कुछ चंद समय में हो जाता है पूर्व में ऐसा नहीं था। मीणा लोग स्वयं स्वरचित गीत बनाते थे और गाते थे इसमें काफी समय लगता था, पर आज ऐसा नहीं है। जो लोकगीत पूर्व में लोगों द्वारा, चौपालों, थाँई, चोक आदि स्थानों पर गाये जाते थे। वो सब यत्र–तत्र देखने को मिल जाते हैं।

मीणा जनजाति के **गीतों के अनेक प्रकार** हैं सभी के अलग–अलग बोल, लय, ताल, कथा, प्रसंग, भाषा आपस में किसी से मिलती नहीं है और इन लोकगीतों को गाने के लिए एक जन–समूह की आवश्यकता होती है। तब इन गीतों को गाया जाता है आज स्थिति में सभी अपने कार्य की व्यस्तता की वजह से व राष्ट्रीय जागृति की चेतना भी समाज में अब आयी है तो इन मीणा गीतों को मानक स्तर पर दर्जा दिलाने के लिए और समय की जरुरत है।

मीणा जनजाति की नारी ने हर क्षेत्र में अपना परचम लहराया है। ये लोकगीतों के अलावा महिला हर क्षेत्र मे कंधे से कंधा मिलाकर चल रही हैं यह महिला पूर्व में खेती–बाड़ी का कार्य भी करती थी अपने परिवार का भरण–पोषण की जिम्मेदारी भी नारियों के जिम्मे थी और इन्होंने इसे बखूबी निभाया इन कामों की व्यस्तता के रहते हुए मीणा जनजाति की नारी एक घर, परिवार में ही सीमित रह गई, तो स्वाभाविक है कि ये अपने गीतों का आधुनिकीकरण नहीं कर पायी।

सीमित क्षेत्र–

मीणा जनजाति की नारी के लोकगीतों का एक सीमित क्षेत्र होने के कारण भी आधुनिकीकरण करने की समस्या है। प्रारंभ से ही मीणा जनजाति की नारी व पुरुष लोकगीतों की शौकीन रही है और आज भी यह जनजाति लोकगीतों में अपनी संस्कृति, रिति–रिवाजों का सजीव चित्रण सर्व समाज को करवाती है जिसने की अपने लोकगीतों से सर्व समाज को ज्ञान वर्धक जानकारी दी है जो कि अतुलनीय सामाजिक चेतना का स्रोत है।

परिशिष्ट

1. राजस्थानी लोकगीतकारों का संक्षिप्त परिचय।

2. परम्परागत मांगलिक कार्यक्रमों के लोकगीत।

3. आज के युग के लोकगीत।

4. वर्तमान में लोकगीत का बदलता स्वरूप।

5. संदर्भ ग्रन्थ सूची।

6 चित्र।

मीणा वाटी व मीणा ढांचा गीत कलाकार –

1. प्रहलाद मीणा, कालवान, सिकराय, दौसा
2. कमलेश मीणा, कालवान, सिकराय, दौसा
3. विष्णु मीणा, पातलवाश, लालसोट, दौसा
4. राजू मीणा, लालसोट
5. रामू मास्टर, भराव वैराडा, दौसा
6. विकास मीणा, झारेडा, हिण्डौन सिटी, करौली
7. जैयन मीणा, जैतपुर, करौली
8. रोशन मीणा, सिकराय, दौसा

मीणा पद गायक कलाकार –

1. धवलेराम मीणा, लालारामपुरा, हिण्डौन सिटी, करौली
2. झंडू मीणा, शेखपुरा, टोड़ाभीम, करौली
3. डॉ. महेश मीणा, सलेमपुर, करौली
4. जगन मीणा, डेंडा–बसेड़ी, करौली
5. विश्राम सिंह मीणा, डोरोली, करौली

सुड्डा – महिला कलाकार

1. लाली मीणा, सपोटरा, करौली
2. रुक्मणी, दानालपुर, करौली
3. पुष्पा मीणा, दौसा

परम्परागत मांगलिक कार्यक्रमों के लोकगीत–

1. तीर्थ यात्रा –

गंगाजी के घाट पे एक फूल गुलाबी हो राम।
फूल गुलाबी मौज को याको का बणेगो हो राम।
मेरी याको का बणेगो हो राम।
तू तो रे सीता बाबड़ी याकी माळा बनेगी हो राम।
माळा बणेगी मौज की सीधी हर पे चढ़ेगी हो राम।

मेरी सीधी हर पे चढ़ेगी हो राम।
कौन करेगो हरि की आरती कौन संख बजायेगो हो राम।
मेरी कौण संख बजायेगो हो राम।
जेठ करेगो हरि की आरती देवर संख बजायेगो हो राम।
मेरो देवर संख बजायेगो हो राम।

2 गंगाजी के घाट पे हर ने चक्की लगाई हो राम।
मेरी हर ने चक्की लगाई हो राम।
चक्की लगाई मौज की सासू रात्यों जिगावें हो राम।
सासू कैसी ढेड़नी डंड़ा देर जिगावे हो राम।
ससुर मेरो लाडलो बेटा खेर जिगावे हो राम।
देवर भाभी खेर जिगावे हो राम।
सासू की बंड़ज्यों धेहळी दिन उठ दुनियाँ खूदें हो राम।
ससुर बड़ज्यों देवता दिन उठ दुनियाँ पूजे हो राम।
देवर की बड़ज्यो गेंदडी दुनियाँ क्रिकेट खेंले हो राम।

3 गंगाजी के घाट पे एक राजा बसत हो राम।
राजा बसत मौजया बाकी तिरियाँ खेरही मेरा परण निभाले राम।
बहुत दिन रहते होंगे गेभी टोटो ना जाबे हो राम।
खाबे कू खफरा नहीं रहबे कू छपरा नहीं हो राम।
सुणले पति लाडले सुद मायके की लेले हो राम।

2. हल चलाते समय–

गंगाजी के घाट पे हर ने बाग लगायो हो राम।
बाग लगायो मौज को नींबू नारंगी लगिंगे हो राम।
मेरी नींबू नांरगी लगिंगे हो राम।
नींबू तो लगिंगे ढेढ़सौ शत नारंगी लगी हो राम।
मेरी शत नारंगी लगी हो राम।
नींबू तो चौखें मेरो साहबों, नारंगी चौंखे वीरना हो राम।

नारंगी तो चोखे वीरना हो राम।
ऐसो खेत ज्योत ज्यो मेरे बाबुल जेमें
घाटो कछु न हो मेरे राम।

3. चक्की/चाकी पीसते हुए–

धोळी मक्का को पीसणों सासू रात्यों जिगावें हो राम।
उड़– उड़जा रे काळे कागला म्हारा पीयर जाज्यो हो राम।
खिज्यों म्हारे बाप से चक्की लगवा दे हो राम।
भैया मिले तो मत खिज्यों मेरी सोच–फ़िकर करेगो हो राम।
भाभी मिले तो मत खिज्यों दें–दें ताली हँसेगी हो राम।
बाप मिले तो खीज्यों भैया लेवे खिदादें हो राम।

4. लाँगुरिया–

1. पलटो–पीतल को मँगवा दे टनाटन बाजे लाँगुरिया।
वहीं सास को पीसणों वहीं ससुर की खाट।
बितण आयो पीसणो सरकत आयी खाट...
पलटो–पीतल को मंगवाँ दे........

2. मैं कैसे करुँगी डस्टोन लाँगुरिया टोटे में कन्हैया पैदा हो गयो।
मेरो ससुर गयो देवी ढोकण कूँ, मेरी सास करेगी बदनाम
लाँगुरिया टोटे में कन्हैया पैदा हो गयो रे।

5. भात–

1. चंदा की शोभा चाँदनी, पोळी की शोभा भैया रे।
मेरी सासुल पूछे बार–बार क्या लाये तेरे भैया रे।
जो कुछ लाये हो सो ले लेना, गरीबो मेरो भैया रे।
चंदा की शोभा चाँदनी ....

2. म्हारी सासूजी बोले खट्टा बोल री फिटजाय हेड़ो म्हारो री।
म्हारी सूास का ऊँचा–नीचा महल ज्ये चिढ देखूँ भतैया रे।
जाने कब आबगो जावन जायो रे।

देवर तो गाली काड रयो रे।
म्हारी जिठानी बोले खट्टा बोल री फिट जाय हेड़ो म्हारो रे।
जाने कब आयगो जावन जायो रे।

3. दूर गाँव से आये रे भतैया
बबरीन बीच पसीना रे, रंग बरसे।
बीजणी सूं बाळ करूँ रे, मेरे भैया
सर्ररे रे सूके पसीना रे।
ऐसो–ऐसो भात भरूँ री मेरी बहना
नथली बीच नगीना रे,रंग बरसे।
दूर गाँव से ....

6. **होली**–

म्हारी होली के आसर–पासर जौ रे चना
यो तो बड़ गये लम्बे–लम्बे केश
वीरा के जाज्यो होली पावड़िया रे।
मेरो वीरा मिलत वेगली बुलावत,
होली लगत डण्डा गड़त बुलाबे रे।
द होली के परकम्मा, तेरे जाते ही छोरा हो जायगो।
चना कटे लम्बी पाटी में, भरला रे मोटर गाड़ी में।
चना में आ गयी घेघरिया, रमझोल गढ़ा दे देवरिया।
पीलू काट्यों जड़ में से, का खायगी छोरी लफर में से।

7. **सावन के गीत**–

नींबुआ की डाल पे अकेली कैसे झूलूँगी रे।
मेरो वीरा लाओ चूनड़ी अकेली कैसे ओढ़ूँगी रे।
ओढ़ूँगी तो आढ़ूँगी नहीं मेरी भायेली को दे दूँगी रे।
नींबुआ की डाल..........
सावन का महिना में म्हारी लातड़ी झोटी।

कहाँ सू लाऊ रे सासू का जाया, तोकू चुपड़ी रोटी।

8. कुँआ पूजन–

म्हारी सासू तो लिपय हरियल लिपणों रे।
म्हारो नाई को बाँधे बंधन खाण्ड अंशु की पौड़ी पे।
म्हारी जिठानी तो लिपय हरियल लिपणों रे।
म्हारो नाई को बाँधे बंधन खाण्ड दर्श की पौड़ी पे।

9.जन्मदिन पर–

आज जनम दन दरस लाला को हुयो रे–2
आज जनम दन राकेस रा लाल को हुयो रे–2
दादी भी आई वांको बाबा भी आयो रे।
तो बाँटो मिठाई दोंना भर–भर के।
काकी भी आई वांको काको भी आयो रे।
तो बाँटो मिठाई दोंना भर–भर के।

10. सगाई,बरना–

(1.) हुई रे लगन की टेम, बन्नो म्हारो महलन ऊपर चढ़गों रे।
दादा बाको हेला पाड़े नीचे आजा बरना रे।
आयडियो बतादे रे पापा कैसी बरनी हेरी रे।
गोरी–भूरी लम्बी पूरी पढ़ी लिखी हेरी रे।

(2.) दादा जीरो प्यारो वरना, नथ पे मोर नचावे रे।
नथ टूट्यो मोती बिखरे, बरना बैठ पुआवेरे।
अगन बाग में छगन बाग मे, नीम तड़य घर म्हारों रे।
सीधो आजाज्यो बरना वहाँ ही मिलन को मोको रे।

(3.) नींबू नीचे मत खेले बरना थ्यारो खट्टो मन हो जायेगो।
थारा पापा तू ही लाड्लो नारंगी मंगवाले रे
नारंगी की कली खिले जैसे
थ्यारो मन खिल जायगो रे.....

(4.) नौकरी से आयो बरना खूँटी थैला टांग्यो रे,
माता से यूँ पूंछै खाँ गई है फूलजड़ी रे,
बोली में को समझी कूण सूँ खेवे फूलजड़ी रे,
आज–काल की पड़ी–लिखी जेसू खेबे फूलजड़ी रे,
अब समझी म्हारा लाल पाळी भरबे,गई थारी फूलजड़ी रे ।

(2.) **बरनी–**

(1.) मेरे पापा ने मोल खरीद्यो बरना,
मेरी माय ने लोट भरे बरना,
कागज में लिखदयो बरना,
मेरो जीवन साथी तू ही बरना,
तेरी नौकरी ल्यार मोय दिज्यो बरना,

(2.) आजा बरनी बड़ के नीचे,
गोल कांकडा खेलगें,
वहीं तेरी माय वहीं तेरो बाबो,
वहीं बन्नाय बुला लिंगे।

3. घोड़ी–

(1.) चोक में मत नाचे म्हारी लीली थारे नजर लग जायेगी रे,
थारो काको गयो बरात नजर कौन झड़वाअगो रे,
चोक में मत ....

(2.) मालिन बेलड़ो हटा ले यहाँ म्हारी घोड़ी नाचेगी रे,
तेरी मैया न बुलाले वा तमाशा देखेगी,
तेरी बुआ न बुलाले वा तमाशा देखेगी,
मालिन बेलड़ो ....

(3.) जयपुर शहर के बाजार में एक घोड़ी बिकती जाये,
मामा जी ल्याओ घोड़ी मोल, घोड़ी बड़ी सिंगरी जाये,

जे प राईवर बैठो जाय, बा कंधे पे बंदूक रखकर भड़का करतो जाये।

11. बच्चे के जन्म लेने पर–

म्हारो ससुर लगावे गहरो बाग रे,
म्हारी सासूजी सिंचे झेड़–चरी भर–भर के,
खाले खाले रे बहुल खट्टा बेर री,
चलय रे मन बेरन पे री, म्हारो जेठ लगावे गहरो बाग रे,
म्हारी जिठानी सींचे झेड़–चरी भर–भर के,

सुड्डा –

ओ... सेवा करल्य ढोला की... (मेडिया द्वारा)
हाँ ओ ढोला की... (सह–गायक)
भायेली जीवन सुधिर जायगो, ओ थारा बालिकपण को पाप,
सट्टाटो कट जायगो... ओ सेवा करल्य ढोला की भयकुंट
मिल्यगो नारी को... (मेडिया)
ओ ऐसे गाळी मत काड़ो...
ओ हंवय रे ... गाळी मत काड़ो (सह–गायक)
बेलंरवणी बलम हजारी को।

– ''सुड्डा'' – लादू राम मीणा

(ii) सुड्डा –

दसवीं में दो बर फेल बलम हांके
जयपुर में रिक्शो रे... ओ लोहड़ी दोराणी...
कंधा पे साड़ी राख्य रे, हल्ला गुल्ला, बंद करो
न्यां पब्लिक बैठी भारी रे, ओ यां पब्लिक बैठी भारी रे...
सुड्डा गावे कू खड़ी है, पुष्पा बाई रे...
इन्दर राजा मतवरस्य् थोडो सो धीरज धरल्य रे
ओ सुड्डा गावा द, वर्षा कू कम करल्य रे।

–''सुढढ़ा'' – पुष्पा वाई

(iii) सुड्डा–

सब दिन कंदी खोदूं में तो... रात्यों डोलू नंदी में।
ऐ काई की छाछ करूँ...सब दूध खिंदावे मंडी में।
चय्टी चाली सासरे, ढाई मण काजल घाल्य।
ओरे हाथी लियो काख में, ओर ऊँट लियो लट्काय।
अरे म छाछ करूँ...तो रोटी मोड़ी होवे रे।
सीधो सो भरतार मेरो, सब दिन राबड़ी खावे रे।
घर क आगय पीपड़ी, सब दिन फड़ फड़ होय।
अरे मियां ने पिटी बिवनी, अल्हा ही अल्हा होय।
सब दिन कंडी खोदू में तो

–''सुढढा'' लाली मीणा, गोठणा

(iv) सुड्डा–

गाड़ी हिरो होंडा लाज्यो रे, म चाली ड्यूटी पे।
लेवा तू ही आज्यो रे, तू ही आज्यो रे...
सासू का... तू ही आज्यो रे, हां... दोर जिठाणी जायंगी हार कू।
सांधी बढ़ो करेंगो, ओ मोकू होवय मोड़ो,
देवरिया छाछ करेंगो, खावा श्योट़, सुपारी लाज्यो रे।
मैं चाली ड्यूटी पे, लेवा तू ही आज्यो रे।

–''सुड्डा'' –झण्डू मीणा

अरे बीन्या पिढ़्या क देदी मैया, लहंगो फंसगो झाड़न में।
ओ... मेरे चाचा की फोरो, डोलय हारन में।।
क्यों कहते हो मुझको अबला, मै हूँ पापा की मुस्कान
मैं हूँ तो ये जग है रे, और मै हूँ मम्मी की जान
मैं हूँ मैं मधुर संगीत, इस घर समाज की शान
मैं नवजीवन का स्रोत हूँ, करती हूँ धूप छांव का पान
मैं सावन की पहली बूँद, मैं प्रकृति का वरदान

और मैं बेटी हूँ वही बेटी, सारे कुल की शान
मत मरवाव्य लाली कू, तू पीछे पछतावेगा
ऐ रे कन्या नहीं रही, तो तू बहू कहाँ से लावेगो।
हो सज्जनों ये भारत की नारी, इनको जाने दुनियाँ सारी
ये हैं पग–पग पर हितकारी, ये है आंगन की फुलवारी – 2
इनका देव करय गुणगान, मैं बेटी हूँ बही बेटी हूँ
सारे कुल की शान..., बेटा–बेटी एक समाना
सुणल्यो सगल्या भाई रे, यामें मत पाड़ो फरक
लोग लुगाई रे, अरे होते बेटा–बेटी एक
उदाहरण देता हूँ अनेक – 2
लगा दियो ओलम्पिक में बिंदु, चाँदी जीती अबकय सिंधु
बेटी साक्षी है अनमोल, बोल दियो कांस्य पदक को बोल
अरे... इंदिरा गांधी कल्पना, या रानी लक्ष्मी बाई
ओर सुनिता भी छः महिना, अंबर में रह आयी
अरे पढी–लिखी लड़की होती है, लक्ष्मी की निशानी रे...
ऐ रे आंगन आगल धरय, पुरुष जनम जिंदगानी रे।
अरे बेटी को पढाना पहलें, पीछे करज्यो कन्यादान...
ऐ रे लड़की हो तो पढी–लिखी,कम से कम कक्षा बारह की
शादी जब कर ज्यो हो जावे, साल अठारह की।

''मीणा गीत'' रामू मीणा, मदनलालजी, डी.के. सत्तावन, भैराव बैरांडा

पद–

दानवीर करण का एक पद–

धौकों होगो महलन में, गजब कुंती कुँवारी के
भरती जुवानी में दाग लगागो विचारी कै।

दानवीर करण के बारे में बताया गया है

'मत नाट्य रे भरतार बलम, वेदर्दी फेरा खा वाड़ा
ओ म्हारा बाबुल की पोड़ी पे, पांव पूजा वाड़ा।

हरदौल भक्त के पद में बहिन की पुकार –

ठाड़ी रोवे मरघट में बेगों सो, भैया तू आ जाज्यो...
तेरी बहना कू थोड़ो सो धीर, बन्दा जाज्यो।

कंस जन्म वाले पद में अग्रसेन की रानी (पद्मावत) और राक्षस के बीच संवाद–

हूयो जब पदमावत कू होष... भारी बदला फटे लगा रही
खुद के तन–मन को दोस, बता रे छलिया पापी नीच
भारी रही पछताय शर्म से, गई आँखन कू मींच...
दुष्ट तेने मोसू छल कियो, में एक पति की नार
आज मेरे काळो लगा दियो, बिलक कर रही अपने मन में
नहीं मानी पति की बात, लिखी कांई मेरे करमन मे
दुष्ट तोये ऐसो दूंगी श्राप, बाळ कर तोय भस्म क्रोध से
थर थर कांपे हाथ...चाहें लाखों करो उपाय
लगे नहीं सोने में काई।

कृष्ण लीला वाले पद में–

जन्म लियो, गोकुल में, गाय चरावेगो...
मन सुख भायेला के, लारे रास रचावेगो।

मीणा जनजाति की नारी के गीत –

एक लड़की अपनी माँ से कहती है–

ओ मैया ओ... ओरी मैया ओ करियो सगाई
जगरोटी में।
अरे ड़ांगन में माय खान कूं जावय,
काम नहीं कछु भेड चरावे।
सुन माय हो अभी उमर, याकी छोटी हो...

अरे सास पीवय सुल्फी, ससुर पीवय बीडी
न कमावै न धमावै बलम, बैरी जुल्फी
ओ सुन माय ओ चूल्हे पें, ना बनाऊं मैं रोटी रे....
जिठानी खावय जर्दा, जेठ खावय गुटका
मरवे को नाय इन्हें, कछु खटका
ओ सुन माय ओ, **पढे–लिखे जगरोटी में।**

मीणावाटी गीत –

छोरी तेरी मोहब्बत को ईजहार, हुयो पपलाज माता क...
घटवासन माता क...मिलबा न आवे तो छोरा
जरूरी हे के प्यार करबो... मोहब्बत करबो...
पप्पी जब दूँगी पढवाड़ा, बचन भर निमड़ी तड़य..
पीपड़ी तड़य...रश्मि वेटर दिल सू लागो
दिल बैचेन करगी..अरे दे विश्वास गिंदोड़ी
दिल क्यों छोडगी रो तो...रोडू मेरी आधी रात निकड़गी
याई हेके टेम आबा की...फोटू काळी को मत खींच
रील खराब हो जायेगी...आई लव यू को पेड़ महारानी कॉलेज
के आगय...करौली कॉलेज के आगय।
खा आई लव यू को सोगन, करी मुमताज न माटी...
पतली कणियाँ मे कॉलेज पढ़, मेहमान जीजी का...
ओ भाया रे भाभी का...छोरी तेरो देजा लाल रुमाल
जनम तक याद राखूंगो...प्यार की निशानी राखूंगो...
धीरे–धीरे मैं चाली भाऐला, दिवाना तेरो ख्याल रखज्यो,
ध्यान रखज्यो...

फैशन/आधुनिक गीत–

छोरी ले कुणसूं मिलवा चाली, लगा स्टॉल मुहँडा के,
चुन्नी मुहँडा के...

ओ छोरी कुणको प्यार बुलावय, दोड़ी जावे गार्डन में...
हंवय रे पारिक में...
ओ छोरी झालो देतो रहगो, तोय प्रकाश भायेलो...
सोनू भायेलो...
सांच्चाई गज़ब जमय भायेली, पीळा सूट क मायां...
जीन्स टी–शर्ट क मायां...
ओ छोरी फैशन कर मत डोलय, नजर भर बैठ ज्याय कोड़े...
पाछय माथां मूंड न फोड़े...
मेरे पाछै मत रोज्यो पढ़बाणा, लगा सपील् क माथो...
ऐ हे दिवार क माथो...
तोने हर मुश्किल में यार मिलूंगी, हर मोड़ प ऊंबी...
यांईं तोमें खूबी...
छोरा तोनय पल–पल याद करूँगी, रोडू क घर रात दिन में...
और आवै हैं मनवे।
तोसूं मजबूरी में यार, निभायो नहीं प्यार को वादो
मोहब्बत को वादो...
तोनय अब भी चाहूं दिवाना, खुद का जीव सूं ज्यादा...
आप सूं ज्यादा...
दुश्मन सारी दुनिया हैगी, दिवाना म्हारा प्यार के मायां...
मोहब्बत के मायां...
रोडू ले चाल्यो ले चाल्यां दिवाना दिल, टूटतो रहगो...
झाँकतो रहगो...
दिल कू कैसे धीर बंधाऊं रे, अकेलो रहगो दोस्ती मेरो...
अंशु भायेलो मेरो...
कुणकी लागी रे नजर विछटगो दोस्ती मेरो...भायेलो मेरो...
रोटी खाऊं जद आँसू टपकय, दिवानी आवे याद पहला की...

म्हारी प्यार मोहब्बत की ...तेरी मेरी लव स्टोरी राकेश
लिखी भगवान न आधी, ऐरे रोपी छ ब्याधि...
मनीषा तू तो फैशन की शोकीन, सदाई पटवान कू डोलय...
ओ यालय महावीर में डोलय...ओ सोनू मेरा भाई के भहम
आउट साइट मे हो जा...,ओ रे बगली में होजा...
तू तो म्हारी हर धड़कन में बसगी, नाटे मत लाडली मोसू
ओ धीरय धीरय अरज करूं तोसू...,छोरी ले आशिक वण घूमै छ
दिवाना तेरो देख नखरो...फैशन तगड़ो...
ओरी छोरी फैशन करे तो दिल खोल
छुपाबे मत बात मन की थारा दिल की...
सांच्चाई कांई जची पढ़वाणी थारे।
किस लेगी होठ क माई...गालन के माणै...
जस्सु तुई दे मेरो साथ डियो तो
मोय छोडगो रोतो...कंधा पे सूं लूगडी माथा पे धरदी
मनीषा सरमागी दौसा लंम्बी लाज करली
काळा चश्मा कु लगार सुहानी कुणका इंतजार में खड़ी
मेन बाजार में खड़ी...हे सपना मत हांके स्कूटी,
फुड़ायगी रोड पे गोड़ा।
प्रीति टांक बगल में बैग, चली कॉलेज के मायां।
म्हारो पेंट पकड़ मत रोबे, हेमा बीच बाजार क मायां।
छोटी–मोटी बातन पै नाराज गिदोंड़ी, बेवकूफ सी लागै।
छोरी तू तो फैशन कर चाले, दिवाना डोले प्यार के लियां...
मोहब्बत क लियां...रोजीन्याई आवे मिलबा
दिवानी कॉलेज क मायां... स्कूल क मायां...
री मोहे फोटू देजा जान, मन में आंताईं देखूंगो
धीरे–धीरे लव यू बोलूंगो...,ओरी जीजी फोन करै सुरेश

करल्यूं बात दिल की...,शीला थारां मन की...
ओ रोटी घरवाळा कू भेजे, गजब दिल बैरवानी को ...
ओ हंवय रे दिलबर बैरवानी को... दिल का दो करगी सपना जी
आख़ातीज सावा पे, मैंने तेरो कांई बिगाड़ो पापा
बी.पी.एल. के दे दी...जीजी मेरी बफ़र नाश्ता चलग्या...
तमाशा देखती रिहज्यो, तू तो लोन उठा खेलन्ता पे
जिंदगी ऐश जीवींगा..,ओय ले मोज करींगा।
म्हारी रात्यों करे रखवाळी, डिया की कोई चालबाजी छे।

होली के गीत –

छोरा लूगड़ी पे रंग मत फेंक, रोड़लयो म्हारो भैम डाटेगो
ओ गाली काढ़ेगो।
होली म्हारा जस्सु देवर सू खेलूंगी, भायेला तू दूर हटज्या...
धीरे रे धीरे गैला मे डटजा।
ओरी जीजी छोटो देवर जीतू, बगागो रंग लूगड़ी माड़ै
मैं लागी छी मोहब्बत कै चाड़ै...,जस्सु लोड़ो देवर आतो तो भर देतो
रंग जुल्फीन के मायां...,धीरे ऐ धीरे बालन के मायां।
बहम करे तो डेड भाभी कू, खिदाज्यो मत होळी खेलवा।
सुहानी तेरा दिल की लगी गुलाल, दिल दोस्त राकेश के मायां
ओ रे हंवय डिया के मायां...होली खेली जब कांई
जीजी मिल्यो नहीं दोस्ती मेरो।
होली खेले तो देवर लिया बरफीन को डिब्बो
हंबय रे रसगुल्लान को डिब्बो।

मीणा जनजाति की नारी के विविध गीत –

कोन जरुरत पढ़वाड़ा, छोड रे नौकरी आजा
कूलर पंखा में सो वाड़ी, करेगी का काम खेतां में।
परण्यो डोलय थारो नेतान में, ओरी जीजी ने सुलाई कूलर में।

दुष्ट तू खेतां में भेजे, ऐ हे दिलबर छोड़ पुरानी बात
नयो दिल जोड़ लेवा दे...मोहब्बत पहचान लेवा दे।
छुप–छुप रोवेगो पढ़वाड़ा, दिल सू दूर जावा दे।
ऐ हे मनीषा की याद आवा दे, ऐ हे छोरा तेरी मोहब्बत झूठी पड़गी
दोनू आँख बरसे..ऐ हे जीभ तरसये...
ऐ हे जातो–जातो दो बार, हाथ हिलागो,
जुदाई समझूं कू मिलवो, अब तो रोतो रोतो जान
बित्याया मेरी आँख सू आँसू, नैनन का आँसू
हंवय छोरा तेरो कांई को सच्चो प्यार
सदा ही रेवे आँखिन में आँसू, नैनन में आँसू।
पतली कणिया छम छम डील, गजब जुल्फीन सू लागे।
गोरा चेहरा सूं लागे, नफरत कांई आगी पतली सी
करूं जब फोन काटे छे,मुँह मटकाबे छे...
छोरां थारी जीजी के चटका चाले किस्यां लू दूध थाळी में...
दुब दुब झांके जंगला की जाळी में,दो लायो बुरसेट बता तेरी
दूसरी खांछे भायेली खांछे, छोरा तेरो शादी पीछे पतो पड़गो
कितनी लाड़ली राखे, गोदी मे राखे...
हंबय रे लड़का करौली का दिवाना।
दिवानी छोरी राजगढ़ की भायो रे अलवर डिस्टीक की...
पिलक्या में बैठी–बैठी कू बुढ़ापो आगो रे।
धीरे–धीरे बाजे रे सैंदा को दिखय फोन
घंटी सहजे–सहजे आवे रे सैंदा को दिखय फोन।
सैंदा काकणी में आवे कोई–कोई मावा की डळी।
ऐरी जीजी जीजा करौली सू आवेगो, लावेगो बूरो...
थारे दोनू जोडू हाथ, जुआनी ओजू आज्यो रे।
साईकिल न चाले तो, पटिक नड़ा में

पैदल चाला रे...लारां लारां चाले रे।
सांची खैदये रे नळदोली, खिदांणी रात कूण आयो छे।
म्हारी कण्यां के नीचे कांच, कबूतर मूंडो देखे रे।
छोरां तू मोय कांई काळी खेवे, तू मोय बीच भी काड़ो...
हंबय रे भाया को साड़ो..., म्हारी खड़ी की फोटू लेगो –
गंडक है केमरा वाड़ो, छोरा मारो भाई को साड़ो...
चुनड़ी को लहंगो तड़य टिकगो, गोदी मे लेलय रे
झलरीन को लहंगो, काळी माला के नीचे खेले
डिया आज प्रेम टूटगो, दिवाना आज प्रेम टूटगो।
रिंजक्या मे सोती छोड़यायो, जिगार को ल्यायों।
परण्यों उठार न लायो, साजो मालिण कू दिआयों रे
परण्यो मजा की क्यारी में, रोटी खातो ठाडो होगो
मालिण भायेली को फोन, थारे हिरो होंडा की होश
गधा प बैठ परण्या, अबके आयी रे तान छौरां
बजा तेरे बैण्ड बाजा ने, भाई रे तेरे बैण्ड बाजा ने।

मीणा जनजाति की नारी के जीजा–साली के गीत–

म्हारी तो माय राजी होगी, जंवाई राकेश के म्हारे।
लेवा लंबर बाई से आज्यो, बहण बड़ी रे मैं छोटी।
अरे लेवा, जीजा साडू दोनू आगा, तेरे चालू के जीजा के।
को जाऊं रे जीजा के रोड़ी सकेलवा जायेगो
ऐ रे लोक्या में तो कतई को जाऊं, जीजा क रोड़ी सकेलवा...
लेवे होली पीछे आज्यो,जीजी का जौ लावळी आग्या।
छोरी तेरी जीजी लड़ेगी खेलन्ता,मत डन्डान कू कूदे।
छोरा तेरे लव को जादू चलगो, उडा दी नींद आँख्या की।
फोटू थारी देजा म्हारी लेजा, जचह जब देखज्यो मुहण्ड़ो।
छोरा तू ले छुट्टी आ ज्याजो , मनम थारां प्यार की आवह।

छोरी म्हारो आशिक लव यू कहगो,देर गुलाल गेला में।
लप झप की लूगड़ी फेरूंगी, लारे–लारे जाऊंगी डिया
म्हारो लाईन मेन छ...आम तड़े मत पीटे म्हारा बलमा,
या हरियो चुगली खाज्यायगो, भायेली खुल्ला राखे बाल,
फचाटा कॉलेज में खावे, हम्बे रे करौली कॉलेज में खावे,
पढ़वे जाती कू बदमाश, दुपट्टा को देगो झालो
हम्बे रे पेन को झालो,टाटा करगी हाथ हिलागी,
मिली जब जान गैला में, हम्बे रे बीच दगड़ा में...
मैडम ठाड़ी चोखी लागे,गिराड़ा की नीमड़ी तड़े, पीपड़ी तड़ै...।
मटकी मत उठावे पानी की, कच्चो डील जापा को।
छोरा ले कस्यां खेत में जायगो,थारी टूबेल को पाणी
ओ सरसून में पाणी...बिजली जारी री फेश उड़ा री
मुड़े नहीं खेत में पाणी ओ गेहूँन में पानी...
खे दे सांची बात बता दे, किस्या रोई ज्यार कोठा में
हंबय रे ज्यार कमरा में, कर ले बी. ए. पास पाछै याद आवेगी
म्हारी रीना गयी कॉलेज...दुपहरी बाद आवेगीं
एक हाथ में पेन कॉपी एक में घड़ी
चोखी लागे रे पढ़वाड़ी, तू कॉलेज में खड़ी।
म्हारी पतली कलाई पडबाड़ा
मरोड़े मत टूट जावेगी...हंबय रे फाट जावेगी।

मीणा इतिहास–परिशिष्ट–2

राजस्थान में मीणों सम्बन्धी तालिकाएँ

(सेंसर ऑफ इंडिया (96) जि. 14, भाग 5ए, पृ. 116–126)

जिलेवार जनगणना						
जिला	कुल संख्या		पुरुष		स्त्री	
	गाँव	नगर	गाँव	नगर	गाँव	नगर
1. गंगानगर	2	228	2	145	–	83
2. बीकानेर	23	973	17	501	6	472
3. चूरू	1002	752	545	393	457	359
4. झुंझूनूं	8682	532	4521	292	4161	240
5. अलवर	83981	2027	44096	1072	39885	955
6. भरतपुर	30925	434	16415	271	14510	163
7. सवाई माधोपुर	201842	2538	107867	1394	93975	1144
8. जयपुर	206775	5462	109600	3038	97175	2374
9. सीकर	1294	372	679	216	615	156
10. अजमेर	1294	372	679	216	615	156
11. टोंक	47521	1043	24378	563	23143	480
12. जैसलमेर	–	10	–	10	–	–
13. जोधपुर	167	12	53	7	114	5
14. नागौर	1392	–	694	–	698	–
15. पाली	21092	410	11373	223	9719	187
16. बाड़मेर	96	25	54	10	42	15
17. जालोर	8649	458	4682	239	3967	219
18. सिरोही	7962	1533	4020	824	3942	709
19. भीलवाड़ा	32522	51	17549	20	14973	31
20. उदयपुर	171759	1608	87797	959	83962	658

21. चित्तौड़	82948	577	42582	396	40311	184
22. डूंगरपुर	45850	103	23614	100	22236	3
23. बांसवाड़ा	12976	37	6693	8	6283	29
24. बूँदी	49220	241	26248	169	22972	72
25. कोटा	77927	1196	41083	672	36844	524
26. झालावाड़	21816	222	11286	121	10530	101

शिक्षा – तालिका				
	पुरुष		स्त्री	
	गाँव	नगर	गाँव	नगर
कुल	**595264**	**11987**	**538942**	**9427**
अशिक्षित	**537685**	**8989**	**540188**	**9168**
अर्द्धशिक्षित	**49746**	**1134**	**2549**	**249**
प्राथमिक स्तर	**4714**	**275**	**120**	**8**
मैट्रिक तथा ऊपर	**616**	**159**	**3**	**2**
प्राविधिक शिक्षा	–	**2**	–	–
विश्वविद्यालय स्तर	–	**13**	–	–

प्रमुख भाषा एवं बोली की – तालिका		
	पुरुष	स्त्री
ढूंढ़ाड़ी	**118910**	**106425**
हाड़ोती	**39345**	**36651**
खैरोड़ी	**15479**	**13638**
खड़ी बोली	**272804**	**243575**
मालवी	**6560**	**5935**

मारवाड़ी	28060	24972
मेवाड़ी	54034	48987
नागरचाल	2910	2656
राजस्थानी	4853	4098
ब्रजभाषा	1909	1749
भीली	459	383
बागड़ी	41066	38982

चित्र

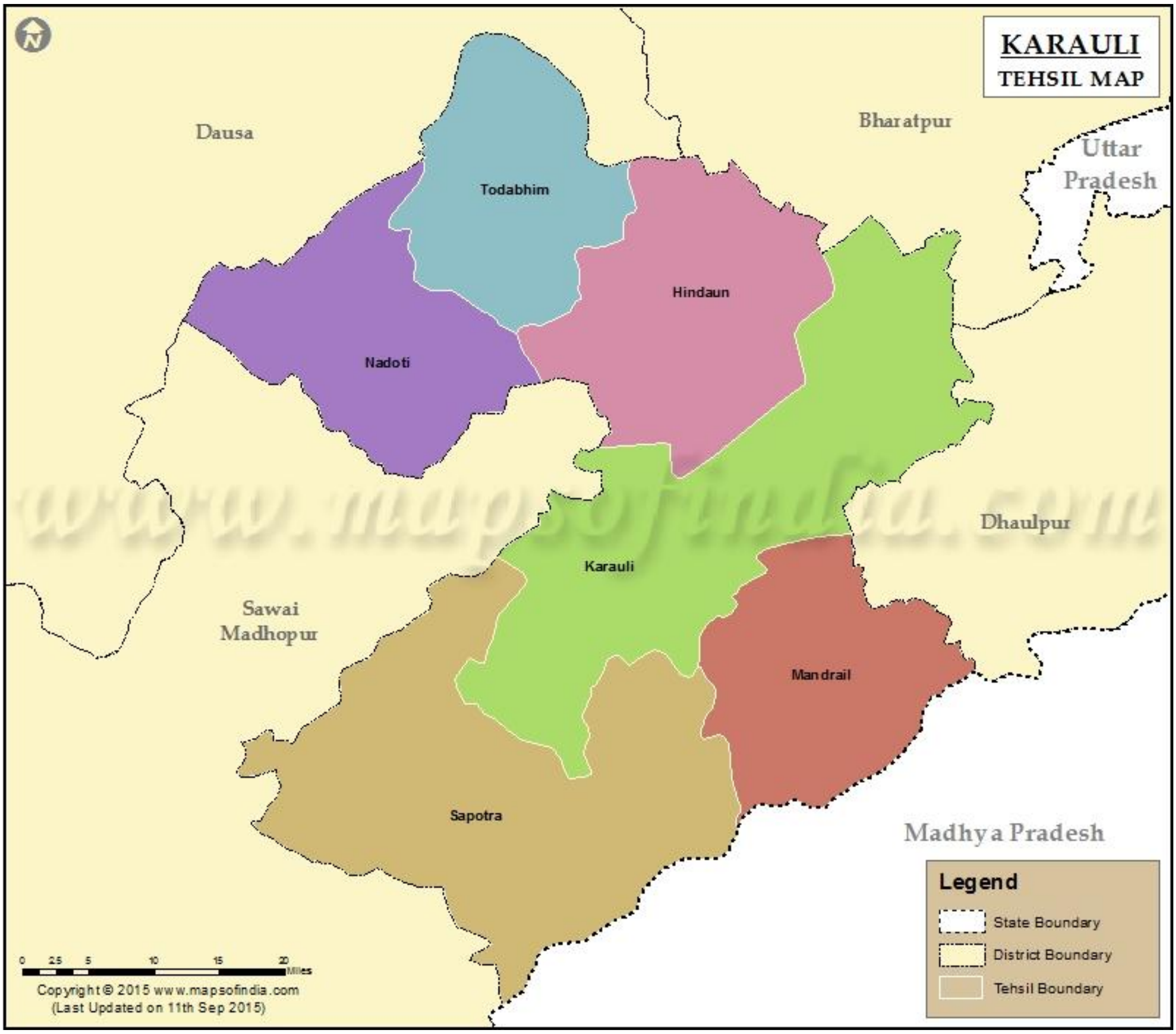

चित्र – 1

जिला करौली का तहसील मानचित्र

चित्र – 2

करौली स्थित माँ कैलादेवी का मंदिर

चित्र – 3

माँ कैलादेवी की प्रतिमा

चित्र – 4

करौली स्थित भगवान श्री कृष्ण का मदन मोहन मंदिर का मृख्य द्वार

चित्र – 5

श्री महावीर जी स्थित भगवान महावीर पार्शवनाथ का भव्य मंदिर

चित्र – 6

मीणा जनजाति के लोगों द्वारा कन्हैया दंगल में लोक गायन की प्रस्तुति

चित्र – 7

मीणा जनजाति के लोगों द्वारा पद लोक गायन की झलक

चित्र – 8

मीणा जनजाति की महिला का विवाह नृत्य

चित्र – 9

मीणा जनजाति की नारी द्वारा होली त्यौहार पर सामूहिक नृत्य

चित्र – 10

मीणा जनजाति की नारी द्वारा धार्मिक पद यात्रा में लोक नृत्य

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. हिन्दी साहित्य कोश।
2. धरती गाती है– देवेन्द्र सत्यार्थी।
3. राजस्थानी लोकसाहित्य एवं संस्कृति– डा. नंदलाल कल्ला।
4. एम.एन साइक्लोपीडियो ब्रिटेनिका भाग प्रथम– मि.आर विलियम्स।
5 ऋग्वेद।
6. सिद्धांतकौमुदी।
7. यजुर्वेद।
8. जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण 3/28 महाकाव्य प्रथम आहिनक।
9. रामचरित मानस– तुलसीदास।
10. राजस्थानी लोकसाहित्य– नानूराम संस्कर्ता ।
11. लोकसाहित्य शास्त्र– डा. नंदलाल कल्ला ।
12. मीन पुराण।
13. मीणा जाति और स्वतंत्रता का इतिहास– श्री लक्ष्मीणारायण झरवाल।
14. राजस्थान का इतिहास– कर्नल जेम्स टॉड।
15. ब्रज लोक साहित्य– मधुर उप्रेती ।
16. राजस्थान का इतिहास– कर्नल जेम्स टॉड।
17. नई दिशा पत्रिका– राष्ट्रीय मीणा महासभा।
18. Research Institute, Pune Dr. P.P. Goglekar की रिपोर्ट।
19. साइंस टुडे– डॉ. एच.डी. सांकलिया।
20. 'जनरल ऑफ दा बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी ,1937–पुरातत्वेता– रेवखेड फादर हेरास।
21. वीर विनोद, करौली की तवारीख– श्यामलदास।
22. मीणा इतिहास– रावत सारस्वत।
23. मनुस्मृति।
24. ऐतरेय आरण्यक– ए. बी. कीथ।

25. राजस्थानी लोकगीतों के अध्ययन– सूर्यकरण पारीक।
26 मानव अधिकार– डॉ. एच ओ अग्रवाल।
27. हाड़ौती लोकगीत– डॉ. चन्द्रशेखर भट्‌ट।
28. राजस्थान में रीति–रिवाज– सुखवीर सिंह गहलोत।
29. शोध पत्रिका, उदयपुर।
30. राजस्थान सामान्य अध्ययन– क्रांति जैन, महावीर जैन।
31. श्रीमद् भगवद् स्कंध 12, अध्याय 1।
32. शोध पत्रिका उदयपुर– पी. वी. काणे का मत।
33. नारी के बदले आयाम– डॉ. राजकुमार।
34. गाँधी ऑन वोमन, सेन्टर फार बोमन, डेवलपमेंट स्टडीज दिल्ली– पुष्पा जोशी।
35. हरियाणा लोकगीतों का सामाजिक पक्ष– डॉ. जगदीश नारायण।
36. हरियाणा एक सांस्कृतिक अध्ययन– ड़ॉ देवी लाल सांभर।
37. महिला सशक्तिकरण– गुप्ता कमलेश कुमार।
38. भोजपुरी लोककथा– ड़ॉ सत्यव्रत सिह्ना।
39. मध्यकालीन भारत का इतिहास– वी.डी. महाजन।
40. वोमेन्स राइड्स– शैलजा नागेन्द्र।
41. स्त्री विमर्श और सामाजिक आन्दोलन– डॉ. राजनारायण।
42. लोकसाहित्य का अध्ययन– डॉ. त्रिलोचन पांडेय।
43. भोजपुरी भाषा और साहित्य– ड़ॉ उदय नारायण तिवारी।
44. भारतीय लोक साहित्य कोश– डॉ. सुरेश।
45. भारतीय लोकगीत :सांस्कृतिक अस्मिता– डॉ. सुरेश गौतम।
46. मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य में नारी की भावना– डॉ. उषा पाण्डेय ।
47. स्त्री विमर्श और सामाजिक आन्दोलन– डॉ. राजनारायणः।
48. लोकसाहित्य और संस्कृति– डॉ. दिनेश्वर प्रसाद।
50. वोमेन्स राइड्स– शैलजा नागेन्द्र।

51. नारी शोषण– जयप्रकाश।
52. हाड़ौती बोला और साहित्य– डॉ. कन्हैया लाल शर्मा।
54. लोकसाहित्य समग्र– डॉ. रामनारायण उपाध्याय।
55. लोक साहित्य विज्ञान– डॉ. सत्येन्द्र।
56. भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन– डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय।
57. राजस्थानी मीणा साहित्य लोकगीत– डॉ. जयपाल मीणा।
58. हरियाणा के लोकगीत– डॉ. देवीशंकर प्रभाकर।
59. लोकसाहित्य विशेषांक– संभावना।
60. लोक संस्कृति और साहित्य– बी. आर. आहूजा।
61. मालवी लोक साहित्य एक अध्ययन, डॉ. श्याम परमार।
62. राजस्थानी लोकसाहित्य का सैद्धान्तिक अध्ययन– डॉ. सोहन दान चारण।
63. राजस्थानी लोकसाहित्य, परम्परा अंक– सपादक डॉ. नारायण सिंह भाटी।
64. राजस्थानी ग्रामीण गीत– रमापति शुक्ल।
67. खड़ी बोली लोकसाहित्य– डॉ. सत्या गुप्ता।
68. ब्रज लोक साहित्य– डॉ. कुन्दनलाल उप्रेती।
69. मानवाधिकार और महिलाएँ– डॉ.राजबाला सिंह।
70. लोकसाहित्य की रूपरेखा– डॉ. शरतेन्दु।
71. भारतीय समाज– वीरेन्द्र प्रकाश शर्मा।
72. राजस्थानी लोक संस्कृति– डॉ. पूनम दइया।
73. राजस्थानी वात साहित्य– डॉ. पूनम दइया।
74. राजस्थानी लोकसाहित्य अध्ययन के आयाम– डॉ. राम प्रसाद दाधीच।
75. उजास, महिला कल्याणकारी योजनाएँ, महिला एवं बाल विकास विभाग, राजस्थान जयपुर।
76. भील जनजाति का सांस्कृतिक एवं आर्थिक जीवन– डॉ. जगदीश मीणा।

77. निरगुणे, वसन्त, लोक संस्कृति, ।

78. राजस्थान सामान्य अध्ययन– एच.डी. सिंह।

79. उदयपुर राज्य का इतिहास– डॉ. ओझा।

80. महिला विकास– स्वप्निल सारस्वत।

81. ट्राइव, जनजाति शोध पत्रिका (त्रैमासिक),– माणिक्य लाल वर्मा।

82. शोध पत्रिका, उदयपुर– मीणा जनजाति।

83. पंचायती राज एवं महिला विकास– मधु राठौड़।

84. अवधी लोक रूदन– डॉ. आद्या प्रसाद सिंह।

85. हिन्दी साहित्य का इतिहास– डॉ. नगेन्द्र।

86. मानव अधिकार एवं कर्तव्य– संपादक प्रोफेसर आर. पी. जोशी।

87. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास– डॉ. कृपाशंकर शुक्ल।

88. नई दिशा पत्रिका– राष्ट्रीय मीणा महासभा।

89. काटजू का मत वही 35।

90. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास– डॉ. रामकुमार वर्मा।

91. हिन्दी साहित्य का इतिहास– डॉ. भागीरथ मिश्र।

92. 1 जून 1946 के गजट संख्या 5547 पृष्ठ 51 कॉलम 4728 एम.बी. के अनुसार।

93. 15 अगस्त 1946 के 'जयपुर न्यूज लेटर जि.4, संख्या 17' में प्रकाशित।

94. मीणा सुधार समिति, जयपुर की ओर से भी 'मुक्त मानव' नामक एक बुलेटिन प्रकाशित हुआ।

95. हिन्दी महाकाव्य में नारी चित्रण– डॉ. श्याम सुन्दरदास।

96. स्त्री विमर्श और सामाजिक आन्दोलन– डॉ. राजनारायण

97. आधुनिक हिन्दी काव्य में नारी भावना– शैल कुमारी माथुर।

98. कोटा राज्य का इतिहास– डॉ. मथुरा लाल शर्मा।

99. मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य में नारी भावना– डॉ. उषा पाण्डेय।

100. अभिव्यक्ति और माध्यम : माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर।

101. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास– डॉ. गणपति चन्द्र गुप्त।
102. हिन्दी साहित्य का इतिहास– डॉ. नगेन्द्र।
103. हिन्दी साहित्य का इतिहास– आचार्य रामचंद्र शुक्ल।
104. www.sahitya – akademi-org
105. www.ddIndia.net
106. www.ddIndia.net
107. www.cs.colostate.edu
108. राजस्थान पत्रिका प्रकाशन, जयपुर।
109. दैनिक पत्रिका प्रकाशन, जयपुर।
110. लोक जागरण और हिन्दी साहित्य– आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।
111. विद्रोही स्त्री–जर्मेन गीयर।
112. थेरी गााथा– विमल कीर्ति।
113. नारी उपेक्षिता– सीमोन द बोउअर– अनुवादक प्रभा खेतानं
114. जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण 3/28 महाकाव्य प्रथम आहिनक।
115. लोक साहित्य– डॉ. इन्दु यादव।
116. लोक साहित्य एवं लोक परम्परा प्रासंगिकता एवं सामाजिक परिप्रेक्ष्य– डॉ. वीरेन्द्र यादव।
117. हाड़ौती लोकगीतों में संस्कृति–डॉ. लीला मोदी।